जयधवलासहितं

# कसायपाहुडं

भाग ४

( अणुभागविहत्ती )

भारतीय दिगम्बर जैन संघ

भा० दि० जैनसंघग्रन्थमालायाः प्रथमपुष्पस्य चतुर्थो दलः

श्रीयतिवृषभाचार्यरचितचूर्णिसूत्रसमन्वितम्

श्रीभगवद् गुणधराचार्यप्रणीतम्

# कसाय पाहुडं

तयोश्च

श्रीवीरसेनाचार्यविरचिता जयधवला टीका

[ तृतीयोऽधिकारः स्थितिविहत्ती ]

सम्पादकौ

पं० फूलचन्द्रः
सिद्धान्तशास्त्री
सम्पादक महाबन्ध, सहसम्पादक
धवला

पं० कैलाशचन्द्रः
सिद्धान्तरत्न, सिद्धान्तशास्त्री, न्यायतीर्थ
प्रधान अध्यापक स्याद्वाद महाविद्यालय
काशी

प्रकाशक
मंत्री साहित्य विभाग
भा० दि० जैन संघ, चौरासी मथुरा

वि० सं० २०१३ ] वीरनिर्वाणाब्द २४८३ [ ई० सं० १९५६

मूल्यं रूप्यकद्वादशकम्

# भा० दि० जैनसंघ-ग्रन्थमाला

## इस ग्रन्थमालाका उद्देश्य

प्राकृत संस्कृत आदि में निबद्ध दि० जैनागम, दर्शन,
साहित्य, पुराण आदिका यथासम्भव
हिन्दी अनुवाद सहित प्रकाशन करना

---

सञ्चालक

**भा० दि० जैनसंघ**

ग्रन्थाङ्क १-४

प्राप्तिस्थान

मैनेजर

**भा० दि० जैन संघ**

चौरासी, मथुरा

मुद्रक—कन्हैयालाल, कैलाश प्रेस, बी० ७।९२ हाड़ाबाग ( सोनारपुर ) वाराणसी ।

स्थापनाब्द ] प्रति ८०० [ वी० नि० सं० २४६८

Sri Dig. Jain Sangha Granthamala N0. 1- IV

# KASAYA-PAHUDAM
# IV
# THIDI VIHATTI

BY

GUNADHARACHARYA

WITH

CHURNI SUTRA OF YATIVRASHABHACHARYA

AND

THE JAYADHAVALA COMMENTARY OF

VIRASENACHARYA THERE-UPON

*EDITED BY*

**Pandit Phulachandra Siddhantashastri,**

*EDITEOR MAHABANDHA*
*JOINT EDITOR DHAVALA.*

**Pandit kailashachandra Siddhantashastri**

*Nyayatirtha, Sidhantaratna,*
*Pradhanadhyapak, Syadvada Digambara Jain*
*Vidyalaya, Banaras*

*PUBLISHED BY*

THE SECRETARY PUBLICATION DEPARTMENT.
THE ALL-INDIA DIGMBAR JAIN SANGHA
CHAURASI. MATHURA.

VIRA-SAMVAT 2483 ] VIKRAMS. 2013 [ 1956 A. C.

**Sri Dig. Jain Sangha Granthamala**

**Foundation year—]** **[—Vira Niravan Samvat 2468**

*Aim of the Series:—*

**Publication of Digambara Jain Siddhanta, Darsana, Purana, Sahitya and other Works in Prakrit, Sanskrit etc. Possibly with Hindi Commentary and Translation.**

*DIRECTOR*

**SRI BHARATAVARSIYA DIGAMBARA JAIN SANGHA**

NO. 1. VOL. IV.

*To be had from —*

THE MANAGER

**SRI DIG. JAIN SANGHA.**

CHAURASI, MATHURA.

U. P. ( INDIA )

*Printed by—Kanhiaya Lal*

*At The Kailash Press, B. 7/92 Hara Bagha, Sonarpur Banaras.*

**800 Copies**

**Price Rs. Twelve only**

# प्रकाशक की ओरसे

श्री कसायपाहुड (जयधवलाजी) के चौथे भाग स्थितिविभक्ति और पाँचवे भाग अनुभाग विभक्तिका प्रकाशन एक साथ हो रहा है। इसका कारण यह है कि जिस प्रेसमें चौथा भाग छापनेके लिए दिया था उस प्रेसने उसे छापनेमें आवश्यकतासे अधिक विलम्ब किया। साथ ही शुरूके पाँच फर्मोंको दीमक चाट गई। तब वहाँसे काम उठाकर दूसरे प्रेसको दिया गया। किन्तु शुरूके पाँच फर्मोंको छापकर देनेमें पहले प्रेसने पुनः अनावश्यक विलम्ब किया। इतनेमें तीसरे प्रेसने पाँचवाँ भाग छापकर दे दिया। इस तरह ये दोनों भाग एक साथ प्रकाशित हो रहे हैं। दीपावलीके पश्चात् छठा और सातवाँ भाग भी प्रेसमें दिये जानेके लिये प्रायः तैयार हैं।

इन सब भागोंका प्रकाशन संघके वर्तमान सभापति दानवीर सेठ भागचन्द जी डोंगरगढ़की ओरसे हो रहा है। सेठ साहब तथा उनकी धर्मपत्नी सेठानी नर्वदाबाईजी बहुत ही धर्मप्रेमी और उदार हैं। आपके साहाय्यसे यह कार्य शीघ्र ही निर्विघ्न पूर्ण होगा ऐसी आशा है। आपकी उदारता और धर्मप्रेमकी सराहना करते हुए मैं आपको बहुत २ धन्यवाद देता हूं।

इस भागके सम्पादन आदिका भार श्री पं० फूलचन्द्रजी सिद्धान्तशास्त्रीने वहन किया है, मेरा भी यथाशक्य सहयोग रहा है। मैं पंडितजीको भी एतदर्थ धन्यवाद देता हूं।

अपने जन्मकालसे ही जयधवला कार्यालय काशीके स्व० बा० छेदीलालजीके जिनमन्दिरके नीचेके भागमें स्थित है। और यह सब स्व० बाबू साहबके सुपुत्र बा० गनेसदासजी और सुपौत्र बा० सालिगरामजी तथा बा० ऋषभदासजीके सौजन्य और धर्मप्रेमका परिचायक है। अतः मैं आप सबका भी आभारी हूँ।

इस भागका बहुभाग 'बम्बई प्रिन्टिंग प्रेस' तथा अन्तके कुछ फर्मे 'कैलाश प्रेस' में छपे हैं। दोनोंके स्वामी तथा कर्मचारी भी इस सहयोगके लिए धन्यवादके पात्र हैं।

जयधवला कार्यालय
भदैनी, काशी
दीपावली, २४८०

**कैलाशचन्द्र शास्त्री**
मंत्री, साहित्य विभाग
भा० दि० जैनसंघ, मथुरा

# विषय-परिचय

प्रस्तुत अधिकारका नाम स्थितिविभक्ति है। कर्मका बन्ध होनेपर जितने कालतक उसका कर्मरूपसे अवस्थान रहता है उसे स्थिति कहते हैं। स्थिति दो प्रकार की होती है—एक बन्धके समय प्राप्त होनेवाली स्थिति और दूसरी संक्रमण, स्थितिकाण्डकघात और अधःस्थितिगलना आदि होकर प्राप्त होनेवाली स्थिति। केवल बन्धसे प्राप्त होनेवाली स्थितिका विचार महाबन्धमें किया है। मात्र उसका यहाँपर विचार नहीं किया गया है। यहाँ तो बन्धके समय जो स्थिति प्राप्त होती है उसका भी विचार किया गया है और बन्धके बाद अन्य कारणोंसे जो स्थिति प्राप्त होती है या शेष रहती है उसका भी विचार किया गया है। मोहनीय कर्मका उत्तर प्रकृतियाँ अट्ठाईस हैं। एक बार इन भेदोंका आश्रय लिए बिना और दूसरी बार इन भेदोंका आश्रय लेकर प्रस्तुत अधिकारमें विविध अनुयोगद्वारोंका आश्रय लेकर स्थितिका सांगोपांग विचार किया गया है। वे अनुयोगद्वार ये हैं—अद्धाच्छेद, सर्वविभक्ति, नोसर्वविभक्ति, उत्कृष्टविभक्ति, अनुत्कृष्टविभक्ति, जघन्य-विभक्ति, अजघन्यविभक्ति, सादिविभक्ति, अनादिविभक्ति, ध्रुवविभक्ति, अध्रुवविभक्ति, एक जीवकी अपेक्षा स्वामित्व, काल, अन्तर, नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्गविचय, परिमाण, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर, सन्निकर्ष भाव और अल्पबहुत्व। मूलप्रकृति स्थितिविभक्ति एक है, इसलिए उसमें सन्निकर्ष अनुयोगद्वार सम्भव नहीं है, इसलिए इस अधिकारको उत्तर प्रकृतियोंकी अपेक्षा ही जानना चाहिए।

**अद्धाच्छेद**—अद्धा शब्द स्थितिके अर्थमें कालवाची है। तदनुसार अद्धाच्छेदका अर्थ कालविभाग होता है। यह जघन्य और उत्कृष्ट भेदसे दो प्रकारका है। मोहनीय सामान्यका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण होता है यह विदित है, इसलिए मोहनीय सामान्यका उत्कृष्ट अद्धाच्छेद उक्तप्रमाण कहा है। इसमें सात हजार वर्ष आबाधाकालके भी सम्मिलित हैं, क्योंकि ऐसा नियम है कि कर्मका बन्ध होते समय स्थितिबन्धके अनुसार उसकी आबाधा पड़ती है। यदि अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरके भीतर स्थितिबन्ध होता है तो अन्तर्मुहूर्त प्रमाण आबाधा पड़ती है और सौ कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण स्थितिबन्ध होता है तो सौ वर्षप्रमाण आबाधा पड़ती है। आगे इसी अनुपातसे आबाधाकाल बढ़ता जाता है, इसलिए सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण स्थितिबन्धके होने पर उसका आबाधाकाल सात हजार वर्षप्रमाण बतलाया है। विशेष खुलासा इस प्रकार है—किसी भी कर्मका बन्ध होने पर वह अपनी स्थितिके सब समयोंमें विभाजित हो जाता है। मात्र बन्ध समयसे लेकर प्रारम्भके कुछ समय ऐसे होते हैं जिनमें कर्मपुञ्ज नहीं प्राप्त होता। जिन समयोंमें कर्मपुंज नहीं प्राप्त होता उन्हें आबाधा काल कहते हैं। इस आबाधाकालको छोड़कर स्थितिके शेष समयोंमें उत्तरोत्तर विशेष हीन क्रमसे कर्मपुञ्ज विभाजित होकर मिलता है। उदाहरणार्थ मोहनीयकर्मका सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण स्थितिबन्ध होने पर बन्ध समयसे लेकर सात हजार वर्ष तक सब समय खाली रहते हैं। उसके बाद अगले समयसे लेकर सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर तकके कालके जितने समय होते हैं, विवक्षित मोहनीयकर्मके उतने विभाग होकर सात हजार वर्षके बाद, प्रथम समयके बटवारेमें जो भाग आता है वह सबसे बड़ा होता है, उससे अगले समयके बटवारेमें जो भाग आता है वह उससे कुछ हीन होता है। इसी प्रकार सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरके अन्तिम समय तक जानना चाहिए। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिए कि यहाँ पर मोहनीयकी जो उत्कृष्ट स्थिति सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर कही है वह सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरके अन्तिम समयके बटवारेमें प्राप्त होनेवाले द्रव्यकी अपेक्षासे कही है। वस्तुतः आबाधाकालके बाद जिस समयके बटवारेमें जो द्रव्य आता है उसकी उतनी ही स्थिति जाननी चाहिए। स्थितिके अनुसार बटवारेका यह क्रम सर्वत्र जानना चाहिए। इस प्रकार मोहनीय कर्मके उत्कृष्ट अद्धाच्छेदका विचार किया। मोहनीय-कर्मका जघन्य अद्धाच्छेद एक समयप्रमाण है। यह क्षपक सूक्ष्मसाम्परायिक जीवके अन्तिम समयमें सूक्ष्म-लोभकी उदयस्थितिके समय प्राप्त होता है। मोहनीयकी उत्तर प्रकृतियोंकी अपेक्षा मिथ्यात्वका उत्कृष्ट अद्धाच्छेद मोहनीय सामान्यके समान सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका

उत्कृष्ट अद्धाच्छेद अन्तर्मुहूर्त कम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर है, क्योंकि ये दोनों बन्ध प्रकृतियाँ न होकर संक्रम प्रकृतियाँ हैं, इसलिए जिस जीवने मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करके उसका काण्डकघात किये बिना अन्तर्मुहूर्त कालके भीतर वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त किया है उसके वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त करनेके प्रथम समयमें अन्तर्मुहूर्त कम मिथ्यात्वके सब निषेकोंका कुछ द्रव्य संक्रमणके नियमानुसार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व रूपमें संक्रमित हो जाता है, इसलिए इन दो प्रकृतियोंका उत्कृष्ट अद्धाच्छेद अन्तर्मुहूर्त कम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण प्राप्त होता है। सोलह कषायोंका उत्कृष्ट अद्धाच्छेद चालीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण है, क्योंकि संज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीवके इन कर्मोंका इतना उत्कृष्ट स्थितिबन्ध होता है। नौ नोकषायोंका उत्कृष्ट अद्धाच्छेद एक आवलि कम चालीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण है। यद्यपि नौ नोकषाय बन्ध प्रकृतियां हैं पर बन्धसे इनकी उक्त प्रमाण उत्कृष्ट स्थिति नहीं प्राप्त होती। किन्तु यह उत्कृष्ट अद्धाच्छेद संक्रमणसे प्राप्त होता है। यहां इतना विशेष जानना चाहिए कि जब सोलह कषायोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध होता है तब नपुसकवेद, अरति, शोक, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध होता है। उस समय स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य और रतिका बन्ध नहीं होता। इसलिए नपुंसकवेद आदि पाँच प्रकृतियोंका उत्कृष्ट अद्धाच्छेद सोलह कषायोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके समय भी सम्भव है, क्योंकि मान लीजिए किसी जीवने सोलह कषायोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध प्रारम्भ किया और उस समय वह नपुसकवेद आदिका भी बन्ध कर रहा है, इसलिए वह जीव एक आवलिके बाद सोलह कषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिको नपुंसकवेद आदिमें संक्रमित भी करने लगेगा। अतः सोलह कषायोंके बन्धकालके भीतर ही नपुंसकवेद आदिका उत्कृष्ट अद्धाच्छेद बन जायगा पर स्त्रीवेद आदिका उस समय तो बन्ध होता ही नहीं, इसलिए सोलह कषायोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध कराकर और उससे निवृत्त होकर स्त्रीवेद आदि चारका बन्ध करावे और एक आवलि कम सोलह कषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका संक्रमण कराके इनका उत्कृष्ट अद्धाच्छेद आवलि कम चालीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण प्राप्त करे। स्त्रीवेद आदि चार प्रकृतियोंकी कहीं कहीं पुण्य प्रकृतियोंके साथ परिगणना की जाती है। इसका बीज यही है। यह उत्कृष्ट अद्धाच्छेद है। इन प्रकृतियोंके जघन्य अद्धाच्छेदका विचार करने पर मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और बारह कषाय ये स्वोदयसे क्षय होनेवाली प्रकृतियां नहीं, इसलिए जब इनकी अपनी अपनी क्षपणाके अन्तिम समयमें दो समय कालवाली एक निषेकस्थिति शेष रहती है तब इनका जघन्य अद्धाच्छेद होता है। सम्यक्त्व और लोभसंज्वलन इनका तो नियमसे स्वोदयसे ही क्षय होता है। तथा स्त्रीवेद और नपुंसकवेद ये भी स्वोदयसे क्षयको प्राप्त हो सकती हैं, अतः जब इनकी क्षपणाके अन्तिम समयमें एक समय कालवाली एक निषेकस्थिति शेष रहती है तब इनका जघन्य अद्धाच्छेद होता है। एक तो क्रोधसंज्वलन, मानसंज्वलन, मायासंज्वलन और पुरुषवेद इनका क्षपकश्रेणिमें अपनी अपनी उदयव्युच्छित्तिके अन्तिम समयमें पूरा सत्त्वनाश नहीं होता। दूसरे यहां इनके अपने अपने वेदनकालके अन्तिम समयमें नवकबन्धके निषेकोंके साथ प्रथम स्थितिके निषेक भी शेष रहते हैं, इसलिए इनकी जघन्य स्थिति अपने अपने वेदनकालके अन्तिम समयमें न कहकर अन्तमें जो नूतन बन्ध होता है उसके एक समय कम दो आवलिप्रमाण गला देने पर अन्तमें इन कर्मोंकी जघन्य स्थिति कही है। जो क्रोधसंज्वलनकी अन्तर्मुहूर्त कम दो महीना, मानसंज्वलन की अन्तर्मुहूर्त कम एक महीना, मायासंज्वलनकी अन्तर्मुहूर्त कम पन्द्रह दिन और पुरुषवेदकी अन्तर्मुहूर्त कम आठ वर्षप्रमाण होती है। यही इनका जघन्य अद्धाच्छेद है। छह नोकषायोंके अन्तिम काण्डककी अन्तिम फालि संख्यात वर्षप्रमाण होती है, इसलिए इसका जघन्य अद्धाच्छेद संख्यात वर्षप्रमाण कहा है।

**सर्व-नोसर्वविभक्ति**—सर्वस्थितिविभक्तिमें सब स्थितियाँ और नोसर्वस्थितिविभक्तिमें उनसे न्यून स्थितियाँ विवक्षित हैं। मूल और उत्तर प्रकृतियोंमें यह यथायोग्य घटित कर लेना चाहिए।

**उत्कृष्ट-अनुत्कृष्टविभक्ति**—सबसे उत्कृष्टस्थिति उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति है और उससे न्यून स्थिति अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्ति है। ओघ और आदेशसे जहाँ यह जिसप्रकार सम्भव हो उस प्रकारसे उसे जान लेना चाहिए।

**जघन्य-अजघन्यविभक्ति**—सबसे जघन्य स्थिति जघन्य स्थितिविभक्ति है और उससे अधिक स्थिति अजघन्य स्थितिविभक्ति है। मूल और उत्तर प्रकृतियोंमें इस बीजपदके अनुसार घटित कर लेना चाहिए।

**सादि-अनादि-ध्रुव-अध्रुवविभक्ति**—सामान्यसे मोहनीयकी जघन्य स्थिति क्षपक सूक्ष्मसाम्परायिक जीवके अन्तिम समयमें होती है, अतः जघन्य स्थितिविभक्ति सादि और अध्रुव है। इसके पूर्व अजघन्य स्थितिविभक्ति होती है, इसलिए वह अनादि तो है ही। साथ ही वह अभव्यों की अपेक्षा ध्रुव और भव्योंकी अपेक्षा अध्रुव भी है। तथा उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्ति कादाचित्क होती है इसलिए वे सादि और अध्रुव हैं। उत्तर प्रकृतियोंकी अपेक्षा मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंके विषयमें इसीप्रकार जानना चाहिए। अर्थात् इनकी उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट और जघन्य स्थितिविभक्ति सादि और अध्रुव होती है। तथा अजघन्य स्थितिविभक्ति सादि विकल्पको छोड़कर तीन प्रकारकी होती है। कारण स्पष्ट है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व ये दो प्रकृतियाँ ही सादि हैं, इसलिए इनकी उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य ये चारों स्थितिविभक्तियाँ सादि और अध्रुव होती हैं। अब रही अनन्तानुबन्धीचतुष्क सो इसकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तियाँ कादाचित्क होनेसे सादि और अध्रुव हैं। तथा जघन्य स्थितिविभक्ति विसंयोजनाके बाद इसकी संयोजना होनेके प्रथम समयमें ही होती है, इसलिए वह भी सादि और अध्रुव है। किन्तु अजघन्य स्थितिविभक्ति विसंयोजनाके पूर्व अनादिसे रहती है तथा विसंयोजना के बाद पुनः संयोजना होनेपर भी होती है, इसलिए तो वह अनादि और सादि है। तथा अभव्योंकी अपेक्षा ध्रुव और भव्योंकी अपेक्षा अध्रुव भी है। इसप्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अजघन्य स्थितिविभक्ति सादि आदिके भेदसे चारों प्रकारकी है। यह ओघ प्ररूपणा है। मार्गणाओंमें अपनी अपनी विशेषताको जानकर योजना करनी चाहिए।

**स्वामित्व**—सामान्यसे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिका स्वामी है। अवान्तर प्रकृतियोंकी अपेक्षा मिथ्यात्व और सोलह कषायोंके विषयमें इसी प्रकार स्वामित्व जानना चाहिए। यद्यपि यहाँ पर यह कहा जा सकता है कि उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके द्वितीयादि समयोंमें अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवालेके उत्कृष्ट स्थितिका एक भी निषेक नहीं गलता, इसलिए केवल बन्धके समय उत्कृष्ट स्थिति न मानकर अन्य समयोंमें भी उत्कृष्ट स्थिति मानी जानी चाहिए पर यह कहना ठीक नहीं है, क्योंकि उत्कृष्ट स्थिति कालप्रधान होती है और द्वितीयादि समयोंमें अधःस्थिति गलनाके द्वारा एक एक समय कम होता जाता है, इसलिए उत्कृष्ट स्थितिबन्धके समय ही उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति मानी गई है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिका ऐसा प्रथम समयवर्ती वेदकसम्यग्दृष्टि जीव स्वामी है जिसने मिथ्यात्व गुणस्थानमें मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कर अन्तर्मुहूर्तमें वेदकसम्यक्त्व प्राप्त किया है। तथा कषायोंकी उत्कृष्ट स्थिति बाँधकर जो एक आवलिकालके बाद उसे नौ नोकषायोंमें संक्रान्त कर रहा है वह नौ नोकषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिका स्वामी है। सामान्यसे मोहनीयकी जघन्य स्थितिविभक्ति क्षपक सूक्ष्मसाम्परायके अन्तिम समयमें होती है, इसलिए वह इसका स्वामी है। उत्तर-प्रकृतियोंकी अपेक्षा मिथ्यात्वकी क्षपणा करनेवाला जीव उसकी क्षपणाके अन्तिम समयमें उसकी जघन्य स्थिति-विभक्तिका स्वामी है। इसी प्रकार सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय और छह नोकषायकी जघन्य स्थितिविभक्तिका स्वामी अपनी अपनी क्षपणाके अन्तिम समयवर्ती जीवको जानना चाहिए। मात्र सम्यग्मिथ्यात्वका यह जघन्य स्वामित्व अपनी उद्वेलनाके अन्तिम समयमें भी बन जाता है। तथा तीन वेदकी जघन्य स्थितिविभक्तिका स्वामी स्वोदयसे क्षपकश्रेणि पर चढ़ा हुआ अन्तिम समयवर्ती जीव है। यह ओघसे स्वामित्व कहा है। मार्गणाओंमें अपनी अपनी विशेषता जानकर यह स्वामित्व घटित कर लेना चाहिए। जहाँ जिन प्रकृतियोंकी क्षपणा सम्भव हो वहाँ उसका विचार कर और जहाँ क्षपणा सम्भव न हो वहाँ अन्य प्रकारसे जघन्य स्वामित्व घटित करना चाहिए। तथा उत्कृष्ट स्वामित्वमें भी अपनी अपनी विशेषताको जानकर वह ले आना चाहिए।

**काल**—उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कमसे कम एक समय तक और अधिकसे अधिक अन्तर्मुहूर्त काल तक होता है, इसलिए सामान्यसे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। एक बार उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध होकर पुनः उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध होनेमें कमसे कम अन्तर्मुहूर्त काल लगता है और यदि कोई जीव उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके एकेन्द्रियादि पर्यायोंमें परिभ्रमण करने लगे तो उसके अनन्त काल तक उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध नहीं होगा, इसलिए यहां अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल उक्तप्रमाण जानना चाहिए। नौ नोकषायोंमें नपुंसकवेद अरति, शोक, भय और जुगुप्साका बन्ध सोलह कषायोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके साथ भी सम्भव है और इसलिए इनकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त बन जाता है पर शेष चार नोकषायोंका बन्ध सोलह कषायोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके समय सम्भव नहीं है, इसलिए इनकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्तिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल एक आवलिप्रमाण है। तथा इन नौ नोकषायोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिका जघन्य काल एक समय है, क्योंकि क्रोधादि कषायोंकी एक समयके अन्तरसे एक समय आदि कम अनुत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कर एक आवलिके बाद उसका उसी क्रमसे नौ नोकषायोंमे संक्रमण करने पर इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय उपलब्ध होता है। तथा उत्कृष्ट काल सोलह कषायोंके समान अनन्त काल है यह स्पष्ट ही है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति जो मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव अन्तर्मुहूर्तमें वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त होता है उसके प्रथम समयमें होती है, इसलिए इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। तथा जो जीव उपशमसम्यक्त्वके साथ इन दोनों प्रकृतियोंकी सत्ता प्राप्त कर अन्तर्मुहूर्तमें क्षायिक सम्यग्दृष्टि हो जाता है उसके इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त देखा जाता है और जो बीचमें सम्यग्मिथ्यात्वके साथ दो छ्यासठ सागर कालतक वेदकसम्यक्त्वके साथ रहता है उसके साधिक दो छ्यासठ सागर कालतक इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिविभक्ति देखी जाती है, इसलिए इनकी अनुत्कृष्टस्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल उक्तप्रमाण कहा है। सामान्यसे मोहनीयकी जघन्य स्थिति क्षपक सूक्ष्मसाम्परायके अन्तिम समयमें होती है इसलिए इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। तथा अजघन्य स्थितिविभक्ति अभव्योंकी अपेक्षा अनादि अनन्त और भव्योंकी अपेक्षा अनादि-सान्त है। उत्तर प्रकृतियोंकी अपेक्षा छह नोकषायोंके सिवा शेष सब प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। मिथ्यात्व बारह कषाय और तीन वेदकी अजघन्य स्थितिविभक्तिका काल अनादि-अनन्त और अनादि-सान्त है, क्योंकि इनकी जघन्य स्थिति क्षपणाके अन्तिम समयमें होती है, इसलिए यह काल बन जाता है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थिति भी अपनी अपनी क्षपणाके अन्तिम समयमें होती है, इसलिए इनकी अजघन्य स्थितिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल साधिक दो छ्यासठ सागर प्रमाण है। कारण का निर्देश पहले कर ही आये है। अनन्तानुबन्धी विसंयोजना प्रकृति है इसलिए इसकी अजघन्य स्थितिके अनादि-अनन्त, अनादि-सान्त और सादि-सान्त ये तीन विकल्प बन जाते हैं। उनमे सादि सान्त अजघन्य स्थितिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है, क्योंकि संयोजना होने पर पुनः अन्तर्मुहूर्तमें इसकी विसंयोजना हो सकती है और उत्कृष्ट काल कुछ कम अर्धपुद्गल परिवर्तनप्रमाण है, क्योंकि विसंयोजनाके बाद संयोजना होने पर इतने काल तक जीव इसकी विसंयोजना न करे यह सम्भव है। छह नोकषायोंकी जघन्य स्थिति अन्तिम स्थितिकाण्डकके पतनके समय होती है और उसमे अन्तर्मुहूर्त काल लगता है, इसलिए इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। तथा अजघन्य स्थिति इसके पहले सर्वदा बनी रहती है और अभव्योंके इनका कभी अभाव नहीं होता, इसलिए इनकी अजघन्य स्थितिका काल अनादि-अनन्त और अनादि-सान्त कहा है। गति आदि मार्गणाओंमें इसी प्रकार अपनी अपनी विशेषता जानकर यह काल घटित कर लेना चाहिए।

**अन्तर**—सामान्यसे मोहनीयका एक बार उत्कृष्ट स्थितिबन्ध होकर पुनः वह अन्तर्मुहूर्तके बाद हो सकता है और एकेन्द्रियादि पर्यायोंमें परिभ्रमण करता रहे तो अनन्तकालके अन्तरसे होता है, इसलिए इसकी

उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है। तथा इसकी अनुत्कृष्ट स्थिति कमसे कम एक समयके अन्तरसे और अधिकसे अधिक अन्तर्मुहूर्तके अन्तरसे होती है, क्योंकि इसकी उत्कृष्ट स्थितिबन्धका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है, इसलिए इसकी अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है। उत्तर प्रकृतियोंकी अपेक्षा मिथ्यात्व और बारह कषायोंकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिका इसी प्रकार अन्तर काल जानना चाहिए। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्तके अन्तरसे भी हो सकती है और उपार्ध पुद्गल परिवर्तनके अन्तरसे भी हो सकती है, इसलिए इनकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध-पुद्गल परिवर्तनप्रमाण कहा है। तथा इनकी उत्कृष्ट स्थितिका काल एक समय होनेसे इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिका अन्तर एक समय होता है और जो जीव अर्धपुद्गल परिवर्तनके प्रारम्भमें और अन्तमें इनकी सत्ता प्राप्त कर मध्यके उपार्धपुद्गलपरिवर्तन काल तक इनकी सत्तासे रहित होता है उसके उपार्धपुद्गलपरिवर्तन-प्रमाण अन्तर हो सकता है, इसलिए अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर उक्तप्रमाण कहा है। अनन्तानु-बन्धीचतुष्ककी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय मिथ्यात्वके समान घटित कर लेना चाहिए। तथा जो वेदकसम्यग्दृष्टि इनकी विसंयोजना कर मध्यमें सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होकर कुछ कम दो छयासठ सागर काल तक इनके बिना रहता है उसके इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिका उक्त अन्तर देखा जाता है, इसलिए इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिका कुछ कम दो छयासठ सागरप्रमाण उत्कृष्ट अन्तर कहा है। नौ नोकषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर तथा अनुत्कृष्ट स्थितिका जघन्य अन्तर मिथ्यात्वके समान ही है। मात्र इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिके उत्कृष्ट अन्तरमें भेद है। बात यह है कि पाँच नोकषायोंका स्थितिबन्ध सोलह कषायोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके समय भी सम्भव है, इसलिए इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर तो अन्तर्मुहूर्त बन जाता है पर चार नोकषायोंका बन्ध सोलह कषायोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धके समय सम्भव नहीं है, इसलिए इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर एक आवलि प्राप्त होता है। जघन्यकी अपेक्षा मोहनीय सामान्यकी जघन्य स्थिति क्षपकश्रेणिके अन्तिम समयमें प्राप्त होती है, इसलिए इसकी जघन्य और अजघन्य स्थितिका अन्तर काल नहीं है। इसी प्रकार मिथ्यात्व बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी जघन्य और अजघन्य स्थितिका अन्तर काल नहीं है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिका भी अन्तर काल नहीं है। इसकी अजघन्य स्थितिका अन्तर अनुत्कृष्टके समान है। सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थिति उद्वेलनाके समय और क्षपणाके समय होती है, इसलिए इसकी जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है, क्योंकि जो जीव इसकी उद्वेलना करके और दूसरे समयमें सम्यक्त्वके साथ पुनः इसकी सत्ता प्राप्त कर अन्तर्मुहूर्तमें इसकी क्षपणा करता है उसके यह अन्तर-काल बन जाता है। तथा इसका उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाण है, क्योंकि जो उपार्ध पुद्गल परिवर्तनके प्रारम्भमें इसकी सत्ता प्राप्त करके मध्य कालमें इसकी सत्तासे रहित रहता है और उपार्ध पुद्गल परिवर्तनके अन्तमें पुनः इसकी सत्ता प्राप्त कर क्षपणा करता है उसके इसकी जघन्य स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गल परिवर्तनप्रमाण देखा जाता है। इसकी अजघन्य स्थितिका अन्तर अनुत्कृष्टके समान है यह स्पष्ट ही है। अनन्तानुबन्धी विसंयोजना प्रकृति है, इसलिए इसकी जघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गलपरिवर्तन प्रमाण प्राप्त हो जाता है इसलिए वह उक्त प्रमाण कहा है। तथा इसकी विसंयोजना होकर कम से कम अन्तर्मुहूर्त काल तक और अधिकसे अधिक कुछ कम दो छयासठ सागर काल तक इसका अभाव रहता है, इसलिए इसकी अजघन्य स्थितिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ सागरप्रमाण कहा है। गति आदि मार्गणाओंमें अपने अपने स्वामित्वको जानकर इसी प्रकार यह अन्तरकाल घटित कर लेना चाहिए।

**भंगविचय**—जो उत्कृष्ट स्थितिवाले होते हैं वे अनुत्कृष्ट स्थितिवाले नहीं होते और जो अनुत्कृष्ट स्थितिवाले होते हैं वे उत्कृष्ट स्थितिवाले नहीं होते। इसी प्रकार जघन्य और अजघन्य स्थितिकी अपेक्षा

भी यह अर्थपद जानना चाहिए। इस अर्थपदके अनुसार १ कदाचित् सब जीव मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिसे रहित है; २ कदाचित् बहुत जीव मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिसे रहित है और एक जीव उत्कृष्ट स्थितिवाला है, ३ कदाचित् बहुत जीव मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिसे रहित है और बहुत जीव उत्कृष्ट स्थितिवाले है ये तीन भङ्ग होते है। अनुत्कृष्ट स्थितिकी अपेक्षा १ कदाचित् सब जीव मोहनीयकी अनुत्कृष्ट स्थितिवाले है, २ कदाचित् बहुत जीव मोहनीयकी अनुत्कृष्ट स्थितिवाले है और एक जीव अनुत्कृष्ट स्थितिसे रहित है, ३ कदाचित् बहुत जीव मोहनीयकी अनुत्कृष्ट स्थितिवाले है और बहुत जीव अनुत्कृष्ट स्थितिसे रहित है ये तीन भंग होते है। उत्तर २८ प्रकृतियोकी अपेक्षा ये ही भङ्ग जानने चाहिए। मोहनीय सामान्य की जघन्य और अजघन्य स्थितिकी अपेक्षा भी जो उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिकी अपेक्षा तीन तीन भङ्ग कहे है उसी प्रकार तीन तीन भंग जानने चाहिए। २८ उत्तर प्रकृतियोकी अपेक्षा भी इसी प्रकार भङ्ग घटित कर लेने चाहिए। तात्पर्य यह है कि जो उत्कृष्ट स्थितिकी अपेक्षा तीन भङ्ग कहे है वे सर्वत्र जघन्य स्थितिकी अपेक्षा तीन भङ्ग जानने चाहिए और जो अनुत्कृष्ट स्थितिकी अपेक्षा तीन भङ्ग कहे हैं वे सर्वत्र अजघन्य स्थितिकी अपेक्षा तीन भङ्ग जानने चाहिए। गति आदि मार्गणाओमें भी अपनी अपनी विशेषताको जानकर ये भङ्ग ले आने चाहिए।

**भागाभाग**—मोहनीय सामान्यकी अपेक्षा उत्कृष्ट स्थितिवाले जीव अनन्तवें भागप्रमाण है और अनुत्कृष्ट स्थितिवाले जीव अनन्त बहुभागप्रमाण है। इसी प्रकार मोहनीयकी छब्बीस उत्तर प्रकृतियोंकी अपेक्षा भागाभाग जानना चाहिए। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा उत्कृष्ट स्थितिवाले जीव असख्यातवे भागप्रमाण हैं और अनुत्कृष्ट स्थितिवाले जीव असख्यात बहुभागप्रमाण है। मोहनीय सामान्य और उत्तर प्रकृतियोकी अपेक्षा जघन्य और अजघन्य स्थितिवालोका इसी प्रकार भागाभाग है। अर्थात् जघन्य स्थितिवाले अनन्तवे भागप्रमाण है और अजघन्य स्थितिवाले अनन्त बहुभागप्रमाण है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा जघन्य स्थितिवाले जीव असंख्यातवे भागप्रमाण है और अजघन्य स्थितिवाले जीव असख्यात बहुभागप्रमाण हैं। गति आदि मार्गणाओमे अपनी अपनी संख्या आदिको जानकर यह भागाभाग घटित कर लेना चाहिए।

**परिमाण**—मोहनीय सामान्यकी अपेक्षा उत्कृष्ट स्थितिवाले जीव असख्यात है और अनुत्कृष्ट स्थितिवाले जीव अनन्त है। इसी प्रकार छब्बीस उत्तर प्रकृतियोंकी अपेक्षासे यह परिमाण जानना चाहिए। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिवाले जीव असख्यात है। मोहनीय सामान्यकी अपेक्षा जघन्य स्थितिवाले जीव संख्यात और अजघन्य स्थितिवाले जीव अनन्त है। छब्बीस उत्तर प्रकृतियोंकी अपेक्षा इसी प्रकार परिमाण जानना चाहिए। सम्यक्त्वकी अपेक्षा जघन्य स्थितिवाले जीव सख्यात है और अजघन्य स्थितिवाले जीव असख्यात है। तथा सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य और अजघन्य स्थितिवाले जीव असंख्यात है। गति आदि मार्गणाओमें अपने अपने परिमाणको और स्वामित्वको जानकर यह घटित कर लेना चाहिए।

**क्षेत्र**—मोहनीयकी उत्कृष्ट और जघन्य स्थितिवालोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है और अनुत्कृष्ट व अजघन्य स्थितिवालोका क्षेत्र सर्व लोकप्रमाण है। मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी अपेक्षा इसी प्रकार क्षेत्र जानना चाहिए। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य स्थितिवालोका क्षेत्र लोकके असख्यातवे भागप्रमाण हैं। गति आदि मार्गणाओमे अपने अपने स्वामित्वको व क्षेत्रको जानकर यह घटित कर लेना चाहिए।

**स्पर्शन**—मोहनीय सामान्यकी अपेक्षा उत्कृष्ट स्थितिवालोका वर्तमान स्पर्शन लोकके असख्यातवे भागप्रमाण, विहारादिकी अपेक्षा अतीत स्पर्शन त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण और मारणान्तिक पदकी अपेक्षा त्रसनालीके कुछ कम तेरह बटे चौदह भागप्रमाण है। तथा अनुत्कृष्ट स्थितिवालोका सर्व लोकप्रमाण स्पर्शन है। उत्तर प्रकृतियोकी अपेक्षा मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थितिवालोका यही स्पर्शन है। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थिति-

वालोंका यह स्पर्शन त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण है। तथा अन्य आचार्योंके अभिप्रायसे यह त्रसनालीके कुछ कम बारह बटे चौदह भागप्रमाण है। कारणका निर्देश पृ ३६८ के विशेषार्थमें किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति वेदकसम्यक्त्वकी प्राप्तिके प्रथम समयमें सम्भव है और ऐसे जीवोंका स्पर्शन त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण है, इसलिए यह स्पर्शन उक्त प्रमाण कहा है। इस अपेक्षासे वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिवालोंका उत्कृष्टके समान स्पर्शन तो बन ही जाता है। साथ ही मारणान्तिक और उपपादकी अपेक्षा सर्वलोक प्रमाण स्पर्शन भी बन जाता है इसलिए यह उक्तप्रमाण कहा है। मोहनीयकी जघन्य स्थिति क्षपकश्रेणिमें प्राप्त होता है, इसलिए इसकी जघन्य स्थितिवालोंका लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण स्पर्शन है और मोहनीयकी सत्तावाले जीव सर्व लोकमें पाये जाते हैं, इसलिए इसकी अजघन्य स्थितिवालोंका सर्वलोक प्रमाण स्पर्शन कहा है। उत्तर प्रकृतियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अपेक्षा इसी प्रकार स्पर्शन घटित कर लेना चाहिए। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिवालोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान और अजघन्य स्थितिवालोंका स्पर्शन अपने अनुत्कृष्टके समान है यह स्पष्ट ही है। तथा सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य और अजघन्य स्थितिवालोंका स्पर्शन अनुत्कृष्टके समान है यह भी स्पष्ट है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थिति देवोंके विहारादिके समय भी सम्भव है इसलिए इसवाले जीवोंका स्पर्शन वर्तमानकी अपेक्षा लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीतकी अपेक्षा त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण कहा है। इसके अजघन्य स्थितिवालोंका स्पर्शन सर्वलोकप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। गति आदि मार्गणाओंमें अपनी अपनी विशेषताको जानकर इसी प्रकार स्पर्शन घटित कर लेना चाहिए।

**काल**—नाना जीव मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका एक समय बन्ध करके दूसरे समयमें न करें यह सम्भव है और अधिकसे अधिक पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक करते रहें यह भी सम्भव है, इसलिए मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण कहा है। तथा इसकी अनुत्कृष्ट स्थितिका काल सर्वदा है यह स्पष्ट ही है। मोहनीयकी छब्बीस उत्तर-प्रकृतियोंकी अपेक्षा यह काल इसी प्रकार जानना चाहिए। मात्र सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है, क्योंकि मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिवाले जीव कमसे कम एक समय तक और अधिकसे अधिक आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त होते हैं। तथा इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिवालोंका काल सर्वदा है यह स्पष्ट ही है। मोहनीयकी जघन्य स्थितिवालोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है, क्योंकि क्षपकश्रेणिकी प्राप्तिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। तथा इसकी अजघन्य स्थितिवालोंका काल सर्वदा है। मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, बारह कषाय और तीन वेदवाले जीवोंका यह काल इसी प्रकार है। सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्क की जघन्य स्थितिवालोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। कारण स्पष्ट है। इनकी अजघन्य स्थितिवालोंका काल सर्वदा है। छह नोकषायोंकी जघन्य स्थितिवालोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है, क्योंकि एक स्थितिकाण्डकघातमें इतना काल लगता है और उत्कृष्ट काल सर्वदा है। गति आदि मार्गणाओंमें अपनी-अपनी विशेषता जानकर यह काल घटित कर लेना चाहिए।

**अन्तर**—मोहनीय सामान्य और अट्ठाईस उत्तर प्रकृतियोंकी अपेक्षा उत्कृष्ट स्थितिवालोंका जघन्य अन्तर एक समय है, क्योंकि एक समयके अन्तरसे उत्कृष्ट स्थितिकी प्राप्ति सम्भव है और उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है, क्योंकि उत्कृष्ट स्थितिबन्धके बाद उसका पुनः बन्ध होनेमें अधिकसे अधिक इतना अन्तरकाल प्राप्त होता है। इनकी अनुत्कृष्ट स्थितिवालोंका अन्तरकाल नहीं है यह स्पष्ट ही है। मोहनीयकी जघन्य स्थितिवालोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है। अजघन्य स्थितिवालोंका अन्तरकाल नहीं है। मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, आठ कषाय और छह नोकषायोंकी अपेक्षा यह अन्तरकाल इसी प्रकार घटित कर लेना चाहिए। सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी जघन्य स्थिति

वालोका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन-रात है, क्योंकि सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवालोका और सम्यक्त्वसे मिथ्यात्वमें जानेवाले जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन-रात है, इसलिए यह उत्कृष्ट अन्तर उक्त कालप्रमाण कहा है। तीन सज्वलन और पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिवालोका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक एक वर्ष है, क्योंकि इन प्रकृतियोंके उदयसे इतने कालके अन्तरसे क्षपकश्रेणिपर आरोहण करना सम्भव है। लोभसज्वलनकी जघन्य स्थितिवालोका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है, क्योंकि क्षपकश्रेणिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिवालोका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर संख्यात वर्ष है, क्योंकि इन वेदवालोका इतने कालके अन्तरसे क्षपकश्रेणि पर आरोहण करना सम्भव है। इन सब प्रकृतियोंकी अजघन्य स्थितिवालोका अन्तर काल नहीं है यह स्पष्ट ही है। गति आदि मार्गणाओं में अपनी अपनी विशेषता जानकर यह अन्तरकाल ले आना चाहिए।

**सन्निकर्ष**—मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिवाले जीवके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्ता होती भी है और नहीं भी होती। यदि अनादि मिथ्यादृष्टि जीव है या जिन्होंने इन दोनोकी उद्वेलना कर दी है उनके सत्ता नहीं होती, शेष जीवोंके होती है। जिनके सत्ता होती है उनकी इनकी स्थिति नियमसे अनुत्कृष्ट होती है, क्योंकि मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति मिथ्यात्व गुणस्थानमें होती है और इनकी उत्कृष्ट स्थिति वेदकसम्यक्त्वकी प्राप्तिके प्रथम समयमें होती है, इसलिए मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिवाले जीवके इन दोनोकी उत्कृष्ट स्थितिका निषेध किया है। इनकी अनुत्कृष्ट स्थिति भी अन्तर्मुहूर्त कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर एक स्थितिपर्यन्त होती है। कारण स्पष्ट है। इतनी विशेषता है कि अन्तिम जघन्य उद्वेलनाकाण्डककी अन्तिम फालिमें जितने निषेक होते है उतने मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके साथ इन दोनो प्रकृतियोंकी अनुत्कृष्ट स्थितिके सन्निकर्ष विकल्प नहीं होते। मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिवाले जीवके सोलह कषायोंकी उत्कृष्ट स्थिति भी होती है और अनुत्कृष्ट स्थिति भी होती है। यदि मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करते समय सोलह कषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता है तो उत्कृष्ट स्थिति होती है, अन्यथा अनुत्कृष्ट स्थिति होती है जो अपनी उत्कृष्ट स्थितिकी अपेक्षा कमसे कम एक समय और अधिकसे अधिक पल्यके असंख्यातवे भागप्रमाण कम होती है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य और रतिकी नियमसे अनुत्कृष्ट स्थिति होती है, क्योंकि उस समय इनका बन्ध नहीं होता जो अपनी उत्कृष्ट स्थितिकी अपेक्षा कमसे कम अन्तर्मुहूर्त कम होती है और इस प्रकार उत्तरोत्तर कम होती हुई इनकी अनुत्कृष्ट स्थिति अन्तःकोड़ाकोड़ी प्रमाण तक प्राप्त हो सकती है। मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिके समय शेष पाँच नोकषायोंकी स्थिति उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी होती है। यदि उस समय सोलह कषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध होकर एक आवलि कम उसका पाँच नोकषायोंमें संक्रमण हो रहा है तो उत्कृष्ट स्थिति होती है, अन्यथा अनुत्कृष्ट स्थिति होती है जो अपनी उत्कृष्ट स्थितिकी अपेक्षा एक समय कमसे लेकर पल्यका असंख्यातवा भाग कम बीस कोड़ाकोड़ी सागर तक सम्भव है। इस प्रकार मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको प्रधान करके सन्निकर्षका विचार किया।

सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट स्थितिवालेके मिथ्यात्वकी स्थिति नियमसे अनुत्कृष्ट होती है जो अपनी उत्कृष्ट स्थितिकी अपेक्षा अन्तर्मुहूर्त कम होती है। उस समय सम्यग्मिथ्यात्वकी स्थिति नियमसे उत्कृष्ट होती है। कारण स्पष्ट है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी स्थिति नियमसे अनुत्कृष्ट होती है जो अपनी उत्कृष्ट स्थितिकी अपेक्षा अन्तर्मुहूर्त कमसे लेकर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कम तक होती है। सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिको मुख्य करके इसी प्रकार सन्निकर्ष विकल्प जानना चाहिए। मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिको मुख्य करके पहले सन्निकर्ष कह आये हैं उसी प्रकार सोलह कषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिकी अपेक्षा सन्निकर्ष जानना चाहिए।

स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिवालेके मिथ्यात्वकी स्थिति नियमसे अनुत्कृष्ट होती है जो अपनी उत्कृष्टकी अपेक्षा एक समय कमसे लेकर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कम तक होती है। सम्यक्त्व और सम्यग्मि-

थ्यात्वकी स्थिति नियमसे अनुत्कृष्ट होती है जो अपनी उत्कृष्टकी अपेक्षा अन्तर्मुहूर्त कमसे लेकर एक स्थिति तक होती है। मात्र इनकी अन्तिम जघन्य स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिको इन सन्निकर्ष विकल्पोंमेंसे कम कर देना चाहिए। सोलह कषायोंकी नियमसे अनुत्कृष्ट स्थिति होती है जो अपनी उत्कृष्टकी अपेक्षा एक समय कमसे लेकर एक आवलि कम तक होती है। पुरुषवेदकी स्थिति नियमसे अनुत्कृष्ट होती है जो अन्तर्मुहूर्त कमसे लेकर अन्तःकोड़ाकोड़ी सागर तक होती है। हास्य और रतिकी स्थिति उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी होती है। स्त्रीवेदके बन्धके समय हास्य और रतिका बन्ध होता है तो उत्कृष्ट होती है, अन्यथा अनुत्कृष्ट होती है जो अपनी उत्कृष्टकी अपेक्षा एक समय कमसे लेकर अन्तःकोड़ाकोडी सागर तक होती है। अरति और शोककी स्थिति उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी होती है। स्त्रीवेदके बन्धके समय इनका बन्ध होता है तो उत्कृष्ट होती है, अन्यथा अनुत्कृष्ट होती है जो अपनी उत्कृष्टकी अपेक्षा एक समय कमसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भागकम बीस कोड़ाकोड़ी सागर तक होती है। नपुंसकवेदकी स्थिति नियमसे अनुत्कृष्ट होती है जो एक समय कमसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भाग कम बीस कोड़ाकोडी सागर तक होती है। भय और जुगुप्साकी स्थिति नियमसे उत्कृष्ट होती है। पुरुषवेदकी उत्कृष्ट स्थितिको मुख्य करके इसी प्रकार सन्निकर्ष जानना चाहिए। हास्य और रतिकी उत्कृष्ट स्थितिको मुख्य करके भी इसी प्रकार सन्निकर्ष जानना चाहिए। मात्र इनके स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी अनुत्कृष्ट स्थिति अपनी उत्कृष्ट स्थितिकी अपेक्षा एक समय कम आदि न होकर अन्तर्मुहूर्त आदि कम होती है। कारणकी जानकारीके लिए पृष्ठ ४७३ देखो।

नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट स्थितिवाले जीवके मिथ्यात्वकी स्थिति उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी होती है। अनुत्कृष्ट स्थिति अपनी उत्कृष्टकी अपेक्षा एक समय कमसे लेकर पल्यके असंख्यातवें भागतक कम होती है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी स्थिति नियमसे अनुत्कृष्ट होती है, जो अन्तर्मुहूर्त कमसे लेकर एक स्थिति तक होती है। सोलह कषायोंकी स्थिति उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी होती है। अनुत्कृष्ट स्थिति एक समय कमसे लेकर एक आवलि कम तक होती है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी स्थिति नियमसे अनुत्कृष्ट होती है जो अपनी उत्कृष्टकी अपेक्षा अन्तर्मुहूर्त कमसे लेकर अन्तःकोडाकोडी सागर तक होती है। हास्य और रतिकी स्थिति उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी होती है जो अपनी उत्कृष्टकी अपेक्षा एक समय कमसे लेकर अन्तःकोड़ाकोड़ी सागर तक होती है। अरति और शोककी स्थिति उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी होती है। अनुत्कृष्ट स्थिति अपनी उत्कृष्टकी अपेक्षा एक समय कमसे लेकर पल्यका असंख्यातवाँ भागकम बीस कोड़ाकोडी सागर तक होती है। भय और जुगुप्साकी स्थिति नियमसे उत्कृष्ट होती है। इसी प्रकार अरति, शोक, भय और जुगुप्साकी उत्कृष्ट स्थितिको मुख्य करके सन्निकर्ष जानना चाहिए। यहाँ जो विशेषता है उसे ४८३ पृष्ठसे जान लेनी चाहिए।

मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिवालेके अनन्तानुबन्धीचतुष्कका सत्त्व नहीं होता, क्योंकि दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके समय मिथ्यात्वकी जघन्य स्थिति होती है और अनन्तानुबन्धीकी इससे पूर्व विसंयोजना हो जाती है। शेष कर्मोंकी स्थिति नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है। सम्यक्त्वकी जघन्य स्थितिवालेके मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचारकी सत्ता नहीं होती। शेष कर्मोंकी अजघन्य असंख्यातगुणी स्थिति होती है। सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिवालेके मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धीचारकी सत्ता है भी और नहीं भी है। उद्वेलनाके समय सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिवाले जीवके सम्यक्त्वकी सत्ता नहीं है शेषकी है और क्षपणाके समय सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिवालेके मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचारकी सत्ता नहीं होती, सम्यक्त्वकी होती है। जब इनकी सत्ता होती है तो इनकी नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी होती है। इन छह प्रकृतियोंके सिवा शेष प्रकृतियोंकी नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी स्थिति होती है।

अनन्तानुबन्धी क्रोधकी जघन्य स्थितिवालेके मिथ्यात्व आदि सब प्रकृतियोंकी नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी स्थिति होती है। मात्र अनन्तानुबन्धी मान आदि तीनकी जघन्य स्थिति होती है। इसी प्रकार

अनन्तानुबन्धी मान आदि तीनकी जघन्य स्थिति की मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। अप्रत्याख्यानावरण क्रोधकी जघन्य स्थितिवालेके चार संज्वलन और नौ नोकषायोंकी नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी स्थिति होती है। अप्रत्याख्यानावरण मान आदि तीन और प्रत्याख्यानावरण चतुष्ककी नियमसे जघन्य स्थिति होती है। इसी प्रकार इन सात कषायोंकी जघन्य स्थितिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

स्त्रीवेदकी जघन्य स्थितिवालेके सात नोकषाय और तीन संज्वलनोंकी नियमसे अजघन्य संख्यातगुणी स्थिति होती है और लोभसंज्वलनकी अजघन्य असंख्यातगुणी स्थिति होती है। नपुंसकवेदकी जघन्य स्थितिवालेके इसी प्रकार सन्निकर्ष जानना चाहिए। पुरुषवेदकी जघन्य स्थितिवालेके तीन संज्वलनोंकी अजघन्य संख्यात-गुणी स्थिति होती है और लोभ संज्वलनकी अजघन्य असंख्यातगुणी स्थिति होती है।

हास्यकी जघन्य स्थितिवालेके तीन संज्वलन और पुरुषवेदकी अजघन्य संख्यातगुणी स्थिति होती है और लोभसज्वलनकी अजघन्यअसख्यातगुणी स्थिति होती है। तथा पाँच नोकषायोंकी जघन्य स्थिति होती है। इसी प्रकार पाँच नोकषायोंकी जघन्य स्थितिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

क्रोधसंज्वलनकी जघन्य स्थितिवालेके दो संज्वलनकी अजघन्य संख्यातगुणी और लोभसंज्वलनकी अजघन्य असंख्यातगुणी स्थिति होती है। मानसंज्वलनकी जघन्य स्थितिवालेके मायासंज्वलनकी अजघन्य संख्यातगुणी और लोभसज्वलनकी अजघन्य असंख्यातगुणी स्थिति होती है। मायासंज्वलनकी जघन्य स्थिति-वालेके लोभसंज्वलनकी अजघन्य असंख्यातगुणी स्थिति होती है। लोभसंज्वलनकी जघन्य स्थितिवालेके अन्य प्रकृतियाँ नहीं होतीं।

**भाव**—मूल और उत्तर प्रकृतियोंकी अपेक्षा सर्वत्र औदयिक भाव है।

**अल्पबहुत्व**—सामान्यसे मोहनीयकी उत्कृष्ट स्थितिवाले जीव थोड़े हैं, क्योंकि उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध संज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त मिथ्यादृष्टि जीव करते है। इनसे अनुत्कृष्ट स्थितिवाले अनन्तगुणे है। कारण स्पष्ट है। जघन्यकी अपेक्षा मोहनीयकी जघन्य स्थितिवाले सबसे थोड़े है, क्योंकि क्षपक सूक्ष्मसाम्परायिक जीवके अन्तिम समयमे मोहनीयका जघन्य स्थिति होती है। इनसे अजघन्य स्थितिवाले जीव अनन्तगुणे है। उत्तर प्रकृतियोंकी अपेक्षा यहा स्थिति अल्पबहुत्वका विचार किया है जिसका ज्ञान अद्धाच्छेदसे हो सकता है, इसलिएयहांवह नहीं दिया जाता है।

इस प्रकार कुल तेईस अनुयोगद्वारोंका आश्रय लेकर स्थितिविभक्तिका विचार करके आगे भुजगार, पदनिक्षेप, वृद्धि और स्थितिसत्कर्मस्थान इन अधिकारोंका अवलम्बन लेकर विचार करके स्थितिविभक्ति समाप्त होती है। इन अधिकारोंकी विशेष जानकारीके लिए मूलग्रन्थका स्वाध्याय करना आवश्यक है।

———

# विषय-सूची

---

# कसायपाहुडस्स

# ट्ठिदिविहत्ती

## तदियो अत्थाहियारो

सिरि-जइवसहाइरियविरइय-चुण्णिसुत्तसमण्णिदं

सिरि-भगवंतगुणहरभडारओवइट्ठं

# कसायपाहुडं

तस्स

सिरि-वीरसेणाइरियविरइया टीका

# जयधवला

तत्थ

## उत्तरपयडिट्ठिदिविहत्ती णाम विदिओ अत्थाहियारो

*** जे भुजगार-अप्पदर-अवट्ठिद-अवत्तव्वया तेसिमट्ठपदं ।**

§ १. किमट्ठपदं णाम ? भुजगार-अप्पदर-अवट्ठिदावत्तव्वयाणं सरूवं तं परूवेमि त्ति भणिदं होदि । तं किमट्ठं वुच्चदे ? अणवगयचदुसरूवस्स भुजगारविसओ बोहो सुहेण ण उप्पज्जदि त्ति तदुप्पायणट्ठं वुच्चदे ।

*** अब जो भुजगार, अल्पतर, अवस्थित और अवक्तव्य पद हैं उनका अर्थपद कहते हैं ।**

§ १. **शंका**—यहाँ अर्थपद से क्या तात्पर्य है ?

**समाधान**—भुजगार; अल्पतर, अवस्थित और अवक्तव्यका जो स्वरूप है उसे कहते हैं यह इसका तात्पर्य है ।

**शंका**—भुजगार आदिका स्वरूप किसलिये कहते हैं ?

**समाधान**—जिन्होंने भुजगार आदि चारोंका स्वरूप नहीं जाना है उन्हें भुजगार विषयक ज्ञान सुखपूर्वक नहीं उत्पन्न होता है, अतः भुजगारादि विषयक ज्ञानके सुखपूर्वक उत्पन्न करानेके लिये उनके स्वरूपका कथन करते हैं ।

*** जत्तियाओ अस्सिं समए ट्ठिदिविहत्तीओ उस्सक्काविदे अणंतरविदिक्कंते समए अप्पदराओ बहुदरविहत्तिओ एसो भुजगारविहत्तिओ।**

§ २. 'अस्सिं' समए अस्मिन् वर्तमानसमये 'जत्तियाओ' यावन्त्यः 'ट्ठिदिविहत्तीओ' स्थितिविभक्तयः स्थितिविकल्पाः इति यावत्। 'उस्सक्काविदे' तासूत्कर्षितासु वर्द्धितासु इत्यर्थः। 'अणंतरविदिक्कंते समए' अनन्तरव्यतिक्रान्ते समये। अप्पदराओ अल्पतराः स्थितयो यदि भवन्ति। बहुदरविहत्तिओ स बहुतरस्थितिविकल्पो जीवः। एसो भुजगारविहत्तिओ। स एष जीवो भुजगारविभक्तिः। अणंतरादीदट्ठिदीहिंतो जदि वट्टमाणसमए बहुआओ ट्ठिदीओ बंधदि तो भुजगारविहत्तिओ त्ति भणिदं होदि।

*** ओसक्काविदे बहुदराओ विहत्तीओ एसो अप्पदरविहत्तिओ।**

§ ३. 'बहुदराओ विहत्तीओ' अनन्तरव्यतिक्रान्ते समये बहुस्थितिविकल्पेषु व्यवस्थितेषु 'ओसक्काविदे' वर्तमानसमये स्थितिकांडघातेन अधःस्थितिगलनेन वा अपकर्षितेषु। एसो अप्पदरविहत्तिओ एषः अल्पतरविभक्तिकः।

*** ओसक्काविदे [ उस्सक्काविदे वा ] तत्तियाओ चेव विहत्तीओ एसो अवट्ठिदविहत्तिओ।**

§ ४. ओसक्काविदे उस्सक्काविदे वा जदि तत्तियाओ तत्तियाओ चेव ट्ठिदिबंधवसेण

*** इस समयमें जितनी स्थितिविभक्तियां हैं उनके, अनन्तर व्यतीत हुए समयमें अल्पतर स्थितिविभक्तियोंको उत्कर्षित करके, बांधने पर वह बहुतरविभक्तिवाला जीव भुजगारस्थितिविभक्तिवाला होता है।**

§ २. 'अस्सि समए' का अर्थ 'इस वर्तमान समयमें' है। 'जात्तियाओ' का अर्थ 'जितनी' है। 'ट्ठिदिविहत्तीओ' का अर्थ स्थितिविभक्तियाँ अर्थात् स्थितिविकल्प है। 'उस्सक्काविदे' का अर्थ 'उनके उत्कर्षित करने पर अर्थात् बढ़ाने पर' है। 'अणंतरविदिक्कंते समए' का अर्थ 'अनन्तर व्यतीत हुए समयमें' है। 'अप्पदराओ' अर्थात् 'अल्पतर स्थितियाँ' यदि होती हैं। तो वह बहुदरविहत्तिओ' अर्थात् 'बहुत स्थितिविकल्पवाला जीव' है। 'एसो भुजगारविहत्तिओ' अर्थात् यह भुजगारविभक्तिवाला जीव है। इसका यह तात्पर्य है कि अनन्तर अतीत समयसे यदि वर्तमान समयमें जीव बहुत स्थितियोंका बन्ध करता है तो वह भुजगारविभक्तिवाला कहा जाता है।

*** जो अनन्तर अतीत समयमें बहुतर स्थितिविभक्तियोंमें रहकर पुनः उन्हें अपकर्षित करके इस वर्तमान समयमें अल्पतर स्थितिविभक्तियोंको प्राप्त होगया वह जीव अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला होता है।**

§ ३. 'बहुदराओ विहत्तीओ' अर्थात् जो अनन्तर अतीत हुए समयमें बहुत स्थितिविकल्पोंमें रहा वह जब 'ओसक्काविदे' अर्थात् इस वर्तमान समयमें स्थितिकाण्डकघात या अधःस्थितिगलनाके द्वारा बहुत स्थितियोंको घटाकर अल्पतर स्थितिविभक्ति कर देता है तब वह जीव अल्पतर स्थितिविभक्तवाला होता है।

*** अपकर्षित करने पर या उत्कर्षित करने पर यदि उतनी ही स्थितियां रहें तो वह जीव अवस्थितविभक्तिवाला होता है।**

§ ४. अपकर्षित करने पर या उत्कर्षित करने पर यदि स्थितिबन्धके कारण उतनी ही स्थिति-

**द्विदिविहत्तीओ होंति तो एसो अवट्ठिदविहत्तिओ णाम।**

*** अविहत्तियादो विहत्तियाओ एसो अवत्तव्वविहत्तिओ।**

§ ४. **णिस्संतकम्मिओ होदूण जदि स संतकम्मिओ होदि तो अवत्तव्वविहत्तिओ होदि; वड्ढिहाणिअवट्ठाणाणमभावादो। तदभावो वि पुव्वं संतकम्मस्स अभावादो; पुव्विल्ल-संतकम्ममवेक्खिय ट्ठिदवड्ढिहाणिअवट्ठाणाणं ण तेण विणा संभवो हिदि; विरोहादो। तम्हा ते अवेक्खिय अवत्तव्वं सिद्धं; अण्णहा अवत्तव्वसद्देण वि तस्साऽवत्तप्पसंगादो।**

*** एदेण अट्ठपदेण।**

§ ६. **एदमट्ठपदं काऊण उवरि भण्णमाणअणियोगद्दाराणं परूवणं कस्सामो।**

§ ७. **एत्थ ताव मंदबुद्धिजणाणुग्गहट्ठमुच्चारणा वुच्चदे। भुजगारे तेरस अणियोग-**

विभक्तियाँ होती हैं जितनी कि पिछले समयमें थीं तो वह जीव अवस्थितविभक्तिवाला होता है।

*** जो अविभक्तिकसे पुनः विभक्तिवाला होता है वह अवक्तव्यविभक्तिवाला जीव है।**

§ ५. जो निःसत्त्वकर्मवाला होकर यदि पुनः सत्कर्मवाला होता है तो वह अवक्तव्य-विभक्तिवाला जीव है, क्योंकि इसके वृद्धि, हानि और अवस्थानका अभाव है। वृद्धि, हानि और अवस्थानका अभाव भी पहले सत्तामें स्थित कर्मोंके अभावसे होता है; क्योंकि जो वृद्धि, हानि और अवस्थान पहले सत्तामें स्थित कर्मोंकी अपेक्षासे पाये जाते थे उनका सत्तामें स्थित कर्मोंके बिना पाया जाना सम्भव नहीं है। अन्यथा विरोध आता है। इसलिये उक्त अपेक्षासे अवक्तव्य विकल्प है यह बात सिद्ध हुई, अन्यथा अवक्तव्य शब्दसे भी उसके अवक्तव्यपनेका प्रसंग प्राप्त होता है। अर्थात् पूर्वोक्त प्रकारसे यदि अवक्तव्य भंग न माना जाय तो उसे 'अवक्तव्य' इस शब्दके द्वारा भी नहीं कह सकेंगे।

**विशेषार्थ**—यहाँ स्थितिसत्त्वकी अपेक्षा भुजगार आदिका विचार किया गया है, अतः इसके अनुसार भुजगार आदिके निम्न लक्षण प्राप्त होते हैं—जिस जीवके अनन्तर अतीत समयमें अल्प स्थिति है वह यदि वर्तमान समयमें बन्ध या संक्रमके द्वारा उससे अधिक स्थितिको प्राप्त करता है तो वह भुजगार स्थितिविभक्तिवाला जीव कहा जाता है। जिसके अनन्तर अतीत समयमें अधिक स्थिति है वह यदि स्थितिघात या अधःस्थितिगलना के द्वारा वर्तमान समयमें कम स्थिति कर लेता है तो वह अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला जीव कहा जाता है। जिस जीवके स्थितिकी घटाबढ़ी होते हुए भी बन्धके वशसे प्रथमादि समयोंके समान द्वितीयादि समयोंमें स्थिति बनी रहती है वह जीव अवस्थित स्थितिविभक्तिवाला कहा जाता है। तथा जो निःसत्त्वकर्मवाला होकर पुनः स्थितिसत्कर्मको प्राप्त करता है वह अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाला कहा जाता है। प्रकृत अनुयोगद्वारमें इन्हींकी अपेक्षा मोहनीयके अवान्तर भेदोंकी स्थितिका विचार किया गया है।

*** इस अर्थपदके अनुसार।**

§ ६. इस अर्थपदको करके आगे कहे जानेवाले अनुयोगद्वारोंका कथन करते हैं।

§ ७. अब यहाँ मन्दबुद्धि जनोंपर अनुग्रह करनेके लिये उच्चारणाका कथन करते हैं—

**द्दाराणि णादव्वाणि भवंति–समुक्कित्तणा सामित्तं कालो अंतरं णाणाजीवेहि भंगविचओ भागाभागं परिमाणं खेत्तं पोसणं कालो अंतरं भावो अप्पाबहुए त्ति। समुक्कित्तणाणुगमेण दुविहो णिद्देसो–ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० अत्थि भुजगार-अप्पदर–अवट्ठिदविहत्तिया। सम्मत्त-सम्मामि० अणंताणु०चउक्काणमेवं चेव। णवरि अत्थि अवत्तव्वं पि। एवं सव्वणेरइय-तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्ख-पंचिंदियतिरि०पज्ज० पंचिंदियतिरिक्खजोणिणी-मणुसतिय-देव० भवणादि जाव सहस्सार०-पंचिंदिय-पंचिं०-पज्ज०-तस-तसपज्ज०-पंचमण०-पंचवचि०-कायजोगि०-ओरालिय०–वेउव्विय०–तिण्णिवेद-चत्तारिक०-असंजद०-चक्खु०-अचक्खु०-पंचले०भवसि०-सण्णि-आहारि त्ति।**

**§ ८. पंचिं०तिरिक्खअपज्जत्त० छव्वीसं पयडीणमोघं। सम्मत्त-सम्मामि० अत्थि अप्पदरं चेव। अणंताणु०चउक्क० अव्वत्तव्वं णत्थि। एवं मणुसअपज्ज० सव्वएइंदिय-सव्वविगलिंदिय–पंचिं०अपज्ज०-सव्वपंचकाय०–तसअपज्जत्त-ओरालियमिस्स०-वेउव्विय-मि०-कम्मइय०मदि-सुद०-विहंग०-मिच्छादि०-असण्णि०-अणाहारि त्ति।**

भुजगार स्थितिविभक्तिमें तेरह अनुयोगद्वार ज्ञातव्य हैं—समुत्कीर्तना, स्वामित्व, काल, अन्तर, नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय, भागाभाग, परिमाण, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर, भाव और अल्पबहुत्व। उनमेंसे समुत्कीर्तनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है- ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेंसे ओघकी अपेक्षा मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्तियोंके धारक जीव हैं। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी-चतुष्कका कथन इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनका अवक्तव्य भंग भी है। इसी प्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यंच, पंचेन्द्रियतिर्यंच, पंचेन्द्रियतिर्यंचपर्याप्त, पंचेन्द्रियतिर्यंच-योनिमती, सामान्य मनुष्य, मनुष्यपर्याप्त, मनुष्यिनी, सामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार-स्वर्गतकके देव, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस, त्रस पर्याप्त पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी, काययोगी, औदारिककाययोगी, वैक्रियिककाययोगी, तीनों वेदवाले, क्रोधादि चारों कषायवाले, असंयत, चक्षुदर्शनी, अचक्षुदर्शनी, कृष्णादि पाँच लेश्यावाले, भव्य, संज्ञी और आहारक जीवोंके जानना चाहिए।

**विशेषार्थ**—मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषाय इनका क्षय हो जाने के पश्चात् पुनः इनकी उत्पत्ति नहीं होती, अतः इनकी स्थितिमें ओघसे भुजगार अल्पतर और अवस्थित ये तीन विभक्तियाँ ही बनती है। किन्तु अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना हो जानेके पश्चात् पुनः उत्पत्ति सम्भव है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना हो जानेपर भी उनका सत्त्व पुनः प्राप्त हो जाता है, अतः इन छह प्रकृतियोंमें ओघसे भुजगार आदि चारों विभक्तियाँ बन जाती हैं। मूल में जितनी मार्गणाएँ गिनाई हैं उनमें ओघके समान व्यवस्था बन जाती है, अतः उनकी प्ररूपणाको ओघके समान कहा है।

§ ८. पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंमें छब्बीस प्रकृतियोंका भंग ओघके समान है। किन्तु सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अल्पतर ही है और अनन्तानुबन्धी चतुष्कका अवक्तव्य नहीं है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्त, सब एकेन्द्रिय, सब विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त, सब पाँचों स्थावरकाय, त्रस अपर्याप्त, औदारिकमिश्रकाययोगी, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाय-योगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, विभंगज्ञानी, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी और अनाहारक जीवोंके जानना।

§ ९. आणदादि जाव उवरिमगेवज्ज० मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० अत्थि अप्प० जीवा। अणंताणु०चउक्क० एवं चेव। णवरि अवत्तव्वं पि अत्थि। सम्मत्त-सम्मामि० ओघं एवं सुक्कले०। अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठ० सव्वपयडीणं अत्थि अप्प० जीवा। एवमाहार०-आहारमिस्स०-अवगद०-अकसा०-आभिणि०-सुद०-ओहि०-मणपज्ज०-संजद-सामाइय-छेदो०-परिहार-सुहुम०-जहाक्खाद०-संजदासंजद-ओहिदंस०-सम्मादि०-खइय०-वेदय०-उवसम०-सासण०-सम्मामिच्छाइट्ठि त्ति। अभव० छब्बीसं पयडीणमत्थि भुज०-अप्प०-अवट्ठि०विह०।

## एवं समुक्कित्तणाणुगमो समत्तो

**विशेषार्थ**—पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च लब्ध्यपर्याप्तकोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वको छोड़कर शेष छब्बीस प्रकृतियोंकी प्ररूपणाको ओघके समान कहा है। इसका यह तात्पर्य है कि जिस प्रकार ओघसे मिथ्यात्व आदिकी स्थितियोंमें भुजगार आदिका कथन किया है उसीप्रकार मनुष्य और तिर्यञ्च लब्ध्यपर्याप्तकोंके जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना तथा संयोजना नहीं होती, अतः इनके अनन्तानुबन्धीचतुष्कका अवक्तव्य भंग नहीं पायाजाता। तथा इनके एक मिथ्यात्व गुणस्थान ही होता है और मिथ्यात्व गुणस्थानमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वमें मिथ्यात्वका संक्रमण नहीं होता, अतः इनके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका एक अल्पतर भंग ही पाया जाता है। इसी प्रकार मूलमें और जितनी मार्गणाएँ गिनाई हैं उनमें भी सब प्रकृतियोंकी यही व्यवस्था जाननी चाहिये। यद्यपि उनमे कुछ ऐसी मार्गणाएं है जिनमें मिथ्यात्व और सासादन ये दो गुणस्थान होते है और औदारिकमिश्र आदि कुछ ऐसी मार्गणाएँ हैं जिनमें मिथ्यात्व, सासादन और अविरतसम्यग्दृष्टि ये तीन गुणस्थान होते है तो भी इतने मात्रसे उन मार्गणाओंमे सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिके होनेमें कोई अन्तर नहीं आता। इसका विशेष खुलासा स्वामित्व अनुयोगद्वारमें किया ही है।

§ ९. आनत कल्पसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिके धारक जीव हैं। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अपेक्षा इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इसका अवक्तव्य भंग भी है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। इसी प्रकार शुक्ललेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिए। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतरस्थितिविभक्तिके धारक जीव हैं। इसी प्रकार आहारककाययोगी, आहारकमिश्रकायोगी, अपगतवेदवाले, अकषायी, आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत, सूक्ष्मसांपरायिकसंयत, यथाख्यातसंयत, संयतासंयत, अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। अभव्योंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित विभक्ति के धारक जीव हैं।

**विशेषार्थ**—आनतकल्पसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंके वहाँ उत्पन्न होनेके पहले समयमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी जो स्थिति होती है वह उत्तरोत्तर कमती ही होती जाती है, बन्ध या संक्रमसे उसमें वृद्धि नहीं होती, अतः इन देवोंके उक्त कर्मोंकी एक अल्पतर स्थितिविभक्ति ही होती है। किन्तु अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी स्थितिमें अल्पतर और अवक्तव्य ये दो भंग होते है। बात यह है कि उक्त स्थानोंमें मिथ्यादृष्टि जीव भी उत्पन्न होते हे और जिन्होंने

*** सामित्तं। मिच्छत्तस्स भुजगार-अप्पदर-अवट्ठिदविहत्तिओ को होदि?**

§ १० सुगममेदं पुच्छासुत्तं।

*** अण्णदरो णेरइयो तिरिक्खो मणुस्सो देवो वा।**

§ ११. भुज०-अवट्ठिद० मिच्छाइट्ठिस्सेव। अप्पद० सम्मादिट्ठिस्स मिच्छादिट्ठिस्स वा।

*** अवत्तव्वओ णत्थि।**

§ १२. मिच्छत्तसंतकम्मे णिस्संतभावमुवगए पुणो तस्संतकम्मस्सुप्पत्तीए अभावादो।

सम्यक्त्व प्राप्त कर लिया है वे मिथ्यादृष्टि भी हो सकते हैं। अब यदि किसी सम्यग्दृष्टि देवने अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना की और वह कालान्तरमें मिथ्यादृष्टि हो गया हो तो उसके अनन्तानुबन्धी चतुष्कका अवक्तव्य भंग प्राप्त हो जाता है और शेष देवोंके अनन्तानुन्धी चतुष्कका अल्पतर भंग रहता है। तथा यहाँ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना भी होती है, अतः इन दोनों प्रकृतियोंके ओघके समान भुजगार आदि चारों भंग बन जाते हैं। इस प्रकार शुक्ललेश्यामें जानना चाहिये। तथा अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंके सब प्रकृतियोंकी स्थितिमें वृद्धि नहीं होती, अतः सब प्रकृतियोंकी स्थितिका एक अल्पतर भंग ही है। इसी प्रकार मूलमें और जितनी मार्गणाएं गिनाई हैं उनमें भी जानना चाहिये। जिस जीवने अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना की है वह सासादनमें भी जाता है और ऐसे जीवके सासादनके प्रथम समयमें ही अनन्तानुबन्धीका सत्त्व हो जाता है पर यहाँ सासादनगुणस्थानसे पूर्व अवस्थाका विचार सम्भव नहीं है, अतः सासादनमें अवक्तव्य नहीं होता। इसी कारण सासादनमें भी अनन्तानुबन्धी चतुष्कका एक अल्पतर भंग कहा है। अभव्योंके छब्बीस प्रकृतियोंका ही सत्त्व होता है और उनके उन सब प्रकृतियोंकी स्थितियोंमें वृद्धि, ह्रास और अवस्थान सम्भव है, अतः उनके छब्बीस प्रकृतियोंके तीन भंग कहे।

इस प्रकार समुत्कीर्तनानुगम समाप्त हुआ।

*** स्वामित्व कहते हैं। मिथ्यात्वकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित विभक्तिका स्वामी कौन है।**

१०. यह पृच्छासूत्र सुगम है।

*** कोई भी नारकी, तिर्यंच, मनुष्य और देव मिथ्यात्वकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्तिका स्वामी है।**

§ ११. भुजगार और अवस्थितविभक्ति मिथ्यादृष्टि के ही होती है तथा अल्पतरविभक्ति सम्यग्दृष्टि के भी होती है और मिथ्यादृष्टि के भी होती है।

*** मिथ्यात्वका अवक्तव्य भंग नहीं है।**

§ १२. क्योंकि मिथ्यात्वसत्कर्मके निःसत्त्वभावको प्राप्त होनेपर पुनः उसकी सत्कर्मरूपसे उत्पत्ति नहीं होती है।

**विशेषार्थ**—मिथ्यात्वका बन्ध मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें ही होता है और बन्धके बिना मिथ्यात्वकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्ति बन नहीं सकती, अतः मिथ्यात्वकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्ति मिथ्यादृष्टिके ही होती है यह मूलमें कहा है। तथा जो मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके अनन्तर उत्तरोत्तर कारणवश उसकी अल्पतर स्थितिका

*** सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं भुजगार-अप्पदरविहत्तिओ को होदि ?**

§ १३. सुगममेदं पुच्छासुत्तं ।

*** अण्णदरो णेरइयो तिरिक्खो मणुस्सो देवो वा ।**

§ १४. त्ति वत्तव्वं । भुजगारो सम्मादिट्ठीणं चेव । अप्पदरं पुण सम्मादिट्ठिस्स मिच्छादिट्ठिस्स वा ।

***अवट्ठिदविहत्तिओ को होदि ?**

§ १५. सुगममेदं ।

*** पुव्वुप्पण्णादो समत्तादो समयुत्तरमिच्छत्तेण से काले सम्मत्तं पडिवण्णो सो अवट्ठिदविहत्तिओ ।**

§ १६. तं जहा—सम्मत्तसंतकम्मं पेक्खिदूण समयुत्तरमिच्छत्तट्ठिदिसंतकम्मिएण सम्मत्ते गहिदे तग्गहणपढमसमए चेव समयुत्तरमिच्छत्तट्ठिदिसंतकम्मे सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तसरूवेण संकंते सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमवट्ठिदविहत्ती होदि । कुदो? चरिमसमयमिच्छाइट्ठिस्स सम्मत्तट्ठिदिसंतेण पढमसमयसम्माइट्ठिसम्मत्तट्ठिदिसंतस्स समाणत्तादो ।

बन्ध करता है या विशुद्ध परिणामोंके निमित्तसे जिसने मिथ्यात्व की स्थितिका घात किया है उस मिथ्यादृष्टिके और सम्यग्दृष्टिके मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्ति होती है। किन्तु मिथ्यात्वकी अवक्तव्यस्थितिविभक्ति नहीं होती, क्योंकि जिसने मिथ्यात्वका क्षय कर दिया है उसके पुनः मिथ्यात्वकी उत्पत्ति नहीं होती ।

*** सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार और अल्पतरस्थितिविभक्तिका स्वामी कौन है ?**

§ १३. यह पृच्छासूत्र सुगम है ।

*** कोई नारकी, तिर्यञ्च, मनुष्य और देव सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार और अल्पतर स्थितिविभक्तिका स्वामी है ।**

§ १४. ऐसा कहना चाहिए। भुजगार भंग सम्यग्दृष्टियोंके ही होता है। परन्तु अल्पतर भंग सम्यग्दृष्टिके भी होता है और मिथ्यादृष्टिके भी होता है ।

*** अवस्थित विभक्तिका स्वामी कौन है ।**

§ १५. यह सूत्र सुगम है ।

*** पहले उत्पन्न हुई सम्यक्त्व प्रकृतिसे एक समय अधिक स्थितिवाले मिथ्यात्वके साथ विद्यमान कोई एक जीव यदि तदनन्तर समयमें सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ है तो वह अवस्थितिविभक्तिका स्वामी है ।**

§ १६. खुलासा इस प्रकार है—जिस मिथ्यादृष्टि जीवके सत्तामें विद्यमान मिथ्यात्वकी स्थिति सत्तामें विद्यमान सम्यक्त्वकी स्थितिसे एक समय अधिक है वह जीव जब दूसरे समयमें सम्यक्त्वको ग्रहण करता है तब उसके सम्यक्त्वके ग्रहण करनेके प्रथम समयमें ही मिथ्यात्वकी एक समय अधिक स्थिति सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वरूपसे संक्रान्त हो जाती है, अतः उसके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अवस्थितविभक्ति होती है; क्योंकि मिथ्यादृष्टिके अन्तिम समयमें

**चरिमसमयमिच्छाइट्ठिस्स सम्मत्तणिसेगेहिंतो पढमसमयसम्माइट्ठिस्स सम्मत्तणिसेगा एगणिसेगेणब्भहिया, मिच्छत्तुदयसरूवेण त्थिवुक्कसंकमेण गच्छमाणसम्मत्तणिसेगस्स सम्माइट्ठिपढमसमए गमणाभावादो। तदो णावट्ठिदत्तं जुज्जदि त्ति ? ण एस दोसो, कालं पेक्खिदूण सम्मत्तस्स अवट्ठिदत्तुवलंभादो। तं जहा—मिच्छाइट्ठिचरिमसमए जत्तिया सम्मत्तट्ठिदी तत्तिया चेव सम्माइट्ठिपढमसमए वि, अधो एगसमए गलिदक्खणे चेव मिच्छत्तादो सम्मत्तम्मि उवरि एगसमयवड्ढिदंसणादो। णिसेगेहि अवट्ठिदत्तं जदि इच्छिज्जदि तो वि ण दोसो, कालमस्सिदूण सम्मत्त-मिच्छत्ताणं समाणट्ठिदिसंतकम्मिएण णिसेगे पडुच्च एगणिसेगेणाहियमिच्छत्तट्ठिदिसंतकम्मेण मिच्छादिट्ठिणा सम्मत्ते गहिदे चरिमपढमसमयमिच्छादिट्ठिसम्मादिट्ठीसु णिसेगाणं सरिसत्तुवलंभादो।**

§ १७. **सम्मामिच्छत्तस्स पुण हेट्ठा उवरिं च एगणिसेगाहियमिच्छाइट्ठिणा सम्मत्ते गहिदे अवट्ठिदत्तं होदि, सम्माइट्ठिपढमसमयम्मि एगे णिसेगे त्थिवुक्कसंकमेण गदे उवरि एगणिसेगस्स वड्ढिदंसणादो। सुत्तकारो पुण पहाणीकयकालो। तं कुदो णव्वदे ? सम्मत्तादो समयुत्तरमिच्छत्तेण सम्मत्ते पडिवण्णे सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमक्कमेण अवट्ठिद-भावपरूवणादो।**

सम्यत्वका जो स्थितिसत्त्व था, सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें प्राप्त हुआ सम्यक्त्वका स्थितिसत्त्व उसके समान है।

**शंका**—मिथ्यादृष्टिके अन्तिम समयमें जो सम्यक्त्वके निषेक हैं उनसे सम्यग्दृष्टिके पहले समयमें प्राप्त हुए सम्यक्त्वके निषेक एक अधिक हो जाते हैं, क्योंकि मिथ्यादृष्टिके मिथ्यात्वके उदय-रूपसे स्तिवुक संक्रमणके द्वारा प्राप्त होनेवाला सम्यक्त्वका निषेक सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें मिथ्यात्वके उदयरूपसे नहीं प्राप्त होता है। अर्थात् मिथ्यादृष्टिके सम्यक्त्वका निषेक स्तिवुक संक्रमणके द्वारा मिथ्यात्वरूप होता रहता है परन्तु सम्यक्त्वके प्राप्त होनेपर वह निषेक मिथ्यात्वरूप नहीं होता और इस प्रकार प्रकृतमें एक निषेककी वृद्धि हो जाती है, अतः सम्यक्त्वप्रकृतिका अवस्थितपना नहीं बनता है ?

**समाधान**—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि कालकी अपेक्षा सम्यक्त्वका अवस्थितपना बन जाता है। उसका खुलासा इस प्रकार है मिथ्यादृष्टिके अन्तिम समयमे सम्यक्त्वकी जितनी स्थिति थी उतनी ही सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें रही, क्योंकि नीचे एक समयके गलनेके समयमें ही मिथ्यात्वसे सम्यक्त्वमें ऊपर एक समयकी वृद्धि देखी जाती है।

अब यदि निषेकोंकी अपेक्षा अवस्थितपना चाहते हो तो भी दोष नहीं है, क्योंकि कालकी अपेक्षा जिसके सम्यक्त्व और मिथ्यात्वका स्थितिसत्कर्म समान है और निषेकोंकी अपेक्षा जिसके मिथ्यात्वका स्थितिसत्कर्म एक निषेक अधिक है ऐसे किसी एक मिथ्यादृष्टिके सम्यक्त्वके ग्रहण करने पर मिथ्यादृष्टिके अन्तिम और सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें दोनोंके निषेकोंकी समानता पाई जाती है।

§ १७. सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा तो जिसके नीचे और ऊपर एक निषेक अधिक हो ऐसे मिथ्यादृष्टिके सम्यक्त्वके ग्रहण करने पर अवस्थितपना प्राप्त होता है, क्योंकि सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें एक निषेकके स्तिवुकसंक्रमणके द्वारा चले जानेपर ऊपर एक निषेककी वृद्धि देखी जाती है। किन्तु चूर्णिसूत्रकारने तो कालकी प्रधानतासे कथन किया है।

**शंका**—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

**समाधान**—क्योंकि उन्होंने सम्यक्त्व प्रकृतिसे एक समय अधिक स्थितिवाले मिथ्यात्वके

§ १८. किं च जदि णिसेगेहि चेव सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमवट्ठिदत्तमिच्छिज्जदि तो अंतरकरणं काऊण मिच्छत्तपढमट्ठिदिं गालिय विदियट्ठिदीए घरिदद्संणतियट्ठिदि-संतकम्मस्स उवसमसम्माइट्ठिस्स वि अवट्ठिदत्तं होदि, तत्थ दंसणमोहणिसेगाणं गलणाभावादो। ण च जइवसहाइरिएण एत्थ अवट्ठिदभावो परूविदो। तदो जाणिज्जइ जहा जइवसहाइरियो एत्थुद्देसे पहाणीकयकालो त्ति। जुत्तीए वि एसो चेव अत्थो जुज्जदे, कम्मक्खंधाणं कम्मभावेणावट्ठाणस्स कम्मट्ठिदित्तादो। ण च कम्मक्खंधो ट्ठिदी; पयडि-ट्ठिदि-अणुभागाधारस्स ट्ठिदित्तविरोहादो।

* अवत्तव्वविहत्तिओ अण्णदरो।

§ १९. कुदो ? अण्णदरगईए अण्णदरकसाएण अण्णदरतसपाओग्गोगाहणाए अण्णदरलेस्साए णिस्संतीकयसम्मत्त-सम्मामिच्छत्तेण मिच्छादिट्ठिणा पढमसम्मत्ते गहिदे अवत्तव्वभावुवलंभादो।

साथ सम्यक्त्व प्राप्त होनेपर सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अक्रमसे अवस्थितपना कहा है। इससे मालूम होता है कि चूर्णिसूत्रमें कालकी प्रधानतासे कथन किया है।

§ १८. दूसरे यदि निषेकोंकी अपेक्षा ही सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अवस्थितपना स्वीकार किया जाय तो अन्तरकरण करके और मिथ्यात्वकी प्रथम स्थितिको गलाकर दूसरी स्थितिमें जिसने दर्शनमोहनीयकी तीन प्रकृतियोंका स्थितिसत्कर्म प्राप्त कर लिया है ऐसे प्रथमोपशम-सम्यग्दृष्टिके भी सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अवस्थितपना प्राप्त होता है, क्योंकि वहाँपर दर्शनमोहनीयके निषेकोंका गलन नहीं होता है। परन्तु यतिवृषभ आचार्यने यहाँपर अवस्थितपनेका कथन नहीं किया है। इससे जाना जाता है कि यतिवृषभ आचार्यने इस उद्देशमें कालको प्रधानतासे कथन किया है। युक्तिसे भी यही अर्थ जुड़ता है, क्योंकि कर्मस्कन्धोंका कर्मरूपसे रहना ही कर्मस्थिति कही जाती है। केवल कर्मस्कन्ध स्थितिरूप नहीं हो सकता क्योंकि प्रकृति, स्थिति और अनुभागके आधारको केवल स्थिति माननेमें विरोध आता है।

* अवक्तव्यविभक्तिवाला कोई भी जीव होता है।

§ १९. क्योंकि जिसने सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वको निःसत्त्व कर दिया है ऐसे किसी एक मिथ्यादृष्टि जीवके अन्यतर गति, अन्यतर कषाय, त्रस पर्यायके योग्य अन्यतर अवगाहना और अन्यतर लेश्याके रहते हुए प्रथमोपशम सम्यक्त्व के प्राप्त करने पर सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अवक्तव्य भाव देखा जाता है।

**विशेषार्थ**—सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिविभक्तिका स्वामी चारों गतियोंका सम्यग्दृष्टि जीव हो सकता है, क्योंकि उक्त दोनों प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति संक्रमणसे ही प्राप्त होती है और इनमें मिथ्यात्वका संक्रमण सम्यग्दृष्टिके ही होता है। तथा चारों गतियोंके मिथ्यादृष्टि जीवके उक्त दोनों प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिविभक्ति ही होती है क्योंकि मिथ्यादृष्टिके अधःस्थितिगलना और स्थितिघातके द्वारा उत्तरोत्तर इनकी स्थितिमें न्यूनता देखी जाती है। किन्तु जिस सम्यग्दृष्टिने इनकी भुजगार या अवस्थित स्थितिविभक्ति नहीं की उस सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें और इन दोनों प्रकृतियोंकी सत्तावाले अन्य सम्यग्दृष्टियोंके द्वितीयादि समयोंमें इनकी अल्पतर स्थितिविभक्ति बन जाती है तथा जिन मिथ्यादृष्टियोंके सम्यक्त्वको ग्रहण करनेके पहले समयमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी स्थितिसे मिथ्यात्वकी स्थिति एक समय अधिक है उनके द्वितीय समयमें सम्यक्त्वके ग्रहण करनेपर सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अव-

❀ एवं सेसाणं कम्माणं णेदव्वं ।

§ २०. एदेण सुत्तस्स देसामासियत्तं जइवसहाइरिएण जाणाविदं । तेणेदेण सूचिदत्थपरूवणट्ठमेत्थुच्चारणाणुगमं कस्सामो ।

२१. सामित्ताणुगमेण दुविहो णिद्देसो-ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० भुजगार-अवट्ठिदविहत्ती कस्स होदि ? अण्णदरस्स मिच्छाइट्ठिस्स ।

स्थित स्थितिविभक्ति होती है, क्योंकि ऐसे जीवके यद्यपि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका एक अधःनिषेक स्तिवुकसंक्रमणके द्वारा मिथ्यात्वमें संक्रमित हो जाता है तो भी सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी स्थितिसे मिथ्यात्वकी स्थिति एक समय अधिक है, अतः सम्यग्दर्शनके ग्रहण करनेके पहले समयमें मिथ्यात्व द्रव्यके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रमित होनेसे सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी ऊपर एक समय स्थिति बढ़ जाती है. अतः जिस समय सम्यग्दर्शन को यह जीव ग्रहण करता है उस समय सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उतनी ही स्थिति प्राप्त होती है जितनी सम्यक्त्व ग्रहण करनेके पूर्व समयमें थी और इस प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अवस्थित स्थितिविभक्ति बन जाती है। यहाँ इस विषयमें यह शंका उठाई गई है कि इस प्रकार पहले और दूसरे समयमें सम्यक्त्वकी स्थिति समान भले ही प्राप्त हो जाओ पर निषेकोंमें समानता नहीं हो सकती, किन्तु मिथ्यात्वके अन्तिम समयमें सम्यक्त्वके जितने निषेक थे सम्यक्त्व ग्रहण करनेके समय उनमें एक निषेक बढ़ जाता है, क्योंकि मिथ्यात्वके अन्तिम समयमें सम्यक्त्वका एक निषेक स्तिवुकसंक्रमणके द्वारा मिथ्यात्वमें संक्रमित हो गया और इस प्रकार मिथ्यात्व गुणस्थानमें ही सम्यक्त्वका एक निषेक कम हो गया। पर दूसरे समयमें सम्यक्त्वके ग्रहण करने पर सम्यक्त्वका अधस्तन निषेक मिथ्यात्वमें नहीं संक्रमित होता किन्तु एक समय स्थिति अधिक मिथ्यात्वके द्रव्यके सम्यक्त्वमें संक्रमित होनेसे सम्यक्त्वका एक निषेक बढ़ जाता है, अतः उक्त प्रकारसे सम्यक्त्वकी अवस्थित विभक्ति नहीं बन सकती। इस शंकाका वीरसेनस्वामीने जो समाधान किया है उसका सार यह है कि इस प्रकार यद्यपि निषेकमें वृद्धि हो जाती है पर स्थितिमें वृद्धि नहीं होती, क्योंकि मिथ्यादृष्टिके अन्तिम समयमें सम्यक्त्वकी जितनी स्थिति थी सम्यक्त्वके ग्रहण करने पर उसको उतनी ही स्थिति प्राप्त हो गई, क्योंकि मिथ्यात्वके अन्तिम समयमें इसकी स्थितिमें यद्यपि एक समय कम हो गया तो भी सम्यक्त्वको ग्रहण करने पर ऊपर एक समय स्थितिमें वृद्धि भी हो गई, अतः स्थिति समान रही आई। और स्थिति कालप्रधान होती है निषेक प्रधान नहीं। हाँ यदि निषेकोंकी अपेक्षा सम्यक्त्वकी स्थितिमें अवस्थितपना लाना हो तो ऐसे मिथ्यादृष्टि जीवको लो जिसके मिथ्यात्व और सम्यक्त्वकी स्थिति समान हो किन्तु सम्यक्त्वके निषेकसे मिथ्यात्वका एक निषेक अधिक हो। अब यह जीव जब सम्यक्त्वको ग्रहण करता है तो इसके मिथ्यात्व के अंतिम समयमें सम्यक्त्वके जितने निषेक रहते हैं उतने ही सम्यक्त्वको ग्रहण करनेके पहले समयमें भी देखे जाते हैं अतः यहाँ निषेकोंकी अपेक्षा अवस्थित विभक्तिपना बन जाता है। तथा सम्यग्मिथ्यात्वके निषेकोंकी अपेक्षा अवस्थितविभक्तिपनाका कथन करते समय सम्यग्मिथ्यात्वके निषेकोंसे मिथ्यात्वके दो निषेक अधिक लेने चाहिये। शेष कथन सुगम है।

* इसी प्रकार शेष कर्मोंका जानना चाहिए।

§ २०. इस कथनसे यतिवृषभआचार्यने सूत्रका देशामर्षकपना जता दिया, इसलिए इसके द्वारा सूचित होनेवाले अर्थका ज्ञान करानेके लिये यहाँ पर उच्चारणा का अनुगम करते हैं—

§ २१. स्वामित्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकार का है-ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेंसे ओघकी अपेक्षा मिथ्यात्व बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार और अवस्थित विभक्ति

[1]अप्पदरविहत्ती कस्स ? अण्णदरस्स सम्मोइट्ठिस्स मिच्छाइट्ठिस्स वा। अणंताणु० चउक्कस्स तिण्हं पदाणमेवं चेव वत्तव्वं। अवत्त० कस्स ? अण्ण० पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स सासणसम्माइट्ठिस्स वा। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं भुजगारविहत्ती कस्स ? सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं तप्पाओग्गजहण्णट्ठिदिसंतकम्मिएण मिच्छत्तस्स तप्पाओग्गुक्कस्सट्ठिदिसंतकम्मिएण मिच्छादिट्ठिणा सम्मत्ते गहिदे तस्स पढमसमयसम्मादिट्ठिस्स; सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुवरि मिच्छत्तट्ठिदीए तत्थ सव्विस्से उदयावलियवज्जाए संकंतिदंसणादो। उवरिमसुण्णम्मि कधं संकमो ? ण, तत्थ वि मिच्छत्तसंकंतीए विरोहाभावादो। अप्पदर० कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठिस्स मिच्छाइट्ठिस्स वा। अवट्ठिदं कस्स ? अण्णद० जो समउत्तरमिच्छत्तट्ठिदिसंतकम्मिओ[2] सम्मत्तं पडिवण्णो तस्स। अवत्तव्वं कस्स ? अण्णदरस्स जो असंतकम्मिओ सम्मत्तं पडिवण्णो तस्स। एवं सव्वणेरइय-तिरिक्ख-पंचिंदिय-तिरिक्ख-पंचिं०तिरि०पज्ज०-पंचिं०तिरि०जोणिणि–मणुसतिय-देव०-भवणादि जाव सहस्सार०-पंचिंदिय-पंचिं०पज्ज०-तस–तसपज्ज०-पंचमण०-पंचवचि०-कायजोगि०-ओरालि०-वेउव्वि०-तिण्णिवेद–चत्तारिक०–असंजद-चक्खु०–अचक्खु०–पंचले०–भवसि०–सण्णि०-आहारि त्ति।

किसके होती है ? किसी भी मिथ्यादृष्टि जीवके होती है। अल्पतरविभक्ति किसके होती है ? किसी सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टि जीवके होती है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कके उक्त तीन पदोंका कथन इसी प्रकार करना चाहिये। अवक्तव्यविभक्ति किसके होती है ? किसी एक मिथ्यादृष्टि या सासादन-सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें होती है।

सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगारस्थितिविभक्ति किसके होती है ? सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिसत्कर्मवाले और मिथ्यात्वके तत्प्रायोग्य उत्कृष्टस्थितिसत्कर्मवाले मिथ्यादृष्टि जीवके द्वारा सम्यक्त्वके ग्रहण करने पर उसके प्रथम समयमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगारस्थितिविभक्ति होती है क्योंकि वहाँ पर सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वमें मिथ्यात्वकी उदयावलिसे रहित शेष समस्त स्थितिका संक्रमण देखा जाता है।

**शंका**—सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य स्थिति से ऊपर शून्यमें मिथ्यात्वका संक्रमण कैसे होता है ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि वहाँ भी मिथ्यात्वके संक्रमण होनेमें कोई विरोध नहीं है।

अल्पतर स्थितिविभक्ति किसके होती है ? किसी एक सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टि जीवके होती है। अवस्थितस्थितिविभक्ति किसके होती है ? जो मिथ्यात्वके एक समय अधिक स्थिति सत्कर्मके साथ सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ है ऐसे किसी एक जीवके होती है। अवक्तव्यस्थितिविभक्ति किसके होती है ? सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वरूप सत्कर्मसे रहित जो कोई एक जीव सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ है उसके अवक्तव्यस्थितिविभक्ति होती है। इसी प्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यंच, पंचेन्द्रिय तिर्यंच, पंचेन्द्रिय तिर्यंच पर्याप्त पंचेन्द्रि तिर्यंच योनिमती, सामान्य मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी, सामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार स्वर्गतकके देव, पंचेन्द्रिय, पंचेंद्रिय पर्याप्त त्रस, त्रस पर्याप्त, पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी, काययोगी, औदारिककाययोगी, वैक्रियिककाययोगी, तीनों वेदवाले, क्रोधादि चारों कषायवाले, असंयत, चक्षुदर्शनवाले अचक्षुदर्शनवाले, कृष्णादि पाँच लेश्यावाले, भव्य, संज्ञी और आहारक जीवोंके जानना चाहिए।

1 ता०प्रतौ अवट्ठिदविहत्ती इति पाठः। 2 आ०प्रतौ–सतकम्मेण इति पाठः।

§ २२. पंचिं०तिरि०अपज्ज० छब्बीसं पयडीणं भुज०-अप्प०-अवट्ठि० सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमप्पदरं० कस्स ? अण्णद० । एवं मणुसअपज्ज०-सव्वएइंदिय सव्वविग-लिंदिय-पचि० अपज्ज०-पंचकाय-तसअपज्ज०-मदि०-सुद०-विहंग०-मिच्छादि० असण्णि त्ति।

§ २३. आणददि जाव उवरिमगेवज्जो त्ति मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० अप्पदर० कस्स० ? अण्णद० सम्मादिट्ठिस्स मिच्छाइट्ठिस्स वा । अणंताणु०चउक्क० अप्पदर०-अवत्त-व्वाणमोघं । सम्मत्त-सम्मामि० भुज०-अप्प०-अवत्तव्वाणमोघं । एदं चिराणुच्चारण-मस्सिदूण भणिदं । एदीए उच्चारणाए पुण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमोघमिदि भणिदं । तेण अवट्ठिदेण वि होदव्वं, अण्णहा ओघत्ताणुववत्तीदो । ण च एसो लिहंताणं दोसो; समुक्कि-त्तणाए वि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमोघमिदि परूविदत्तादो । कधमेत्थ पुण अवट्ठिदभावो

**विशेषार्थ**—यहाँ पर उच्चारणचार्यने अनन्तानुबन्धीकी अवक्तव्यस्थितिविभक्ति मिथ्या-दृष्टिके समान सासादनसम्यग्दृष्टि के भी बतलाई है सो इसका कारण यह है कि जिसने अनंतानु-बन्धीकी विसंयोजना की है ऐसा उपशमसम्यग्दृष्टि जीव भी सासादन गुणस्थानको प्राप्त होता है यह बात कसायपाहुडकार और यतिवृषभ आचार्यको इष्ट है, अत सासादन गुणस्थानमें अनन्तानु-बन्धीका अवक्तव्य पद बन जाता है । बात यह है कि संक्रमित द्रव्यका एक आवलितक अपकर्षण और उदीरणा आदि काम नहीं होते यह एक मत है और दूसरा मत यह है कि अनन्तानुबन्धीरूपसे संक्रमित द्रव्यका सासादनमें उसी समय अपकर्षण और उदीरणा सम्भव है । गुणधर आचार्य और यतिवृषभ आचार्य इसी दूसरे मतको मानते है । तदनुसार जिसने अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना की है ऐसा कोई उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सासादनमें आता है तो उसके उसी समय प्रत्याख्यानावरण आदि द्रव्यका अनन्तानुबन्धीरूपसे संक्रमित हो जाता है । और संक्रमित द्रव्यकी उदीरणा भी हो जाती है, अतः सासादन गुणस्थानमें अनन्तानुबन्धीका अवक्तव्य पद बन जाता है । यह कथन नैगम नयकी मुख्यतासे है । शेष कथन सुगम है ।

§ २२. पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित विभक्तियाँ होती हैं । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतरविभक्ति किसके होती है ? किसी भी जीवके होती है । इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्त, सब एकेन्द्रिय, सब विकलेन्द्रिय, पंचेद्रिय अपर्याप्त, पाँचों स्थावरकाय, त्रस अपर्याप्त, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, विभंगज्ञानी, मिथ्यादृष्टि और असंज्ञी जीवोंके जानना चाहिए ।

§ २३. आनतकल्पसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अल्पतर स्थितिविभक्ति किसके होती है ? किसी भी सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि जीवके होती है । अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिविभक्ति ओघके समान है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार, अल्पतर और अवक्तव्य विभक्ति ओघके समान है । यह कथन पुरानी उच्चारणाका आश्रय लेकर किया है । प्रकृति उच्चारणामें तो सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका कथन ओघके समान है ऐसा कहा है, इसलिए सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अवस्थितविभक्ति भी होना चाहिये, अन्यथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके ओघपना नहीं बन सकता है । यदि कहा जाय कि यह लिखनेवालोंका दोष है सो भी बात नहीं है, क्योंकि समु-त्कीर्तनामें भी सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका कथन ओघके समान है ऐसा कहा है ।

**शंका**—तो फिर सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वमें अवस्थितिविभक्तिपना कैसे प्राप्त होता है

लब्भदे ? मिच्छाइट्ठिणा सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि उव्वेल्लंतेण मिच्छत्तट्ठिदिसंतादो हेट्ठा कदसम्मत्त-सम्मामिच्छत्तट्ठिदिसंतकम्मेण सम्मत्ताहिमुहेण मिच्छाइट्ठिचरिमट्ठिदिखंडयं फालेदूण सम्मत्तट्ठिदिसंतादो कयसमउत्तरमिच्छत्तट्ठिदिसंतकम्मिएण वेदगसम्मत्ते गहिदे सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमवट्ठिदविहत्ती होदि, पहाणीकयकालत्तादो। णिसेगाणं पहाणत्ते संते वेदगसम्मत्तं पडिवज्जमाणेसु समट्ठिदिसंतकम्मिएसु सव्वेसु अवट्ठिदविहत्ती होदि सम्मत्तस्स। सम्मामिच्छत्तस्स पुण ण होदि। तेण दोण्हं पि पुव्वुद्दिट्ठपदेसे चेव अवट्ठिदभावो वत्तव्वो। ण च वेदगसम्मत्ताहिमुहमिच्छाइट्ठिम्मि ट्ठिदिखंडयघादो णत्थि चेवे त्ति पच्चवट्ठाणं जुत्तं, वेदयसम्मत्तं पडिवज्जमाणम्मि वि कहिं पि विसोहियवसेण अणियमेण ट्ठिदिकंडयसिद्धीए बाहाणुवलंभादो। कुदो एदं णव्वदे ? एदम्हादो चेव उच्चारणादो। दोण्हमुच्चारणाणं कधं ण विरोहो ? ण, विरोहो णाम एयणयविसओ। दो वि उच्चारणाओ पुण भिण्णणयणिबंधणाओ, तम्हा ण विरोहो त्ति। एवं सुक्कलेस्साए वत्तव्वं।

**समाधान**—सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करनेवाले जिसने मिथ्यात्वके स्थितसत्त्वसे सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके स्थितिसत्त्वको कम कर दिया है, जो सम्यग्दर्शनके सम्मुख है और जिसने मिथ्यात्वके अन्तिम स्थितिकाण्डकका घात करके मिथ्यात्वके स्थितिसत्त्वको सम्यक्त्वके स्थितिसत्त्वसे एक समय अधिक किया है ऐसे मिथ्यादृष्टि जीवके वेदकसम्यक्त्वको ग्रहण करनेपर सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अवस्थित स्थितिविभक्ति होती है, क्योंकि यहाँपर कालकी प्रधानता है। निषेकोंकी प्रधानता होनेपर वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले समान स्थितिसत्कर्मवाले सभी जीवों में सम्यक्त्वकी अवस्थित स्थितिविभक्ति होती है। परन्तु सम्यग्मिथ्यात्वकी नहीं होती, अतः इन दोनोंकी अवस्थितविभक्तिका कथन पूर्वोक्त स्थानमें ही करना चाहिये। यदि कहा जाय कि वेदकसम्यक्त्वके अभिमुख हुए मिथ्यादृष्टि जीवमें स्थितिकाण्डकघात होता ही नहीं सो ऐसा निश्चय करना भी ठीक नहीं है, क्योंकि वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले किसी भी जीव में विशुद्धिके अनुसार अनियमसे स्थितिकाण्डकघातकी सिद्धि होनेमें कोई बाधा नहीं पाई जाती है।

**शंका**—यह बात किस प्रमाणसे जानी जाती है ?

**समाधान**—इसी उच्चारणासे जानी जाती है।

**शंका**—दोनों उच्चारणाओंमें परस्पर विरोध कैसे नहीं माना जाय ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि, विरोध एक नयको विषय करता है। परन्तु दोनों उच्चारणाएँ भिन्न भिन्न नयके निमित्तसे प्रवृत्त हैं, अतः कोई विरोध नहीं है। तात्पर्य यह है कि जब एक ही दृष्टिसे विरुद्ध दो बातें कही जाती है तब विरोध आता है। किन्तु इन दोनों उच्चारणाओंका कथन भिन्न-भिन्न दृष्टिसे किया गया है, अतः कोई विरोध नहीं आता।

इसी प्रकार शुक्ललेश्यामें कहना चाहिये।

**विशेषार्थ**—आनतादिकमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अवस्थितके बिना तीन पद होते हैं और अवस्थित सहित चार पद होते हैं। इस प्रकार यहाँ वीरसेन स्वामीने दो मतोंका उल्लेख किया है। पहला मत प्राचीन उच्चारणाका है और दूसरा मत उस उच्चारणाका है जिसका वीरसेन स्वामीने सर्वत्र उपयोग किया है। यहाँ पर वीरसेन स्वामीने पहले मतके समर्थन या निषेधमें तो कुछ भी नहीं लिखा है। हाँ दूसरे मतका उन्होंने अवश्य समर्थन किया है। पहले तो उन्होंने यह बतलाया है कि यह लेखकोंकी भूल नहीं है। यदि लेखकोंकी भूल होती तो एक जगह

§ २४. अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति सव्वपयडीणमप्पदरं कस्स ? अण्णद० । एवमाहार०-आहारमिस्स० अवगद०-अकसा०-आभिणि० सुद०- ओहि०-मणपज्ज० संजद०-समाइय-छेदो०-परिहार०-सुहुम०-जहाक्खाद०-संजदासंजद०-ओहिदंस०-सम्मादि०-खइय०-वेदय०-उवसम०-सासण०-सम्मामिच्छादिट्ठि त्ति । ओरालियमिस्स० छब्बीस-पयडि०तिण्हं पदाणमोघं । सम्मत्त-सम्मामि० अप्पद० ओघं । एवं वेउव्वियमिस्स०-कम्मइय०-अणाहारए त्ति अभव० छब्बीसपयडीणं तिण्हं पदाणमेइंदियभंगो ।

एवं सामित्ताणुगमो समत्तो ।

*** एत्तो एगजीवेण कालो ।**

§ २५. सुगममेद सुत्तं ।

*** मिच्छत्तस्स भुजगारकम्मंसिओ केवचिरं कालादो होदि ?**

§ २६. एवं पि सुगमं ।

*** जहण्णेण एगसमओ ।**

होती किन्तु जब समुत्कीर्तनामें भी आनतादिमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके पद ओघके समान बतलाये हैं तब इसे लेखकोंकी भूल नहीं कह सकते । तब प्रश्न हुआ कि तो यहाँ अवस्थित पद कैसे बनता है ? इसपर वीरसेनस्वामीने यह समाधान किया है कि जिसने आनतादिकमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलनाद्वारा मिथ्यात्वसे कम स्थिति कर ली है वह जब सम्यक्त्वके सम्मुख होता है तब मिथ्यात्वके अन्तिम स्थितिखण्डके पतन द्वारा यदि सम्यक्त्वकी स्थितिसे मिथ्यात्वकी स्थिति एक समय अधिक करके वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त करता है तो सम्यक्त्व और सम्यग्मि-थ्यात्वकी अवस्थितविभक्ति बन जाती है । यह कालकी प्रधानतासे कथन किया है । पर जब निषेकोंकी प्रधानतासे विचार करते हैं तब समान स्थितिवालोंके सम्यक्त्वकी अवस्थितविभक्ति प्राप्त होती है । किन्तु इस प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वकी अवस्थितविभक्ति नहीं बनती ।

§ २४. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतरस्थितिविभक्ति किसके होती है ? किसी भी जीवके होती है । इसी प्रकार आहारककाययोगी आहारकमिश्रका-योगी अपगतवेदवाले अकषायी, अभिनिबोधिकज्ञानी, श्रतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत सूक्ष्मसांपरायिकसंयत, यथाख्यात-संयत, संयतासंयत, अवधिदर्शनवाले, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशम-सम्यग्दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिये ।

औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी अपेक्षा तीन पदोंका भंग ओघके समान है । तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्ति ओघके समान है । इसी प्रकार वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिये । अभव्योंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी अपेक्षा तीन पदोंका भंग एकेन्द्रियोंके समान है ।

इस प्रकार स्वामित्वानुगम समाप्त हुआ ।

***आगे एक जीवकी अपेक्षा कालानुगमका अधिकार है ।**

§ २५. यह सूत्र सुगम है ।

*** मिथ्यात्वके भुजगारस्थितिसत्कर्मवाले जीवका कितना काल है ?**

§ २६. यह सूत्र भी सुगम है ।

*** जघन्य काल एक समय है ।**

§ २७. कुदो ? मिच्छत्तट्ठिदीए उवरि एगसमयं वड्ढिदूण पबद्धे मिच्छत्तट्ठिदिभुजगारस्स एगसमयकालुवलंभादो।

* उक्कस्सेण चत्तारि समया ४।

§ २८. तं जहा—अद्धाक्खएण ट्ठिदिबंधे वड्ढिदे भुजगारस्स एगो समओ। संकिलेसक्खएण वड्ढिदूण बद्धे विदियो समयो। एइंदियस्स विग्गहं कादूण पंचिंदिएसुप्पण्णपढमसमए असण्णिट्ठिदिं बंधमाणस्स तदिओ समओ। सरीरं घेत्तूण चउत्थसमए सण्णिट्ठिदिं बंधमाणस्स चउत्थो भुजगारसमओ।

§ २९. का अद्धा णाम ? ट्ठिदिबंधकालो। किं तस्स पमाणं। जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं। एदिस्से अद्धाए खओ विणासो अद्धाक्खओ णाम। एगट्ठिदिबंधकालो सव्वेसिं जीवाणं समाणपरिणामो किण्ण होदि ? ण, अंतरंगकारणभेदेण सरिसत्ताणुववत्तीदो। एगजीवस्स सव्वकालमेगपमाणद्धाए ट्ठिदिबंधो किण्ण होदि ? ण, अंतरंगकारणेसु दव्वादिसंबंधेण परियत्तमाणस्स एगम्मि चेव अंतरंगकारणे सव्वकालमवट्ठाणाभावादो।

§ ३०. को संकिलेसो णाम ? कोह-माण माया-लोहपरिणामविसेसो। ते किं सव्वासिं

§ २७. क्योंकि मिथ्यात्वकी स्थितिके ऊपर एक समय बढ़ाकर बन्ध करनेपर मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिविभक्तिका एक समय काल पाया जाता है।

* उत्कृष्ट काल चार समय है ४।

§ २८. उसका खुलासा इस प्रकार है—अद्धाक्षयसे स्थितिबन्धके बढ़ानेपर भुजगारका पहला समय होता है। संक्लेशक्षयसे स्थितिको बढ़ाकर बन्ध करने पर दूसरा भुजगार समय होता है। एकेन्द्रिय पर्यायसे विग्रह करके पंचेन्द्रियमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें असंज्ञीकी स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवके तीसरा भुजगारसमय होता है। शरीर ग्रहण करके चौथे समयमें संज्ञीकी स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवके चौथा भुजगार समय होता है।

§ २९. **शंका**—अद्धा किसे कहते है ?

**समाधान**—स्थितिबन्धके कालको अद्धा कहते है।

**शंका**—उसका प्रमाण क्या है ?

**समाधान**—जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहुर्त है।

इस अद्धाके क्षय अर्थात् विनाशका नाम अद्धाक्षय है।

**शंका**—सब जीवोंके एक स्थितिबन्धका काल समान परिणामवाला क्यों नहीं होता है ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि अन्तरंग कारणमे भेद होनेसे उसमें समानता नहीं बन सकती है।

**शंका**—एक जीव के सर्वदा स्थितिबन्ध एक समान कालवाला क्यों नहीं होता है ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि यह जीव अन्तरंग कारणोंमें द्रव्यादिकके सम्बन्धसे परिवर्तन करता रहता है, अतः उसका एक ही अन्तरंग कारणमें सर्वदा अवस्थान नहीं पाया जाता है।

§ ३०. **शंका**—संक्लेश किसे कहते है ?

**समाधान**—क्रोध, मान, माया और लोभरूप परिणामविशेषको संक्लेश कहते हैं।

ट्ठिदीणं बंधस्स सव्वे वि पाओग्गा ? ण, परिमिदाणं ट्ठिदीणं बंधस्स परिमिदसंकिलेसाणं चेव कारणत्तादो। तं जहा—सव्वजहण्णबंधो धुवट्ठिदी णाम। तिस्से ट्ठिदीए बंधपाओग्गाणि असंखेज्जलोगमेत्तट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणाणि छवड्ढीए असंखे०लोगमेत्तछट्ठाणेहि सह अवट्ठिदाणि। समयुत्तरधुवट्ठिदीए वि एत्तियाणि चेव। णवरि धुवट्ठिदिपरिणामेहिंतो पलिदो० असंखे०भागपडिभागेण विसेसाहियाणि। एवं विसेसाहियकमेण ट्ठिदाणि जाव सत्तरिसागरोवमकोडाकोडीए चरिमसमओ त्ति। पुणो धुवट्ठिदीए असंखेज्जलोगज्झवसाणाणि पलिदो० असंखे०भागमेत्तखंडाणि कायव्वाणि। ताणि च अण्णोण्णं विसेसाहियाणि। एवं सव्वट्ठिदिअज्झवसाणाणि खंडेदव्वाणि। संपहि धुवट्ठिदीए पढमखंडट्ठिदअसंखे०लोगट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणेहि धुवट्ठिदी चेव बज्झदि ण उवरिमट्ठिदीओ। कुदो ? तब्बंधसत्तीए तेसिमभावादो। णिरुद्धट्ठिदीए पुण हेट्ठिमट्ठिदीओ ण बज्झंति; सव्वजहण्णट्ठिदिबंधादो हेट्ठा बंधट्ठिदीणमभावादो। पुणो तत्थतणविदियखंडपरिणामेहि धुवट्ठिदिं समउत्तरधुवट्ठिदिं च बंधदि ण उवरिमट्ठिदीओ। पुणो तदियखंडपरिणामेहि धुवट्ठिदिं समउत्तरधुवट्ठिदिं दुसमउत्तरधुवट्ठिदिं च बंधदि। एवं तिसमय-चदुसमय-पंचसमयुत्तरादिकमेण धुवट्ठिदिं बंधाविय णेदव्वं जाव चरिमपरिणामखंडं ति। पुणो चरिमखंडपरिणामेहि धुवट्ठिदिप्पहुडि समयुत्तरादिकमेण परिणामखंडमेत्तट्ठिदीओ बज्झंति, ण

**शंका**—वे सब संक्लेश परिणाम क्या सब स्थितियोंके बन्धके योग्य होते हैं ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि परिमित स्थितियोंके बन्धके परिमित संक्लेश परिणाम ही कारण होते है। उसका खुलासा इस प्रकार है—सबसे जघन्य बन्धका नाम ध्रुवस्थिति है। उस स्थितिके बन्धके योग्य असंख्यात लोकप्रमाण स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान होते हैं। जो षट्स्थानपतित वृद्धिकी अपेक्षा असंख्यात लोकप्रमाण छहस्थानोंके साथ अवस्थित है। एक समय अधिक ध्रुवस्थितिबन्धके योग्य भी इतने ही स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान होते हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि वे परिणाम ध्रुवस्थितिके परिणामोंमें पल्योपमके असंख्यातवें भागका भाग देने पर जितना लब्ध आवे उतने ध्रुवस्थितिके परिणामोंसे अधिक होते हैं। इस प्रकार सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर-प्रमाण स्थितिके अन्तिम समय तक वे परिणाम उत्तरोत्तर विशेषाधिक क्रमसे स्थित हैं। पुनः ध्रुवस्थितिके असंख्यात लोकप्रमाण परिणामोंके पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण खण्ड करने चाहिये। जो परस्पर विशेषाधिक हैं। इसी प्रकार सब स्थितियोंके परिणामस्थानोंके खण्ड करने चाहिये। इनमें ध्रुवस्थितिके पहले खण्डमें स्थित असंख्यात लोकप्रमाण स्थितिबन्धाध्यवसानस्थानोंसे ध्रुवस्थितिका ही बन्ध होता है अगली स्थितियोंका नहीं, क्योंकि उन परिणामोंमें आगेकी स्थितियोंके बन्धकी शक्ति नहीं पाई जाती है तथा उन परिणामोंके द्वारा ध्रुवस्थितिसे नीचेकी स्थितियोंका बन्ध नहीं होता है, क्योंकि सबसे जघन्य स्थितिबन्धके नीचे बन्धस्थितियाँ नहीं पाई जाती हैं। पुनः ध्रुवस्थितिसम्बन्धी दूसरे खण्डके परिणामोंसे ध्रुवस्थिति और एक समय अधिक ध्रुवस्थितिका बन्ध होता है, किन्तु इससे आगेकी स्थितियोंका बन्ध नहीं होता। पुनः तीसरे खण्डके परिणामोंसे ध्रुवस्थिति, एक समय अधिक ध्रुवस्थिति और दो समय अधिक ध्रुवस्थितिका बन्ध होता है। इस प्रकार तीन समय, चार समय और पाँच समय आदि अधिकके क्रमसे ध्रुवस्थितिका बन्ध कराते हुए अन्तिम परिणामखंड तक ले जाना चाहिये। पुनः अन्तिम खण्डके परिणामोंसे ध्रुवस्थितिसे लेकर एक समय अधिक आदिके क्रमसे परिणामोंके जितने खंड हों उतनी स्थितियोंका बन्ध होता

उवरिमाओ। समयुत्तरधुवट्ठिदीए पढमखंडपरिणामेहि संखाए धुवट्ठिदिविदियखंड-समाणेहि धुवट्ठिदी समयुत्तरधुवट्ठिदी वा बज्झइ, ण उवरिमाओ। विदियखंडपरिणामेहि धुवट्ठिदितदियखंडसमाणेहि धुवट्ठिदी समयुत्तरधुवट्ठिदी दुसमयुत्तरधुवट्ठिदी च बज्झइ, ण उवरिमाओ। एवं णेदव्वं जाव दुचरिमखंडं ति। पुणो चरिमखंडज्झवसाणट्ठाणेहि समयाहियधुवट्ठिदिप्पहुडि परिणामखंडभागहारमेत्तट्ठिदीओ उवरिमाओ बंधंति ण धुवट्ठिदी, धुवट्ठिदिपरिणामेहि चरिमखंडपरिणामाणं सरिसत्ताभावादो। एवं जाणिदूण णेदव्वं जाव अणुक्कस्सुक्कस्सट्ठिदि त्ति।

§ ३१. उक्कस्सट्ठिदीए पढमखंडपरिणामेहि उक्कस्सट्ठिदिप्पहुडि हेट्ठा परिणामखंड-भागहारमेत्तट्ठिदीओ बज्झंति। विदियखंडपरिणामेहि रूवूणपरिणामखंडसलागमेत्तट्ठिदीओ हेट्ठिमाओ बज्झंति। तदियखंडपरिणामेहि दुरूवूणपरिणामखंडसलागामेत्तट्ठिदीओ हेट्ठिमाओ बज्झंति। एवं गंतूणुक्कस्सट्ठिदीए चरिमखंडपरिणामेहि उक्कस्सट्ठिदी एक्का चेव बज्झइ। कुदो, तक्खंडपरिणामाणं हेट्ठिमखंडेहि अणुकट्ठीए अभावादो। जेणेगट्ठिदिपरिणामा उवरि पलिदोवमस्स असंखे०भागमेत्ताणं चेव ट्ठिदीणं बंधकारणं होंति, तेण अद्धाक्खएण सुट्ठु महंतो वि ट्ठिदिबंधभुजगारो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो चेवे त्ति घेत्तव्वो।

§ ३२. संपहि एदेसिं ट्ठिदिबंधज्झवसाण[1]ट्ठाणाणं परिणामकालो जहण्णेण एगसमय-

है, इनसे और ऊपरकी स्थितियोंका नहीं। एक समय अधिक ध्रुवस्थितिके पहले खंडके परिणामोंसे, जो कि संख्यामें ध्रुवस्थितिके दूसरे खंडके समान है, ध्रुवस्थितिका या एक समय अधिक ध्रुवस्थितिका बन्ध होता है ऊपरकी स्थितियोंका नहीं। ध्रुवस्थितिके तीसरे खण्डके समान दूसरे खण्डके परिणामोंसे ध्रुवस्थितिका, एक समय अधिक ध्रुवस्थितिका और दो समय अधिक ध्रुवस्थितिका बन्ध होता है, ऊपरकी स्थितियोंका नहीं। इसी प्रकार द्विचरमखण्डतक ले जाना चाहिये। पुनः अन्तिम खण्डके अध्यवसानस्थानोंसे एक समय अधिक ध्रुवस्थितिसे लेकर परिणामोंके खण्ड करनेके लिये जो भागहार कहा है तत्प्रमाण ऊपरकी स्थितियोंका बन्ध होता है ध्रुवस्थितिका नहीं क्योंकि ध्रुवस्थितिके परिणामोंके साथ अन्तिम खण्डके परिणामोंकी समानता नहीं है। इसी प्रकार जानकर अनुत्कृष्ट-उत्कृष्ट स्थितिके प्राप्त होने तक ले जाना चाहिये। अर्थात् जिन परिणामोंसे जिन स्थिति खण्डोंका बन्ध हो उसका विचार कर कथन करना चाहिए।

§ ३१. उत्कृष्ट स्थितिके प्रथम खण्डके परिणामोंसे उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर परिणामखण्डोंके भागहार प्रमाण नीचेकी स्थितियाँ बंधती हैं। दूसरे खण्डके परिणामोंसे एक कम परिणामखण्डोंकी शलाका-प्रमाण नीचेकी स्थितियाँ बंधती हैं। तीसरे खण्डके परिणामोंसे दो कम परिणामखण्डोंकी शलाका-प्रमाण नीचेकी स्थितियाँ बंधती हैं इस प्रकार जाकर उत्कृष्ट स्थितिके अन्तिम खण्डके परिणामोंसे एक उत्कृष्ट स्थिति ही बंधती है, क्योंकि अन्तिम खण्डके परिणामोंकी नीचेके खण्डोंके साथ अनुकृष्टि नहीं पाई जाती है। चूंकि एक स्थितिके परिणाम ऊपर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिके ही बन्धके कारण होते हैं, अतः अद्धाक्षयके द्वारा खूब बढ़ाकर भी यदि भुजगार स्थितिबन्ध हो तो वह पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण ही बड़ा होगा ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये।

§ ३२. इन स्थितिबन्धाध्यवसानस्थानोंका जघन्य परिणामकाल एक समय और उत्कृष्ट

[1] आ०प्रतौ साणाणं ट्ठाणाणं इति पाठः।

मेत्तो, उक्कस्सेण अट्ठसमयमेत्तो। कुदो? एगपरिणामप्पणादो। एगट्ठिदीए सव्वट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणेसु अवट्ठाणकालो पुण जहण्णेण एगसमयमेत्तो, उक्क० अंतोमुहुत्तं। पुणो विसमय-तिसमयादिपाओग्गेहि ट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणेहि णिरुद्धेगट्ठिदिं बंधमाणेण तट्ठिदिबंधकाले समत्ते संकिलेसक्खयाभावादो तिस्से ट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणेहि समयुत्तरादिकमेण पलिदो० असंखे०भागमेत्तट्ठिदिवियप्पेसु उवरि चडिदूण बद्धेसु अद्धाक्खएण एगो भुजगारसमओ लद्धो होदि। पुणो चरिमसमए एगट्ठिदिबंधपाओग्गट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणेसु अवट्ठाणकालो समत्तो। तस्स समत्तीए संकिलेसक्खओ णाम।

§ ३३. एवंविहेण संकिलेसक्खएण उवरि समयुत्तर-दुसमयुत्तरादिकमेण जाव संखेज्जसागरोवममेत्तट्ठिदीणं ट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणाणि समयाविरोहेण परिणामिय[1] बंधमाणस्स संकिलेसक्खएण भुजगारस्स विदियो समयो। तदिए समए कालं कादूण विग्गहगदीए पंचिंदिएसुप्पण्णपढमसमए असण्णिट्ठिदिं बंधमाणस्स एइंदियस्स तदियो भुजगारसमयो। चउत्थसमए सरीरं घेत्तूण अंतोकोडाकोडिट्ठिदिं बंधमाणस्स चउत्थो भुजगारसमओ। एवं मिच्छत्तभुजगारस्स चत्तारि चेव समया। जत्थ जत्थ भुजगारो वुच्चदि तत्थ तत्थ एत्थ परूविदअत्थो परूवेयव्वो।

❀ अप्पदरकम्मंसिओ केवचिरं कालादो होदि?

§ ३४. सुगममेदं।

आठ समय प्रमाण है, क्योंकि यहाँ एक परिणामकी मुख्यता है। परन्तु सब स्थितिबन्धाध्यवसानस्थानोंमें *एक स्थितिका अवस्थानकाल जघन्यसे एक समय और उत्कृष्टरूपसे अन्तर्मुहूर्त होता है।* पुनः दो समय और तीन समय आदिके योग्य स्थितिबन्धाध्यवसानस्थानोंके द्वारा विवक्षित एक स्थितिको बांधनेवाले जीवके यद्यपि उस स्थितिबन्धका काल समाप्त हो जाता है तो भी संक्लेशका क्षय न होनेसे उस स्थितिके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थानोंके द्वारा एक समय अधिक आदिके क्रमसे पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिविकल्पोंके ऊपर जाकर बन्ध होनेपर अद्धाक्षयसे एक भुजगारसमय प्राप्त होता है। पुनः अन्तिम समयमें एक स्थितिबन्धके योग्य स्थितिबन्धाध्यवसानस्थानोंमें रहनेका काल समाप्त होता है। उसकी समाप्तिको संक्लेशक्षय कहते हैं

§ ३३. इस प्रकारके सक्लेशक्षयके द्वारा ऊपर एक समय अधिक और दो समय अधिक आदिके क्रमसे संख्यात हजार सागरप्रमाण स्थितियोंके स्थितिबन्धाध्यवसानस्थानोंको यथाविधि परणमाकर बन्ध करनेवाले जीवके सक्लेशक्षयसे भुजगारका दूसरा समय होता है। तीसरे समयमें जो एकेन्द्रिय मरकर विग्रहगतिसे पंचेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ है वह वहाँ उत्पन्न होनेके पहले समयमें असंज्ञीकी स्थितिका बन्ध करता है तब इसके तीसरा भुजगार समय होता है। तथा चौथे समयमें शरीरको ग्रहण करके अन्त कोड़ाकोड़ीप्रमाण स्थितिका बन्ध करनेवाले उस जीवके चौथा भुजगार समय होता है इस प्रकार मिथ्यात्वसम्बन्धी भुजगारके चार ही समय होते हैं। आगे जहाँ जहाँ भुजगारका कथन किया जाय वहाँ वहाँ यहाँ पर कहे गये अर्थकी प्ररूपणा करना चाहिये।

❀ मिथ्यात्वके अल्पतरस्थितिसत्कर्मवाले जीवका कितना काल है?

§ ३४. यह सूत्र सुगम है।

---

1 आ० प्रतौ *परिणमिय इति पाठः।*

* जहण्णेण एगसमओ ।

§ ३५. कुदो ? भुजगारमवट्ठिदं वा करेमाणेण एगसमयं संतस्स हेट्ठा ओदरिदूण पबंधिय विदियसमए भुजगारे अवट्ठाणे वा कदे अप्पदरस्स एगसमयउवलंभादो ।

* उक्कस्सेण तेवट्ठिसागरोवमसदं सादिरेयं ।

§ ३६. तं जहा— एक्को तिरिक्खो मणुस्सो वा मिच्छाइट्ठी एगं ट्ठिदिं बंधमाणो अच्छिदो, तिस्से ट्ठिदीए हेट्ठा बंधमाणेण सव्वुक्कस्सो तप्पाओग्गो अंतोमुहुत्तमेत्तो अप्पदर-कालो गमिदो । पुणो से काले ट्ठिदिसंतकम्मं वोलेदूण बंधहिदि त्ति कालं कादूण तिपलिदोवमिएसु उववण्णो । पुणो तत्थ अंतोमुहुत्तावसेसे जीविदव्वए त्ति सम्मत्तं घेत्तूण पढमछावट्ठिं भमिय सम्मामिच्छत्तं पडिवज्जिय पुणो वि सम्मत्तं घेत्तूण विदियछावट्ठिं भमिय अवसाणे तप्पाओग्गपरिणामेण मिच्छत्तं गंतूण एक्कत्तीससागरोवमट्ठिदिएसु देवेसु उववण्णो । पुणो कालं कादूण मणुस्सेसुववज्जिय जाव सक्कं ताव अंतो-मुहुत्तकालं संतकम्मस्स हेट्ठा बंधिय पुणो संकिलेसं पूरेदूण भुजगारविहत्तिओ जादो । एवं बेअंतोमुहुत्तेहि तिहि पलिदोवमेहि य सादिरेयतेवट्ठिसागरोवमसदमप्पदरस्स उक्कस्सकालो होदि ।

* अवट्ठिदकम्मंसियो केवचिरं कालादो होदि ?

§ ३७. सुगममेदं

* जहण्णेण एगसमओ ।

* जघन्य काल एक समय है ।

§ ३५. क्योंकि भुजगार या अवस्थितको करनेवाला कोई एक जीव एक समयके लिये सत्कर्मसे नीचे उतरकर स्थितिका बन्ध करके पुनः दूसरे समयमें यदि भुजगार या अवस्थित विकल्पको करता है तो उसके अल्पतरका एक समय काल प्राप्त होता है ।

* उत्कृष्ट काल साधिक एकसौ त्रेसठ सागर है ।

§ ३६. उसका खुलासा इस प्रकार है—कोई एक तिर्यंच या मनुष्य मिथ्यादृष्टि जीव एक स्थितिका बन्ध करता हुआ विद्यमान है । पुनः उस स्थितिके नीचे बन्ध करते हुए उसने उसके योग्य सर्वोत्कृष्ट अन्तमुहूर्तप्रमाण अल्पतरका काल बिताया । पुनः तदनन्तर कालमें स्थितिसत्कर्मको व्यतीत करके बन्ध करेगा इसलिए मरकर वह तीन पल्यकी आयुवाले जीवोंमें उत्पन्न हुआ । पुनः वहाँ पर जीवनमें अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहने पर सम्यक्त्वको ग्रहण करके और पहले छयासठ सागर काल तक भ्रमण करके सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त किया । तथा फिर भी सम्यक्त्वको ग्रहण करके दूसरी बार छयासठ सागर काल तक भ्रमण करके अन्तमें मिथ्यात्वके योग्य परिणामोंसे मिथ्यात्वमें जाकर एकतीस सागरप्रमाण स्थितिवाले देवोंमें उत्पन्न हुआ । पुनः मरकर मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और वहाँ यथासंभव अन्तर्मुहूर्त कालतक सत्कर्मके नीचे बन्ध करके पुनः संक्लेशको प्राप्त होकर वह भुजगारस्थितिविभक्तिवाला हो गया । इस प्रकार दो अन्तर्मुहूर्त और तीन पल्यसे अधिक एक सौ त्रेसठ सागर अल्पतर स्थितिविभक्तिका उत्कृष्ट काल प्राप्त होता है ।

* मिथ्यात्वके अवस्थितस्थितिविभक्तिवाले जीवका कितना काल है ?

§ ३७. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य काल एक समय है ।

§ ३८. कुदो ? भुजगारमप्पदरं वा कुणमाणेण एगसमयसंतसमाणट्ठिदीए पबद्धाए अवट्ठिदस्स एगसमयुवलंभादो

* उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

§ ३९. कुदो ? भुजगारमप्पदरं वा कादूण संतसमाणट्ठिदिबंधस्स उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तमेत्तकालुवलंभादो

* एवं सोलसकसाय-णवणोकसायाणं ।

§ ४०. जहा मिच्छत्तस्स भुजगार-अप्पदर-अवट्ठिदाणं परूवणा कदा तहा सोलक०-णवणोकसायाणं भुजगार-अप्पदर-अवट्ठिदाणं वि परूवणा कायव्वा । एत्थतणविसेसपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि ।

* णवरि भुजगारकम्मंसिओ उक्कस्सेण एगूणवीससमया ।

§ ४१. तं जहा—सत्तारससमयाहियएगावलियसेसाउएण एइंदिएण अणंताणुबंधिकोधं मोत्तूण सेसमाणादिपण्णारसपयडीसु परिवाडीए पण्णारससमयेहि अद्धाक्खएण अण्णोण्णं पेक्खिय वड्ढिय बद्धासु पण्णारस वि पयडीओ भुजगारसंकमपाओग्गाओ जादाओ । पुणो बंधावलियमेत्तकाले अदिक्कंते सत्तारससमयमेत्ताउअसेसे पुव्वुत्तावलियकालम्मि पढमसमयप्पहुडि पण्णारससमएसु वड्ढिदूण बद्धपण्णारसपयडिट्ठिदि बंधपरिवाडीए अणंताणुबंधिकोधे संकममाणस्स पण्णारस भुजगारसमया अणंताणुबंधिकोधस्स

§ ३८. क्योंकि भुजगार या अल्पतरको करनेवाले किसी जीवके द्वारा एक समय तक सत्तामें स्थित स्थितिके समान स्थितिका बन्ध करने पर अवस्थितका एक समय काल पाया जाता है ।

* उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ३९. क्योंकि भुजगार या अल्पतर करके सत्तामें स्थित स्थितिके समान स्थितिके निरन्तर बंधनेका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त पाया जाता है ।

* इसी प्रकार सोलह कषाय और नौ नोकषायोंका काल जानना चाहिये ।

§ ४०. जिस प्रकार मिथ्यात्वके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित भंगोंका कथन किया है उसी प्रकार सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित विकल्पोंका कथन करना चाहिये । अब यहाँ पर विशेष कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

* इतनी विशेषता है कि भुजगारस्थितिविभक्तिवालेका उत्कृष्ट काल उन्नीस समय है ।

§ ४१. उसका खुलासा इस प्रकार है—जिसके सत्रह समय अधिक एक आवलिप्रमाण आयु शेष है ऐसे एकेन्द्रियके द्वारा अनन्तानुबन्धी क्रोधको छोड़कर शेष मान आदि पन्द्रह प्रकृतियोंके क्रमसे पन्द्रह समयोंमें अद्धाक्षयसे एक दूसरेको देखते हुए उत्तरोत्तर स्थितिको बढ़ाकर बाँधने पर पन्द्रह ही प्रकृतियाँ भुजगारसंक्रमके योग्य हो गईं । पुनः बन्धावलिप्रमाण कालके व्यतीत हो जाने पर और उस एकेन्द्रियके सत्रह समयप्रमाण आयुके शेष रहने पर पूर्वोक्त आवलिके कालके भीतर प्रथम समयसे लेकर पन्द्रह समयोंमें बढ़ाकर बाँधी हुई पन्द्रह प्रकृतियोंकी स्थितिको जिस क्रमसे बन्ध हुआ था उसी क्रमसे अनन्तानुबन्धी क्रोधमें संक्रमण करनेवाले जीवके अनन्तानुबन्धी क्रोधके पन्द्रह भुजगार समय प्राप्त होते हैं । पुनः सोलहवें समयमें अद्धाक्षयसे अनन्तानुबन्धी क्रोधको

१ ता० प्रतौ —बंधिकोधं इति पाठः

वद्धा। पुणो सोलससमयम्मि अद्धाक्खएण अणंताणुबंधिकोधेण वड्डिदूण बद्धे सोलस भुजगारसमया। पुणो सत्तारससमए संकिलेसक्खएण अणंताणुबंधिकोधेण सह सव्वेसिं कसायाणं वड्डिदूण बद्धे सत्तारस भुजगारसमया। पुणो कालं कादूण एगविग्गहेण सण्णीसुप्पण्णपढमसमए असण्णिट्ठिदिं बंधमाणस्स अट्ठारस भुजगारसमया। पुणो सरीरं घेत्तूण सण्णिट्ठिदिं बंधमाणस्स एगूणवीस भुजगारसमया १९। जहा अणंताणुबंधिकोधस्स उक्कस्सेण एगूणवीससमयाणं परूवणा कदा तहा माणादीणं पण्णारसण्हं पयडीणं पत्तेयं पत्तेयं परिवाडीए परूवणा कायव्वा।

§ ४२ णवणोकसायाणं पि एवं चेव वत्तव्वं। णवरि सत्तारससमयाहियआवलिया-वसेसे आउए आवलियपढमसमयप्पहुडि कोधादिसोलसकसायाणं परिवाडीए अद्धा-क्खएण सोलससमयमेत्तकालं वड्डिदूण बंधिय पुणो सत्तारससमए संकिलेसक्खएण सव्वासिं चेव सोलसपयडीणं भुजगारं कादूण पुणो बंधावलियादिक्कंतकसायट्ठिदिं णव-णोकसायाणमुवरि बंधपरिवाडीए संकममाणस्स णोकसायाणं सत्तारस भुजगारसमया। पुणो एगविग्गहेण सण्णीसुप्पण्णपढमसमए असण्णिट्ठिदिं बंधमाणस्स अट्ठारस भुजगार-समया। पुणो सरीरगहिदपढमसमए सण्णिट्ठिदिं बंधमाणस्स एगूणवीस भुजगारसमया। जहा एइंदियमस्सिदूण भुजगारस्स एगूणवीससमयाणं परूवणा कदा तहा विगलिंदिय-जीवे वि अस्सिदूण कायव्वा।

बढ़ाकर बाँधने पर सोलह भुजगार समय होते हैं। पुनः सत्रहवें समयमें संक्लेशक्षयसे अनन्तानुबन्धी क्रोधके साथ सब कषायोंको बढ़ाकर बाँधनेपर सत्रह भुजगारसमय होते हैं। पुनः मरकर एक मोड़ाके द्वारा संज्ञियोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें असंज्ञियोंकी स्थितिको बाँधनेवाले उस जीवके अठारह भुजगार समय होते हैं। पुनः शरीरको ग्रहण करके संज्ञीके योग्य स्थितिको बाँधनेवाले उस जीवके उन्नीस भुजगार समय होते हैं १९। मूलमें जिस प्रकार अनन्तानुबन्धी क्रोधके उत्कृष्टरूपसे उन्नीस भुजगार समयोंका कथन किया है उसीप्रकार मानादिक पन्द्रह प्रकृतियोंके १९ भुजगार समयोंका क्रमसे अलग अलग कथन कर लेना चाहिये।

§ ४२. नौ नोकषायोंका भी इसीप्रकार कथन करना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि जिस एकेन्द्रिय जीवके आयुमें सत्रह समय अधिक एक आवलिप्रमाण काल शेष रहे उसके आवलिके प्रथम समयसे लेकर क्रोधादि सोलह कषायोंका क्रमसे अद्धाक्षयके द्वारा सोलह समय तक स्थिति बढ़ाकर बन्ध करावे। पुनः आवलिके सत्रहवें समयमें संक्लेशक्षयसे सभी सोलह प्रकृतियोंकी भुजगार स्थितिका बन्ध करावे। पुनः बन्धावलिके व्यतीत हो जाने पर बन्धक्रमसे उन कषायोंकी स्थितियोंका नौ नोकषायोंमें संक्रमण करावे। इस प्रकार संक्रमण करनेवाले जीवके नौ नोकषायोंके सत्रह भुजगार समय प्राप्त होते हैं। पुनः एक मोड़ेके द्वारा संज्ञियोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें असंज्ञियोंकी स्थितिको बाँधनेवाले उस पूर्वचर एकेन्द्रिय जीवके अठारह भुजगार समय होते हैं। पुनः शरीर ग्रहण करनेके प्रथम समयमें संज्ञीके योग्य स्थितिको बाँधनेवाले उस जीवके उन्नीस भुजगार समय होते हैं। यहाँ जिस प्रकार एकेन्द्रियोंका आश्रय लेकर भुजगार स्थितिविभक्तिके उन्नीस समयोंका कथन किया है उसी प्रकार विकलेन्द्रिय जीवोंका आश्रय लेकर भी कथन करना चाहिये।

१ आ०प्रतौ सव्वेसिं कम्माणं वड्ढिदूण इति पाठः।

४३. इत्थि-पुरिस-हस्स-रदीणमवट्ठिदकालो कथमुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तमेत्तो ? ण, कसायाणमंतोकोडाकोडिसागरोवममेत्तट्ठिदिमवट्ठिदसरूवेण अंतोमुहुत्तं कालं बंधिय बंधाव-लियादिक्कंतकसायट्ठिदिं पुव्वुत्तचदुण्हं पयडीणमुवरि अंतोमुहुत्तं संकामिदे इत्थि-पुरिस-हस्स-रदीणमवट्ठिदस्स अंतोमुहुत्तमेत्तकालुवलंभादो । एसो अवट्ठिदकालो कत्थ गहिदो ? सण्णीसु । कुदो ? तत्थ इत्थि-पुरिस हस्स-रदीणं बंधगद्धाए बहुत्तुवलंभादो । बारसकसाय-

**विशेषार्थ**— यहाँ सोलह कषायोंकी भुजगार स्थितिका उत्कृष्ट काल १९ समय बतलाया है । इसके लिये दो पर्यायोंका ग्रहण किया है, क्योंकि एक पर्यायकी अपेक्षा १९ भुजगार समय नहीं प्राप्त होते । ऐसा नियम है कि सोलह कषाय और नौ नोकषायोंका परस्परमें संक्रमण होता है । इसके लिये यह व्यवस्था है कि जिस समय जिस प्रकृतिका बन्ध होता है उसमें अन्य सजातीय प्रकृतिका संक्रमण होता है । चूंकि यहाँ अनन्तानुबन्धी क्रोधकी भुजगार स्थितिके उत्कृष्ट कालको प्राप्त करना है अतः ऐसा एकेन्द्रिय या विकलेन्द्रिय जीव लो जिसकी वर्तमान आयु एक आवलि और सत्रह समय शेष रही हो उसने पन्द्रह समयोंमें अनन्तानुबन्धी क्रोधको छोड़कर शेष पन्द्रह कषायोंकी स्थिति उत्तरोत्तर बढ़ा बढ़ाकर बाँधी । पहले समयमें अनन्तानुबन्धी मानकी स्थितिको सत्तामें स्थित स्थितिसे बढ़ाकर बाँधा । दूसरे समयमें अनन्तानुबन्धी मायाकी स्थितिको अनन्तानुबन्धी मानकी स्थितिसे बढ़ाकर बाँधा इत्यादि । तदनन्तर एक आवलि कालके व्यतीत हो जाने पर उसी क्रमसे इनका अनन्तानुबन्धी क्रोधमें संक्रमण किया । इस प्रकार भुजगारके पन्द्रह समय तो ये प्राप्त हुए । अब रहे चार समय सो सोलहवें समयमें अद्धाक्षयसे उसने अनन्तानुबन्धी क्रोधकी स्थितिको बढ़ाकर बाँधा । सत्रहवें समयमें संक्लेशक्षयसे अनन्तानुबन्धी क्रोधके साथ सब कषायोंकी स्थितिको बढ़ाकर बाँधा । इस प्रकार भुजगारके सत्रह समय तो एकेन्द्रिय या विकलत्रयके प्राप्त हुए । अब यह जीव मरकर एक विग्रहसे संज्ञी पंचेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ, इसलिये उसने विग्रहकी अवस्थामें असंज्ञीके योग्य स्थितिको बढ़ाकर बाँधा और दूसरे समयमें शरीर ग्रहणकर लेनेसे संज्ञी पञ्चेन्द्रियके योग्य स्थितिको बढ़ाकर बाँधा । इस प्रकार भुजगार के १९ समय प्राप्त हुए । इसीप्रकार अनन्तानुबन्धी मान आदिके और नौ नोकषायोंके १८ भुजगार समय प्राप्त होते हैं । किन्तु नौ नोकषायोंके सम्बन्धमें इतनी विशेषता है कि सोलह कषायोंका अद्धाक्षयसे उत्तरोत्तर बढ़ाकर बन्ध करावे । तदनन्तर सत्रहवें समयमें संक्लेशक्षयसे स्थिति बढ़ाकर बन्ध करावे । पुनः एक आवलि हो जानेपर इनका नौ नोक-षायोंमें सत्रह समयके द्वारा संक्रमण करावे । तदनन्तर इस जीवको संज्ञियोंमें उत्पन्न कराकर पूर्वोक्त प्रकारसे दो भुजगार समय और प्राप्त करे । इस प्रकार नौ नोकषायोंके १८ भुजगार समय प्राप्त होते हैं ।

§ ४३. **शंका**—स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य और रतिका अवस्थित काल उत्कृष्ट रूपसे अन्त-र्मुहूर्त कैसे प्राप्त होता है ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि जब कोई जीव कषायोंकी अन्तःकोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण स्थितिको अवस्थितरूपसे अन्तर्मुहूर्त कालतक बाँधकर पुनः बन्धावलिके व्यतीत होने पर उस स्थितिका पूर्वोक्त चार प्रकृतियोंमें अन्तर्मुहूर्त कालतक संक्रमण करता है तब उस जीवके स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य और रतिकी अवस्थितस्थितिविभक्तिका अन्तर्मुहूर्त काल पाया जाता है ।

**शंका**—यह अवस्थित काल कहाँ पर ग्रहण किया गया है ?

**समाधान**—संज्ञियोंमें ।

**शंका**—यह अवस्थित काल संज्ञियोंमें ही क्यों ग्रहण किया गया है ?

णवणोकसायाणमुवसमसेढिम्हि अंतरकरणं काऊण सव्वोवसमे कदे अवट्ठिदकालो अंतोमुहुत्तमेत्तो लब्भदि. विदियट्ठिदीए ट्ठिदणिसेगाणमवट्ठिदाए गलणाभवादो सो किण्ण घेप्पदि ? ण, घडियाजलं व कम्मक्खंधट्ठिदिसमएसु पडिसमयं गलमाणेसु कम्मट्ठिदीए अवट्ठिदभावविरोहादो। णिसेगेहि अवट्ठिदत्तं जइवसहाइरियो णेच्छदि त्ति कुदो णव्वदे ? सम्मत्त सम्मामिच्छत्ताणमवट्ठिदस्स अंतोमुहुत्तं मोत्तूण उक्कस्सेण एगसमयपरूवणादो

* अणंताणुबंधिचउक्कस्स अवत्तव्वं जहण्णुक्कस्सेण एगसमओ।

**समाधान**—क्योंकि यहाँपर स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य और रतिका बन्धकाल बहुत पाया जाता है।

**शंका**—उपशमश्रेणीमें अन्तरकरण करके सर्वोपशम कर लेनेपर बारह कषाय और नौ नोकषायोंका अवस्थितकाल अन्तर्मुहूर्त प्रमाण प्राप्त होता है, क्योंकि वहाँपर द्वितीय स्थितिमें स्थित निषेक अवस्थित रहते हैं उनका गलन नहीं होता है. अतः इस अवस्थितकालका ग्रहण क्यों नहीं किया गया है ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि वहाँपर घटिकायन्त्रके जलके समान कर्मस्कन्धकी स्थितिके समय प्रत्येक समयमें गलते रहते हैं, अतः वहाँपर कर्मस्थितिका अवस्थितपना माननेमें विरोध आता है।

**शंका**—यतिवृषभ आचार्यने निषेकोंकी अपेक्षा अवस्थितपनेको स्वीकार नहीं किया है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

**समाधान**—चूंकि यतिवृषभ आचार्यने सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी स्थितिका उत्कृष्ट अवस्थितकाल अन्तर्मुहूर्त न कहकर एक समय कहा है। इससे मालूम पड़ता है कि यतिवृषभ आचार्यको निषेकोंकी अपेक्षा अवस्थितकाल इष्ट नहीं है।

**विशेषार्थ**—बात यह है कि जब कोई जीव बारह कषाय और नौ नोकषायोंका उपशम कर लेता है तब उसके उक्त प्रकृतियोंके सब निषेक अन्तर्मुहूर्त कालतक अवस्थित रहते हैं उनमें उत्कर्षण, आदि कुछ भी नहीं होता। इसपर शंकाकार कहता है कि अवस्थित विभक्तिका यह काल क्यों नहीं लिया जाता है। इसका जो समाधान किया गया है उसका भाव यह है कि यद्यपि उक्त प्रकृतियोंके निषेक अन्तर्मुहूर्त कालतक अवस्थित रहते हैं यह ठीक है फिर भी जिस प्रकार घटिकायन्त्रका जल एक एक बूंदरूपसे प्रति समय घटता जाता है उसी प्रकार उनकी स्थिति भी प्रति समय एक एक समय घटती जाती है, क्योंकि अन्तरकरण करनेके समय उनकी जितनी स्थिति रहती है अन्तरकरणकी समाप्तिके समय वह अन्तर्मुहूर्त कम हो जाती है, अतः उपशमश्रेणिमें अवस्थित विभक्ति नहीं प्राप्त होती। इसपर फिर शंकाकार कहता है कि स्थिति भले ही घटती जाओ पर निषेक तो एक समान बने रहते हैं, अतः निषेकोंकी अपेक्षा यहाँ अवस्थितविभक्ति बन जायगी। इसका वीरसेन स्वामीने जो समाधान किया है उसका भाव यह है कि यतिवृषभ आचार्यने निषेकोंकी अपेक्षा अवस्थितविभक्तिको नहीं स्वीकार किया है। इसका प्रमाण यह है कि यदि उन्होंने निषेकोंकी अपेक्षा अवस्थितपनेको स्वीकार किया होता तो वे सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी स्थितिके उत्कृष्ट अवस्थितकालको एक समयप्रमाण न कहकर अन्तर्मुहूर्त प्रमाण कहते. क्योंकि एक अन्तर्मुहूर्त कालतक उनका भी उपशमभाव देखा जाता है।

*** अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्यस्थितिविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है।**

§ ४४. कुदो ? अणंताणु०चउक्कं णिस्संतीकयसम्माइट्ठिणा मिच्छत्ते सासणसम्मत्ते वा पडिवण्णे तस्स पढमसमए चेव अणंताणु०चउक्कस्स हिदिसंतुप्पत्तीदो। कुदो असंतस्स अणंताणु०चउक्कस्स उप्पत्ती ? ण, मिच्छत्तोदएण कम्मइयवग्गणक्खंधाणमणंताणु०चउक्कसरूवेण परिणमणं पडि विरोहाभावादो। सासणे कुदो तेसिं संतुप्पत्ती ? सासणपरिणामादो। को सासणपरिणामो ? सम्मत्तस्स अभावो तच्चत्थेसु असद्दहणं। सो केण जणिदो ? अणंताणुबंधीणमुदएण। अणंताणुबंधीणमुदओ कुदो जायदे। परिणामपच्चएण।

*** सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं भुजगार-अवट्ठिद-अवत्तव्वकम्मंसिओ केवचिरं कालादो होदि ?**

§ ४५ सुगमं।

*** जहण्णुक्कस्सेण एगसमओ।**

§ ४६. तं जहा—पुव्वुप्पण्णसम्मत्तसंतकम्ममिच्छाइट्ठिणा सम्मत्तसंतकम्मस्सुवरि दुसमयुत्तरादिमिच्छत्तट्ठिदिं बंधिय गहिदसम्मत्तस्स पढमसमए भुजगारो होदि। समयुत्तर-

§ ४४. क्योंकि जिस सम्यग्दृष्टि जीवने अनन्तानुबन्धी चतुष्कको निःसत्त्व कर दिया है वह जब मिथ्यात्व या सासादनसम्यक्त्वको प्राप्त होता है तब मिथ्यात्व या सासादनके प्रथम समयमें ही अनन्तानुबन्धी चतुष्कका स्थितिसत्त्व पाया जाता है।

**शंका**—असद्रूप अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी मिथ्यात्वमें उत्पत्ति कैसे हो जाती है ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि मिथ्यात्वके उदयसे कार्मणवर्गणास्कन्धोंके अनन्तानुबन्धी चतुष्करूपसे परिणमन करनेमें कोई विरोध नहीं आता है।

**शंका**—सासादनमें उनकी सत्तारूपसे उत्पत्ति कैसे हो जाती है ?

**समाधान**—सासादनरूप परिणामोंसे।

**शंका**—सासादनरूप परिणाम किसे कहते है ?

**समाधान**—तत्त्वार्थोंमें अश्रद्धानलक्षण सम्यक्त्वके अभावको सासादन रूप परिणाम कहते है।

**शंका**—वह सासादनरूप परिणाम किस कारणसे उत्पन्न होता है ?

**समाधान**—अनन्तानुबन्धीचतुष्कके उदयसे होता है।

**शंका**—अनन्तानुबन्धीचतुष्कका उदय किस कारण से होता है ?

**समाधान**—परिणामविशेषके कारण अनन्तानुबन्धीचतुष्कका उदय होता है।

*** सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीवका कितना काल है ?**

§ ४५. यह सूत्र सुगम है।

*** जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है।**

§ ४६. उसका खुलासा इस प्रकार है—जिसने पहले सम्यक्त्वसत्कर्मको उत्पन्न कर लिया है ऐसा कोई एक मिथ्यादृष्टि जीव जब सम्यक्त्वसत्कर्मके ऊपर दो समय अधिक इत्यादिरूपसे मिथ्यात्वकी स्थितिको बाँधकर सम्यक्त्वको ग्रहण करता है तब उसके सम्यक्त्वके ग्रहण करनेके प्रथम समयमें सम्यक्त्वकी भुजगारस्थितिविभक्ति होती है। तथा एक समय अधिक

मिच्छत्तट्ठिदिं बंधिय गहिदसम्मत्तस्स पढमसमए अवट्ठिदविहत्तीए कालो एगसमओ होदि, विदियसमए अप्पदरविहत्तीए समुप्पत्तीदो। उवसमसम्मत्तद्धाए दंसणतियट्ठिदीए णिसेगाणं विदियट्ठिदीए अवट्ठिदाणं गलणाभावादो अवट्ठिदकालो अंतोमुहुत्तमेत्तो लब्भइ, सो किण्ण गहिदो ? ण, तिण्हं कम्माणं कम्मट्ठिदिसमएसु अणुसमयं गलमाणेसु ट्ठिदीए अवट्ठाणविरोहादो। ण णिसेगाणं ट्ठिदित्तमत्थि, दव्वस्स पज्जयभावविरोहादो। णिस्संतकम्मिएण मिच्छाइट्ठिणा सम्मत्ते गहिदे एगसमयमवत्तव्वं होदि, पुव्वमविज्जमाणसम्मत्त-सम्मामिच्छत्तट्ठिदिसंताणमेण्हिं समुप्पत्तीदो। तस्स कालो एगसमओ चेव, विदियसमए अप्पदरसमुप्पत्तीदो।

❀ अप्पदरकम्मंसिओ केवचिरं कालादो होदि ?

§ ४७. सुगमं।

❀ जहण्णेण अंतोमुहुत्तं।

§ ४८. कुदो ? णिस्संतकम्मिएण मिच्छाइट्ठिणा पढमसम्मत्तं घेत्तूण पढमसमए सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमवत्तव्वं काऊण विदियसमए अप्पदरं करिय सव्वजहण्णंतो-

---

मिथ्यात्वकी स्थितिको बाँधकर जिसने सम्यक्त्वको ग्रहण किया है उसके सम्यक्त्वके ग्रहण करनेके प्रथम समयमें सम्यक्त्वकी अवस्थितविभक्तिका काल एक समय प्राप्त होता है, क्योंकि दूसरे समयमें अल्पतरविभक्ति उत्पन्न हो जाती है।

शंका—उपशमसम्यक्त्वके कालमें तीन दर्शनमोहनीयकी स्थितिके निषेक द्वितीय स्थितिमें अवस्थित रहते हैं, अतः उनका गलन नहीं होनेके कारण अवस्थितकाल अन्तर्मुहूर्तप्रमाण प्राप्त होता है, उसे यहाँ क्यों नहीं ग्रहण किया ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि वहाँपर तीनों कर्मोंकी कर्मस्थितिके समयोंके प्रत्येक समयमें गलते रहनेपर स्थितिका अवस्थान माननेमें विरोध आता है। यदि कहा जाय कि निषेकोंको स्थितिपना प्राप्त हो जायगा सो भी बात नहीं है, क्योंकि द्रव्यको पर्यायरूप मानने में विरोध आता है। अर्थात् निषेक द्रव्य है और उनका एक समयतक कर्मरूप रहना आदि पर्याय है। चूँकि द्रव्यसे पर्याय कथञ्चित् भिन्न है, अतः पर्यायके विचारमें द्रव्यको स्थान नहीं। जिसके सम्यक्त्वकर्मकी सत्ता नहीं है ऐसा मिथ्यादृष्टि जीव जब सम्यक्त्वको ग्रहण करता है तब उसके सम्यक्त्वके ग्रहण करनेके प्रथम समयमें एक समयतक अवक्तव्यस्थितिविभक्ति होती है, क्योंकि पहले अविद्यमान सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके स्थितिसत्त्वकी इनके उत्पत्ति देखी जाती है। इस अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका काल एक समय ही है, क्योंकि दूसरे समयमें अल्पतर स्थितिविभक्ति उत्पन्न हो जाती है।

*** सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अल्पतर स्थितिविभक्तिसत्कर्मवाले जीवका कितना काल है ?**

§ ४७. यह सूत्र सुगम है।

*** जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है।**

§ ४८. क्योंकि जिसके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका सत्त्व नहीं है ऐसा मिथ्यादृष्टि जीव जब प्रथमोपशमसम्यक्त्वको ग्रहण करता है तब उसके सम्यक्त्वके ग्रहण करनेके प्रथम समयमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिविभक्ति होती है। तथा दूसरे समयसे अल्पतर स्थितिविभक्तिको प्रारम्भ करके अति लघु अन्तर्मुहूर्त कालके द्वारा वह यदि दर्शमोहनीयका क्षय कर

मुहुत्तेण दंसणमोहणीए खविदे अप्पदरकालो जह० अंतोमुहुत्तं होदि[1] ।

❀ उक्कस्सेण वे छावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि।

§ ४९. तं जहा—णिस्संतकम्मियमिच्छादिट्ठिणा सम्मत्ते गहिदे उवसमसम्मत्तद्धा समयूणमेत्ता अप्पदरकालो होदि । पुणो वेदगसम्मत्तं घेत्तूण तेण सम्मत्तेण पढमछावट्ठिं गमिय पुणो सम्मामिच्छत्तं पडिवज्जिय तत्थ अंतोमुहुत्तमच्छिय वेदगसम्मत्तमुवणमिय तेण सम्मत्तेण विदियछावट्ठिं गमिय पुणो मिच्छत्तं गंतूण पलिदो० असंखे०भागमेत्तेण सव्वुक्कस्सुव्वेल्लणकालेण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तेसु उव्वेलिदेसु वेछावट्ठिसागरोवमाणि पलिदो० असंखे०भागेण सादिरेयाणि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्सप्पदरकालो । एवं जइवसहाइरियसुत्तमस्सिदूण ओघपरूवणं करिय संपहि उच्चारणमस्सिदूण भुजगारकाल-परूवणं कस्सामो ।

§ ५०. कालाणुगमेण दुविहो णिद्देसो–ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छत्त० केवचिरं कालादो होदि ? जह० एगसमओ, उक्क० चत्तारि समया । अप्पदर० केव० ? जह० एगसमओ, उक्क० तेवट्ठिसागरोवमसदं सादिरेयं । अवट्ठि० केवचि० ? जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं । सोलसक०-णवणोक० भुज० जह० एगसमओ, उक्क० एगूणत्तीस समया । अप्पदर-अवट्ठिदाणं मिच्छत्तभंगो । अणंताणु०चउक्क० अवत्तव्व० जहण्णुक्क० एगसमओ । सम्मत्त-सम्मामि० भुज०-अवट्ठि०-अवत्तव्व० जहण्णुक्क० एगसमओ । अप्पद०

देता है तो उसके अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है ।

* उत्कृष्ट काल साधिक दो छयासठ सागर है ।

§ ४९. उसका खुलासा इस प्रकार है—जिसके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व कर्मका सत्त्व नहीं है ऐसे मिथ्यादृष्टि जीवके सम्यक्त्व के ग्रहण करनेपर एक समयकम उपशम सम्यक्त्वका काल अल्पतरकाल होता है । पुनः वेदकसम्यक्त्वको ग्रहण करके और उस सम्यक्त्वके साथ प्रथम छयासठ सागर काल बिताकर तदनन्तर सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होकर और वहाँ अन्तर्मुहूर्त कालतक रहकर पुनः वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त करके और उसके साथ द्वितीय छयासठ सागर काल बिताकर पुनः मिथ्यात्वको प्राप्त करके जब वह पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण सर्वोत्कृष्ट उद्वेलनाकालके द्वारा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना कर देता है तब उसके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका पल्योपमके असंख्यातवें भाग से अधिक दो छयासठ सागर प्रमाण अल्पतर काल होता है ।

§ ५०. इस प्रकार यतिवृषभ आचार्यके सूत्रके आश्रयसे ओघका कथन करके अब उच्चारणाके आश्रयसे भुजगारकालका कथन करते हैं—कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है–ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश । उनमेंसे ओघकी अपेक्षा मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिविभक्तिका कितना काल है ? जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल चार समय है । अल्पतर स्थितिविभक्तिका कितना काल है ? जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल साधिक एकसौ त्रेसठ सागर है । अवस्थित स्थितिविभक्ति का कितना काल है ? जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है । सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगारस्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एकसमय और उत्कृष्टकाल उन्तीस समय है। अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्तियोंका भंग मिथ्यात्वके समान है । अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्टकाल एक समय है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार,

1 ता० प्रतौ - मुहुत्ता होदि इति पाठः ।

**जह० अंतोमु०, उक्क० वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि। एवं तस-तसपज्ज०-अचक्खु०-भवसिद्धिया त्ति। णवरि तस-तसपज्ज० सम्म०-सम्मामि० अप्पद० जह० एगसमओ।**

**§ ५१. आदेसेण णेरइएसु मिच्छत्तस्स भुज० केव० ? जह० एगसमओ, उक्क० तिण्णि समया। तं जहा—असण्णिपंचिंदियस्स दोविग्गहं कादूण णेरइएसु उववण्णस्स विदिय-समए अद्धाक्खएण एगो भुजगारसमओ। तदियसमए तट्ठिदिपरिणामेहि चेव सण्णिट्ठिदिं बंधमाणस्स विदिओ भुजगारसमओ। संकिलेसक्खएण विणा तदियसमए कधं सण्णि-ट्ठिदिं बंधदि ? ण, संकिलेसेण विणा सण्णिपंचिंदियजादिमस्सिदूण ट्ठिदिबंधवड्ढीए उव-लंभादो। चउत्थसमए संकिलेसक्खएण तदिओ भुजगारसमओ। एवं मिच्छत्तभुजगारस्स तिण्णि समया परूविदा। अहवा अद्धाक्खएण संकिलेसक्खएण च वड्ढिदूण बंध-माणस्स वे समया। एस पाढो एत्थ पहाणभावेण घेत्तव्वो। अप्पदर० जह० एगसमओ, उक्क० तेत्तीससागरो० देसूणाणि। अवट्ठिद० ओघं। बारसक०-णवणोक० भुज० ज० एगसमओ, उक्क० सत्तारस समया। अट्ठारससमयमेत्तभुजगारकालो किमेत्थ णोवलब्भदे ?**

अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिविभक्तियोंका जघन्य और उत्कृष्टकाल एक समय है। तथा अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्टकाल साधिक एकसौ बत्तीस सागर है। इसी प्रकार त्रस, त्रस पर्याप्त, अचक्षुदर्शनवाले और भव्य जीवोंके जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि त्रस और त्रस पर्याप्तकोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य काल एक समय है।

**विशेषार्थ**—यद्यपि ओघसे सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतरस्थितिविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्तसे कम प्राप्त नहीं होता तो भी त्रस और त्रसपर्याप्त जीवोंके वह एक समय बन जाता है, क्योंकि जिसके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलनामें एक समय शेष रह गया है उसके त्रस और त्रसपर्याप्तकोंमें उत्पन्न होनेपर वहाँ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिका जघन्य काल एक समय देखा जाता है।

§ ५१. आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें मिथ्यात्वकी भुजगारस्थितिविभक्तिका कितना काल है ? जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल तीन समय है। उत्कृष्टकाल तीन समय इस प्रकार है—जो असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीव दो मोड़े लेकर नारकियोंमें उत्पन्न हुआ है उसके दूसरे समयमें अद्धा-क्षयसे एक भुजगार समय होता है। तीसरे समयमें स्थितिके उसी परिणामसे ही संज्ञीकी स्थितिको बाँधते हुए उसके दूसरा भुजगार समय होता है।

**शंका**—संक्लेशक्षयके बिना तीसरे समयमें वह जीव संज्ञीकी स्थितिको कैसे बाँधता है ?

**समाधान**—क्योंकि संक्लेशके बिना संज्ञी पंचेन्द्रिय जातिके निमित्तसे उसके स्थितिबन्धमें वृद्धि पाई जाती है।

तथा चौथे समयमें संक्लेशक्षयसे उसके तीसरा भुजगार समय होता है। इस प्रकार नारकियोंके मिथ्यात्वकी भुजगारस्थितिके तीन समयोंका कथन किया। अथवा अद्धाक्षय और संक्लेशक्षयसे स्थिति बढ़ाकर बाँधनेवाले नारकीके दो भुजगार समय होते है। यह पाठ यहाँ-पर प्रधानरूपसे लेना चाहिये। अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल कुछ कम तेतीससागर है। अवस्थित स्थितिविभक्तिका काल ओघके समान है। बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल सत्रह समय है।

**ण, अट्ठारसमस्स भुजगारसमयस्स विचारिज्जमाणस्साणुवलंभादो। अप्पदर०-अवट्ठिद० मिच्छत्तभंगो। अणंताणु०चउक्क० एवं चेव। णवरि अवत्तव्व० ओघं। सम्मत्त०-सम्मामि० अप्पद० जह० एगसमओ, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। सेसमोघं**

**§ ५२. पढमपुढवि० एवं चेव। णवरि सव्वेसिमप्पद० जह० एगसमओ, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा। विदियादि जाव सत्तमि त्ति मिच्छत्त० भुज० ज० एगस०, उक्क० बे समया। अप्प० ज० एगस०, उक्क० सगसगट्ठिदी देसूणा। अवट्ठि० ओघं। बारसक०-**

**शंका**—यहाँपर अठारह समयप्रमाण भुजगारकाल क्यों नहीं प्राप्त होता है?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि अठारहवाँ भुजगार समय विचार करनेपर बनता नहीं, अतः यहाँ उसे स्वीकार नहीं किया है।

बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्तियोंका भंग मिथ्यात्वके समान है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कका कथन इसी प्रकार जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थितिविभक्ति ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है। शेष कथन ओघके समान है।

**विशेषार्थ**—सामान्यसे नारकियोंमें मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिका उत्कृष्ट काल तीन या दो समय घटित करके बतलाया है। साथ ही यह सूचना भी की है कि यहां दो समयवाला पाठ प्रधान है। मालूम होता है कि यह सूचना बहुलताकी अपेक्षासे की है। एक तो असंज्ञी जीव नरकमें कम उत्पन्न होते हैं। उसमें भी पहले नरकमें ही उत्पन्न होते है। फिर भी सर्वत्र भुजगार स्थितिके तीन समय प्राप्त होना शक्य नहीं है। हाँ दो समय सातों नरकोंमें प्राप्त होते है। यही कारण है कि वीरसेन स्वामीने दो समयवाली मान्यताको मुख्यता दी। तथा नरकमें वेदकसम्यक्त्वका उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है, अतः इस अपेक्षासे वहां मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्ट काल कुल कम तेतीस सागर प्राप्त होता है। इसी प्रकार अन्य प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्ट काल जानना चाहिये। तथा किसी भी विवक्षित कषाय और नोकपायकी भुजगार स्थितिके नरकमें सत्रह समय ही बनते है, क्योंकि संक्रमणकी अपेक्षा पन्द्रह अद्धाक्षयकी अपेक्षा एक और संक्लेशक्षयकी अपेक्षा एक इस प्रकार एक भवकी अपेक्षा भुजगार के कुल सत्रह समय ही प्राप्त होते हैं। सामान्यसे जो भुजगारके उन्नीस समय बतलाये है वे दो पर्यायोंकी अपेक्षा घटित किये गये हैं। पर यहाँ केवल एक नरक पर्याय ही विवक्षित है, अतः सत्रह समयसे अधिक नहीं बनते। यही कारण है कि वीरसेन स्वामीने नरकमे भुजगारके अठारहवें समयका भी निषेध कर दिया है। किन्तु नौ नोकषायोंके सत्रह समय घटित करनेमें जो विशेषता ओघप्ररूपणामें बतला आये है वह यहाँ भी जान लेनी चाहिये।

§ ५२. पहली पृथिवीमें इसी प्रकार जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ सभी प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है।

दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारकियोंमें मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल दो समय है। अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। तथा अवस्थित स्थितिविभक्तिका काल ओघके समान है। बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार स्थिति-

**णवणोक० भुज० ज० एगस०, उक्क० सत्तारस समया। सेस० मिच्छत्तभंगो। अणंताणु०चउक्क० एवं चेव। णवरि अवत्त० ओघं। सम्मत्त-सम्मामि० अप्प० ज० एगस०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा। सेस० ओघं।**

**§ ५३. तिरिक्ख० मिच्छत्त० भुज० ओघं। अप्प० ज० एगस०, उक्क० तिण्णि पलिदोवमाणि सादिरेयाणि। अवट्ठि० ओघं। बारसक०-णवणोक०-अणंताणु०चउक्क० अप्प० मिच्छत्तभंगो। सेस० ओघं। सम्मत्त-सम्मामि० अप्पद० ज०एगस०, उक्क० तिण्णिपलि० देसू०। सेसमोघं।**

**§ ५४. पंचिंदियतिरि०-पंचि०तिरिक्खपज्ज०-पंचिं०तिरि०जोणिणीसु मिच्छत्त-सोल-**

विभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल सत्रह समय है। तथा शेष अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्तियोंका भंग मिथ्यात्वके समान है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कका कथन इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यस्थितिविभक्तिका काल ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। तथा शेष स्थितिविभक्तियोंका काल ओघके समान है।

**विशेषार्थ**—सामान्यसे नारकियोंके सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्ट काल यद्यपि कुछ कम तेतीस सागर बतला आये हैं पर प्रथमादि नरकोंमें वह कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण ही प्राप्त होता है, क्योंकि जिस नरककी जितनी उत्कृष्ट स्थिति होगी उससे कुछ कम काल तक ही उस नरकका नारकी अल्पतर स्थितिके साथ रह सकता है। तथा सामान्यसे नारकियोंके मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिका जो उत्कृष्ट काल तीन समय या दो समय बतलाया है वह पहले नरकमें तो अविकल बन जाता है किन्तु द्वितीयादि नरकोंमें असंज्ञी जीव मरकर नहीं उत्पन्न होता है, अतः वहाँ तीन समयवाला विकल्प नहीं बनता है। शेष कथन सुगम है।

§ ५३. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिविभक्तिका काल ओघके समान है। अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल साधिक तीन पल्य है। तथा अवस्थित स्थितिविभक्तिका काल ओघके समान है। बारह कषाय, नौ नोकषाय और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अल्पतर स्थितिविभक्तिका भंग मिथ्यात्वके समान है। तथा शेष स्थितिविभक्तियोंका काल ओघके समान है सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल कुछ कम तीन पल्य है। तथा शेष स्थितिविभक्तियोंका काल ओघके समान है।

**विशेषार्थ**—तिर्यंचोंमें मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्ट काल चार समय बन जाता है, इसलिये इसे ओघके समान कहा। तथा अल्पतर स्थितिका जो साधिक तीन पल्य कहा है उसका कारण यह है कि भोगभूमिमें तो तिर्यंचोंके मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थिति ही होती है इसलिये अल्पतर स्थितिके तीन पल्य तो ये हुये तथा इसमें पूर्व पर्यायका अन्तर्मुहूर्त और सम्मिलित कर देना चाहिये। इस प्रकार अल्पतर स्थितिका साधिक तीन पल्य प्राप्त हो जाता है। तथा यहाँ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिका जो उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य कहा है सो यह, जिसने उत्तम भोगभूमि के तिर्यंचमें उत्पन्न होकर अतिशीघ्र वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त कर लिया है और अन्ततक वेदकसम्यक्त्वके साथ रहा, उसकी अपेक्षा कहा है, क्योंकि इसके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी स्थिति उत्तरोत्तर अल्प अल्प होती जाती है। शेष कथन सुगम है।

§ ५४. पंचेन्द्रियतिर्यंच, पंचेन्द्रियतिर्यंच पर्याप्त और पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिमती जीवमें

**सक०-णवणोक० भुज० ज० एगस०, उक्क० तिण्णि समया अट्ठारस समया। सेसं तिरिक्खोघं। णवरि पंचिं०तिरि०पज्ज० इत्थिवेद० भुजगार० जह० एगस०, उक्क० सत्तारस समया। जोणिणि० पुरिस०-णवुंस० भुज० ज० एगस०, उक्क० सत्तारस समया।**

**§ ५५. पंचिं०तिरि०अपज्ज० मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० अप्पद० जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमु०। सेसं पंचिं०तिरिक्खभंगो। णवरि इत्थि-पुरिस० ज० एयस०, उक्क० सत्तारस समया। सम्मत्त-सम्मामि० अप्प० ज० एगस०, उक्क० अंतो-**

मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल मिथ्यात्वकी अपेक्षा तीन समय और शेषकी अपेक्षा अठारह समय है। तथा शेष कथन सामान्य तिर्यंचोंके समान है। किन्तु इतनी विशेपता है कि पंचेन्द्रिय तिर्यंच पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी भुजगार स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल सत्रह समय है। तथा योनिमती तिर्यंचोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी भुजगार स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल सत्रह समय है।

**विशेषार्थ**—जिस प्रकार नारकियोंमें मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिका उत्कृष्ट काल तीन समय घटित करके बतला आये हैं उसी प्रकार यहाँ उक्त तीन प्रकारसे तिर्यंचोंके भी घटित कर लेना चाहिये। तथा उक्त तीन प्रकारके तिर्यंचोंमें सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार स्थितिका उत्कृष्ट काल अठारह समय प्राप्त होता है। जिसका खुलासा इस प्रकार है उक्त तीनों प्रकारके तिर्यंच असंज्ञी भी होते हैं और संज्ञी भी। अब ऐसा असंज्ञी जीव लो जिसकी आयुमें एक आवलि और सोलह समय शेष हैं। तब उसने विवक्षित कषायको छोड़कर शेष पन्द्रह कषायोंकी उत्तरोत्तर भुजगार स्थितिका पन्द्रह समयमें बन्ध किया। पश्चात् एक आवलिके बाद जब आयुमें सोलह समय शेष रहे तब उसने उन भुजगार स्थितियोंका पन्द्रह समयके द्वारा विवक्षित कषायमें संक्रमण किया। अनन्तर सोलहवें समयमें उसने अद्धाक्षयसे भुजगार स्थितिको बाँधा और सत्रहवें समयमें ऋजुगतिसे संज्ञियोंमें उत्पन्न होकर संज्ञियोंके योग्य स्थितिका बन्ध किया। पश्चात् अठारहवें समयमें संक्लेशक्षयसे भुजगार स्थितिको बाँधा। इस प्रकार यहाँ भुजगार स्थितिके कुल अठारह समय प्राप्त होते हैं। किन्तु तिर्यंच पंचेन्द्रिय पर्याप्तकके स्त्रीवेदकी और योनिमती तिर्यंचके पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी भुजगार स्थितिके सत्रह समय ही प्राप्त होते हैं जिसका उल्लेख मूलमें किया ही है। बात यह है कि जो जिस वेदके साथ उत्पन्न होता है उसके पूर्व पर्यायके अन्तिम अन्तर्मुहूर्तमें वह वेद ही बँधता है, अतः योनिमती तिर्यंचमें उत्पन्न होनेवाले जीवके पूर्व पर्यायके अन्तमें पुरुष व नपुंसक वेदका बध नहीं होनेसे सोलह कषायोंका उक्त वेदोंमें संक्रमण भी नहीं होता, अतः उक्त वेदोंके भुजगारके अठारह समय घटित नहीं होते। इसीप्रकार पर्याप्त तिर्यंचके स्त्रीवेदके भुजगारका काल अठारह समय न रहकर सत्रह समय कहा है। सो यह सत्रह समय स्वस्थानकी अपेक्षा जानना चाहिये।

§ ५५. पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी अल्पतरस्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है तथा शेष स्थितिविभक्तियोंका भंग तिर्यंचोंके समान है किन्तु इतनी विशेपता है कि स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी भुजगार स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल सत्रह समय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है। इसी

**मुहुत्तं। एवं मणुसअपज्ज०। णवरि छब्बीसं पयडीणं भुज० ज० एयस०, उक्क० बे समया सत्तारस समया।**

**§ ५६. मणुसतिए मिच्छ०-सोलसक०-णवणोक० भुज० ज० एयस०, उक्क० बेसमया सत्तारस समया। सेसं पंचि०तिरिक्खभंगो। णवरि मणुसपज्ज० बारसक०-णवणोक० अप्प० जह० एयस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० सादिरेयाणि पुव्वकोडितिभागेण।**

**५७. देवाणं णारयभंगो। णवरि मिच्छत्तस्स सम्मत्त०-सम्मामि०-सोलसक०-णवणोक० अप्प० ज० एयस०, उक्क० तेत्तीससागरोवमाणि। भवण०-वाण० एवं चेव। णवरि अप्पदर० सगट्ठिदी देसूणा। जोदिसियादि जाव सहस्सारोत्ति विदियपुढविभंगो।**

प्रकार मनुष्य अपर्याप्तक जीवोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि छब्बीस प्रकृतियोंकी भुजगार स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल मिथ्यात्वकी अपेक्षा दो समय तथा शेषकी अपेक्षा सत्रह समय है।

§ ५६. सामान्य पर्याप्त और मनुष्य इन तीन प्रकारके मनुष्योंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार स्थितिविभक्तिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्टकाल मिथ्यात्वकी अपेक्षा दो समय तथा शेषकी अपेक्षा सत्रह समय है। तथा शेष भंग पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंके समान है। इतनी विशेषता है कि मनुष्य पर्याप्तकोंमें बारह कषाय और नोकषायों की अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल पूर्वकोटित्रिभागसे अधिक तीन पल्य प्रमाण है।

**विशेषार्थ**—पंचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकोंकी आयु अन्तर्मुहूर्तसे अधिक नहीं होती, इसलिये इनमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा। तथा इनके स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी भुजगार स्थितिका उत्कृष्ट काल अठारह समय प्राप्त न होकर सत्रह समय ही प्राप्त होता है। इसका विशेष खुलासा जिस प्रकार पंचेन्द्रिय तिर्यंच आदिके कर आये हैं उसी प्रकार यहाँ भी कर लेना चाहिये। शेष कथन सुगम है। मनुष्य लब्ध्यपर्याप्तकोंके यद्यपि सब प्रकृतियोंकी भुजगार आदि स्थितियोंका काल पंचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकोंके समान ही होता है फिर भी छब्बीस प्रकृतियोंकी भुजगार स्थितिके उत्कृष्ट कालमें कुछ विशेषता है। बात यह है कि मनुष्योंमें संज्ञी और असंज्ञी ये दो भेद नहीं होते, अतः इनके मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिका उत्कृष्टकाल दो समय और सोलह कषाय तथा नौ नोकषायोंकी भुजगार स्थितिका उत्कृष्टकाल सत्रह समय ही प्राप्त होता है। उक्त प्रकृतियोंकी भुजगार स्थितिके उत्कृष्ट कालके विषयमें यही कारण सामान्य, पर्याप्तक और योनिमती मनुष्योंके जानना चाहिये। इन तीन प्रकारके मनुष्योंका शेष कथन पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंके समान है किन्तु मनुष्य पर्याप्तकोंके बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल एक पूर्वकोटिका त्रिभाग अधिक तीन पल्य है, क्योंकि जिस मनुष्य पर्याप्तकने आगामी भवकी आयुको बाँधकर तदनन्तर क्षायिक सम्यग्दर्शनको प्राप्त कर लिया है उसके मनुष्य पर्याप्तक अवस्थाके रहते हुए उक्त कालतक अल्पतर स्थिति देखी जाती है।

§ ५७. देवोंमें नारकियोंके समान जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ मिथ्यात्व, सम्यक्त्व सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषयोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल तेतीस सागर है। भवनवासी और व्यन्तर देवोंमें इसी प्रकार जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँपर अल्पतरस्थितिविभक्तिका उत्कृष्टकाल कुछ कम अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है। ज्योतिषियोंसे लेकर सहस्रारस्वर्गतकके देवोंमें दूसरी पृथिवीके

**णवरि सोहम्मादिसु अप्प० ज० एगस०, उक्क० सगट्ठिदी। आणदादि जाव उवरिमगेवज्जो त्ति मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० अप्पद० जहण्णुक्क०ट्ठिदी। अणंताणु०चउक्क० अप्पदर० जह० एयसमओ, उक्क० सगसगट्ठिदी। अवत्तव्वं० ओघं। सम्मत्त-सम्मामि० अप्प० जह० एयस०, उक्क० सगसगट्ठिदी। सेस० ओघं। अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति सव्वपयडी० अप्प० जहण्णुक्क० जहण्णुक्कस्सट्ठिदी। णवरि सम्मत्त० अप्पदरस्स जह० एयस०। अणंताणु०चउक्क० अप्प० जह० अंतोमु०।**

समान जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेपता है कि सौधर्मादिक स्वर्गों में अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अपनी स्थितिप्रमाण है। आनत कल्पसे लेकर उपरिम ग्रैवेयकतकके देवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल जघन्य स्थितिप्रमाण और उत्कृष्टकाल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है। तथा अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका काल ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है। शेष कथन ओघके समान है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धतकके देवोंमें सब प्रकृतियों की अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य काल जघन्य स्थितिप्रमाण और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है किन्तु इतनी विशेपता है कि सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य काल एक समय है। तथा अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य काल अन्तमुहूर्त है।

**विशेषार्थ**—सर्वार्थसिद्धिके देवोंके सब प्रकृतियोंकी उत्तरोत्तर अल्पतर स्थिति ही होती है, इसलिये सामान्य देवोंके सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल तेतीस सागर कहा। भवनत्रिकमें सम्यग्दृष्टि जीव नहीं उत्पन्न होते अत: यहाँ सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्ट काल कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण प्राप्त होता है। तथा बारहवें स्वर्गतक संक्लेशानुसार स्थितिमें घटाबढ़ी होती रहती है इसलिये यहाँ तक सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका जघन्य काल एक समय भी प्राप्त होता है। किन्तु बारहवें स्वर्गके ऊपर यद्यपि सब प्रकृतियोंकी स्थिति उत्तरोत्तर अल्प ही होती जाती है फिर भी नौ ग्रैवेयकतकके जीव सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि दोनों प्रकारके होते हैं। तथा सम्यग्दृष्टिसे मिथ्यादृष्टि भी होते है और मिथ्यादृष्टिसे सम्यग्दृष्टि भी। अत: यहाँ अनन्तानुबन्धी चतुष्क, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी स्थिति अल्पतर और अवक्तव्य दो प्रकारकी बन जाती है किन्तु शेष कर्मोंकी एक अल्पतर स्थिति ही प्राप्त होती है। तदनुसार २२ प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका जघन्य काल अपनी-अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण प्राप्त होता है। किन्तु शेष छह प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका जघन्य काल एक समय भी बन जाता है, क्योंकि जिसने अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना की है ऐसा कोई एक जीव सासादनमें जाकर पहले समयमें अवक्तव्य स्थितिको प्राप्त हुआ और दूसरे समयमें अल्पतरस्थितिको प्राप्त करके यदि मर जाता है तो अनन्तानुबन्धीकी अल्पतर स्थितिका जघन्यकाल एक समय प्राप्त होता है। इसी प्रकार उद्वेलनाकी अपेक्षा उक्त स्थानोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिका जघन्य काल एक समय बन जाता है। तथा अनुदिश आदिमें बाईस प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है यह तो स्पष्ट ही है। किन्तु शेष छह प्रकृतियोंमें अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अल्पतर स्थितिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है, क्योंकि वहाँ उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहूर्त कालके भीतर जो अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना कर देता है उसके अनन्तानुबन्धीकी अल्पतर स्थितिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त ही प्राप्त

§ ५८. **एइंदिएसु मिच्छत्त० भुज० ज० एयसमओ, उक्क० बेसमया। अप्प० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० ओघं। सोलसक०-णवणोक० भुज० विदियपुढविभंगो। अप्प ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। सम्मत्त-सम्मामि० अप्प० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। एवं बादरेइंदिय० सुहुमेइंदिय०-पुढवि०-बादरपुढवि०-सुहुमपुढवि०-आउ०-बादरआउ०-सुहुमआउ०-तेउ०-बादरतेउ०-सुहुमतेउ०-वाउ०-बादरवाउ०-सुहुमवाउ०-बादरवणप्फदिपत्तेय-वणप्फदि०-णिगोद०-बादरसुहुमाणं। बादरेइंदियअपज्ज०-सुहुमेइंदियपज्जत्तापज्जत्ताणं मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० भुज०-अवट्ठि० एइंदियभंगो। अप्पदर० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। सम्मत्त-सम्मामि० अप्प० ज० एयस०, उक्क० अंतोमु०। एवं पंचकाय-बादरअपज्ज०-सुहुमपज्जत्तापज्जत्ताणं। बादरेइंदियपज्ज०-विगलिंदिय०-विगलिंदियपज्जत्ताणं मिच्छत्त० भुज० ज० एगस०, उक्क० बेसमया। अप्पद० ज० एगसमओ, उक्क० संखेज्जाणि वाससहस्साणि। अवट्ठि० ओघं। सोलसक०-णवणोक० भुज० ज० एगस०, उक्क० सत्तारस समया। अप्पद०-अवट्ठि० मिच्छत्तभंगो। [ सम्मत्त-सम्मा-**

होता है। तथा सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिका जघन्यकाल एक समय कृतकृत्यवेदक सम्यक्त्वकी अपेक्षा प्राप्त होता है।

§ ५८. एकेन्द्रियोंमें मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल दो समय है। अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल पल्योपमका असंख्यातवाँ भागप्रमाण है। अवस्थित स्थितिविभक्तिका काल ओघके समान है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार स्थितिविभक्तिका भंग दूसरी पृथिवीके समान है। अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार बादर एकेन्द्रिय, सूक्ष्म एकेन्द्रिय, पृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिक, सूक्ष्म पृथिवीकायिक, जलकायिक, बादर जलकायिक, सूक्ष्म जलकायिक, अग्निकायिक, बादर अग्निकायिक, सूक्ष्म अग्निकायिक, वायुकायिक, बादर वायुकायिक, सूक्ष्म वायुकायिक, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर, वनस्पतिकायिक, बादर वनस्पतिकायिक, सूक्ष्म वनस्पतिकायिक, निगोद, बादर निगोद और सूक्ष्म निगोद जीवोंके जानना चाहिये। बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त, सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त और सूक्ष्म एकेन्द्रिय अपर्याप्त जीवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तिका भंग एकेन्द्रियोंके समान है। तथा अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार पाँचों स्थावरकाय बादर अपर्याप्त, पाँचों स्थावरकाय सूक्ष्मपर्याप्त और पाँचों स्थावरकाय सूक्ष्म अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए। बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त, विकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंमें मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल दो समय है। अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल संख्यात हजार वर्ष है। तथा अवस्थित स्थितिविभक्तिका काल ओघके समान है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल सत्रह समय है। तथा अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्तियोंका भंग मिथ्यात्वके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी

मिच्छत्त० अप्प० मिच्छत्तभंगो।] विगलिंदियअपज्जत्ताणमेवं चेव। णवरि अप्पद० ज० एगसमओ, उक्क० अंतोमु०।

§ ५९. पंचिंदिय-पंचिं०पज्जत्ताणमोघं। णवरि भुज० जह० एगसमओ, उक्क० तिण्णि अट्ठारस समया। सम्म०-सम्मामि० अप्प० जह० एगसमयो[1]। पंचिंदिय-अपज्ज० पंचिं०तिरिक्खअपज्ज०भंगो।

अल्पतर स्थितिविभक्तिका भंग मिथ्यात्वके समान है। विकलेन्द्रिय अपर्याप्तकोंके इसीप्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है।

**विशेषार्थ**—एकेन्द्रियोंमें मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिका उत्कृष्टकाल दो समय अद्धाक्षय और संक्लेशक्षयकी अपेक्षासे कहा है। तथा सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार स्थितिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल सत्रह समय जो दूसरी पृथिवीमें बतला आये है वह एकेन्द्रियों के भी बन जाता है, अतएव यहाँ उक्त प्रकृतियोंकी भुजगार स्थितिका काल दूसरी पृथिवीके समान कहा है। एकेन्द्रियोंके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार, अवक्तव्य व अवस्थित स्थिति नहीं होती, क्योंकि इनके ये पद सम्यग्दृष्टिके पहले समयमें ही सम्भव है। एकेन्द्रियोंमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है, क्योंकि जो पंचेन्द्रिय जीव एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर निरन्तर एकेन्द्रिय ही रहे आते हैं उन्हें सत्तामें स्थित स्थितिको घटाकर एकेन्द्रियके योग्य करनेमें पल्यका असंख्यातवा भाग प्रमाण काल लगता है। मूलमें बादर एकेन्द्रिय आदि और जितनी मार्गणाएँ गिनाई है उनमें भी इसी प्रकार जानना चाहिये। किन्तु बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त, सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त और सूक्ष्म एकेन्द्रिय अपर्याप्त जीवोंका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है, इसलिये इनमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त कहा। इसी प्रकार पाँचों स्थावरकाय बादर अपर्याप्त तथा सूक्ष्म पर्याप्त और सूक्ष्म अपर्याप्त जीवोंके भी जानना चाहिये। बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त, विकलेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंका उत्कृष्टकाल संख्यात हजार वर्ष है इसलिये इनमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल संख्यात हजार वर्ष कहा। तथा विकलेन्द्रिय अपर्याप्तकोंका उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है, अतः इनमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्तप्रमाण कहा। शेष कथन सुगम है।

§ ५९ पंचेन्द्रिय और पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंके ओघके समान जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें भुजगारका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल मिथ्यात्वकी अपेक्षा तीन समय तथा शेषकी अपेक्षा अठारह समय है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय है। पंचेन्द्रिय अपर्याप्तकोंके पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंके समान जानना चाहिए।

**विशेषार्थ**—पंचेन्द्रिय और पंचेन्द्रिय पर्याप्तकोंमें संज्ञी और असंज्ञी दोनों भेद सम्मिलित हैं, अतः इनमें मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिका उत्कृष्टकाल तीन समय तथा सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका उत्कृष्टकाल अठारह समय बन जाता है। इन तीन और अठारह समयोंका विशेष खुलासा पहले किया ही है उसी प्रकार यहाँ भी जान लेना चाहिये। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिका जघन्यकाल एक समय उद्वेलनाकी अपेक्षा प्राप्त होता है। इस प्रकार यहाँ उक्त कथनमें ओघसे विशेषता है। शेष सब कथन ओघके समान है।

---

१ ता० प्रतौ समयो······। पंचि-इति पाठः।

§ ६०. बादरपुढविपज्ज०-बादरआउ०पज्ज०-बादरतेउपज्ज०-बादरवाउपज्ज०-बादरवणप्फदिपत्तेय०पज्ज० सव्वपयडी० भुज०-अवट्ठि० विदियपुढविभंगो। अप्पद० विगलिंदियपज्जत्तभंगो।

§ ६१. तसअपज्ज० छव्वीसपयडी० भुज०-अवट्ठि० ओघं। णवरि इत्थि०पुरिस०-भुज० सत्तारस समया। अप्पद० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। सम्मत्त-सम्मामि० अप्प० ज० एगसमओ, उक्क० अंतोमु०[1]।

§ ६२. पंचमण०-पंचवचि० मिच्छत्त सोलसक०-णवणोक०-सम्मत्त-सम्मामि० अप्पद० जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमु०। सेस० विदियपुढविभंगो। एवं वेउव्विय०। कायजोगि० ओघभंगो। णवरि सव्वेसिमप्प० उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। ओरालिय० मिच्छत्त० भुज० ज० एगसमओ, उक्क० वे समया। अवट्ठि० ओघं। अप्प० ज० एगस०, उक्क० बावीस वाससहस्साणि देसूणाणि। सोलसक०-णवणोक० भुज० ज० एगस०, उक्क० सत्तारस समया। अवट्ठि० ओघं। अप्पदर० सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताण-

§ ६०. बादरपृथिवीकायिक पर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अग्निकायिक पर्याप्त, बादर वायुकायिक पर्याप्त और बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त जीवोंके सब प्रकृतियोंकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तियोंका भंग दूसरी पृथिवीके समान है। तथा अल्पतर स्थितिविभक्तिका भंग विकलेन्द्रिय पर्याप्तकोंके समान है ?

§ ६१. त्रस अपर्याप्तकोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी भुजगार और अवस्थित स्थिति विभक्तियोंका भंग ओघके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी भुजगार स्थितिविभक्तिका उत्कृष्टकाल सत्रह समय है। तथा अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है।

**विशेषार्थ**—सब अपर्याप्तक नपुंसक ही होते हैं, इसलिये त्रस अपर्याप्तकोंमें स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी भुजगार स्थितिका उत्कृष्टकाल सत्रह समय ही प्राप्त होता है। तथा अपर्याप्तकोंका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है, इसलिये इनमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त कहा। शेष कथन सुगम है।

§ ६२. पाँचों मनोयोगी और पाँचों वचनयोगी जीवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नौ नोकषाय, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है। तथा शेष कथन दूसरी पृथिवीके समान है। इसी प्रकार वैक्रियिककाययोगी जीवोंके जानना चाहिये। काययोगियोंके ओघके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका उत्कृष्टकाल पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है। औदारिककाययोगियोंमें मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल दो समय है। अवस्थित स्थितिविभक्तिका काल ओघके समान है। अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल कुछ कम बाईस हजार वर्ष है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल सत्रह समय है। अवस्थितस्थितिविभक्तिका काल ओघके समान है। तथा इन प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका और

1 ता० प्रतौ सम्मत्त-सम्मामि० अप्प० ज०एगसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं इति पाठो नास्ति।

**मप्पदरस्स च ज० एगसमओ, उक्क० बावीस वस्ससहस्साणि देसूणाणि। सेसमोघं। ओरालियमिस्स० मिच्छत्त० भुज० ज० एगस०, उक्क० तिण्णि समया। अप्पद० एगस०, उक्क० अंतोमु०। अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क अंतोमु०। सोलसक०-णवणोक० भुज० ज० एगस०, उक्क० अट्ठारस समया। अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु०। अप्प० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु०। सम्मत्त-सम्मामि० अप्प० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु०। वेउव्वियमिस्स० अट्ठावीसपयडीणमप्प० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु०। सेस० विदियपुढविभंगो। णवरि पदविसेसो जाणियव्वो। आहारकाय० सव्वपय० अप्प० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु०। आहारमिस्स० सव्वपय० अप्प० जहण्णुक्क० अंतोमु०। एवमुवसमसम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं। कम्मइय० मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० भुज० ज० एगसमओ, उक्क० वे समया। अप्प०-अवट्ठि० ज० एगसमओ, उक्क० तिण्णि समया। सम्मत्त-सम्मामि० अप्प० ज० एगस०। उक्क० तिण्णि समया। एवमणाहार०।**

सम्यक्त्व तथा सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल कुछ कम बाईस हजार वर्ष है। शेष कथन ओघके समान है। औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अठारह समय है। अवस्थित स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है। अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है। वैक्रियिकमिश्रकाययोगियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है। शेषका भंग दूसरी पृथिवीके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि पदविशेष जानना चाहिये। आहारककाययोगियोंमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है। आहारकमिश्रकाययोगियोंमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार उपशमसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। कार्मणकाययोगियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार और अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल दो समय है। अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल तीन समय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल तीन समय है। इसी प्रकार अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए।

**विशेषार्थ**—पाचों मनोयोग, पाँचों वचनयोग और वैक्रियिककाययोगका उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है, अतः इनमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त कहा। औदारिककाययोगका उत्कृष्टकाल कुछ कम बाईस हजार वर्ष है, अतः इसमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल कुछ कम बाईस हजार वर्ष कहा। औदारिकमिश्रकाययोगका उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है अतः इसमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त कहा। वैक्रियिकमिश्रकाययोगमें भी इसी प्रकार समझना चाहिये। तथा इसी प्रकार आहारककाययोग और आहारकमिश्र-

§ ६३. वेदाणुवादेण इत्थि० मिच्छत्तस्स भुज० ज० एगसमओ, उक्कस्सेण तिण्णि समया। अप्प० ज० एगस०, उक्क० पणवण्ण पलिदोवमाणि देसूणाणि। अवट्ठि० ओघं। बारसक०-णवणोक० भुज० ज० एगस०, उक्क० अट्ठारस समया। णवरि पुरिस०-णवुंस० सत्तारस समया। अप्प०-अवट्ठि० मिच्छत्तभंगो। अणंताणु० चउक्क० एवं चेव। णवरि अवत्तव्व० जहण्णुक्क० एगस०। सम्मत्त-सम्मामि० भुज०-अवट्ठि०-अवत्तव्व० ओघं। अप्पद० ज० एगस०, उक्क० पणवण्णपलिदो० सादिरेयाणि। पुरिसवेद० पंचिंदियभंगो। णवरि इत्थि-णवुंस० भुज० उक्क० सत्तारस समया। णवुंस० मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक०-भुज०-अवट्ठि० ओघं। णवरि इत्थि-पुरिस० भुज० उक्क० सत्तारस समया। अप्प० ज० एगस०, उक्क० तेत्तीससागरोवमाणि देसूणाणि। अणंताणु०चउक्क० अवत्तव्वं ओघं। सम्मत्त-सम्मामि० अप्प० ज० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० सादिरेयाणि। सेस० ओघं। अवगदवेद० चउवीसपयडि० अप्प०

काययोगमें भी समझना चाहिये। इतना विशेषता है कि मिश्रयोगोंमें अवक्तव्य भंग नहीं होता। तथा आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगमें एक अल्पतर स्थितिविभक्ति ही होती है। उपशमसम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्टकाल भी अन्तर्मुहूर्त है तथा इनमें एक अल्पतर स्थितिविभक्ति ही होती है इसलिये इनमें अल्पतर स्थितिके कथनको आहारकद्विकके समान कहा। कार्मण काययोगमें अद्धाक्षय और संक्लेशक्षयकी अपेक्षा सर्वत्र भुजगारके दो समय ही प्राप्त होते हैं, इसलिये इसमें छब्बीस प्रकृतियोंकी भुजगार स्थितिका उत्कृष्टकाल दो समय कहा। तथा इसका उत्कृष्टकाल तीन समय है इसलिये इसमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल तीन समय कहा। संसारी जीवोंके अनाहारक अवस्था कार्मणकाययोगमें ही होती है, अतः इसके कथनको कार्मणकाययोगके समान कहा। शेष कथन सुगम है।

§ ६३. वेदमार्गणाके अनुवादसे स्त्रीवेदमें मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिविभक्तिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्टकाल तीन समय है। अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल कुछ कम पचवन पल्य है। अवस्थित स्थितिविभक्तिका काल ओघके समान है। बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्ट काल अठारह समय है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी भुजगार स्थितिविभक्तिका उत्कृष्टकाल सत्रह समय है। तथा अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्तिका भंग मिथ्यात्वके समान है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कका इसीप्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्टकाल एक समय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व-की भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिविभक्तियोंका काल ओघके समान है। अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल साधिक पचवन पल्य है। पुरुषवेदी जीवोंके पंचेन्द्रियोंके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी भुजगार स्थितिविभक्तिका उत्कृष्टकाल सत्रह समय है। नपुंसकवेदियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तिका काल ओघके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी भुजगार स्थितिविभक्तिका उत्कृष्टकाल सत्रह समय है। अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल कुछ कम तेतीस सागर है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका काल ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल साधिक तेतीस

ज० एगस०, उक्क० अंतोमु० । एवमकसा०-सुहुम०-जहाक्खादसंजदे त्ति ।

§ ६४. चत्तारिक० मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि०-सोलसक०-णवणोक० भुज०-अवट्ठि० सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०चउक्क० अवत्तव्व० ओघं । अप्प० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु० ।

§ ६५. मदि०-सुद० मिच्छत्त-सोलसक० णवणोक० भुज०-अवट्ठि० ओघं । अप्प० ज० एगस०, उक्क० एक्कत्तीसं सागरा०[1] सादिरेयाणि । सम्मत्त-सम्मामि० अप्पद०

सागर है । शेष कथन ओघके समान है । अपगतवेदियोंमें चौबीस प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अन्तमुहूर्त है । इसी प्रकार अकषायी, सूक्ष्मसांपरायिकसंयत और यथाख्यातसंयत जीवोंके जानना चाहिए ।

§ ६४. क्रोधादि चारों कषायवाले जीवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तिका तथा सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका काल ओघके समान है । अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है ।

**विशेषार्थ**—वेदमार्गणामें निम्न बातें ध्यान देने योग्य हैं । पहली तो यह कि विवक्षित वेदमें उस वेदके अतिरिक्त शेष वेदोंकी भुजगार स्थितिका उत्कृष्टकाल सत्रह समय होता है । दूसरी यह कि यद्यपि स्त्रीवेदी आदिका उत्कृष्टकाल सौ पल्य पृथक्त्व आदि है फिर भी इनमें मिथ्यात्व आदिकी अल्पतर स्थितिका काल उस वेदके उत्कृष्टकाल प्रमाण नहीं है । इनमेंसे स्त्रीवेदमें मिथ्यात्व आदि छब्बीस प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका काल कुछ कम पचवन पल्य है, क्योंकि यहाँ सम्यग्दर्शनका जो उत्कृष्टकाल है वही यहाँ उक्त प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल प्राप्त होता है। किन्तु सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके विषयमें स्थिति इससे भिन्न है । बात यह है कि इनकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल सम्यक्त्व व मिथ्यात्वके क्रमसे प्राप्त होते रहनेसे होता है और स्त्रीवेदियोंमें मिथ्यादृष्टि जीव ही उत्पन्न होता है अतः सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल साधिक पचवन पल्य प्राप्त होता है । तथा ओघमें सब प्रकृतियोंका जो भुजगार आदि स्थिति कही है वह अधिकतर पुरुषवेदकी प्रधानतासे ही घटित होती है । पचेन्द्रियोंमें भी वह अविकल बन जाती है, क्योंकि पुरुषवेदी पंचेन्द्रिय ही होते है, अतः यहाँ पुरुषवेदमें भुजगार स्थिति आदिका काल पचेन्द्रियोंके समान कहा । तथा नपुंसकवेदमें २६ प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल कुछ कम तेतीस सागर है, क्योंकि यहाँ सम्यग्दर्शनका जो उत्कृष्टकाल है वही उक्त प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल है । तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल साधिक तेतीस सागर है । विशेष खुलासा जिस प्रकार स्त्रीवेदियोंके कर आये हैं उसी प्रकार यहाँ भी कर लेना चाहिये । शेष कथन सुगम है । अपगतवेदमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थिति ही होती है । तथा इसका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है अतः इसमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त कहा । इसी प्रकार अकषायी, सूक्ष्मसाम्परायिकसंयत और यथाख्यातसंयत जीवोंके भी घटित कर लेना चाहिये । तथा क्रोधादि चारों कषायोंकी अल्पतर स्थिति का उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है, अतः इनमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त कहा । शेष कथन सुगम है ।

§ ६५. मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तिका काल ओघके समान है । तथा अल्पतर स्थितिविभक्तिका

---

1. ता० प्रतौ सागरो० देसूणाणि इति पाठः ।

जह० अंतोमु०,[1] उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। विहंग० मिच्छत्त-सोलसक० भुज० ज० एगस०, उक्क० विदियपुढविभंगो। अवट्ठि० ओघं। अप्प० जह० एगस०, उक्क० एक्कत्तीसं सागरो० देसूणाणि। सम्म०-सम्मामि० अप्प० ज० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो।

§ ६६. आभिणि०-सुद०-ओहि० मिच्छत्त-सोलसक०णवणोक० अप्प० ज०अंतोमु०, उक्क० छावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि। णवरि अणंताणु० देसू०। सम्मत्त-सम्मामि० अप्प० ज० अंतोमु०, उक्क० छावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि। भुज०-अवट्ठि०-अवत्त० णत्थि। मणपज्ज० अट्ठावीसं पय० अप्प० जह० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडी देसूणा। एवं० संजद०-सामाइय०-छेदोव०-परिहार०-संजदासंजदा त्ति। णवरि सामाइय०-छेदोव० चउवीसपय० अप्प० जह० एयसमओ। असंज० ओघभंगो। णवरि अप्प० सादिरेयं तेत्तीसं सागरोवमाणि। सम्म० अप्प० जह० एगसमओ।

जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल साधिक इकतीस सागर है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्टकाल पल्योपमके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। विभंगज्ञानियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकालका भंग दूसरी पृथिवीके समान है। अवस्थित स्थिति-विभक्तिका काल ओघके समान है। तथा अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल कुछ कम इकतीस सागर है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्ति-का जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल पल्योपमके असंख्यातवें भाग प्रमाण है।

§ ६६. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्टकाल साधिक छयासठ सागर है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीकी अपेक्षा कुछ कम छयासठ सागर है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल साधिक छयासठ सागर है। यहाँ भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य विभक्तियाँ नहीं है। मनःपर्ययज्ञानियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्टकाल कुछ कम पूर्वकोटि प्रमाण है। इसी प्रकार संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत और संयतासंयत जीवोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि सामायिक संयत और छेदोपस्थापना संयत जीवोंमें चौबीस प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय है। असंयतोंमें ओघके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अल्पतर स्थितिविभक्तिका उत्कृष्टकाल साधिक तेतीस सागर है। तथा सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय है।

**विशेषार्थ**—नौवें ग्रैवेयकमें मिथ्यात्व आदिकी अल्पतर स्थिति होती है। अब यदि वहाँ कोई मिथ्यादृष्टि जीव उत्पन्न हुआ तो उसके आदि और अन्तमें भी अल्पतर स्थिति पाई जाती है, अतः मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंके मिथ्यात्व आदि छब्बीस प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल साधिक इकतीस सागर कहा। तथा विभंगज्ञान अपर्याप्त अवस्थामें नहीं पाया जाता, इसलिये इसमें उक्त प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल कुछ कम इकतीस सागर कहा। तथा मिथ्यादृष्टिके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्ता पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण कालतक

1. ता० प्रतौ जह० एगस० इति पाठः।

**§ ६७. चक्खु० मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० भुज०-अवट्ठि० अणंताणु०चउक्क०[1] अवत्तव्व० ओघं। अप्प० ज० एगस०, उक्क० तेवट्ठिसागरोवमसदं सादिरेयं। सम्मत्त-सम्मामि० भुज०-अवट्ठि०-अवत्तव्वमोघं। अप्प० ज० एगस०, उक्क० वे छावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि। ओहिदंस० ओहिणाणिभंगो।**

ही पाई जाती है अतः उक्त तीनों अज्ञानोंमें इन दो प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा। आभिनिबोधिकज्ञान आदि सम्यग्ज्ञानोंमें केवल अल्पतर स्थिति ही पाई जाती है। किन्तु मनःपर्ययज्ञानको छोड़कर इनका जघन्यकाल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्टकाल साधिक छयासठ सागर है इसलिये इनमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका जघन्यकाल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्टकाल साधिक छयासठ सागर कहा। किन्तु अनन्तानुबन्धी चतुष्क इसका अपवाद है। बात यह है कि वेदक सम्यक्त्वके साथ अनन्तानुबन्धीका सत्त्व कुछ कम छयासठ सागर तक ही पाया जाता है इसलिये इसकी अल्पतरस्थितिका उत्कृष्टकाल कुछ कम छयासठ सागर कहा। तथा मनःपर्ययज्ञानका जघन्यकाल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्टकाल कुछ कम पूर्वकोटि वर्ष प्रमाण है, अतः इसमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका जघन्यकाल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्टकाल कुछ कम पूर्वकोटि वर्ष प्रमाण कहा। मनःपर्ययज्ञानके समान संयत आदि मार्गणाओंमें भी जानना चाहिये, क्योंकि इनका जघन्य और उत्कृष्टकाल मनःपर्ययज्ञानके समान है। इतनी विशेषता है कि सामायिक और छेदोपस्थानाका जघन्यकाल एक समय भी है जो कि उपशान्तमोहसे च्युत हुए जीवके ही सम्भव है, क्योंकि ऐसा जीव एक समय तक अनिवृत्तिकरण गुणस्थानमें रहा और मरकर यदि देव हो जाता है तो उसके सामायिक और छेदोपस्थापना संयमका जघन्यकाल एक समय पाया जाता है। पर यहाँ २४ प्रकृतियोंकी सत्ता ही सम्भव है, अतः २४ प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका जघन्यकाल एक समय कहा। असंयत मार्गणामें और सब काल तो ओघके समान बन जाता है किन्तु सब प्रकृतियोंकी अल्पतरस्थितिका उत्कृष्टकाल साधिक तेतीस सागर तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिका जघन्यकाल एक समय प्राप्त होता है। बात यह है कि अविरतसम्यग्दृष्टिका उत्कृष्टकाल कुछ कम एक पूर्वकोटि अधिक तेतीस सागर है, अतः असंयममें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल उक्त प्रमाण कहा। तथा यहाँ कृतकृत्यवेदककी अपेक्षा सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिका जघन्यकाल एक समय प्राप्त होता है।

§ ६७. चक्षुदर्शनवाले जीवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तिका तथा अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका काल ओघके समान है। अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल साधिक एक सौ त्रेसठ सागर है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिविभक्तियोंका काल ओघके समान है। तथा अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल साधिक एक सौ बत्तीस सागर है। अवधिदर्शनवाले जीवोंका भंग अवधिज्ञानी जीवोंके समान है।

**विशेषार्थ**—चक्षुदर्शनमार्गणाका काल यद्यपि दो हजार सागर है पर इसमें अल्पतर स्थितिका काल इतना नहीं प्राप्त होता, इसलिये यह कहा है कि चक्षुदर्शनमें २६ प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल साधिक एक सौ त्रेसठ सागर है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्टकाल साधिक एक सौ बत्तीस सागर है।

---

१. ता० प्रतौ चउक्क० [ ओघं ] अवत्तव्व० इति पाठः।

§ ६८. किण्ह-णील-काउ० मिच्छत्त० भुज०-अवट्ठि ओघं। अप्पद० ज० एगस०, उक्क० तेत्तीस-सत्तारस सत्तसागरोवमाणि देसूणाणि। सोलसक०-णवणोक० भुज०-अवट्ठि० ओघं। अप्प० मिच्छत्तभंगो। अणंताणु०चउक्क० अवत्तव्व० जहण्णुक्क० एगस०। सम्मत्त-सम्मामि० भुज०-अवट्ठि०-अवत्तव्वं ओघं। अप्प० ज० एगस०, उक्क० तेत्तीस-सत्तारस सत्तसागरोव० देसूणाणि। तेउ० सोहम्मभंगो पम्म० सहस्सार-भंगो। सुक्क० आणदभंगो। णवरि अप्प० तेत्तीसं सागरो० सादिरेयाणि।

§ ६९. अभव० छव्वीस० मदि०भंगो। सम्माइट्ठि० आभिणि०भंगो। खइय-सम्मा० एक्कवीसपय० अप्पद० ज० अंतोमुहुत्तं, उक्क० तेत्तीसं सागरो० सादि-रेयाणि। वेदग० मिच्छत्त सम्मामिच्छत्त-अणंताणु०चउक्क० ओहि०भंगो। णवरि उक्क० छावट्ठिसागरो० देसूणाणि। सम्मत्त बारसक०-णवणोक० अप्प० ज० अंतोमु०, उक्क० छावट्ठिसागरोवमाणि। सासण० सव्वपयडि० अप्प० ज० एगस०, उक्क० छ आव-लियाओ। मिच्छाइट्ठि० मदिअण्णाणिभंगो।

यह ओघके समान घटित कर लेना चाहिये। किन्तु इन दो प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिके जघन्य कालमें कुछ विशेषता है। बात यह है कि उद्वेलनाकी अपेक्षा इनकी अल्पतर स्थितिका जघन्य काल एक समय भी पाया जाता है अतः यहाँ अल्पतर स्थितिका जघन्य काल एक समय कहा। शेष कथन सुगम है। तथा इसके आगे अन्य मार्गणाओंमें जो कालका निर्देश किया है उसका अनुगम पूर्व कथनसे हो जाता है, इसलिये पृथक् खुलासा नहीं किया।

§ ६८. कृष्ण, नील और कापोत लेश्यावाले जीवोंमें मिथ्यात्वकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तियोंका काल ओघके समान है। अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल क्रमसे कुछ कम तेतीस, कुछ कम सत्रह और कुछ कम सात सागरप्रमाण है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तिका काल ओघके समान है। तथा अल्पतर स्थितिविभक्तिका भंग मिथ्यात्वके समान है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्टकाल एक समय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका काल ओघके समान है। अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल क्रमसे कुछ कम तेतीस, कुछ कम सत्रह और कुछ कम सात सागर है। पीतलेश्यावाले जीवोंके सौधर्मके समान भंग है। पद्मलेश्यावालोंके सहस्रारके समान भंग है। और शुक्ललेश्यावालोंके आनतकल्पके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि शुक्ल-लेश्यामें अल्पतर स्थितिविभक्तिका उत्कृष्टकाल साधिक तेतीस सागर है।

§ ६९. अभव्योंमें छब्बीस प्रकृतियोंका भंग मत्यज्ञानियोंके समान है। सम्यग्दृष्टियोंके आभिनि-बोधिकज्ञानियोंके समान भंग है। क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें इक्कीस प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्टकाल साधिक तेतीस सागर है। वेदकसम्यग्दृष्टियोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भंग अवधिज्ञानियोंके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अल्पतर स्थितिविभक्तिका उत्कृष्ट काल कुछ कम छयासठ सागर है। सम्यक्त्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल छयासठ सागर है। सासादनसम्यग्दृष्टियोंमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल छह आवली है। मिथ्यादृष्टियोंके मत्यज्ञानियोंके समान भंग है।

§ ७०. सण्णि० पंचिंदियभंगो। एवमाहारीणं। णवरि सण्णि० मिच्छ०-सोलसक०-णवणोक० भुज० उक्क० वे सत्तारस समया। असण्णि० मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि०-सोलसक०-णवणोक० अप्पदर ज० एगसमओ, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। सेस० ओरालियमिस्स०भंगो।

एवं कालाणुगमो समत्तो।

* अंतरं।

§ ७१. सुगममेदं, अहियारसंभालणफलत्तादो।

* मिच्छत्तस्स भुजगार-अवट्ठिदकम्मंसियस्स अंतरं जहण्णेण एगसमओ।

§ ७२. कुदो? भुजगार अवट्ठिदविहत्तीओ एगसमयं कादूण विदियसमए अप्पदरं करिय तदियसमए भुजगार-अवट्ठिदेसु एगसमयमेत्तंतरुवलंभादो।

* उक्कस्सेण तेवट्ठिसागरोवमसदं सादिरेयं।

§ ७३. तं जहा—तिरिक्खेसु मणुस्सेसु वा भुजगार-अवट्ठिदाणमादिं कादूण पुणो तत्थेव अंतोमुहुत्तकालमप्पदरेणंतरिय तिपलिदोवमिएसुप्पज्जिय तेवट्ठिसागरोवमसदं भमिय मणुस्सेसुप्पज्जिय अंतोमुहुत्ते गदे संकिलेसं पूरेदूण भुज०-अवट्ठि०कदेसु लद्धमंतरं होदि।

§ ७०. सञ्ज्ञी जीवोंके पंचेन्द्रियोंके समान भंग है। इसी प्रकार आहारक जीवोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि संज्ञियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार स्थितिविभक्तिका उत्कृष्टकाल मिथ्यात्वकी अपेक्षा दो समय और शेषकी अपेक्षा सत्रह समय है। असंज्ञियोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्यकाल एक समय और उत्कृष्टकाल पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा शेष भंग औदारिकमिश्रकाययोगियोंके समान है।

इस प्रकार कालानुगम समाप्त हुआ।

* आगे अन्तरानुगमका अधिकार है।

§ ७१. यह सूत्र सुगम है, क्योंकि अधिकारकी सम्हाल करना इसका फल है।

* मिथ्यात्वकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीवका जघन्य अन्तरकाल एक समय है।

§ ७२. क्योंकि जो कोई जीव भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तियोंको एक समय तक करके और दूसरे समयमें अल्पतर स्थितिविभक्ति करके यदि तीसरे समयमें पुनः भुजगार और अवस्थित विभक्तियां करते हैं तो उनके भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तियोंका केवल एक समय अन्तर पाया जाता है।

* उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक एकसौ त्रेसठ सागर है।

§ ७३. उसका खुलासा इस प्रकार है—जिन्होंने तिर्यंच और मनुष्योंमें उत्पन्न होकर भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तिका प्रारम्भ किया। पुनः वहीं पर अन्तर्मुहूर्त कालतक अल्पतर स्थितिविभक्तिसे उन्हें अन्तरित किया। पुनः वे तीन पल्यकी आयुवाले जीवोंमें उत्पन्न होकर और एकसौ त्रेसठ सागर कालतक परिभ्रमण करके मनुष्योंमें उत्पन्न हुए और वहां पर उन्होंने अन्तर्मुहूर्त कालके बाद संक्लेशकी पूर्ति करके भुजगार और अवस्थित विभक्तियोंको किया। इस प्रकार भुजगार और अवस्थित विभक्तियोंका उत्कृष्ट अन्तर साधिक एकसौ त्रेसठ सागर प्राप्त होता है।

* **अप्पदरकम्मंसियस्स अंतरं केवचिरं कालादो होदि ?**

§ ७४. सुगममेदं ।

* **जहण्णेण एगसमओ ।**

§ ७५. कुदो ? मिच्छत्तस्स अप्पदरं करेमाणेण भुजगारमवट्ठिदं वा एगसमयं कादूण पुणो तदियसमए अप्पदरे कदे एगसमयमेत्तंतरुवलंभादो ।

* **उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।**

§ ७६. कुदो ? अप्पदरं करेंतेण भुज०-अवट्ठिदाणि अंतोमुहुत्तं कादूण अप्पदरे कदे अंतोमुहुत्तमेत्तंतरुवलंभादो ।

* **सेसाणं पि णेदव्वं ।**

§ ७७. जहा मिच्छत्तस्स णीदं तहा सेसपयडीणं पि णेदव्वं । एवं चुण्णिसुत्ताइरिएण सूचिदत्थस्स उच्चारणमस्सिदूण परूवणं कस्सामो ।

§ ७८. अंतराणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । तत्थ ओघेण मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० भुज०-अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० तेवट्ठिसागरोवमसदं सादिरेयं । अप्पदर० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु० । अणंताणु०चउक्क० भुज०-अवट्ठि०

* **मिथ्यात्वकी अल्पतरस्थितिविभक्तिवाले जीवका अन्तरकाल कितना है ?**

§ ७४. यह सूत्र सुगम है ।

* **जघन्य अन्तरकाल एक समय है ।**

§ ७५. क्योंकि मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिको करनेवाले जिस जीवने एक समयके लिए भुजगार या अवस्थित स्थितिविभक्तिको किया पुनः तीसरे समय में यदि वह अल्पतर स्थितिविभक्तिको करता है तो उसके अल्पतर स्थितिविभक्तिका एक समय अन्तर पाया जाता है ।

* **उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है ।**

§ ७६. क्योंकि अल्पतर स्थितिविभक्तिको करनेवाले जिस जीवने अन्तर्मुहूर्त कालतक भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तियोंको किया । पुनः उसके अन्तर्मुहूर्त कालके बाद अल्पतर स्थितिविभक्तिके करनेपर मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है ।

* **इसी प्रकार शेष प्रकृतियोंका भी अन्तरकाल जानना चाहिए ।**

§ ७७. जिस प्रकार मिथ्यात्वका अन्तरकाल कहा उसी प्रकार शेष प्रकृतियोंका भी जानना चाहिए । इस प्रकार चूर्णिसूत्रके कर्ता यतिवृषभआचार्यके द्वारा सूचित हुए अर्थका उच्चारणाके आश्रयसे कथन करते हैं—

§ ७८. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश । उनमेंसे ओघकी अपेक्षा मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तियोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक एकसौ त्रेसठ सागर है । अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तिका भंग मिथ्यात्वके समान है । अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ सागर है ।

**मिच्छत्तभंगो। अप्प० ज० एगस०, उक्क० बेछावट्ठिसागरो० देसूणाणि। अवत्तव्व० ज० अंतोमु०, उक्क० अद्धपोग्गलपरियट्टं देसूणं। सम्मत्त-सम्मामि० भुज०-अवट्ठि० ज० अंतोमुहुत्तं, अप्पदर० ज० एगस०, अव्वत्तव्व० ज० पलिदो० असंखे०भागो। उक्क० सव्वेसिं पि अद्धपोग्गलपरियट्टं देसूणं। एवमचक्खु०-भवसिद्धियाणं।**

अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गल-परिवर्तनप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त, अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा सभी स्थिति-विभक्तियोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। इसी प्रकार अचक्षुदर्शनवाले और भव्य जीवोंके जानना चाहिए।

**विशेषार्थ**—एक जीवने अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना की, पश्चात् वह कुछ कम एकसौ बत्तीस सागर तक विसंयोजनाके साथ रहा और अन्तमें जाकर उसने अवक्तव्य स्थितिविभक्तिपूर्वक अल्पतर स्थितिको प्राप्त किया। इस प्रकार अनन्तानुबन्धीकी अल्पतर स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एकसौ बत्तीस सागर प्राप्त होता है। जिसने अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना की है ऐसा एक जीव मिथ्यात्वमें गया और वहाँ उसने अवक्तव्य स्थितिको प्राप्त किया। तदनन्तर दूसरी बार अन्तर्मुहूर्तके भीतर उसने मिथ्यात्वसे वेदक सम्यक्त्वको प्राप्त करके और अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करके अन्तर्मुहूर्तमें मिथ्यात्वको प्राप्त किया और इस प्रकार दूसरी बार अवक्तव्यस्थितिको प्राप्त किया। इस प्रकार अवक्तव्य स्थितिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त हो जाता है। तथा जिस जीवने अर्ध पुद्गलपरिवर्तन कालके आरंभमें और अन्तमें अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करके मिथ्यात्वको प्राप्त किया है उसके अवक्तव्य स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाण प्राप्त होता है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार और अवस्थित स्थिति सम्यग्दर्शन ग्रहण करनेके पहले समयमें होती है। अतः जिसने अन्तर्मुहूर्तके अन्दर दो बार सम्यक्त्वको ग्रहण करके भुजगार या अवस्थित स्थितिको कि या है उसके उक्त प्रकृतियोंकी भुजगार या अवस्थित स्थितिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है। जो सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिको कर रहा है उसने एक समय तक भुजगार या अवस्थित स्थितिको किया और पुनः अल्पतर स्थितिको करने लगा उसके उक्त प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त होता है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलनामें पल्यका असंख्यातवां भागप्रमाण काल लगता है और अवक्तव्य स्थिति उद्वेलनाके विना प्राप्त नहीं होती अतः सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा। जिसने अर्धपुद्गल परिवर्तन कालके प्रारंभमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्ता प्राप्त करके यथासम्भव भुजगार आदि स्थितियोंको किया। अनन्तर इनकी उद्वेलना करके कुछ कम अर्धपुद्गल परिवर्तन काल तक २६ प्रकृतियोंकी सत्ताके साथ रहा। पश्चात् कुछ कालके शेष रह जानेपर पुनः इनकी सत्ताको प्राप्त करके उक्त भुजगार आदि स्थितियोंको किया। इस प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार आदि स्थितियोका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाण प्राप्त होता है। यहाँ हमने सब प्रकृतियोंकी भुजगार आदि स्थितियोंके अन्तरका खुलासा नहीं किया है। जिनका आवश्यक था उन्हींका किया है। शेषका मूलसे होजाता है। इसी प्रकार मार्गणाओंमें भी जहाँ जिसके खुलासा करनेकी आवश्यकता होगी उसीका किया जायगा।

§ ७९. आदेसेण णेरइएसु मिच्छत्त० बारसक०-णवणोक० भुज०अवट्ठि० ज० एगसमओ, उक्क० तेत्तीससागरोवमाणि देसूणाणि। अप्प० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु०। अणंताणु०चउक्क० एवं चेव। णवरि अप्पदर० जह० एगसमओ, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। अवत्तव्व० ज० अंतोमु०, उक्क० तेत्तीससागरो० देसूणाणि। सम्मत्त-सम्मामि० भुज०-अवट्ठि० ज० अंतोमु०, अप्प० ज० एगस०, अवत्तव्व० ज० पलिदो० असंखे०भागो। उक्क० सव्वेसिं तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि एवं सव्वणेरइयाणं वत्तव्वं। णवरि सगसगट्ठिदी देसूणा।

§ ८० तिरिक्ख० मिच्छत्त०-बारसक०-णवणोक० भुज०-अवट्ठि० ज० एगसमओ, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अप्पद० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु०। अणंताणु०चउक्क० भुज०-अवट्ठि० मिच्छत्तभंगो। अप्प० ज० एगस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि। अवत्तव्वं ओघं। सम्मत्त-सम्मामि० चदुण्हं पदाणमोघभंगो।

§ ८१. पंचिंदियतिरिक्ख-पंचिं०तिरि०पज्ज०-पंचिं०तिरि०जोणिणीसु मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० भुज०-अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं। अप्प० ओघं। एवमणंताणु०चउक्काणं। णवरि अप्प० ज० एगस०, उक्क० तिण्णि पलि० देसू-

§ ७९. आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कका इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। तथा अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त, अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा सभी स्थितिविभक्तियोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। इसी प्रकार सब नारकियोंके कहना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि कुछ कम तेतीस सागरके स्थानमें कुछ कम अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिये।

§ ८०. तिर्यंचोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तिका भंग मिथ्यात्वके समान है। अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। तथा अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका अन्तर ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके चारों पदोंका भंग ओघके समान है।

§ ८१. पंचेन्द्रिय तिर्यंच, पंचेन्द्रिय तिर्यंच पर्याप्त और पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमती जीवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व प्रमाण है। अल्पतर स्थितिविभक्तिका अन्तर ओघके समान है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्कका जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है

णाणि । अवत्तव्व० ज० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणि । सम्मत्त-सम्मामि० भुज० ज० अंतोमुहुत्तं, अप्प० ज० एगस०, अवत्तव्व० ज० पलिदो० असंखेभागो । उक्क० सव्वेसिं पि तिण्णि पलिदो० पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणि । अवट्ठि० ज० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं । एवं मणुसतिय० । णवरि मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोकसायाणं जम्हि पुव्वकोडिपुधत्तं तम्हि पुव्वकोडी देसूणा ।

§ ८२. पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० मिच्छत्त०-सोलसक०-णवणोक० भुज०-अप्प०-अवट्ठिदाणं जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमु० । सम्मत्त-सम्मामि० अप्पदरस्स णत्थि अंतरं । एवं मणुसअपज्ज०-एइंदिय-बादरेइंदिय-सुहुमेइंदिय-तेसिं पज्जत्तापज्जत्त-सव्वविगलिंदिय-पंचिंदियअपज्ज०-पंचकाय०-बादरसुहुमपज्जत्तापज्जत्त-तसअपज्ज०-ओरालिमिस्स०-वेउव्वियमिस्स०-विभंगणाणि त्ति ।

§ ८३. देव० मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० भुज०-अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० अट्ठारससागरो० सादिरेयाणि । अप्पदर० ओघं[1] । अणंताणु०चउक्क० अप्पदर० ज० एगस०, अवत्तव्व० ज० अंतोमु० । उक्क० दोण्हं पि एकत्तीसं सागरो० देसूणाणि ।

कि अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वसे अधिक तीन पल्य है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त, अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा सभी स्थितिविभक्तियोंका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्त्वसे अधिक तीन पल्य है। अवस्थित स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्त्व है। इसी प्रकार सामान्य, पर्याप्त और मनुष्यनी इन तीन प्रकारके मनुष्योंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी जिस स्थितिविभक्तिके रहते हुए पूर्वकोटि पृथक्त्व कहा है वहाँ कुछ कम पूर्वकोटि अन्तर कहना चाहिये।

§ ८२. पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका अन्तर नहीं है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्त, एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय, सूक्ष्म एकेन्द्रिय, तथा बादर और सूक्ष्मके पर्याप्त और अपर्याप्त, सब विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त, पाँचों स्थावरकाय तथा इनके बादर और सूक्ष्म तथा पर्याप्त और अपर्याप्त, त्रस अपर्याप्त, औदारिकमिश्रकाययोगी, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी और विभंगज्ञानी जीवोंके जानना चाहिए।

§ ८३. देवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक अठारह सागर है। अल्पतर स्थितिविभक्तिका अन्तर ओघके समान है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। तथा

1. ता० प्रतौ ओघं । अवत्तव्व०भंग-इति पाठः ।

**सेसं मिच्छत्तभंगा। सम्मत्त-सम्मामि० भुज० ज० अंतोमु०, अप्पद० ज० एगस०, अव्वत्तव्व० ज० पलिदो० असंखे०भागो। उक्क० सव्वेसिं पि एकत्तीसं सागरो० देसूणाणि। अवट्ठि० ज० अंतोमु०, उक्क० अट्ठारस सागरो० सादिरेयाणि। भवणादि जाव सहस्सार० एवं चेव। णवरि सगट्ठिदी देसूणा।**

**§ ८४. आणदादि जाव उवरिमगेवज्जो त्ति मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० अप्पदरस्स णत्थि अंतरं। सम्मत्त-सम्मामि० भुज० ज० अंतोमु०, अप्प० ज० एगस०, अवत्तव्व० ज० पलिदो० असंखे०भागो०। अणंताणु०चउक्क० अप्पदर० अवत्तव्वाणं ज० अंतोमु०। उक्क० सव्वेसिं पि सगट्ठिदी देसूणा। एवं सुक्कले०।**

**§ ८५. अणुदिसादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति सव्वपयडीणमप्पदर० णत्थि अंतरं। एवमाहार०-आहारमिस्स०-अवगद०-अकसा०-आभिणि०-सुद०-ओहि०-मणपज्ज०-संजद०-सामाइय छेदो०-परिहार०-सुहुम०-जहाक्खाद०-संजदासंजद-ओहिदंस०-सम्मादि[1]०-खइय०-वेदय०-उवसम०-सासण०-सम्मामिच्छाइट्ठि त्ति।**

**§ ८६. पंचिंदिय-पंचिं०पज्ज०-तस-तसपज्ज० मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० ओघं। अणंताणु०चउक्क० ओघं। णवरि अवत्तव्व० ज० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा।**

दोनोंका ही उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। शेष स्थितिविभक्तियोंका भंग मिथ्यात्वके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तमुहूर्त, अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। अवस्थित स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तमुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर साधिक अठारह सागर है। भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार स्वर्गतकके देवोंके इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए।

§ ८४. आनतकल्पसे लेकर उपरिम ग्रैवेयकतकके देवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका अन्तर नहीं है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त,अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अल्पतर और अवक्तव्य स्थितिविभक्तियोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है। इसी प्रकार शुक्ललेश्यामें जानना चाहिए।

§ ८५. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका अन्तर नहीं है। इसी प्रकार आहारककाययोगी, आहारक मिश्रकाययोगी, अपगतवेदवाले, अकषायी, आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी,मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत, सूक्ष्मसांपरायिकसंयत, यथाख्यातसंयत, संयतासंयत, अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिए।

§ ८६. पंचेन्द्रिय, पचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस और त्रसपर्याप्त जीवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंका भंग ओघके समान है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग ओघके समान है। किन्तु

1 आ०प्रतौ सम्मामि० इति पाठः।

सम्मत्त०-सम्मामि० भुज०-अवट्ठि० ज० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा । अप्पदर० ज० एगस०, अव्वत्तव्व० ज० पलिदो० असंखे०भागो । उक्क० सगट्ठिदी देसूणा । एवं पुरिस०-चक्खु०-सण्णि त्ति ।

§ ८७. पंचमण०-पंचवचि० मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० भुज०-अप्पदर०-अवट्ठि० ज० एगसमओ, उक्क अंतोमु० । सम्म०-सम्मामि० अप्प० ज० एगसमओ, उक्क० अंतोमु० । सेसाणं णत्थि अंतरं । एवमोरालिय०-वेउव्वि०-चत्तारिकसायाणं ।

§ ८८. कायजोगि० मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० भुज०-अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असं०भागो । अप्प० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु० । अणंताणु०-चउक्क० अवत्तव्व० णत्थि अंतरं । सम्मत्त-सम्मामि० भुज०-अवट्ठि०-अवत्तव्व० णत्थि अंतरं । अप्पदर० ज० एगसमओ, उक्क० अंतोमु० । कम्मइय० छव्वीसं पयडीणं भुज०-अप्पदर०-अवट्ठि० जहण्णुक्क० एगसमओ । सेसं णत्थि अंतरं । एवमणाहार० ।

§ ८९. इत्थि० मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० भुज०-अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० पणवण्ण पलिदो० देसूणाणि । अप्पदर० ओघं । णवरि अणंताणु०चउक्क० अप्प-

इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तियोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर पल्योपमके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। तथा दोनोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। इसी प्रकार पुरुषवेदी, चक्षुदर्शनवाले और संज्ञी जीवोंके जानना चाहिए।

§ ८७. पाचों मनोयोगी और पाँचों वचनयोगी जीवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्तियोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। तथा शेष स्थितिविभक्तियोंका अन्तर नहीं है। इसी प्रकार औदारिककाययोगी, वैक्रियिककाययोगी और चार कषायवाले जीवोंके जानना चाहिए।

§ ८८. काययोगियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तियोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्योपमके असंख्यातवें भाग-प्रमाण है। अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका अन्तर नहीं है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका अन्तर नहीं है। अल्पतर स्थिति-विभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। कार्मणकाययोगियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्तियोंका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। शेषका अन्तर नहीं है। इसी प्रकार अनाहारकोंके जानना चाहिए।

§ ८९. स्त्रीवेदियोंमें मिथ्यात्व सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तियोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पचवन पल्य है। अल्पतर स्थितिविभक्तिका अन्तर ओघके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धी

१. ता-प्रतौ एगस० ।·········अठ-इति पाठः ।

दर० ज० एगस०, उक्क० पणवण्ण पलिदो० देसूणाणि। अवत्तव्व० ज० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा। सम्मत्त-सम्मामि० भुज०-अवट्ठि० ज० अंतोमुहुत्तं, अप्पदर० ज० एगसमओ, अवत्तव्व० ज० पलिदो० असंखे०भागो, उक्क० सव्वेसिं पि सगट्ठिदी देसूणा। णवुंस० मिच्छत्त०-सोलसक०-णवणोक० भुज०-अवट्ठि० ज० एगसमओ, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। अप्पदर० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु०। णवरि अणंताणु०चउक्क० अप्पदर० ज० एगसमओ, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। अवत्तव्व० ज० अंतोमु०, उक्क० अद्धपोग्गलपरियट्टं देसूणं। सम्मत्त-सम्मामि० ओघं। एवमसंजद०।

§ ९०. मदि०सुद० मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० भुज०-अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० एकत्तीसं सागरो० सादिरेयाणि। अप्पदर० ओघं। सम्मत्त-सम्मामि० अप्प० णत्थि अंतरं। एवं मिच्छादिट्ठीणं। अभव० छव्वीसं पयडीणमेवं चेव।

§ ९१. किण्ह०-णील०-काउ० मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० भुज०-अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा। अप्पदर० ओघं। अणंताणु०चउक्क० भुज०-अवट्ठि० ज० एगस०, अप्पदर ज० एगस०, अवत्तव्व० ज० अंतोमु०, उक्क० सव्वेसिं सगट्ठिदी

चतुष्ककी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पचवन पल्य है। अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तियोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त, अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। नपुंसकवेदियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तियोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। इसी प्रकार असंयत जीवोंके जानना चाहिए।

§ ९०. मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तियोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक इकतीस सागर है। अल्पतर स्थितिविभक्तिका अन्तर ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका अन्तर नहीं है। इसी प्रकार मिथ्यादृष्टियोंके जानना चाहिए। अभव्योंमें छब्बीस प्रकृतियोंका इसी प्रकार जानना चाहिये।

§ ९१. कृष्ण, नील और कापोत लेश्यामें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तियोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। अल्पतर स्थितिविभक्तिका ओघके समान है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तियोंका जघन्य अन्तर एक समय, अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी

देसूणा। सम्मत्त-सम्मामि० भुज०-अवट्ठि० ज० अंतोमु०, अप्पदर० ज० एगस०, अवत्तव्व० ज० पलिदो० असंखे०भागो, उक्क० सव्वेसिं सगट्ठिदी देसूणा। तेउ० सोहम्मभंगो। पम्म० सहस्सारभंगो। असण्णि० एइंदियभंगो। णवरि छव्वीसपयडी० भुज०-अवट्ठि० जह० एगसमओ, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। आहारि० ओघं। णवरि जम्हि उवड्ढपोग्गलपरियट्टं तम्हि अंगुलस्स असंखे०भागो।

एवमंतराणुगमो समत्तो।

*** णाणाजीवेहि भंगविचओ**

§ ६२. सुगममेदं; अहियारसंभालणफलत्तादो।

*** संतकम्मिएसु पयदं।**

§ ६३. कुदो ? असंतकम्मिएसु भुजगारादिपदाणमसंभवादो।

*** सव्वे जीवा मिच्छत्त-सोलसकसाय-णवणोकसायाणं भुजगारट्ठिदिविहत्तिया च अप्पदरट्ठिदिविहत्तिया च अवट्ठिदट्ठिदिविहत्तिया च।**

§ ९४. एदेसिं कम्माणं भुजगार-अप्पदर-अवट्ठिदट्ठिदिविहत्तिया सव्वे जीवा ते णियमा अत्थि त्ति संबंधो कायव्वो।

*** अणंताणुबंधीणमवत्तव्वं भजिदव्वं।**

भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तियोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त, अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है। पीतलेश्यामें सौधर्मके समान भंग है। पद्मलेश्यामें सहस्रारके समान भंग है। असंज्ञियोंमें एकेन्द्रियोंके समान भंग है। इतनी विशेषता है कि छब्बीस प्रकृतियोंकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तियोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है। आहारकोंके ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि जहाँ उपार्धपुद्गल परिवर्तनप्रमाण अन्तर कहा है वहाँ इनके अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण अन्तर कहना चाहिये।

इस प्रकार अन्तरानुगम समाप्त हुआ।

*** अब नानाजीवोंकी अपेक्षा भंगविचयानुगमका अधिकार है।**

§ ९२. यह सूत्र सुगम है, क्योंकि इसका फल अधिकारकी सम्हाल करना है।

*** सत्कर्मवाले जीवोंका प्रकरण है।**

§ ९३. शंका—सत्कर्मवाले जीवोंमें ही इस अधिकारकी प्रवृत्ति क्यों होती है ?

समाधान—क्योंकि जिन जीवोंके मोहनीयकर्मकी सत्ता नहीं है उनमें भुजगारादि पदोंका पाया जाना सम्भव नहीं है।

*** मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगारस्थितिविभक्तिवाले, अल्पतरस्थितिविभक्तिवाले और अवस्थितस्थितिविभक्तिवाले सब जीव नियमसे हैं।**

§ ९४. इन पूर्वोक्त कर्मोंकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जो सब जीव हैं वे नियमसे हैं ऐसा यहां सम्बन्ध करना चाहिये।

*** अनन्तानुबन्धीचतुष्कका अवक्तव्य पद भजनीय है।**

§ ९५. कुदो ? विसंजोइदअणंताणु०चउक्क० सम्माइट्ठीणं णिरंतरं मिच्छत्तगुणेण परिणमणाभावादो।

*** सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं भुजगार-अवट्ठिद-अवत्तव्वट्ठिदिविहत्तिया भजिदव्वा।**

§ ९६. कुदो ? णिरंतरं सम्मत्तं पडिवज्जमाणजीवाणमभावादो।

*** अप्पदरट्ठिदिविहत्तिया णियमा अत्थि।**

§ ९७. कुदो ? सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तसंतकम्मियजीवाणं तीदाणागदवट्टमाणकालेसु विरहाभावादो।

§ ९८. एवं जइवसहाइरियदेसामासियसुत्तत्थपरूवणं काऊण संपहि जइवसहाइरियसूचिदत्थमुच्चारणाए भणिस्सामो। णाणाजीवेहि भंगविचयाणुगमेण दुविहो णिद्देसो-ओघे० आदेसे०। ओघेण० मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० भुज०-अप्पदर०-अवट्ठि०

§ ९५. क्योंकि अनन्तानुबन्धी चतुष्कको विसंयोजना करनेवाले सम्यग्दृष्टि जीवोंका मिथ्यात्व गुणके साथ निरन्तर परिणाम नहीं पाया जाता।

*** सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीव भजनीय हैं।**

§ ९६. क्योंकि, निरन्तर सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीव नहीं पाये जाते हैं।

*** अल्पतरस्थितिविभक्तिवाले जीव नियमसे हैं।**

§ ९७. क्योंकि, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वसत्कर्मवाले जीवोंका अतीत अनागत और वर्तमान इन तीनों कालोंमें अभाव नहीं है।

**विशेषार्थ**—यहाँपर भुजगार आदि पदोंका आलम्बन लेकर नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचयका विचार किया जा रहा है। मोहनीयके कुल भेद २८ हैं। उनमेंसे मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित पदवाले नाना जीव निरन्तर पाये जाते हैं, यह स्पष्ट ही है, क्योंकि यथासम्भव मिथ्यात्व आदि गुणस्थानोंमें इनका निरन्तर बन्ध सम्भव होनेसे ये बन जाते हैं। किन्तु अनन्तानुबन्धी चतुष्कके अवक्तव्य पदकी यह स्थिति नहीं है। कारण कि जो चौबीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला जीव मिथ्यात्व और सासादन गुणस्थानमें आता है उसीके यह पद सम्भव है पर ऐसे जीवोंका निरन्तर उक्त गुणस्थानोंको प्राप्त होना सम्भव नहीं है। कदाचित् एक भी जीव उक्त गुणस्थानोंको नहीं प्राप्त होता और कदाचित् एक जीव तथा कदाचित् नाना जीव उक्त गुणस्थानोंको प्राप्त होते हैं, इसलिए अनन्तानुबन्धीके अवक्तव्य पदवाले भजनीय कहे हैं। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अल्पतर पदवाले जीव ना सदा पाए जाते हैं, क्योंकि इन प्रकृतियोंकी सत्तावाले सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि जीवोंका निरन्तर सद्भाव पाया जाता है और उनके एक मात्र अल्पतर पद ही होता है पर इन प्रकृतियोंके शेष पद भजनीय हैं, क्योंकि शेष पद, जो मिथ्यात्वसे सम्यक्त्वको प्राप्त करते हैं, उनके ही प्रथम समयमें सम्भव हैं और ऐसे जीव निरन्तर नहीं पाये जाते, अतः इन प्रकृतियोंके भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य पदवाले जीव भजनीय कहे हैं।

§ ९८. इस प्रकार यतिवृषभ आचार्यके देशामर्षकसूत्रके अर्थका कथन करके अब यतिवृषभ आचार्यके द्वारा सूचित किये गये अर्थकी उच्चारणाका कथन करते हैं—नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचयानुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेंसे ओघकी अपेक्षा

**णियमा अत्थि। अणंताणु०चउक्क० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० णियमा अत्थि। अवत्तव्वं भयणिज्जा। सिया एदे च अवत्तव्वविहत्तिओ च, सिया एदे च अवत्तव्वविहत्तिया च। सम्मत्त०-सम्मामि० अप्पदर० णियमा अत्थि। सेसपदा भयणिज्जा। एवं तिरिक्ख०-कायजोगि०-ओरालिय०-णवुंस०-चत्तारिक०-असंजद०-अचक्खु०-किण्ह-णील-काउ०-भवसि०-आहारि त्ति।**

§ ९९. **आदेसेण णेरइएसु मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० अप्पदर०-अवट्ठि० णियमा अत्थि। [ भुज० भयणिज्जा०। ] सिया एदे च भुजगारविहत्तिओ च, सिया एदे च भुजगारविहत्तिया च। अणंताणु०चउक्क० अप्पद०-अवट्ठि० णियमा अत्थि। सेसपदा भयणिज्जा। सम्मत्त-सम्मामि० ओघभंगो। एवं सव्वणेरइय-पंचिंदियतिरिक्ख-तिय०-मणुसतिय०-देव०-भवणादि जाव सहस्सार०-पंचिंदिय-पंचि०पज्ज-तस-तसपज्ज०-**

मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीव नियमसे हैं। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीव नियमसे हैं। अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीव भजनीय हैं। कदाचित् ये भुजगारादि विभक्तिवाले बहुत जीव होते हैं और अवक्तव्यविभक्तिवाला एक जीव होता है। कदाचित् ये भुजगारादिविभक्तिवाले नाना जीव होते हैं और अवक्तव्य विभक्तिवाले नाना जीव होते हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीव नियमसे हैं। तथा शेष पदवाले जीव भजनीय हैं। इसी प्रकार तिर्यंच, काययोगी, औदारिककाययोगी, नपुंसकवेदवाले, क्रोधादि चार कषायवाले, असंयत, अचक्षुदर्शनवाले, कृष्णलेश्यावाले, नीललेश्यावाले कपोतलेश्यावाले, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिए।

**विशेषार्थ**—मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषाय इन २२ प्रकृतियोंके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित ये तीन पद होते हैं जो सर्वदा पाये जाते हैं इसलिये इनकी अपेक्षा एक ध्रुवभंग ही होता है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कके चार पद हैं जिनमें भुजगार, अल्पतर और अवस्थित ये तीन पद ध्रुव हैं और अवक्तव्यपद अध्रुव है। अवक्तव्यपदवाला कदाचित् एक जीव होता है और कदाचित् नाना। अब इन दो भंगोंमें ध्रुवभंग और मिला दिया जाता है तो अनन्तानुबन्धीकी अपेक्षा कुल तीन भंग प्राप्त होते हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके चार पद हैं। जिनमें भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य ये तीन भजनीय और एक अल्पतर ध्रुव है, अतः यहाँ कुल २७ भंग होते हैं, क्योंकि एक और नाना जीवोंकी अपेक्षा तीन भजनीय पदोंके २६ भंग और उनमें एक ध्रुव भंगके मिलानेपर कुल २७ भंग होते हैं। तिर्यंच आदि मूलमें गिनाई गई कुछ ऐसी मार्गणाएं हैं जिनमें यह ओघ प्ररूपणा घटित हो जाती है, अतः उनके कथनको ओघके समान कहा है।

§ ९९. आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीव नियमसे हैं। इनके भुजगार पदवाले जीव भजनीय हैं। कदाचित् ये नाना जीव हैं और एक भुजगार स्थितिविभक्तिवाला जीव है। कदाचित् ये नाना जीव हैं और नाना भुजगार स्थितिविभक्तिवाले जीव हैं। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीव नियमसे हैं तथा शेष पद भजनीय हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। इसी प्रकार सब नारकी, पंचेन्द्रिय तिर्यंच, पंचेन्द्रिय तिर्यंच पर्याप्त, पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमती, सामान्य मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी, सामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार स्वर्गतकके देव, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस, त्रसपर्याप्त पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी, वैक्रियिककाययोगी, स्त्रीवेद-

पंचमण०-पंचवचि०-वेउव्विय०-इत्थि०-पुरिस०-चक्खु०-तेउ०-पम्म०-सण्णि त्ति ।

§ १००. पंचि०तिरि०अपज्ज० मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० णारयभंगो । णवरि अणंताणु० अवत्त० णत्थि । सम्म०-सम्मामि० अप्प० णियमा अत्थि । एवं सव्व-विगलिंदिय-पंचिंदियअपज्ज०-बादरपुढविपज्ज०-बादरआउ०पज्ज०-बादरतेउपज्ज०-बादरवाउ-पज्ज०-बादरवणप्फदिपत्तेय०पज्ज०-तसअपज्ज०-विहंगणाणि त्ति ।

§ १०१. मणुसअपज्ज० छव्वीसं पयडीणं सव्वपदा भयणिज्जा । भंगा छव्वीसं; धुवपदाभावादो । सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमप्पदरं भयणिज्जं । भंगा दोण्णि, धुवाभावादो । एवं वेउव्वियमिस्स० ।

---

वाले, पुरुषवेदवाले, चक्षुदर्शनवाले,पीतलेश्यावाले, पद्मलेश्यावाले और संज्ञी जीवोंके जानना चाहिए।

**विशेषार्थ**—नरकमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंके दो पद ध्रुव और एक पद भजनीय बतलाया है, अतः इनके ध्रुव भंगके साथ तीन भंग प्राप्त होते हैं । अनन्तानुबन्धी चतुष्कके चार पदोंमेंसे अल्पतर और अवस्थित ये दो पद ध्रुव तथा भुजगार और अवक्तव्य ये दो पद भजनीय बतलाये हैं, इसलिये इनके नौ भंग प्राप्त होते हैं । तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके जिसप्रकार ओघमें २७ भंग बतला आये हैं उसी प्रकार यहाँ भी घटित कर लेना चाहिये । मूलमें सब नारकी आदि और जितनी मार्गणाएं गिनाई हैं उनमें उक्त व्यवस्था बन जाती है ।

§ १००. पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी अपेक्षा नारकियोंके समान भंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्यस्थितिविभक्ति नहीं है । तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीव नियमसे हैं । इसी प्रकार सब विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त, बादरपृथिवीकायिक पर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अग्निकायिक पर्याप्त, बादर वायुकायिक पर्याप्त, बादर वनस्पति कायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त, त्रस अपर्याप्त और विभंगज्ञानी जीवोंके जानना चाहिए ।

**विशेषार्थ**—पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तक मिथ्यादृष्टि ही होते हैं, उनमें अनन्तानुबन्धी चतुष्कका अवक्तव्य भंग नहीं बनता । अतः इनके मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषाय इन सबके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित ये तीन पद ही होते हैं । इनमेंसे दो पद ध्रुव और एक भुजगार पद भजनीय है, अतः कुल तीन भंग प्राप्त होते हैं । यहाँ नारकियोंके समान कहनेका मतलब यह है कि जिसप्रकार नारकियोंके एक भुजगार पद भजनीय बतलाया उसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकोंके भी जानना चाहिये । तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा इनके एक अल्पतर पद ही पाया जाता है जो ध्रुव है, अतः इनकी अपेक्षा एक ध्रुव भंग ही प्राप्त होता है । सब विकलेन्द्रिय आदि और जितनी मार्गणाएं मूलमें गिनाई हैं उनमें भी यह व्यवस्था बन जाती है, अतः उनके कथनको पंचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकोंके समान कहा ।

§ १०१. मनुष्य अपर्याप्तकोंमें छब्बीस प्रकृतियोंके सब पद भजनीय हैं । भंग छब्बीस ही होते हैं, क्योंकि यहाँ ध्रुवपदका अभाव है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अल्पतर पद भजनीय है । भंग दो होते हैं, क्योंकि ध्रुवपदका अभाव है । इसी प्रकार वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंके जानना चाहिए ।

**विशेषार्थ**—लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य यह सान्तर मार्गणा है । अतः इसमें २६ प्रकृतियोंके तीनों पद भजनीय हैं जिनके कुल भंग २६ होते हैं । यहाँ ध्रुव पदका अभाव होनेसे ध्रुव भंगका निषेध किया है । यद्यपि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका यहाँ एक अल्पतर पद ही है फिर भी सान्तर मार्गणाके कारण वह भी भजनीय है अतः उसके एक जीव और नाना जीवोंकी अपेक्षा दो भंग कहे ।

§ १०२. आणदादि जाव उवरिमगेवज्जो त्ति मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० अप्प-दर० णियमा अत्थि। अणंताणु०चउक्क० अप्पदर० णियमा अत्थि। अवत्तव्वविहत्तिया भयणिज्जा। भंगा तिण्णि। सम्मत्त-सम्मामि० ओघं। एवं सुक्कले०। अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठ० सव्वपयडीणमप्पदर० णियमा अत्थि। एवमाभिणि०-सुद०-ओहि०-मणपज्ज०-संजद-सामाइय-छेदो०-परिहार०-संजदासंजद-ओहिदंस०-सम्मादि[1]०-खइय०-वेदय०दिट्ठि त्ति।

§ १०३. एइंदिय० सव्वपयडि० सव्वपदा णियमा अत्थि। एवं बादरसुहुमेइंदिय-पज्जत्तापज्जत्त-[पुढवि०-बादरपुढवि०-] बादरपुढवि०अपज्ज०-सुहुमपुढविपज्जत्तापज्जत्त-[आउ०-बादरआउ०]बादरआउअपज्ज०-सुहुमआउ०पज्जत्तापज्जत्त-[तेउ०-बादरतेउ०]बादर-तेउअपज्ज०-सुहुमतेउपज्जत्तापज्जत्त-[वाउ०-बादरवाउ०] बादरवाउअपज्ज०-सुहुमवाउपज्जत्ता

यहाँ भी ध्रुव पदका अभाव होनेसे ध्रुव भंगका निषेध किया। वैक्रियिकमिश्रकाययोग यह भी सान्तर मार्गणा है और इसमें लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्योंके समान सब प्रकृतियोंके पद तथा भंग बन जाते है, अतः इनके कथनको लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्योंके समान कहा।

§ १०२. आनतकल्पसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीव नियमसे हैं। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीव नियमसे हैं। अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीव भजनीय हैं। भंग तीन होते हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका कथन ओघके समान है। इसी प्रकार शुक्ल लेश्यावाले जीवोंमें है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीव नियमसे हैं। इसी प्रकार आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत, संयतासंयत, अवधिदर्शनवाले, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि और वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिए।

**विशेषार्थ**—आनतसे लेकर उपरिमग्रैवेयकतकके देवोंके मिथ्यात्व आदि २२ प्रकृतियोंका एक अल्पतर पद ही बतलाया है, अतः इनका एक ध्रुव भंग ही होता है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कके अल्पतर और अवक्तव्य ये दो पद बतलाये है। इनमें से अल्पतर पद ध्रुव है और अवक्तव्य पद अध्रुव है। अतः एक जीव और नाना जीवोंकी अपेक्षा इन अवक्तव्य सम्बन्धी दो अध्रुव भंगोंमें एक ध्रुवभंगके मिला देनेपर तीन भंग प्राप्त होते है। आनतादिकमें मिथ्यात्वसे सम्यक्त्वकी प्राप्ति और सम्यक्त्वसे मिथ्यात्वकी प्राप्ति सम्भव है, अतः यहाँ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके ओघके समान चारों पद और उनके २७ भंग बन जाते है। यही कारण है कि यहाँ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके भंगोंको ओघके समान कहा है। अनुदिश आदिकमें तो सम्यग्दृष्टि जीव ही होते है और सम्यग्दृष्टियोंके सब प्रकृतियोंका एक अल्पतर पद ही होता है। इसीलिये अनुदिशादिकमें सब प्रकृतियोंका एक अल्पतर पद कहा है। मूलमें आभिनिबोधकज्ञानी आदि और जितनी मार्गणाएं गिनाई है उनमें भी एक अल्पतर पद ही सम्भव है, अतः उनके कथनको अनुदिश आदिके समान कहा।

§ १०३. एकेन्द्रियोंमे सब प्रकृतियोंके सब पदवाले जीव नियमसे हैं। इसी प्रकार बादर और सूक्ष्म एकेन्द्रिय और उनके पर्याप्त और अपर्याप्त, पृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिक, बादर पृथिवी-कायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म पृथिवीकायिक, सूक्ष्म पृथिवीकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, जलकायिक, बादर जलकायिक, बादर जलकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म जलकायिक तथा उनके पर्याप्त और अपर्याप्त, अग्निकायिक, बादर अग्निकायिक, बादर अग्निकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म अग्निकायिक तथा उनके पर्याप्त और अपर्याप्त, वायुकायिक, बादर वायुकायिक, बादर वायुकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म वायुकायिक तथा

पज्जत्त—[वणप्फदि०—बादरवणप्फदि०—] बादरवणप्फदिपत्तेय०अपज्ज०—[सुहुमवणप्फदि पज्जत्तापज्जत्त०—]बादरणिगोद०-सुहुमणिगोदपज्जत्तापज्जत्त-ओरालियमि०- कम्मइय०-मदि०सुद०-अभवसि०-मिच्छादि०-असण्णि-अणाहारि त्ति । णवरि कम्मइय-अणाहारि० सम्म०-सम्मामि०अप्पद० भयणि०। आहार०-आहारमि० सव्वपयडीणमप्पदरं भयणिज्जं । एवमवगद०-अकसा०-सुहुम०-जहाक्खाद०-उवसम०-सासाण०-सम्मामि०दिट्ठि त्ति ।

एवं णाणाजीवेहि भंगविचओ समत्तो ।

§ १०४. भागाभागाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघे० आदेसे० । ओघेण मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० भुज० सव्वजी० केवडिओ भागो ? असंखे०भागो । अप्पद० केवडिओ भागो ? असंखेज्जा भागा । अवट्ठि० सव्वजी० केव० ? संखे०भागो । एवमणंताणु०चउक्क० । णवरि अवत्तव्व० अणंतिमभागो । सम्मत्त-सम्मामि० अप्पदर० सव्वजी०

उनके पर्याप्त और अपर्याप्त, वनस्पतिकायिक, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर अपर्याप्त, सूक्ष्मवनस्पति व उनके पर्याप्त और अपर्याप्त बादर निगोद और उनके पर्याप्त और अपर्याप्त, सूक्ष्म निगोद और उनके पर्याप्त और अपर्याप्त, औदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंमे सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीव भजनीय है। आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगियोंमे सब प्रकृतियोंका अल्पतर पद भजनीय है। इसी प्रकार अपगतवेदी, अकषायी, सूक्ष्मसांपरायिकसंयत, यथाख्यातसंयत, उपशमसम्यग्दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिए।

**विशेषार्थ**—एकेन्द्रियोंके २८ प्रकृतियोंमेंसे जिसके जितने पद सम्भव हैं उन पदवाले जीव सर्वदा रहते है अतः यहाँ एक ध्रुव भंग ही होता है। इसी बातके द्योतन करनेके लिये 'सब प्रकृतियोंके सब पद नियमसे हैं' यह कहा है। इसी प्रकार मूलमें गिनाई गई बादर एकेन्द्रिय आदि मार्गणाओंमे एक ध्रुव पद ही प्राप्त होता है अतः उनके कथनको एकेन्द्रियोंके समान कहा। किन्तु कार्मणकाययोग और अनाहारक मार्गणामें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्तावाले जीव कदाचित् पाये जाते है और कदाचित नहीं पाये जाते हैं, इसलिये इनमें उक्त प्रकृतियोंका अल्पतर पद भजनीय है जिससे एक जीव और नाना जीवोंकी अपेक्षा दो भंग प्राप्त होते हैं। आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगमें सब प्रकृतियोंका एक अल्पतर पद ही होता है फिर भी यह सान्तर मार्गणा है इसलिये इसमें अल्पतर पदको भजनीय कहा। यहाँ भी दो भंग होते हैं। मूलमें अपगतवेद आदि और जितनी मार्गणाएं गिनाई हैं उनमें सब प्रकृतियोंके अल्पतर पदवाला कदाचित एक जीव और कदाचित् नाना जीव होते है अतः उनके कथनको आहारककाययोगियोंके समान कहा।

इस प्रकार नानाजीवोंकी अपेक्षा भंगविचय समाप्त हुआ।

§ १०४. भागाभागानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेश-निर्देश। उनमेंसे **ओघ**की अपेक्षा मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार स्थिति-विभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग हैं? असंख्यातवे भाग हैं। अल्पतर स्थितिविभक्ति-वाले जीव कितने भाग है? असंख्यात बहुभाग हैं। अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग है? संख्यातवे भाग है। इसी प्रकार **अनन्तानुबन्धी** चतुष्ककी अपेक्षा जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीव अनन्तवें भाग है। सम्यक्त्व और

**केव० ? असंखेज्जा भागा। सेस० असंखे०भागो। एवं तिरिक्ख-कायजोगि-ओरालिय०-णवुंस०-चत्तारिक०-असंजद०-अचक्खु०-तिण्णिले०-भवसि०-आहारि त्ति।**

§ १०५. **आदेसेण णेरइएसु एवं चेव। णवरि अणंताणु० चउक्क० अवत्तव्वमसंखे०-भागो। एवं सत्तसु पुढवीसु पंचिंदियतिरिक्खतिय०-देव०-भवणादि जाव सहस्सार०-पंचिंदिय-पंचि०पज्ज०-तस-तसपज्ज०-पंचमण०-पंचवचि०-वेउव्वि०-इत्थि०-पुरिस०-चक्खु०-तेउ०-पम्म०-सण्णि त्ति।**

§ १०६. **पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० छव्वीसं पयडीणमेवं चेव। णवरि अणंताणु०-चउक्क० अवत्तव्व० णत्थि। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं णत्थि भागाभागं; एगप्पदर-पदत्तादो। एवं मणुसअपज्ज०-सव्वएइंदिय-सव्वविगलिंदिय०-सव्वपंचकाय-तसअपज्ज०-ओरालियमिस्स०-वेउव्वि०मिस्स-कम्मइय-मदि-सुद०-विहंग०-मिच्छादिट्ठि-असण्णि०-अणाहारि त्ति।**

§ १०७. **मणुस० णिरओघं। मणुसपज्ज०-मणुसिणी० एवं चेव। णवरि जम्हि असंखे०भागो तम्हि संखे०भागो कायव्वो।**

§ १०८. **आणदादि जाव उवरिमगेवज्जो त्ति अणंताणु०चउक्क० अप्प० सव्वजी० के० ? असंखेज्जा भागा। अवत्तव्व० असंखे०भागो। सम्मत्त-सम्मामि० ओघं।**

सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग हैं ? असंख्यात बहुभाग हैं। तथा शेष पदवाले असंख्यातवें भाग है। इसी प्रकार तिर्यंच, काययोगी, औदारिक-काययोगी, नपुंसकवेदवाले, क्रोधादि चारों कषायवाले, असंयत, अचक्षुदर्शनवाले, कृष्णादि तीन लेश्यावाले, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिए।

§ १०५. आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धी चतुष्कको अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले असंख्यातवें भाग हैं। इसी प्रकार सातों पृथिवियोंके नारकी, पंचेन्द्रिय तिर्यंच, पंचेन्द्रिय तिर्यंच पर्याप्त, पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमती, सामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार स्वर्गतकके देव, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस, त्रस पर्याप्त, पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी, वैक्रियिककाययोगी, स्त्रीवेदवाले, पुरुषवेदवाले, चक्षुदर्शनवाले पीतलेश्यावाले, पद्मलेश्यावाले, और संज्ञी जीवोंके जानना चाहिए।

§ १०६. पंचेन्द्रियतिर्यंचअपर्याप्तकोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी अपेक्षा इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके अनन्तानुबन्धी चतुष्कका अवक्तव्यपद नहीं है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भागाभाग नहीं है, क्योंकि यहाँ इन दोनों प्रकृतियोंका एक अल्पतरपद है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्त, सब एकेन्द्रिय, सब विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त, सब पाँचों स्थावर काय त्रस अपर्याप्त, औदारिकमिश्रकाययोगी वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, विभंगज्ञानी, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए।

§ १०७. सामान्य मनुष्योंमें सामान्य नारकियोंके समान जानना चाहिए। मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यनियोंमें इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि जहाँ असंख्यातवाँ भाग कहा है वहां संख्यातवा भाग कर लेना चाहिये।

§ १०८. आनत कल्पसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग है ? असंख्यात बहुभाग हैं। तथा अवक्तव्य

सेसपयडि० णत्थि भागाभागं। एवं सुक्कले०। अणुदिसादि जाव सव्वट्ठ० सव्व-पयडी० णत्थि भागाभागं। एवमाहार०-आहारमिस्स०-अवगद०-अकसा०-आभिणि०-सुद०-ओहि०-मणपज्ज०-संजद०-सामाइय-०छेदो०-परिहार०-सुहुम०-जहाक्खाद०-संजदा-संजद०-ओहिदंस०-सम्मादिट्ठि०-खइय०-वेदय०-उवसम०-सासाण०-सम्मामिच्छादिट्ठि त्ति। अभव० छव्वीसपयडि० मदिभंगो।

एवं भागाभागाणुगमो समत्तो।

§ १०६. परिमाणाणुगमेण दुविहो णि०-ओघेण आदेसेण। ओघेण मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० तिण्णि पदा० केत्तिया? अणंता। अणंताणु०चउक्क० एवं चेव। णवरि अवत्तव्व० असंखेज्जा। सम्मत्त-सम्मामि० सव्वपदा केत्तिया? असंखेज्जा। एवं तिरिक्ख-कायजोगि-ओरालि०-णवुंस०-चत्तारिक०-असंजद०-अचक्खु०-तिण्णिले०भवसि०-आहारि त्ति।

§ ११०. आदेसेण णेरइएसु सव्वपयडीणं सव्वपदा केत्तिया? असंखेज्जा। एवं सव्वणेरइय०-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुसअपज्ज०-देव०-भवणादि जाव सहस्सार०-पंचिं-दिय-पंचिं०पज्ज-तस-तसपज्ज०—पंचमण०-पंचवचि०-वेउव्विय०-इत्थि०-पुरिस०—चक्खु०-तेउ०-पम्म०-सण्णि त्ति। मणुस० अणंताणु०चउक्क० अवत्तव्व० केत्ति०? संखेज्जा।

स्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यातवें भाग हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका कथन ओघके समान है। यहां शेष प्रकृतियोंकी अपेक्षा भागाभाग नहीं है। इसी प्रकार शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें जानना चाहिए। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी अपेक्षा भागाभाग नहीं है। इसी प्रकार आहारककाययोगी, आहारकमिश्रकाययोगी, अपगतवेदी, अकषायी, आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत, सूक्ष्मसांपरायिकसंयत, यथाख्यातसंयत, संयतासंयत, अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। अभव्योंमें छब्बीस प्रकृतियोंका भंग मत्यज्ञानियोंके समान है।

इस प्रकार भागाभागानुगम समाप्त हुआ।

§ १०६. ओघ और आदेशकी अपेक्षा परिमाणानुगम दो प्रकारका है। उनमेंसे ओघकी अपेक्षा मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अपेक्षा तीन पदवाले जीव कितने हैं? अनन्त हैं। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अपेक्षा इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यात हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सब पदवाले जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। इसी प्रकार तिर्यंच, काययोगी, औदारिककाययोगी, नपुंसकवेदवाले, क्रोधादि चारों कषायवाले, असंयत, अचक्षुदर्शनवाले, कृष्णादि तीन लेश्यावाले, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिए।

§ ११०. आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदवाले जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब पंचेन्द्रियतिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर सहस्रारस्वर्गतकके देव, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रियपर्याप्त, त्रस, त्रसपर्याप्त, पांचों मनोयोगी, पांचों वचनयोगी, वैक्रियिककाययोगी, स्त्रीवेदवाले, पुरुषवेदवाले, चक्षुदर्शनवाले, पीतलेश्यावाले, पद्मलेश्यावाले और संज्ञी जीवोंके जानना चाहिए। मनुष्योंमें अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्य

सम्मत्त-सम्मामि० भुज०-अवट्ठि०-अवत्तव्व० केत्ति० ? संखेज्जा । सेसपयडीणं सव्व-पदा० अणंताणु० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० सम्म०-सम्मामि० अप्प० के० ? असंखेज्जा ।

§ १११. मणुसपज्ज०-मणुसिणी० सव्वपयडी० सव्वपदा० के० ? संखेज्जा । एवं सव्वट्ठ०-आहार०-आहारमिस्स०-अवगद०-अकसा०-मणपज्ज० संजद० -सामाइय-छेदो०-परिहार०-सुहुम०-जहाक्खादसंजदे त्ति ।

§ ११२. आणदादि जाव उवरिमगेवज्जो त्ति सव्वपयडीणं सव्वपदा० के० ? असंखेज्जा । एवं सुक्कले० । अणुद्दिसादि जाव अवराइद त्ति सव्वपयडि० अप्पदर० के० ? असंखेज्जा । एवमाभिणि० सुद०-ओहि०-संजदासंजद०-ओहिदंस०-सम्मादि०-खइय०-वेदय०-उवसम०-सासण०-सम्मामिच्छादिट्ठि त्ति ।

§ ११३. एइंदिएसु मिच्छत्त०-सोलसक०-णवणोक० सव्वपदा० के० ? अणंता । सम्मत्त-सम्मामि० अप्पदर० के० ? असंखेज्जा । एवं सव्वएइंदिय-वणप्फदि०-बादर-सुहुमपज्जत्तापज्जत्त-णिगोद०-बादर-सुहुम-पज्जत्तापज्जत्त - ओरालियमिस्स - कम्मइय-मदि०-सुद०-मिच्छादि०-असण्णि०-अणाहारि त्ति । विगलिंदियाणं पंचिंदियतिरिक्ख-अपज्जत्तभंगो । एवं पंचि०अपज्ज०-चत्तारिकाय-तस अपज्ज०-वेउव्वियमिस्स-विहंग-

स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। तथा शेष प्रकृतियोंके सब पदवाले अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्तिवाले तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं।

§ १११. मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यनियोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदवाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। इसीप्रकार सर्वार्थसिद्धिके देव, आहारककाययोगी, आहारकमिश्रकाययोगी, अपगत-वेदवाले, अकषायवाले, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहार-विशुद्धिसंयत, सूक्ष्मसांपरायिकसंयत और यथाख्यातसंयत जीवोंके जानना चाहिए।

§ ११२. आनतकल्पसे लेकर उपरिमग्रैवेयकतकके देवोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। इसी प्रकार शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें जानना चाहिए। अनुदिशसे लेकर अपराजिततकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। इसीप्रकार आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, संयतासंयत, अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिए।

§ ११३. एकेन्द्रियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके सब पदवाले जीव कितने हैं ? अनन्त हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। इसी प्रकार सब एकेन्द्रिय, वनस्पतिकायिक, उनके बादर और सूक्ष्म तथा पर्याप्त और अपर्याप्त, निगोद, उनके बादर और सूक्ष्म तथा पर्याप्त और अपर्याप्त, औदारिकमिश्रकाय-योगी, कार्मणकाययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी और अनाहारक जीवोंके जानना। विकलेन्द्रियोंके पंचेन्द्रियतिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान भंग है। इसीप्रकार पंचेन्द्रिय अपर्याप्त, पृथिवी आदि चार स्थावरकाय, त्रस अपर्याप्त, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी और विभंगज्ञानी जीवोंके

णाणि त्ति । अभव० छव्वीसपयडि० मदि०भंगो ।

एवं परिमाणाणुगमो समत्तो ।

§ ११४. खेत्ताणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० तिण्णिपदा केवडि खेत्ते ? सव्वलोगे । अणंताणु०चउक्क० एवं चेव । णवरि अवत्त० लोगस्स असंखे०भागे । सम्मत्त०–सम्मामि० सव्वपदा० लोग० असंखे०भागे । एवं तिरिक्ख०-कायजोगि०-ओरालिय०-णवुंस०-चत्तारिक०-असंजद०-अचक्खु०-तिण्णिले०-भवसि० आहारि त्ति ।

§ ११५. आदेसेण णेरइएसु सव्वपयडी०सव्वपदा के०? लोग० असंखे०भागे । एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख०–सव्वमणुस०-सव्वदेव०–विगलिंदिय–सव्वपंचिंदिय–बादरपुढविपज्ज० बादरआउपज्ज०-बादरतेउपज्ज०–बादरवाउपज्ज०-बादरवणप्फदिपत्तेय-पज्ज०-सव्वतस०–पंचमण०-पंचवचि०–वेउव्विय०-वेउ-मिस्स०- आहार०-आहारमिस्स०-इत्थि०-पुरिस०-विहंग०-आभिणि०-सुद०-ओहि०–मणपज्ज० -संजद०–सामाइय–छेदो०-परिहार०-सुहुम०-जहाक्खाद०-संजदासंजद०-चक्खु० ओहिदंस०-तिण्णिले०-सम्मादिट्ठि०-खइय०-वेदय०-उवसम०-सासण० सम्मामि० सण्णि त्ति। णवरि बादरवाउपज्जत्त० सम्मत्त–सम्मामि० अप्पदरवज्जं लोग० संखे०भागे ।

जानना चाहिए । अभव्योंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी अपेक्षा मत्यज्ञानियोंके समान भंग है ।

इस प्रकार परिमाणानुगम समाप्त हुआ ।

§ ११४. क्षेत्रानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेंसे ओघकी अपेक्षा मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंके तीन पदवाले जीव कितने क्षेत्रमें रहते हैं ? सब लोकमें रहते हैं । अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा इसीप्रकार जानना । किन्तु इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीव लोकके असंख्यातवें भाग क्षेत्रमें रहते हैं । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सब पदवाले जीव कितने क्षेत्रमें रहते हैं ? लोकके असंख्यातवें भाग क्षेत्रमें रहते हैं । इसी प्रकार सामान्य तिर्यंच, काययोगी, औदारिककाययोगी, नपुंसकवेदवाले, क्रोधादि-चारों कषायवाले, असंयत, अचक्षुदर्शनवाले, कृष्णादि तीन लेश्यावाले, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिए ।

§ ११५. आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदवाले जीव कितने क्षेत्रमें रहते हैं ? लोकके असंख्यातवें भाग क्षेत्रमें रहते हैं । इसी प्रकार सब नारकी, सब पचेन्द्रियतिर्यंच, सब मनुष्य, सब देव, सब विकलेन्द्रिय, सब पंचेन्द्रिय, बादर पृथिवीकायिकपर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अग्निकायिकपर्याप्त, बादर वायुकायिकपर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर पर्याप्त, सब त्रस, पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी, वैक्रियिककाययोगी, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, आहारककाययोगी, आहारकमिश्रकाययोगी, स्त्रीवेदवाले, पुरुषवेदवाले, विभंगज्ञानी, आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत, सूक्ष्मसांपरायिकसंयत, यथाख्यातसंयत, संयतासंयत, चक्षुदर्शनवाले, अवधिदर्शनवाले, पीत आदि तीन लेश्यावाले, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि और संज्ञी जीवोंके जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि बादरवायुकायिकपर्याप्तक जीवोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंको छोड़कर शेष पदवाले जीव लोकके संख्यातवें भाग क्षेत्रमें रहते हैं ।

§ ११६. एइंदिएसु मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० भुज०-अवट्ठि-अप्पदर० ओघं। सम्मत्त-सम्मामि० अप्पदर० ओघं। एवं बादर-सुहुमेइंदिय-पज्जत्तापज्जत्त-पुढवि०-बादरपुढवि अपज्ज०-सुहुमपुढवि-पज्जत्तापज्जत्त-आउ०-बादरआउअपज्ज०-सुहुमआउपज्जत्तापज्जत्त०-तेउ० -बादरतेउ०अपज्ज० - सुहुमतेउपज्जत्तापज्जत्त-वाउ०-बादरवाउअपज्ज०-सुहुमवाउ-पज्जत्तापज्जत्त-बादरवणप्फदिपत्तेयसरीरअपज्ज०- वणप्फदि०-णिगोद०-बादरसुहुमपज्जत्तापज्जत्त-ओरालियमिस्स०-कम्मइय०-मदि०-सुद०-मिच्छादि०-असण्णि०-आहारि त्ति।

§ ११७. अवगद० सव्वपयडि० अप्प० लोग० असंखे०भागे। एवमकसा०। अभवसि० छव्वीसपयडीणं मदि०भंगो।

एवं खेत्ताणुगमो समत्तो।

§ ११८. पोसणाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। तत्थ ओघेण

§ ११६. एकेन्द्रियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार, अवस्थित और अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका क्षेत्र ओघके समान है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका क्षेत्र ओघके समान है। इसी प्रकार बादर और सूक्ष्म एकेन्द्रिय और उनके पर्याप्त तथा अपर्याप्त, पृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म पृथिवीकायिक और उनके पर्याप्त और अपर्याप्त, जलकायिक, बादर जलकायिक, बादर जलकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म जलकायिक और उनके पर्याप्त और अपर्याप्त, अग्निकायिक, बादर अग्निकायिक, बादर अग्निकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म अग्निकायिक और उनके पर्याप्त और अपर्याप्त, वायुकायिक, बादर वायुकायिक, बादर वायुकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म वायुकायिक और उनके पर्याप्त और अपर्याप्त, बादर वनस्पति प्रत्येकशरीर, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर अपर्याप्त, वनस्पतिकायिक तथा उनके बादर और सूक्ष्म तथा पर्याप्त और अपर्याप्त, निगोद, तथा उनके बादर और सूक्ष्म तथा पर्याप्त और अपर्याप्त, औदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिये।

§ ११७. अपगतवेदियोंमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीव लोकके असंख्यातवें भाग क्षेत्रमें रहते हैं। इसी प्रकार अकषायी जीवोंके जानना चाहिए। अभव्योंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी अपेक्षा मत्यज्ञानियोंके समान भंग है।

**विशेषार्थ**—ओघसे मिथ्यात्व सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार, अवस्थित और अल्पतर स्थितिवाले जीव अनन्त हैं और ये सब लोकमें पाये जाते हैं, अतः इनका क्षेत्र सब लोक कहा। तथा अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अवक्तव्य स्थितिवाले और सम्यक्त्व तथा सम्यग्मिथ्यात्वके सब पदवाले जीव असंख्यात होते हुए भी स्वल्प हैं, अतः इनका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा। यह व्यवस्था तिर्यचगति आदि मूलमें गिनाई हुई मार्गणाओंमें बन जाती है, अतः इनके कथनको ओघके समान कहा। आदेशमें जिस मार्गणावाले और उसके अवान्तर भेदोंका जितना क्षेत्र है उसमें २६ प्रकृतियोंके सम्भव पदवालोंका उतना क्षेत्र कहा। किन्तु सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा सर्वत्र सम्भव पदवालोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अवक्तव्य स्थितिवाले जीवोंका क्षेत्र सर्वत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है।

इस प्रकार क्षेत्रानुगम समाप्त हुआ।

§ ११८. स्पर्शनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश।

**मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० तिण्हं पदाणं विहत्तिएहि केवडियं खेत्तं पोसिदं ? सव्व-लोगो। अणंताणु०चउक्क० एवं चेव। णवरि अवत्तव्व० लोग० असंखे०भागो अट्ठ चोद्दसभागा वा देसूणा। सम्मत्त०-सम्मामि० अप्पदर० के० खे० पो० ? लोग असंखे० भागो पोसिदो अट्ठ चोद्दस० देसूणा सव्वलोगो वा। सेसविहत्तिएहि केव० ? लाग० असंखे०भागो अट्ठ चोद्दस० देसूणा। एवं कायजोगि०-चत्तारिकसा०-असंजद०-अचक्खु०-भवसि०-आहारि त्ति।**

§ ११९. **आदेसेण णेरइएसु मिच्छत्त०-बारसक०-णवणोक० तिण्हं पदाणं विहत्ति० लोग० असंखे०भागो छ चोद्दस देसूणा। अणंताणु०चउक्क० एवं चेव। णवरि**

उनमेंसे ओघकी अपेक्षा मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंके तीन पदविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्श किया है ? सब लोकका स्पर्श किया है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अपेक्षा इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रस नालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्श किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग, त्रस नालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग और सब लोक क्षेत्रका स्पर्श किया है। तथा शेष विभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्श किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग और त्रस नालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है। इसी प्रकार काययोगी, क्रोधादि चारों कषायवाले, असंयत, अचक्षुदर्शनी, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिये।

**विशेषार्थ**—ओघसे मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार, अवस्थित और अल्पतर स्थितिवाले जीव अनन्त हैं और ये सब लोकमें पाये जाते हैं अतः इनका स्पर्श सब लोक कहा। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अवक्तव्य स्थितिवाले जीवोंका वर्तमान स्पर्श लोकके असंख्यातवें भाग है, क्योंकि वर्तमान कालमें जिन्होंने अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना की है ऐसे जीव सम्यक्त्वसे च्युत होकर मिथ्यात्वमें जानेवाले बहुत ही थोड़े हैं। तथा अतीत कालीन स्पर्श त्रस नालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भाग है, क्योंकि यद्यपि ऊपर नौवें ग्रैवेयक तकके और नीचे सातवें नरक तकके जीव अनन्तानुबन्धीकी अवक्तव्य स्थितिको करते हुए पाये जाते हैं। परन्तु उनका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग ही है। किन्तु इस पद युक्त देवोंका विहारवत् स्वस्थान त्रस नालीके आठबटे चौदह भाग है अतः इनका अतीत कालीन स्पर्श त्रस नालीके कुछ कम आठबटे चौदह भाग प्रमाण कहा। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिवालोंका स्पर्श तीन प्रकारसे बतलाया है। इनमेंसे लोकका असंख्यातवाँ भागप्रमाण स्पर्श वर्तमान कालकी अपेक्षा बतलाया है। कुछ कम आठबटा चौदह भाग प्रमाण स्पर्श विहार आदि पदोंकी अपेक्षासे बतलाया है। और सब लोक स्पर्श मारणान्तिक तथा उपपाद पदकी अपेक्षा बतलाया है। तथा शेष पदोंकी अपेक्षा जो लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण स्पर्श बतलाया है वह वर्तमान कालकी प्रधानतासे बतलाया है और कुछ कम आठबटा चौदह राजु प्रमाण स्पर्श अतीत कालकी अपेक्षा बतलाया है। यहाँ कुछ और मार्गणाएं गिनाई हैं जिनका स्पर्श ओघके समान प्राप्त होता है, अतः उनके कथनको ओघके समान कहा। जैसे काययोगी आदि।

§ ११९. आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंके तीन पदवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भाग-

अवत्तव्व० खेत्तभंगो। सम्मत्त०-सम्मामि० अप्पदर० लोग० असंखे०भागो छ चोद्दस० देसूणा। सेस० लोग० असंखे०भागो। पढमाए खेत्तभंगो। विदियादि जाव सत्तमि त्ति णिरयोघो। णवरि सगपोसणं कायव्वं। तिरिक्ख० ओघं। णवरि अट्ठ चोद्दस भागा त्ति णत्थि। एवमोरालिय०-णवुंस०-तिण्णिलेस्सा त्ति।

§ १२०. पंचिंदियतिरिक्ख-पंचि०तिरि०पज्ज-पंचि०तिरि०जोणिणी० मिच्छत्त०-सोलसक०-णवणोक० सव्वपदाणं वि० के० खे० पो०? लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। णवरि अणंताणु०चउक्क० अवत्तव्व० इत्थि०-पुरिस० भुज०-अवट्ठि० खेत्तभंगो। सम्म०-सम्मामि० अप्पदर० मिच्छत्तभंगो। सेस० खेत्तभंगो। एवं मणुस-तिय०। पंचिंदियतिरिक्ख०अपज्ज० मिच्छत्त०-सोलसक०-णवणोक० तिण्णिपदा०

प्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अपेक्षा इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यका भंग क्षेत्रके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रस नालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छहभाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है। तथा शेष स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग क्षेत्रका स्पर्श किया है। पहली पृथिवीमें स्पर्शका भंग क्षेत्रके समान है। दूसरीसे लेकर सातवीं तक सामान्य नारकियोंके समान स्पर्श है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अपना अपना स्पर्श कहना चाहिये। तिर्यंचोंमें ओघके समान स्पर्श है। किन्तु इतनी विशेषता है कि आठवटे चौदह भाग यह विकल्प नहीं है। इसी प्रकार औदारिककाययोगी, नपुंसकवेदी और कृष्णादि तीन लेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिये।

**विशेषार्थ**—सामान्यसे नारकियोंका स्पर्श लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और कुछ कम छहबटे चौदह राजु प्रमाण बतलाया है। वह यहाँ सब प्रकृतियोंके सब पदोंकी अपेक्षा बन जाता है। किन्तु इसके दो अपवाद हैं। एक तो अनन्तानुबन्धी चतुष्कके अवक्तव्य पदकी अपेक्षा यह स्पर्श नहीं प्राप्त होता, क्योंकि ऐसे जीव मारणान्तिक समुद्धात या उपपाद पदसे रहित होते हैं। इसलिये उनके लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण ही स्पर्श पाया जाता है। दूसरे सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अल्पतर पदको छोड़कर शेष पदोंकी अपेक्षा भी लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण स्पर्श प्राप्त होता है। कारण वही है जो अनन्तानुबन्धीके अवक्तव्य भंगके सम्बन्धमें बतलाया है। प्रथमादि नरकोंमें भी इसीप्रकार अपने अपने स्पर्शको जानकर कथनकर लेना चाहिये। यद्यपि तिर्यंचोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंकी अपेक्षा ओघके समान स्पर्श बन जाता है किन्तु यहां कुछ कम आठवटे चौदह राजु स्पर्श नहीं प्राप्त होता, क्योंकि यह स्पर्श देवोंकी प्रधानतासे बतलाया है परन्तु तिर्यञ्चोंमें देव सम्मिलित नहीं हैं। औदारिककाययोग आदि मार्गणाओंमें भी इसी प्रकार घटित कर लेना चाहिये।

§ १२०. पंचेन्द्रियतिर्यंच, पंचेन्द्रियतिर्यंच पर्याप्त और पंचेन्द्रियतिर्यंच योनिमती जीवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके सब पदविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्श किया है? लोकके असंख्यातवें भाग और सब लोक क्षेत्रका स्पर्श किया है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवालोंका तथा स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका भंग क्षेत्रके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिवालोंका भंग मिथ्यात्वके समान है और शेषका भंग क्षेत्रके समान है। इसी प्रकार सामान्य, पर्याप्त और मनुष्यिनी इन तीन प्रकारके मनुष्योंके जानना चाहिये। पंचेन्द्रिय

**सम्म०-सम्मामि० अप्पदर० पंचिंदियतिरिक्खभंगो। एवं मणुसअपज्ज०-सव्वविग-लिंदिय-पंचिंदियअपज्ज०-बादरपुढविपज्जत्त-बादरआउपज्ज०-बादरतेउपज्ज० बादरवाउपज्ज-[ बादरव०- ] तसअपज्जत्ता त्ति। णवरि बादरवाउपज्ज० छव्वीसपयडि० तिण्णिपद० लो० संखे०भागो। इत्थि०-पुरिस० भुज०-अवट्ठि० वज्जं सव्वलोगो वा।**

§ १२१. **देव० मिच्छत्त-सोलसक० णवणोक० सव्वपदाणं वि० लोग० असंखे०-भागो अट्ठणव चोद्द० देसूणा। णवरि अणंताणु०चउक्क० अवत्तव्व० इत्थि०-पुरिस० भुज०-अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस० देसूणा। सम्म०-सम्मामि० भुज०**

तिर्यंच अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके तीन पदवाले जीवोंका और सम्यक्त्व तथा सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतरस्थितिविभक्तिवाले जीवोंका भंग पंचेन्द्रियतिर्यंचोंके समान है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्त, सब विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त, बादर पृथिवी कायिकपर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अग्निकायिक पर्याप्त, बादर वायुकायिक पर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर और त्रस अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि बादर वायुकायिक पर्याप्तकोंमें छब्बीस प्रकृतियोंके तीन पदवाले जीवोंने लोकके संख्यातवें भाग क्षेत्रका स्पर्श किया है। तथा स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तिके बिना शेष स्थिति-विभक्तिवाले जीवोंने सब लोकका स्पर्श किया है।

**विशेषार्थ**—सामान्य नारकियोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंके स्पर्शके लिये जो युक्ति दे आये हैं वही तिर्यञ्चत्रिकमें भी लागू होती है। किन्तु यहाँ भी कुछ अपवाद हैं। दो अपवाद तो वही हैं जो नरकगतिमें बतला आये हैं। तथा एक तीसरा अपवाद स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी भुजगार और अवस्थित स्थितिके स्पर्शका है। बात यह है कि यद्यपि उक्त तीन प्रकारके तिर्यंचोंका सब लोक स्पर्श बतलाया है पर यह उन्हींके प्राप्त होता है जो एकेन्द्रियोंमेंसे आकर इनमें उत्पन्न होते हैं या जो एकेन्द्रियोंमें मारणान्तिक समुद्घात करते हैं। परन्तु ऐसे जीवोंके स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी भुजगार और अवस्थित स्थिति नहीं पाई जाती, अतः यहाँ इनका स्पर्श क्षेत्रके समान बतलाया है। मनुष्यत्रिकमें भी इसीप्रकार विशेषताओंको जानकर स्पर्शका कथन करना चाहिये। पंचेन्द्रियतिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व आदिके तीन पदोंकी अपेक्षा तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अल्पतर पदकी अपेक्षा स्पर्श पंचेन्द्रियतिर्यंचोंके समान प्राप्त होता है, अतः इनके कथनको पंचेन्द्रिय-तिर्यंचोंके समान बतलाया। मनुष्यअपर्याप्त आदि कुछ और मार्गणाएं हैं जिनमें यह व्यवस्था बन जाती है, अतः इनके कथनको पंचेन्द्रियतिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकोंके समान बतलाया है। किन्तु बादर वायुकायिकपर्याप्त जीव इसके अपवाद हैं। बात यह है कि बादर वायुकायिक पर्याप्तकोंका स्पर्श लोकके संख्यातवें भागप्रमाण बतलाया है, अतः इनमें छब्बीस प्रकृतियोंके तीन पदवालोंका स्पर्श लोकके संख्यातवें भागप्रमाण बन जाता है। यहाँ जो स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तिवालोंके सब लोक स्पर्शका निषेध किया है सो इसका कारण प्रायः वही है जो पहले बतला आये हैं।

§ १२१. देवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके सब पदविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रस नालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम नौ भाग-प्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने तथा स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्ति-वाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रस नालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य-

**अवट्ठि०-अवत्तव्व० लोग० असंखे०भागो अट्ठ चोद्दस० देसूणा। अप्पदर० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-णव चोद्दस० देसूणा। एवं सोहम्म०। भवण०-वाण०-जोदिसि० एवं चेव। णवरि अद्धुट्ठ-अट्ठ-णव चोद्दस० देसूणा। सणक्कुमारादि जाव सहस्सार० सव्वपयडि० सव्वपदवि० लोग० असंखे०भागो अट्ठ चोद्द० देसूणा। आणदादि जाव अच्चुदे त्ति सव्वपय० सव्वपदवि० लोग० असंखे०भागो छ चोद्दस० देसूणा। एवं सुक्क०। उवरि खेत्तभंगो। एवमाहार०-आहारमिस्स०-अवग०-अकसा०-मणपज्ज०-संजद०-सामाइय छेदो०-परिहार०-सुहुम०-जहाक्खाद०-अभवसिद्धिया त्ति।**

§ १२२. **एइंदिएसु मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० तिण्हं पदाणमोघं। सम्मत्त०-सम्मामि० अप्पदर० पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो। एवं चत्तारिकाय-बादरअपज्ज०-सव्वेसिं सुहुमपज्जत्तापज्जत्त-बादरवणप्फदिपत्तेय०अपज्ज०-वणप्फदि-णिगोद०-ओरालिय-मिस्स०-कम्मइय०-मदि०-सुद०-मिच्छाइट्ठि-असण्णि०-अणाहारि त्ति।**

स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है। अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछकम आठ और कुछकम नौ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है। इसीप्रकार सौधर्म और ऐशान स्वर्गके देवोंके जानना चाहिये। भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंके इसीप्रकार जानना। किन्तु इतनी विशेषता है कि उन्होंने त्रसनालीके चौदह भागोंमेसे कुछकम साढ़ेतीन, कुछकम आठ और कुछकम नौ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है। सनत्कुमारसे लेकर सहस्रार स्वर्गतकके देवोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछकम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है। आनतसे लेकर अच्युत कल्पतकके देवोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछकम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है। इसीप्रकार शुक्ल-लेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिए। ऊपर नौ ग्रैवेयक आदिमें स्पर्श क्षेत्रके समान है। इसीप्रकार आहारककाययोगी, आहारकमिश्रकाययोगी, अपगतवेदी, अकषायी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत, सूक्ष्मसांपरायिकसंयत, यथाख्यातसंयत और अभव्य जीवोंके जानना चाहिये।

**विशेषार्थ**—पूर्वमें नरकगति आदिमें स्पर्शका जो विवेचन किया है उसे ध्यानमें रखते हुए देवोंमें और उनके अवान्तर भेदोंमें यदि सब प्रकृतियोंके यथासम्भव पदोंकी अपेक्षा स्पर्शका विचार किया जाता है तो किस अपेक्षा कहाँ कितना स्पर्श बतलाया है यह बात सहज ही समझमें आजाती है। इसीलिये यहां अलग अलग खुलासा नहीं किया है। तथा 'एवं' कह कर जो आहारककाय-योग आदिमें स्पर्शका निर्देश किया है उसका यही अभिप्राय है कि जिसप्रकार नौ ग्रैवेयक आदिमें स्पर्श क्षेत्रके समान है उसी प्रकार इन मार्गणाओंमें भी जानना चाहिये।

§ १२२. एकेन्द्रियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके तीन पदवाले जीवोंका स्पर्श ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्श पचेन्द्रियतिर्यंच अपर्याप्तकोंके समान है। इसीप्रकार पृथिवीकायिक आदि चार स्थावरकाय इनके बादर तथा बादर अपर्याप्त, सभी सूक्ष्म तथा इनके पर्याप्त और अपर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर और उनके अपर्याप्त, वनस्पतिकायिक, निगोद, औदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मण काययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिये।

§ १२३. पंचिंदिय-पंचिं०पज्ज०-तस-तसपज्ज० मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० तिण्णिपद०वि० लोग० असंखे०भागो अट्ठ चोद्दस० देसूणा सव्वलोगो वा। णवरि इत्थि०-पुरिस० भुज०-अवट्ठि० अट्ठ बारस चोद्दस० देसूणा। अणंताणु०चउक्क० एवं चेव। णवरि अवत्तव्व० ओघं। सम्मत्त-सम्मामि० ओघं। एवं पंचमण०-पंचवचि०-इत्थि०-पुरिस०-चक्खु०-सण्णि त्ति। णवरि इत्थि०-पुरिसवेदमग्गणासु इत्थि०-पुरिस० भुज०-अवट्ठि० अट्ठ चोद्दस० देसूणा।

§ १२४. वेउव्विय० मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० तिण्णिपद० लोग० असंखे०-

**विशेषार्थ**—एकेन्द्रियोंमें मिथ्यात्व आदि २६ प्रकृतियोंके तीन पदवालोंके स्पर्शको ओघके समान सब लोक बतलानेका कारण यह है कि ये जीव सब लोकमें पाये जाते हैं। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अल्पतर स्थितिवालोंके स्पर्शको पंचेन्द्रियतिर्यंच अपर्याप्तकोंके समान बतलानेका कारण यह है कि जिसप्रकार पंचेन्द्रियतिर्यंच अपर्याप्तकोंमें इन प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिवालोंका वर्तमान कालीन स्पर्श लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीतकालीन स्पर्श सब लोक पाया जाता है उसी प्रकार एकेन्द्रियोंमें भी बन जाता है। इसीप्रकार चारों स्थावरकाय आदि मार्गणाओंमें स्पर्शका विवेचन कर लेना चाहिये।

§ १२३. पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रियपर्याप्त, त्रस और त्रसपर्याप्त जीवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंके तीन पदविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग, त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग और सब लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है। किन्तु इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी भुजगार, और अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम बारह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अपेक्षा इसीप्रकार जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्श ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा स्पर्श ओघके समान है। इसी प्रकार पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी, स्त्रीवेदवाले, पुरुषवेदवाले, चक्षुदर्शनवाले और संज्ञी जीवोंके जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि स्त्री और पुरुषवेद मार्गणाओंमें स्त्री और पुरुषवेदकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है।

**विशेषार्थ**—पंचेन्द्रिय आदि चार मार्गणाओंमें और स्पर्श तो सुगम है। किन्तु स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तिवालोंका स्पर्श जो कुछकम आठबटे चौदह राजु बतलाया है वह विहार आदिकी अपेक्षा बतलाया है। तथा कुछकम बारहबटे चौदह राजु-स्पर्श मारणान्तिक और उपपाद पदकी अपेक्षा बतलाया है। यहाँ इन दोनों प्रकृतियोंके उक्त पदोंकी अपेक्षा इससे अधिक स्पर्श नहीं प्राप्त होता। इसी प्रकार पाँच मनोयोगी आदि मार्गणाओंमें भी घटित कर लेना चाहिये। किन्तु स्त्रीवेद और पुरुषवेद मार्गणाओंमें जो स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी भुजगार और अल्पतर स्थितिवालोंका स्पर्श कुछकम आठबटे चौदह राजु बतलाया है सो इसका कारण यह है कि ये जीव अधिकतर देव होते हैं जो तीसरे नरकतक नीचे और अच्युत कल्पतक ऊपर विहार करते हुए पाये जाते हैं। इसके ऊपर यद्यपि पुरुषवेदी जीव हैं पर वे विहार नहीं करते अतः उनका स्पर्श लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण ही है इसलिये उससे इस स्पर्शमें कोई विशेषता नहीं आती।

§ १२४. वैक्रियिककाययोगियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंके तीन पदवाले

**भागो अट्ठ तेरह चोद्दसभागा वा देसूणा। णवरि इत्थि०-पुरिस० भुज०-अवट्ठि० अट्ठ-बारस चोद्दस० देसूणा। अणंताणु०चउक्क० एवं चेव। णवरि अवत्तव्व० ओघं। सम्मत्त-सम्मामि० अप्पदर० मिच्छत्तभंगो। सेस० ओघं। वेउव्वियमिस्स० खेत्तभंगो।**

**§ १२५. विहंग० मिच्छत्त०-सोलसक०-णवणोक० तिण्णिपदा सम्मत्त-सम्मामि० अप्पदर० पंचिंदियभंगो। आभिणि०-सुद०-ओहि० सव्वपयडि० अप्पदर० लोग० असंखे०भागो अट्ठ चोद० देसूणा। एवमोहिदंस०-सम्मादि०-खइय०-वेदय०-उवसम०-सम्मामिच्छादिट्ठि त्ति। संजदासंजद० सव्वपयडि० अप्पदर० लोग० असंखे०भागो छ चोद्दस भागा वा देसूणा। तेउ० सोहम्मभंगो। पम्म० सहस्सारभंगो। सासण० सव्व-पयडि० अप्पदर० लोग० असंखे०भागो अट्ठ बारस चोद्दस० देसूणा।**

**एवं पोसणाणुगमो समत्तो।**

जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछकम आठ और कुछकम तेरह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है। किन्तु इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछकम आठ और कुछकम बारह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अपेक्षा इसी प्रकार जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका भंग ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका भंग मिथ्यात्वके समान है। तथा शेष कथन ओघके समान है। वैक्रियिकमिश्रकाययोगियोंमें क्षेत्रके समान भंग है।

**विशेषार्थ**—अन्यत्र वैक्रियिककाययोगियोंका स्पर्श जो तीन प्रकारका बतलाया है वही यहाँ मिथ्यात्व आदिके तीन पदोंकी अपेक्षा प्राप्त होता है जो मूलमें बतलाया ही है। किन्तु इनमें स्त्री-वेद और पुरुषवेदकी भुजगार और अल्पतर स्थितिवालोंका वही स्पर्श प्राप्त होता है जो पंचेन्द्रिय जीवोंके पहले बतला आए हैं इसलिये यहां उसका तत्प्रमाण कथन किया। वैक्रियिककाययोगियोंमें अनन्तानुबन्धी चतुष्कका स्पर्श इसी प्रकार है। यह जो कहा है सो इसका यह तात्पर्य है कि जिस प्रकार इनमें मिथ्यात्व आदिके सम्भव पदोंका स्पर्श बतलाया है इसीप्रकार अनन्तानुबन्धी चतुष्कके अवक्तव्य पदको छोड़कर शेष पदोंका स्पर्श जानना चाहिये। शेष कथन सुगम है।

§ १२५. विभंगज्ञानियोंमें मिथ्यात्व सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके तीन पद और सम्यक्त्व तथा सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतरस्थितिका भंग पचेन्द्रियोंके समान है। आभिनि-बोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है। इसी प्रकार अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। संयतासंयतोंमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है। पीतलेश्याका भंग सौधर्मके समान और पद्मलेश्याका भंग सहस्रार कल्पके समान है। सासादनसम्यग्दृष्टियोंमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम बारह भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है।

*** णाणाजीवेहि कालो ।**

§ १२६. सुगममेदं ।

*** सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं भुजगार-अवट्ठिद-अवत्तव्वट्ठिदिविहत्तिया केवचिरं कालादो होंति ?**

§ १२७. एदं पि सुगमं ।

*** जहण्णेण एगसमओ ।**

§ १२८. कुदो ? सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं भुजगार-अवट्ठिद-अवत्तव्वाणि एगसमयं कादूण विदियसमए सव्वेसिं जीवाणमप्पदरस्स गमणुवलंभादो ।

*** उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो ।**

§ १२९. कुदो ? सगसगंतरकाले अदिक्कंते भुजगार-अवट्ठिद-अवत्तव्वाणि कुणमाणाणं णिरंतरमावलि० असंखे०भागमेत्तकालमवट्ठिदावत्तव्व-भुजगाराणमुवलंभादो ।

*** अप्पदरट्ठिदिविहत्तिया केवचिरं कालादो होंति ?**

§ १३०. सुगमं ।

*** सव्वद्धा ।**

**विशेषार्थ**—यहाँ विभंगज्ञानी आदि जितनी मार्गणाओंमें अपने अपने सम्भव पदोंकी अपेक्षा स्पर्शन बतलाया है वह उन उन मार्गणाओंके स्पर्शनको जान कर घटित कर लेना चाहिए। कोई विशेषता न होनेसे उसका हमने अलगसे स्पष्टीकरण नहीं किया है ।

इसप्रकार स्पर्शनानुगम समाप्त हुआ ।

*** अब नानाजीवोंकी अपेक्षा कालानुगमका अधिकार है ।**

§ १२६. यह सूत्र सुगम है ।

*** सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्यस्थितिविभक्तिवाले जीवोंका कितना काल है ?**

§ १२७. यह सूत्र भी सुगम है ।

*** जघन्य काल एक समय है ।**

§ १२८. क्योंकि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिविभक्तियोंको एक समय तक करके दूसरे समयमें उन सब जीवोंका अल्पतर स्थितिविभक्तिमें गमन पाया जाता है ।

*** उत्कृष्ट काल आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।**

§ १२९. क्योंकि अपने अपने अन्तरकालके व्यतीत हो जाने पर भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिविभक्तियोंको करनेवाले जीवोंके निरन्तर आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक अवस्थित, अवक्तव्य और भुजगार पद पाये जाते हैं ।

*** अल्पतरस्थितिविभक्तिवाले जीवोंका कितना काल है ?**

§ १३०. यह सूत्र सुगम है ।

*** सब काल है ।**

§ १३१. कुदो ? णाणाजीवप्पणाए सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमप्पदरट्ठिदिविहत्तियाणं तिसु वि कालेसु विरहाभावादो ।

*** सेसाणं कम्माणं विहत्तिया सव्वे सव्वद्धा ।**

§ १३२. कुदो, अणंतरासीसु भुजगार-अवट्ठिद-अप्पदराणं विरहाभावादो ।

*** णवरि अणंताणुबंधीणमवत्तव्वट्ठिदिविहत्तियाणं जहण्णेण एगसमओ ।**

§ १३३. कुदो, अवत्तव्वं कुणमाणजीवाणमाणंतियाभावादो । ण सम्मत्तअप्पदरविहत्तिएहि वियहिचारो; सम्मत्तप्पदरस्सेव अणंताणुबंधीणमवत्तव्वस्स सगपाओग्गगुणद्धाए सव्वसमए असंभवादो ।

§ १३१. क्योंकि नाना जीवोंकी अपेक्षासे सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिको करनेवाले जीवोंका तीनों ही कालोंमें विरह नहीं होता ।

*** शेष कर्मोंकी सब स्थितिविभक्तिवाले जीव सर्वदा पाये जाते हैं ।**

§ १३२ क्योंकि शेष कर्मोंकी भुजगार, अवस्थित और अल्पतर स्थितिविभक्तियोंको करनेवाली जीवराशि अनन्त है, अतः उनका कभी विरह नहीं होता ।

*** किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीकी अवक्तव्यस्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है ।**

§ १३३. क्योंकि अवक्तव्य स्थितिविभक्तिको करनेवाले जीवोंका प्रमाण अनन्त नहीं है । यदि कहा जाय कि इस तरह तो सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंके साथ व्यभिचार हो जाय गा, क्योंकि इनका प्रमाण भी अनन्त नहीं है अतः इनका भी विरह पाया जाना चाहिये, सो बात नहीं है, क्योंकि जिस प्रकार सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिके योग्य सब काल है उस प्रकार अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अवक्तव्य स्थितिविभक्तिके योग्य सब काल नहीं है अतः अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका सर्वदा पाया जाना सम्भव नहीं है ।

**विशेषार्थ**—यहां यह बतलाया है कि चूंकि अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवालोंका प्रमाण अनन्त नहीं है अतः उनका नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य काल एक समय बन जाता है । इस पर यह शंका की गई है कि सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिवालोंका भी प्रमाण अनन्त नहीं है परन्तु उनका काल सर्वदा बताया है अतः उस कथनके साथ इसका व्यभिचार प्राप्त होता है । तात्पर्य यह है कि सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिवाले जीव भी असंख्यात हैं और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अवक्तव्य स्थितिवाले जीव भी असंख्यात है । अतः अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अवक्तव्य स्थितिवाले जीव अनन्त नहीं होनेसे इनका जघन्य काल यदि एक समय माना जाता है तो 'अनन्त नहीं होनेसे' यह हेतु व्यभिचरित हो जाता है, क्योंकि सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिवाले जो कि अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अवक्तव्य स्थितिवालोंके विपक्ष हैं उनमें भी यह हेतु चला जाता है । वीरसेन स्वामी ने इस शंकाका जो समाधान किया है उसका भाव यह है कि यद्यपि ये दोनों विभक्तिवाले जीव असंख्यात हैं फिर भी सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिवालोंका सर्वदा काल बन जाता है, क्योंकि सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिका एक जीवकी अपेक्षा जो जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल साधिक एक सौ बत्तीस सागर बतलाया है उसे देखते हुए उसका सर्वदा पाया जाना सम्भव है। परन्तु यह बात अनन्तानुबन्धीकी अवक्तव्यस्थितिकी नहीं है क्योंकि एक जीवकी अपेक्षा

*** उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो ।**

§ १३४. कारणं सुगमं । एवं जइवसहाइरियदेसामासियसुत्तत्थपरूवणं कादूण संपहि तेण सूचिदअत्थस्सुच्चारणमस्सिदूण कस्सामो ।

* § १३५. कालाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसे० । तत्थ ओघेण मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० भुज०-अप्पदर०-अवट्ठि० केवचिरं ? सव्वद्धा । अणंताणु० एवं चेव । णवरि अवत्तव्व० केवचिरं ? जह० एगसमओ, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । सम्मत्त-सम्मामि० अप्पदर० केवचिरं० ? सव्वद्धा । सेसपदवि० केवचिरं ? जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । एवं तिरिक्ख०-कायजोगि०-ओरालिय०-णवुंस०-चत्तारिक०-असंजद०-अचक्खु०-तिण्णिले०-भवसि०-आहारि त्ति ।

§ १३६. आदेसेण णेरइएसु मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० अप्पद०-अवट्ठि० केव० ? सव्वद्धा । भुज० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । अणंताणु०चउक्क० अप्पदर०-अवट्ठि० मिच्छत्तभंगो । भुज०-अवत्तव्व० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०

इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय ही बतलाया है । अब यदि नाना जीव एक साथ अनन्तानुबन्धीकी अवक्तव्य स्थितिको प्राप्त हों और दूसरे समयमें अन्य जीव इस पदको न प्राप्त हों तो इसका जघन्य काल एक समय भी बन जाता है । यही कारण है कि अनन्तानुबन्धीकी अवक्तव्य स्थितिवालोंका प्रमाण असंख्यात होते हुए भी नाना जीवोंकी अपेक्षा भी उसका जघन्य काल एक समय बतलाया है ।

*** उत्कृष्ट काल आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।**

§ १३४. कारण सुगम है । इस प्रकार यतिवृषभ आचार्यके देशामर्षक सूत्रके अर्थका कथन करके अब उसके द्वारा सूचित होनेवाले अर्थका उच्चारणाके आश्रयसे कथन करते हैं ।

§ १३५. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेश निर्देश । उनमेंसे ओघकी अपेक्षा मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका कितना काल है ? सब काल है । अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अपेक्षा इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका कितना काल है ? जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका कितना काल है ? सब काल है । शेष पदस्थितिविभक्तिवाले जीवोंका कितना काल है ? जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसी प्रकार तिर्यञ्च, काययोगी, औदारिककाययोगी, नपुंसकवेदवाले, क्रोधादि चारों कषायवाले, असंयत, अचक्षुदर्शनवाले, कृष्णादि तीन लेश्यावाले, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिए ।

§ १३६. आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका कितना काल है ? सब काल है । भुजगार स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अल्पतर और अवस्थितस्थितिविभक्तिवाले जीवोंका भंग मिथ्यात्वके समान है । भुजगार और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी

**भागो। सम्मत्त-सम्मामि० ओघं। एवं सव्वणिरय-पंचिंदियतिरिक्ख-पंचिं०तिरि०-पज्ज०-पंचिं०तिरि०जोणिणी-देव०-भवणादि जाव सहस्सार-पंचिंदिय-पंचि०पज्ज०-तस-तस-पज्ज०-पंचमण०-पंचवचि०-वेउव्विय०-इत्थि०-पुरिस०-चक्खु०-तेउ०-पम्म०-सण्णि त्ति।**

**§ १३७. पंचिं०तिरि०अपज्ज० मिच्छत्त-सोलसक० णवणोक० तिण्हं पदाणं णेरइयाणं भंगो। सम्मत्त०-सम्मामि० अप्पदर० केव० ? सव्वद्धा। एवं वियलिंदिय-पज्जत्तापज्जत्त-पंचिं०अपज्ज०-बादरपुढविपज्ज०-बादरआउपज्ज०-बादरतेउपज्ज० - बादरवाउपज्ज० -बादर-वणप्फदिपत्तेय[1]पज्ज०-तसअपज्ज०-विहंगणाणि त्ति।**

अपेक्षा ओघके समान भंग है। इसी प्रकार सब नारकी, पचेन्द्रिय तिर्यञ्च, पचेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्त, पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिमती, सामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार स्वर्गतकके देव, पचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस, त्रस पर्याप्त, पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी, वैक्रियिककाययोगी, स्त्रीवेद-वाले, पुरुषवेदवाले, चक्षुदर्शनी, पीतलेश्यावाले, पद्मलेश्यावाले और संज्ञी जीवोंके जानना चाहिए।

**विशेषार्थ**—नारकियोंके एक जीव की अपेक्षा मिथ्यात्व आदि २८ प्रकृतियोंकी अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्तियोंका जो काल बतला आये हैं उसे देखते हुए यहां नाना जीवों की अपेक्षा उनका सर्वदा काल प्राप्त होता है अतः यहाँ उनका सर्वदा काल बतलाया है। किन्तु भुजगार स्थितिकी यह बात नहीं है। नाना जीवोंकी अपेक्षा भी यदि इसके उपक्रम कालका विचार किया जाता है तो उसका जघन्य प्रमाण एक समय और उत्कृष्ट प्रमाण आवलिके असंख्यातवें भाग-प्रमाण प्राप्त होता है इसलिये यहाँ इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल उक्त प्रमाण कहा। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धी चतुष्कके पदोंका भी यथायोग्य विचार कर लेना चाहिये। सम्यक्त्व और सम्यग्मि-थ्यात्वकी अल्पतर स्थितिवाले जीव नरकमें भी सर्वदा पाये जाते हैं। अब रहे शेष पदवाले जीव सो उनका उपक्रम कालके अनुसार पाया जाना सम्भव है। ओघमें भी यही बात है। अतः सम्य-क्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सब पदोंके कालको ओघके समान बतलाया। आगे जो और मार्गणाएं गिनाई हैं उनमें यह व्यवस्था बन जाती है, अतः उनके कथनको सामान्य नारकियोंके समान बतलाया।

§ १३७. पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके तीन पदवाले जीवोंका भंग नारकियोंके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थिति-विभक्तिवाले जीवोंका कितना काल है ? सब काल है। इसी प्रकार विकलेन्द्रिय और उनके पर्याप्त और अपर्याप्त, पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त, बादर पृथिवीकायिक पर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अग्निकायिक पर्याप्त, बादर वायुकायिक पर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर पर्याप्त, त्रस अपर्याप्त और विभंगज्ञानी जीवोंके जानना चाहिए।

**विशेषार्थ**—पचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व आदि २६ प्रकृतियोंके अल्पतर आदि तीन पदोंका काल नारकियोंके समान बन जाता है इसलिये यहाँ इनके कथनको नारकियोंके समान बतलाया है। यहाँ अनन्तानुबन्धीकी अवक्तव्य स्थिति नहीं होती यह स्पष्ट ही है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी एक अल्पतर स्थिति ही होती है। साथ ही यहाँ सम्यक्त्व और सम्यग्मि-थ्यात्वकी सत्तावाले जीव नियमसे पाये जाते हैं, इसलिये इसका काल सर्वदा बतलाया है। आगे जो और मार्गणाएँ गिनाई हैं उनमें भी यह व्यवस्था बन जाती है अतः उनके कालको पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंके समान बतलाया है।

1 ता० प्रतौ 'अपज्ज०' इति पाठः।

१३८. मणुस० मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० णेरइयभंगो। अणंताणु०चउक्क० एवं चेव। णवरि अवत्त० केव० ? जह० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया। सम्मत्त०-सम्मामि० अप्पदर० केव० ? सव्वद्धा। भुजगार-अवट्ठिद-अवत्तव्वाणं केव० ? जह० एगस०, उक्क० संखे० समया। एवं मणुसपज्जत्त-मणुसिणीणं। णवरि जम्मि आवलि० असंखे०भागो तम्मि संखेज्जा समया। मणुसअपज्ज० मिच्छत्त-सोलसकसाय-णवणोक० भुज०-अप्पद०-अवट्ठि० सम्मत्त-सम्मामि० अप्प० के० ? ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। णवरि भुज० आवलि० असंखे०भागो।

१३९. आणदादि जाव उवरिमगेवज्जो त्ति मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० अप्पदर० सव्वद्धा। अणंताणु०चउक्क० अवत्त० ओघं। सम्मत्त-सम्मामि० भुजगार०-अवट्ठि०-अवत्तव्व० ज० एगसमओ, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। अप्पदर० सव्वद्धा। एवं सुक्कले०। अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठ० अट्ठावीसंपय० अप्पद० सव्वद्धा। एवमाभिणि०-

§ १३८. सामान्य मनुष्योंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंका भंग नारकियोंके समान है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अपेक्षा इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका कितना काल है ? जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका कितना काल है ? सब काल है। भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका कितना काल है ? जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। इसी प्रकार मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यनियोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि जहां आवलीका असंख्यातवां भाग काल कहा है वहां संख्यात समय काल कहना चाहिये। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका कितना काल है ? जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है। किन्तु इतनी विशेषता है कि भुजगार स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका उत्कृष्ट काल आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

**विशेषार्थ**—मनुष्योंमें अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अवक्तव्य स्थितिवाले जीव संख्यात ही होते हैं अतः इनके उक्त विभक्तिवालोंका उत्कृष्ट काल संख्यात समय बतलाया है। यही बात सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिवालोंके सम्बन्धमें जान लेना चाहिये। मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यनी तो संख्यात ही होते हैं, अतः मूलमें सामान्य मनुष्योंमें जिन स्थितिविभक्तिवालोंका आवलीके असंख्यातवें भाग काल बतलाया है वहां भी उनके संख्यात समय काल जानना चाहिये। लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्योंका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है अतः यहां सब प्रकृतियोंके सम्भव पदोंका उत्कृष्ट काल उक्त प्रमाण बतलाया। किन्तु भुजगार स्थितिका उत्कृष्ट काल ही आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण है, अतः इसकी अपेक्षा उत्कृष्ट काल आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण बतलाया।

§ १३९. आनतकल्पसे लेकर उपरिम ग्रैवेयकतकके देवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका सब काल है। किन्तु अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका काल ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका काल सवदा

**सुद०-ओहि०--मणपज्ज०-संजद०-सामाइय-छेदो०-परिहार०-संजदासंजद०-ओहिदंस०-सम्मादि०-खइय०-वेदय०दिट्ठि त्ति ।**

**१४०. एइंदिएसु मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० सव्वपदाणमोघं। सम्मत्त०-सम्मामि० अप्पद० केव० ? सव्वद्धा । एवं बादरेइंदिय-सुहुमेइंदियपज्जत्तापज्जत्त-बादर-पुढविअपज्ज०-सुहुमपुढविपज्जत्तापज्जत्त—बादरआउअपज्ज०-सुहुमआउपज्जत्तापज्जत्त-बादरतेउअपज्ज०-सुहुमतेउपज्जत्तापज्जत्त-बादरवाउअपज्ज०-सुहुमवाउपज्जत्तापज्जत्त-वणप्फदि-णिगोद-बादरसुहुमपज्जत्तापज्जत्त-बादरवणप्फदिपत्तेयसरीरअपज्ज०-ओरालिय-मिस्स०-मदि०सुद०-मिच्छादि० असण्णि त्ति ।**

है। इसी प्रकार शुक्ललेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिए। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका काल सर्वदा है। इसी प्रकार आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत, संयतासंयत, अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि और वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिए।

**विशेषार्थ**—आनतादिकमें मिथ्यात्व आदि २६ प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थिति ही होती है अतः वहां इसका सर्वदा काल बन जाता है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीकी अवक्तव्य स्थिति भी होती है सो उपक्रम कालके अनुसार इसका यहां भी ओघके समान काल बतलाया है। अब रहीं सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतियां सो इनके यहां चारों पद बन जाते हैं। उनमेंसे तीन पदोंका तो उपक्रम कालके अनुसार जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भाग प्रमाण बतलाया है। और अल्पतर स्थितिवालोंका सर्वदा सद्भाव पाया जाता है इसलिये इसका सर्वदा काल बतलाया है। शुक्लेश्यामें यह व्यवस्था बन जाती है, अतः उसमें सब प्रकृतियोंके सम्भव पदोंके कालको पूर्वोक्त प्रमाण कहा है। अनुदिशादिमें तो सब प्रकृतियोंकी एक अल्पतर स्थिति ही होती है, परन्तु वहाँ सब प्रकृतियोंका सर्वदा सद्भाव पाया जाता है इसलिये वहाँ अल्पतर स्थितिका सर्वदा काल बतलाया है। आभिनिबोधिकज्ञानी आदि जो और मार्गणाएँ गिनाई हैं उनमें भी इसी प्रकार बतलानेका कारण यह है कि उनमें भी अनुदिशादिकके समान व्यवस्था प्राप्त होती है।

§ १४०. एकेन्द्रियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके सब पदोंका भंग ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतरस्थितिविभक्तिवाले जीवोंका कितना काल है? सब काल है। इसी प्रकार बादर एकेन्द्रिय, सूक्ष्म एकेन्द्रिय और इन दोनोंके पर्याप्त और अपर्याप्त, बादर पृथिवीकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म पृथिवीकायिक और इनके पर्याप्त और अपर्याप्त, बादर जलकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म जलकायिक और इनके पर्याप्त और अपर्याप्त, बादर अग्निकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म अग्निकायिक और इनके पर्याप्त और अपर्याप्त, बादर वायुकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म वायुकायिक और इनके पर्याप्त और अपर्याप्त, वनस्पति, निगोद तथा इन दोनोंके बादर और सूक्ष्म तथा पर्याप्त और अपर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर अपर्याप्त, औदारिकमिश्रकाययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, मिथ्यादृष्टि और असंज्ञी जीवोंके जानना चाहिए।

**विशेषार्थ**—ओघमें मिथ्यात्व आदि २६ प्रकृतियोंके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित पदोंका जो काल कहा है वह एकेन्द्रियोंकी मुख्यतासे ही बतलाया है अतः यहां उक्त प्रकृतियोंके उक्त पदोंके कालको ओघके समान कहा। तथा एकेन्द्रियोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका एक अल्पतर

§ १४१. आहार० सव्वपयडी० अप्पद० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु० । एवमवगद०-अकसा०-सुहुम०-जहाक्खादे त्ति । आहारमिस्स० सव्वपयडी० अप्पद० जहण्णुक्क० अंतोमु० । वेउव्वियमिस्स० मणुसअपज्जत्तभंगो । अभव० छव्वीसपयडी० मदि०भंगो ।

§ १४२. उवसम० सव्वपयडी० अप्पद० ज० अंतोमु०, उक्क० पलिदो० असंखे०-भागो । एवं सम्मामिच्छाइट्ठिस्स वि । सासण० सव्वपयडी० अप्पद० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । कम्मइय०-अणाहारि० ओरालियमिस्स०-भंगो । णवरि सम्मत्त-सम्मामि० अप्पद० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो ।

एवं कालाणुगमो समत्तो ।

---

पद ही होता है और यहाँ उनका सदा सद्भाव पाया जाता है अतः यहाँ अल्पतर पदका सर्वदा काल कहा है । आगे बादर एकेन्द्रिय आदि जो बहुत सी मार्गणाएँ गिनाई हैं उनमें यह व्यवस्था बन जाती है, अतः उनके कालको एकेन्द्रियोंके समान कहा है ।

§ १४१. आहारककाययोगियोंमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतरस्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । इसी प्रकार अपगतवेदी, अकषायी, सूक्ष्मसांपरायिकसंयत और यथाख्यातसंयत जीवोंके जानना चाहिए । आहारकमिश्रकाययोगियोंमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है । वैक्रियिकमिश्रकाययोगियोंमें मनुष्य अपर्याप्तकोंके समान भंग है । अभव्योंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी अपेक्षा मत्यज्ञानियोंके समान भंग है ।

**विशेषार्थ**—आहारककाययोगका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । तथा इसमें सब प्रकृतियोंका एक अल्पतर पद ही होता है । यही कारण है कि यहाँ सब प्रकृतियोंके अल्पतर पदका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त बतलाया है । इसी प्रकार अपगतवेद आदि मार्गणाओंमें भी समझना चाहिये । किन्तु आहारकमिश्रका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त ही है, अतः यहाँ सब प्रकृतियोंके अल्पतर पदका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त बतलाया है । वैक्रियिकमिश्रकाययोगका नाना जीवोंकी अपेक्षा उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्योंका भी इतना ही काल है अतः वैक्रियिकमिश्रकाययोगका भंग लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्योंके समान बतलाया है । अभव्य मत्यज्ञानी ही होते हैं, अतः इनका भंग मत्यज्ञानियोंके समान बतलाया है ।

§ १४२. उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यादृष्टि के भी जानना चाहिए । सासादनसम्यग्दृष्टियोंमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्टकाल पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है । कार्मणकाययोगी और अनाहारकोंमें औदारिकमिश्रकाययोगियोंके समान भंग है । किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

**विशेषार्थ**—उपशम सम्यग्दृष्टियोंका नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है अतः यहाँ सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिका काल उक्त प्रमाण बतलाया है । इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंके भी जानना चाहिये । किन्तु सासादन

* अंतरं।

§ १४३. सुगमं, अहियारसंभालणफलत्तादो।

* सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं भुजगार-अवत्तव्वट्ठिदिविहत्तियंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ १४४. एदं पि सुगमं।

* जहण्णेण एगसमओ।

§ १४५. कुदो ? सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं भुजगारमवत्तव्वं च कादूण सम्मत्तं पडिवज्जमाणजीवाणं जह० एगसमयमेत्तंतरुवलंभादो।

* उक्कस्सेण चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे।

§ १४६. सामण्णेण सम्मत्तग्गहणंतरकालो चउवीसं अहोरत्तमेत्तो त्ति पुव्वं परूविदो। संपहि अवत्तव्वभावेण सम्मत्तग्गहणंतरकालो वि तत्तिओ चेवे त्ति कथमेदं जुज्जदे ? ण एस

सम्यग्दृष्टियोंका जघन्य काल एक समय है, अतः यहाँ जघन्य काल एक समय बतलाया है। उत्कृष्ट काल पूर्ववत् है। कार्मणकाययोग और अनाहारक जीवोंका सर्वदा काल है। यही बात औदारिकमिश्रकी है, अतः यहाँ सब प्रकृतियोंके सम्भव पदोंका काल औदारिकमिश्रके समान बन जाता है। किन्तु सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिवालोंके कालमें विशेषता है। बात यह है कि एक जीवकी अपेक्षा कार्मणकाययोग और अनाहारक अवस्थाका उत्कृष्ट काल तीन समयसे अधिक नहीं है और सम्यक्त्व तथा सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्तावाले जीव असंख्यात होते हुए भी स्वल्प हैं। अब यदि उपक्रम कालकी अपेक्षा विचार किया जाता है तो यहाँ आवलिके असंख्यातवें भागसे अधिक काल नहीं प्राप्त होता। अतः यहाँ उक्त दोनों प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिवालोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण बतलाया है।

इस प्रकार कालानुगम समाप्त हुआ।

* अब अन्तरानुगम का अधिकार है।

§ १४३. यह सूत्र सुगम है, क्योंकि इसका फल अधिकारका सम्हालनामात्र है।

* सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका अन्तरकाल कितना है ?

§ १४४. यह सूत्र भी सुगम है।

* जघन्य अन्तरकाल एक समय है।

§ १४५. क्योंकि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार और अवक्तव्यके साथ सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंका जघन्य अन्तरकाल एक समयमात्र पाया जाता है।

**विशेषार्थ**—सम्यग्दर्शनके प्राप्त होनेके प्रथम समयमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार और अवक्तव्य स्थिति होती है। अब यदि प्रथम और तीसरे समयमें बहुतसे जीव उक्त पदोंके साथ सम्यग्दर्शनको प्राप्त हुए और दूसरे समयमें नहीं हुए तो उक्त पदोंका जघन्य अन्तर काल एक समय प्राप्त हो जाता है। यह उक्त सूत्रका भाव है।

* उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक चौबीस दिन रात है।

§ १४६. **शंका**—पहले सामान्यसे सम्यक्त्वके ग्रहणका अन्तरकाल चौबीस दिन रात कहा है अब सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अवक्तव्यस्थितिविभक्तिके साथ सम्यक्त्व ग्रहणका अन्तर-

दोसो; सादिरेयचउवीसअहोरत्तमेत्तंतरस्स भुजगार-अवत्तव्वट्ठिदिविहत्तीणं परूवणादो ।

* अवट्ठिदट्ठिदिविहत्तियंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ १४७. सुगमं ।

* जहण्णेण एगसमओ ।

§ १४८. एदं पि सुगमं ।

* उक्कस्सेण अंगुलस्स असंखेज्जदिभागो ।

§ १४९. कुदो ? सम्मत्तट्ठिदीदो समयुत्तरमिच्छत्तट्ठिदिसंतकम्मं मोत्तूण सेसट्ठिदिसंतकम्मेहि संखे०सागरोवमसहस्समेत्तेहि सम्मत्तं पडिवज्जमाणाणं अंगुलस्स असंखे०भागमेत्तंतरस्स संभवं पडि विरोहाभावादो । संखेज्जसागरोवमसहस्समेत्तमुक्कस्संतरमिदि अभणिय अंगुलस्स असंखे०भागमेत्तमिदि किमट्ठं वुच्चदे ? ण, पुणो पुणो दुसमउत्तरादिट्ठिदीसु ट्ठाइदूण सम्मत्तं पडिवज्जमाणाणं जीवाणं बहुअमंतरमुवलब्भदि त्ति अंगुलस्स असंखे०भागमेत्तंतरुवएसादो[1] । एक्केक्किस्से ट्ठिदीए असंखे०लोगमेत्तट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणाणि अत्थि । तेसु अंतरिय असंखे०लोगमेत्तंतरपमाणपरूवणा किण्ण कीरदे ? ण, ट्ठिदिअंतरे

काल भी उतना ही कहा जा रहा है सो यह कैसे बन सकता है ?

**समाधान**—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि यहाँ भुजगार और अवक्तव्य स्थितिविभक्तियोंका अन्तरकाल केवल चौबीस दिनरात न कहकर साधिक चौबीस दिन रात कहा है ।

* अवस्थित स्थितिविभक्तिका अन्तरकाल कितना है ?

§ १४७. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य अन्तरकाल एक समय है ।

§ १४८. यह सूत्र भी सुगम है । तात्पर्य यह है कि यह पद भी सम्यग्दर्शनको ग्रहण करनेके प्रथम समयमें हो सकता है । अब यदि नाना जीवोंने इस पदके साथ पहले और तीसरे समयमें सम्यग्दर्शनको प्राप्त किया और दूसरे समयमें नहीं किया तो इसका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त हो जाता है ।

* उत्कृष्ट अन्तरकाल अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

§ १४९. क्योंकि सम्यक्त्वकी स्थितिसे मिथ्यात्वके एक समय अधिक स्थितिसत्कर्मको छोड़कर संख्यात हजार सागर प्रमाण शेष स्थितिसत्कर्मके द्वारा सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंके अंगुलके असंख्यातवें भागमात्र अन्तरके होनेमें कोई विरोध नहीं आता है ।

**शंका**—उत्कृष्ट अन्तर संख्यात हजार सागरप्रमाण है ऐसा न कहकर अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है ऐसा किसलिये कहा है ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि सम्यक्त्वकी स्थितिसे मिथ्यात्वकी दो समय अधिक आदि स्थितियोंके द्वारा पुनः पुनः सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंके बहुत अन्तर पाया जाता है, इसलिये अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण अन्तर कहा है ।

**शंका**—एक एक स्थितिके असंख्यात लोकप्रमाण स्थितिबन्धाध्यवसायस्थान होते हैं । अतः उन सबका अन्तर कराने पर अन्तरका प्रमाण असंख्यात लोक प्राप्त होता है इसलिये यहाँ असंख्यात लोक प्रमाण अन्तरकालकी प्ररूपणा क्यों नहीं की ?

[1] ता०प्रतौ-'रुवलंभादो' इति पाठः ।

**परूविज्जमाणे पयदट्ठिदिं मोत्तूण अण्णट्ठिदीहि सम्मत्तं पडिवज्जमाणाणं ट्ठिदिअंतरुवलंभादो। परिणामंतरे[1] पुण परूविज्जमाणे असंखेज्जलोगमेत्तमंतरं होदि, परिणामाणमसंखेज्जलोगपमाणत्तुवलंभादो। ण च ट्ठिदिवियप्पा असंखे०लोगमेत्ता अत्थि, जेण तदंतरमसंखेज्जलोगमेत्तं होज्ज। किं च, ण परिणामभेदेण णियमेण ट्ठिदिबंधभेदो; असंखे०लोगमेत्तट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणेहि एक्किस्से चेव ट्ठिदीए बंधुवलंभादो। तदो ट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणेसु अंतराविदे वि अंतरमंगुलस्स असंखे०भागमेत्तं चेव होदि त्ति।**

**समाधान**—नहीं, क्योंकि स्थितिके अन्तरका कथन करनेपर प्रकृत स्थितिको छोड़कर अन्य स्थितियोंके द्वारा सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंके स्थितिका अन्तर प्राप्त होता है। किन्तु परिणामोंके अन्तरकी अपेक्षा कथन करनेपर असंख्यात लोकप्रमाण अन्तर होता है, क्योंकि परिणाम असंख्यात लोकप्रमाण पाये जाते हैं। परन्तु स्थितिविकल्प असंख्यात लोकप्रमाण नहीं हैं, जिससे स्थित्यन्तर असंख्यात लोकप्रमाण होवे। दूसरी बात यह है कि परिणामभेदसे नियमतः स्थितिबन्धमें भेद नहीं होता है, क्योंकि असंख्यात लोकप्रमाण स्थितिबन्धाध्यवसायप्रमाण स्थानोंके द्वारा एक ही स्थितिका बन्ध पाया जाता है। अतः स्थितिबन्धाध्यवसायस्थानोंका अन्तर कराने पर भी स्थित्यन्तर अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण ही होता है। यही कारण है कि यहाँ असंख्यात लोकप्रमाण अन्तरकालकी प्ररूपणा नहीं की।

**विशेषार्थ**—यहाँ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अवस्थित स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर काल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण बतलाया है। सो इनमेंसे जघन्य अन्तरकाल एक समय तो स्पष्ट ही है। अब रही उत्कृष्ट अन्तरकालकी बात सो इसका खुलासा करते हुए वीरसेन स्वामीने स्वयं दो शंकाएँ उठाई हैं। पहली शंका तो यह है कि जब स्थितिके कुल विकल्प संख्यात हजार सागर प्रमाण हैं तब उत्कृष्ट अन्तरकाल संख्यात हजार सागर प्रमाण होना चाहिये। बात यह है कि जो सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी स्थितिसे मिथ्यात्वकी एक समय अधिक स्थितिवाला जीव सम्यग्दर्शनको प्राप्त होता है उसके सम्यग्दर्शनको प्राप्त होनेके प्रथम समयमें उक्त दोनों प्रकृतियोंकी अवस्थित स्थितिविभक्ति होती है। यदि इससे अधिक स्थितिवाला जीव सम्यग्दर्शनको प्राप्त होता है तो उसके अवस्थित स्थितिविभक्ति नहीं होती। अब यदि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी एक बार अवस्थित स्थितिके बाद जीव सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी स्थितिसे मिथ्यात्वकी दो समय आदि अधिक स्थितिके साथ निरन्तर सम्यग्दर्शनको प्राप्त होते रहे तो स्थितिके जितने विकल्प हैं उतनी बार ऐसा हो सकता है तदनन्तर अवश्य ही सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अवस्थित स्थिति प्राप्त हो जायगी। अतएव अवस्थित स्थितिका उत्कृष्ट अन्तरकाल संख्यात हजार सागरसे अधिक नहीं प्राप्त होना चाहिये। यह पहली शंका है। इसका वीरसेनस्वामीने जो समाधान किया है उसका भाव यह है कि जो सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्तावाले जीव मिथ्यात्वसे सम्यक्त्वको प्राप्त होते हैं उनमें दो समय अधिक आदि स्थितियोंके साथ सम्यक्त्वको जीव पुनः पुनः प्राप्त होते रहते हैं इसलिये अवस्थित स्थितिका अन्तर काल संख्यात हजार सागर प्रमाण प्राप्त न होकर अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है। दूसरी शंकाका भाव यह है कि एक एक स्थितिके स्थितिबन्धाध्यवसायस्थान असंख्यात लोकप्रमाण होते हैं। तथा कुल स्थितिविकल्प संख्यात हजार सागर प्रमाण होते हैं। अब यदि सब स्थितियोंके बन्धके योग्य स्थितिबन्धाध्यवसाय

1 आ०प्रतौ-मंतरेण' इति पाठः।

*** अप्पदरहिदिविहत्तियंतरं केवचिरं कालादो होदि ?**

§ १५०. सुगमं ।

*** णत्थि अंतरं ।**

§ १५१. कुदो? सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तसंतकम्मियाणं अप्पदरवावदाणं विरहाभावादो ।

*** सेसाणं कम्माणं सव्वेसिं पदाणं[1] णत्थि अंतरं ।**

§ १५२. अणंतेसु एइंदिएसु भुजगार-अप्पदर-अवट्ठिदाणं सव्वकालं संभवादो ।

*** णवरि अणंताणुबंधीणं अवत्तव्वट्ठिदिविहत्तियंतरं जहण्णेण एगसमओ ।**

§ १५३. कुदो, अणंताणुबंधिविसंजोइदसम्माइट्ठीणं मिच्छत्तं गदपढमसमए संभवादो ।

*** उक्कस्सेण चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे ।**

§ १५४. कुदो ? सम्मत्तं पडिवज्जमाणाणमंतरेण मिच्छत्तं पडिवज्जमाणाणमंतरस्स समाणत्तादो । एवं जइवसहमुहविणिग्गयदेसामासियचुण्णिसुत्तत्थपरूवणं कादूण संपहि

स्थानोंका अन्तर कराया जाता है तो वह असंख्यातलोकप्रमाण प्राप्त होता है इसलिये यहाँ अवस्थित स्थितिका उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण न कहकर असंख्यात लोकप्रमाण कहना चाहिये। इस शंकाका वीरसेन स्वामीने दो प्रकारसे उत्तर दिया है। पहले उत्तरका भाव यह है कि यहाँ परिणामोंका अन्तर नहीं दिखाना है किन्तु स्थितियोंका अन्तर दिखाना है। दूसरी बात यह है कि परिणामोंमें भेद होनेसे कमस्थितिमें भेद होनेका कोई नियम नहीं है, क्योंकि असंख्यात-लोकप्रमाण परिणामोंके द्वारा एक ही स्थितिबंध पाया जाता है।

*** अल्पतर स्थितिविभक्तिका अन्तरकाल कितना है ?**

§ १५०. यह सूत्र सुगम है।

*** अल्पतर स्थितिविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है ।**

§ १५१. क्योंकि अल्पतर स्थितिविभक्तिको प्राप्त सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वसत्कर्मवाले जीवोंका विरह नहीं पाया जाता है।

*** इसी प्रकार शेष कर्मोंके सब पदोंका अन्तरकाल नहीं है ।**

§ १५२. क्योंकि अनन्त एकेन्द्रियोंमें शेष सभी कर्मोंकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्तियाँ सदा पाई जाती हैं।

*** किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धियोंकी अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तरकाल एक समय है ।**

§ १५३. क्योंकि जिन सम्यग्दृष्टियोंने अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना कर दी है उनके मिथ्यात्वको प्राप्त होनेके प्रथम समयमें ही अवक्तव्य स्थितिविभक्ति पाई जाती है। इसलिये इसका जघन्य अन्तरकाल एक समय बन जाता है।

*** उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक चौबीस दिन रात है ।**

§ १५४. क्योंकि सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंके अन्तरकालके साथ मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंका अन्तरकाल समान है। इस प्रकार यतिवृषभ आचार्यके मुखसे निकले हुए देशामर्षक चूर्णिसूत्रोंके अर्थका कथन करके अब उसके द्वारा सूचित होनेवाले अर्थका कथन करनेके लिये

1 आ० प्रतौ 'सव्वेसिं कम्माण पदाण' इति पाठः ।

**तेण सूचिदत्थपरूवणट्ठमुच्चारणाणुगमं कस्सामो।**

**§ १५५. अंतराणुगमेण दुविहो–णिद्देसो ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० तिण्णि पदाणं णत्थि अंतरं। अणंताणु०चउक्क० एवं चेव। णवरि अवत्तव्व० जह० एगसमओ, उक्क० चउवीस अहोरत्ते सादिरेगे। सम्मत्त-सम्मामि० अप्पदर० णत्थि अंतरं। भुज० ज० एगस०, उक्क० चउवीस अहोरत्ते सादिरेगे। एवमवत्तव्वस्स वि वत्तव्वं; विसेसाभावादो। अवट्ठि० ज० एगसमओ, उक्क० असंखे०लोगा। कुदो? ट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणेसु असंखे०लोगमेत्तेसु अंतराविदे तदुवलंभादो। चुण्णिसुत्तेण एदस्स विरोहो किण्ण होदि? होदि चेव, किं तु जाणिय जहा अविरोहो होदि तहा वत्तव्वं। एवं तिरिक्ख०-कायजोगि०-ओरालि०-णवुंस०-चत्तारिक०-असंजद०-अचक्खु०-तिण्णिले०-भवसि०-आहारि त्ति।**

उच्चारणाका अनुगम करते हैं—

§ १५५. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेंसे ओघकी अपेक्षा मिथ्यात्व, बारहकषाय और नौ नोकषायोंके तीन पदोंका अन्तरकाल नहीं है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कका इसीप्रकार जानना। किन्तु इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य स्थिति-विभक्तिका जघन्य अन्तरकाल एकसमय और उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक चौबीस दिनरात है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिका अन्तरकाल नहीं है। भुजगार स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक चौबीस दिनरात है। इसी प्रकार अवक्तव्यस्थितिविभक्तिका भी कहना चाहिये। क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है। अवस्थित स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल असंख्यातलोक-प्रमाण है।

**शंका**—सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अवस्थित स्थितिविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तरकाल असंख्यातलोकप्रमाण क्यों है?

**समाधान**—क्योंकि असंख्यात लोकप्रमाण स्थितिबन्धाध्यवसायस्थानोंका अन्तर करानेपर वह अन्तरकाल प्राप्त होता है।

**शंका**—इस कथनका चूर्णिसूत्रके साथ विरोध क्यों नहीं होता है।

**समाधान**—विरोध तो होता ही है किन्तु जानकर जिस प्रकार अविरोध हो उस प्रकार कथन करना चाहिये।

इसीप्रकार तिर्यंच, काययोगी, औदारिककाययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चारों कषायवाले, असंयत, अचक्षुदर्शनवाले, कृष्णादि तीन लेश्यावाले, भव्य और आहारक जीवोंके जानना।

**विशेषार्थ**—यद्यपि चूर्णिसूत्रकारने सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्त्वकी अवस्थित स्थिति-विभक्तिका उत्कृष्ट अन्तरकाल अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण बतलाया है परन्तु यहाँ उच्चारणाके अभिप्रायानुसार वह अन्तरकाल असंख्यात लोकप्रमाण बतलाया गया है। सो यद्यपि इन दोनों कथनोंमें विरोध तो है फिर भी ऐसा मालूम होता है कि चूर्णिसूत्रकार स्थितिविकल्पोंके अन्तरका मूल कारण स्थितिबन्धके कारणभूत परिणामोंको नहीं स्वीकार करके उक्त कथन करते हैं और उच्चारणाचार्य स्थितिबन्धके विकल्पोंके अन्तरका कारण परिणामोंको स्वीकार करके उक्त कथन करते हैं। यही कारण है कि यहाँ इन दोनों प्ररूपणाओंमें मतभेद दिखलाई देता है। यदि यह निष्कर्ष ठीक है तो इसे विवक्षाभेद कहा जा सकता है। वीरसेन स्वामीने इस मतभेदका उल्लेख कर जो

§ १५६. आदेसेण य णेरइएसु मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० भुज० ज० एगसमओ, उक्क० अंतोमु०। सेस० ओघं। एवं सव्वणेरइय-पंचिंदियतिरिक्खतिय-मणुस्सतिय-देव० भवणादि जाव सहस्सार०-पंचिंदिय-पंचिं०पज्ज०-तस-तसपज्ज०-पंचमण०-पंचवचि०-वेउव्विय०-इत्थि०-पुरिस०-चक्खु०-तेउ०-पम्म०-सण्णि त्ति। पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० तिण्णि पदा णिरओघं। सम्म०-सम्मामि० अप्प० ओघं। एवं सव्वविगलिंदिय-पंचिं०अपज्ज०-बादरपुढविपज्ज०-बादरआउपज्ज०-बादरतेउपज्ज०-बादरवाउपज्ज०-बादरवणप्फदिपत्तेय०पज्ज०-तसअपज्ज०-विहंगणाणि त्ति। मणुसअपज्ज० मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० तिण्णिपदा० सम्मत्त-सम्मामि० अप्पद० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। एवं वेउव्वियमिस्स०। णवरि उक्कस्संतरं बारस मुहुत्ता।

इसमें सामंजस्य बिठानेकी सूचना की है उसका रहस्य यही प्रतीत होता है। इस प्रकार इन दोनों मतभेदोंका वास्तविक कारण क्या होना चाहिए इसका विचार किया।

§ १५६. आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगार स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तमुहूर्त है। शेष कथन ओघके समान है। इसी प्रकार सब नारकी, पंचेन्द्रिय तिर्यंचत्रिक, मनुष्यत्रिक, सामान्य देव, भवनवासियोंमे लेकर सहस्रार स्वर्गतकके देव, पंचेन्द्रिय, पचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस, त्रसपर्याप्त, पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी, वैक्रियिककाययोगी, स्त्रीवेदवाले, पुरुषवेदवाले, चक्षुदर्शनी, पीतलेश्यावाले, पद्मलेश्यावाले और संज्ञी जीवोंके जानना। पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके तीन पदोंका भंग सामान्य नारकियोंके समान है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतरस्थितिविभक्तिका भंग ओघके समान है। इसी प्रकार सब विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त, बादर पृथिवीकायिक पर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अग्निकायिक पर्याप्त, बादर वायुकायिक पर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर पर्याप्त, त्रसअपर्याप्त और विभंगज्ञानी जीवोंके जानना। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके तीन पदोंका तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार वैक्रियिकमिश्रकाययोगी जीवोंके जानना। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके उत्कृष्ट अन्तर बारह मुहूर्त है।

**विशेषार्थ**—नारकियोंमें मिथ्यात्व आदि २६ प्रकृतियोंकी भुजगार स्थिति विभक्तिके अन्तरमें ही विशेषता है शेष सब कथन ओघके समान है। विशेषताका उल्लेख ओघमें किया ही है। कुछ और मार्गणाएँ हैं जिनमें यह प्ररूपणा बन जाती है, अतः उनके कथनको सामान्य नारकियोंके समान बतलाया है। जैसे प्रथमादि नरकके नारकी आदि। पचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका एक अल्पतर पद ही होता है। परन्तु यहाँ ये दोनों प्रकृतियाँ निरन्तर पाई जाती हैं अतः यहाँ इन दोनों प्रकृतियोंके अल्पतर पदका अन्तरकाल नहीं पाया जाता। ओघसे भी यही बात प्राप्त होती है अतः इस कथनको ओघके समान बतलाया है। शेष कथन सामान्य नारकियोंके समान है यह स्पष्ट ही है। सब विकलेन्द्रिय आदि कुछ और मार्गणाएँ हैं जिनमें यह प्ररूपणा बन जाती है अतः उनके कथनको पचेन्द्रियतिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तकोंके समान बतलाया है। मनुष्य लब्ध्यपर्याप्त यह सान्तर मार्गणा है। इसका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसलिये यहाँ सब प्रकृतियोंके अपने अपने सम्भव पदोंका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल उक्तप्रमाण बतलाया है। इसी प्रकार वैक्रियिकमिश्रकाययोगमें

§ १५७. आणदादि जाव उवरिमगेवज्जो त्ति अणंताणु०चउक्क० अवत्तव्व० सम्मत्त०-सम्मामि० भुज०-अप्पदर०-अवट्ठिद०-अवत्तव्व० ओघं। सेसपयडि० अप्पदर० णत्थि अंतरं। एवं सुक्क०। अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठ० सव्वपय० अप्पदर० णत्थि अंतरं। एवमाभिणि०-सुद०-ओहि० मणपज्ज०-संजद०-सामाइय-छेदो०-परिहार०-संजदासंजद०-ओहिदंस०-सम्मादि०-खइय० वेदय०दिट्ठि त्ति।

§ १५८. एइंदिएसु सव्वपयडी० सव्वपदाणं णत्थि अंतरं। एवं बादरसुहुमेइंदियपज्जत्तापज्जत्त-बादरपुढविअपज्ज०-सुहुमपुढविपज्जत्तापज्जत्त-बादरआउअपज्ज-सुहुमआउपज्जत्तापज्जत्त-बादरतेउअपज्ज०-सुहुमतेउपज्जत्तापज्जत्त-बादरवाउअपज्ज०-सुहुमवाउपज्जत्तापज्जत्त-बादरवणप्फदि०-सुहुमवणप्फदि-बादरणिगोद०-सुहुमणिगोदपज्जत्तापज्जत्त-बादरवणप्फदिपत्तेयअपज्ज०-ओरालियमिस्स०मदि०-सुद०-मिच्छादि० असण्णि त्ति।

जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि वैक्रियिकमिश्रकाययोगका उत्कृष्ट अन्तरकाल बारह मुहूर्त है इसलिये यहाँ सब पदोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल बारह मुहूर्त बतलाया है।

§ १५७. आनत कल्पसे लेकर उपरिम ग्रैवेयकतकके देवोंमें अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अवक्तव्य स्थितिविभक्ति तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार, अल्पतर, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका अन्तर ओघके समान है। तथा शेष प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका अन्तर नहीं है। इसी प्रकार शुक्ललेश्यावाले जीवोंके जानना। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका अन्तर नहीं है। इसी प्रकार आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापना- संयत, परिहारविशुद्धिसंयत, संयतासंयत, अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि और वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना।

**विशेषार्थ**—आनतसे लेकर उपरिम ग्रैवेयकतकके देवोंमें अनन्तानुबन्धी चतुष्कके अल्पतर और अवक्तव्य ये दो पद, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके चारों पद तथा शेष प्रकृतियोंका एक अल्पतर पद ही प्राप्त होता है। यहाँ सब प्रकृतियोंका अल्पतर पद तो सदा पाया जाता है इसलिये इसका अन्तरकाल नहीं बतलाया। अब रहे पूर्वोक्त शेष पद सो इनका ओघके समान अन्तरकाल यहाँ भी बन जाता है। कारण स्पष्ट है। शुक्ललेश्यामें भी यह व्यवस्था प्राप्त होती है इसलिये इसके कथनको आनतादिकके समान बतलाया है। अनुदिशादिकमें सम्यग्दृष्टि जीव ही होते हैं, अतः उनके सब प्रकृतियोंका निरन्तर एक अल्पतर पद ही होता है इसलिये इसका अन्तरकाल नहीं कहा। आगे आभिनिबोधिकज्ञानी आदि और जितनी मार्गणाएँ गिनाई हैं उनमें भी एक अल्पतर पद ही होता है, अतः उनका कथन अनुदिश आदिके समान जाननेकी सूचना की है।

§ १५८. एकेन्द्रियोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंका अन्तरकाल नहीं है। इसीप्रकार बादर एकेन्द्रिय तथा इनके पर्याप्त और अपर्याप्त, सूक्ष्म एकेन्द्रिय तथा इनके पर्याप्त और अपर्याप्त, बादर पृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म पृथिवीकायिक तथा उनके पर्याप्त और अपर्याप्त, बादर जलकायिक तथा उनके अपर्याप्त, सूक्ष्म जलकायिक तथा उनके पर्याप्त और अपर्याप्त, बादर अग्निकायिक तथा उनके अपर्याप्त, सूक्ष्म अग्निकायिक तथा उनके पर्याप्त और अपर्याप्त, बादर वायुकायिक तथा उनके अपर्याप्त, सूक्ष्म वायुकायिक तथा उनके पर्याप्त और अपर्याप्त, बादर वनस्पति कायिक, सूक्ष्म वनस्पति कायिक, बादर निगोद और सूक्ष्म निगोद तथा इन सबके पर्याप्त और

**§ १५६. आहार०-आहारमिस्स० सव्वपयडी० अप्पदर० जह० एगसमओ, उक्क० वासपुधत्तं। एवमकसा०-जहाक्खादसंजदे त्ति। कम्मइय० ओरालियमिस्सभंगो। णवरि सम्मत्त०-सम्मामि० अप्पद० ज० एगसमओ, उक्क० अंतोमु०। एवमणाहारीणं।**

**§ १६०. अवगद० मिच्छत्त-सम्मत्त सम्मामि०-अट्ठक० अप्प० ज० एगस०, उक्क० वासपुधत्तं। एवमट्ठणोकसायाणं। पुरिस०-चदुसंज० अप्पद० ज० एगस०, उक्क० छम्मासा। सुहुम० लोभसंज० अवगदवेदभंगो। दंसणतिय-एक्कारसक०-णवणोक० अकसायभंगो। अभवसि० छव्वीसं पयडीणं मदि०भंगो।**

अपर्याप्त, बादर वनस्पति कायिक प्रत्येकशरीर और उनके अपर्याप्त, औदारिकमिश्रकाययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, मिथ्यादृष्टि और असंज्ञी जीवोंके जानना चाहिए।

**विशेषार्थ**—एकेन्द्रियोंका प्रमाण अनन्त है इसलिये उनमें मिथ्यात्व आदि प्रकृतियोंके यथासम्भव पदोंका अन्तरकाल नहीं प्राप्त होता। यद्यपि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्तावाले जीव असंख्यात ही हैं फिर भी इनका यहाँ एक अल्पतर पद ही है अतः इसका भी अन्तर काल नहीं प्राप्त होता। बादर एकेन्द्रिय आदि मूलमें और जितनी मार्गणाएँ गिनाई हैं उनमें भी यही व्यवस्था प्राप्त होती है।

§ १५६. आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें सब प्रकृतियोंके अल्पतर-पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है। इसी प्रकार अकषायी और यथाख्यातसंयत जीवोंके जानना चाहिए। कार्मणकाययोगी जीवोंमें औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अल्पतर पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए।

**विशेषार्थ**—आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोगका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है। तथा इन योगोंमें सब प्रकृतियोंका एक अल्पतर पद ही होता है। इसलिये इन दोनों योगोंमें सब प्रकृतियोंके अल्पतर पदका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल उक्त प्रमाण कहा है। अकषायी और यथाख्यातसंयत जीवोंके सब प्रकृतियोंका अल्पतर पद उपशम श्रेणिमें ही प्राप्त होता है और उपशम श्रेणिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल उक्तप्रमाण है अतः इन दोनों मार्गणाओंमें सब प्रकृतियोंके अल्पतर पदका अन्तरकाल पूर्वोक्त प्रमाण बतलाया है। कार्मण-काययोगमें औदारिकमिश्रकाययोगसे जो विशेषता है वह सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतियोंके सम्बन्धमें है। बात यह है कि कार्मणकाययोगका प्रत्येक जीवकी अपेक्षा जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल तीन समय है। अब यदि नाना जीवोंकी अपेक्षा भी विचार किया जाता है तो इसमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अन्तरकाल प्राप्त हो जाता है जो औदारिकमिश्रकाययोगमें नहीं प्राप्त होता। यही कारण है कि यहाँ जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त बतलाया है। अनाहारक अवस्था कार्मणकाययोगकी अविनाभाविनी है इसलिये इनका कथन भी कार्मणकाययोगियोंके समान बतलाया है।

§ १६०. अपगतवेदी जीवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और आठ कषायके अल्प-तरपदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है। इसी प्रकार आठ नोक-षायोंके अल्पतर पदका अन्तर काल जानना चाहिए। पुरुषवेद और चार संज्वलनके अल्पतर पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है। सूक्ष्मसाम्परायसंयत जीवोंमें लोभसंज्वलनका भङ्ग अपगतवेदी जीवोंके समान है। तीन दर्शनमोहनीय, ग्यारह कषाय और नौ

§ १६१. उवसम० सव्वपयडी० अप्पदर० ज० एगस०, उक्क० चउवीस अहोरत्ते सादिरेगे। सासण०-सम्मामि० सव्वपयडि० अप्प० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो।

एवमंतराणुगमो समत्तो।

§ १६२. भावाणुगमेण दुविहो णिद्देसो–ओघे० आदेसे०। ओघेण[1] सव्वपयडिसव्वपदाणं को भावो? ओदइओ भावो। ण उवसंतकसायअप्पदरेण वियहिचारो, तत्थ वि

नोकषायका भङ्ग अकषायी जीवोंके समान है। अभव्य जीवोंमें छब्बीस प्रकृतियोंका भङ्ग मत्यज्ञानी जीवोंके समान है।

**विशेषार्थ**—अवगतवेदमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और आठ कषायोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका अन्तरकाल उपशम श्रेणिमें ही प्राप्त होता है। तथा उपशमश्रेणिका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल वर्षपृथक्त्व है। इसलिये अवगतवेदमें उक्त प्रकृतियोंका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल उक्तप्रमाण बतलाया है। आठ नोकषायोंका अन्तरकाल क्षपकश्रेणिमें भी बन जाता है पर यह यथासम्भव नपुंसकवेद और स्त्रीवेदकी अपेक्षा क्षपकश्रेणि पर चढ़े हुए अपगतवेदी जीवोंके ही प्राप्त होता है। पर क्षपकश्रेणिकी अपेक्षा ऐसे अपगतवेदियोंका वही अन्तरकाल है जो उपशमश्रेणिका पूर्वमें बतलाया है। इसलिये आठ नोकषायोंके अल्पतर पदका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल उक्तप्रमाण कहा है। अब रहा पुरुषवेद और चार संज्वलनोंका अल्पतरपद सो यह पुरुषवेदमें अपगतवेदी हुए जीवोंके भी होता है। तथा क्षपकश्रेणिकी अपेक्षा ऐसे जीवोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल छह महीनासे अधिक नहीं है। अतः उक्त प्रकृतियोंके अल्पतर पदका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल छह महीना बतलाया है। सूक्ष्मसम्पराय संयममें लोभ संज्वलनका सत्त्व क्षपकश्रेणिमें भी है, अतः इसका अन्तरकाल अपगतवेदियोंके समान बतलाया। किन्तु शेष प्रकृतियोंका सत्त्व उपशमश्रेणिमें ही होता है, इसलिये इनका अन्तरकाल अकषायियोंके समान बतलाया है।

§ १६१. उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन रात है। सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंमें सब प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्योपमके असंख्यातवें भाग प्रमाण है।

**विशेषार्थ**—उपशम सम्यक्त्वका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल चौबीस दिन रात है, इसलिये इनमें सब प्रकृतियोंके अल्पतर पदका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक चौबीस दिन रात बतलाया है। सासादन सम्यक्त्वका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण बतलाया है। यही कारण है कि इसमें सब प्रकृतियोंके अल्पतर पदका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल उक्तप्रमाण कहा है।

इस प्रकार अन्तरानुगम समाप्त हुआ।

§ १६२. भावानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश। ओघसे सब प्रकृतियोंके सब पदोंका कौन भाव है? औदयिक भाव है। यदि कहा जाय कि इस

[1] ता०प्रतौ 'ओघेण' इति पाठो नास्ति।

णाणावरणादीणमुदयदंसणादो। जेण विणा जं ण होदि तं तस्से त्ति ववहारदंसणादो। एवं णेदव्वं जाव अणाहारए त्ति।

एवं भावाणुगमो समत्तो।

*** सण्णियासो।**

१६३. सुगममेदं; अहियारसंभालणहेउत्तादो[1]।

*** मिच्छत्तस्स जो भुजगारकम्मंसिओ सो सम्मत्तस्स सिया अप्पदर-कम्मंसिओ सिया अकम्मंसिओ।**

§ १६४. जदि सम्मत्तस्स संतकम्ममत्थि तो मिच्छत्तभुजगारकम्मंसियम्मि सम्मत्तस्स णियमा अप्पदरट्ठिदिविहत्ती होदि; पढमसमयसम्मादिट्ठिं मोत्तूणण्णत्थ भुजगार-अवट्ठिद-अवत्तव्वाणं सम्मत्तगोयराणमभावादो। जदि अकम्मंसिओ तो णत्थि सण्णियासो, संतेण असंतस्स सण्णियासविरोहादो।

*** एवं सम्मामिच्छत्तस्स वि।**

तरह उपशान्तकषाय जीवके अल्पतरपदके साथ व्यभिचार हो जायगा, क्योंकि वहां पर उपशम भाव पाया जाता है, सो भी बात नहीं है, क्योंकि वहाँ पर भी ज्ञानावरणादि कर्मोंका उदय देखा जाता है। तथा जो जिसके बिना न हो वह उसका है ऐसा व्यवहार भी देखा जाता है। इस प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये।

**विशेषार्थ**—उपशान्तकषाय गुणस्थानमें मोहनीयका उपशम होनेसे इस अपेक्षासे उपशम भाव है, फिर भी वहाँ मोहनीयके अल्पतर पदका औदयिक भाव कहा गया है। यद्यपि वीरसेन स्वामीने यहाँ अन्य ज्ञानावरणादि कर्मोंके उदयको स्वीकार कर अल्पतर पदके औदयिक भावका समर्थन किया है फिर भी मोहनीयका उदय न होनेसे मोहनीयके अवान्तर भेदोंके अल्पतर पदका औदयिक भाव कैसे बनेगा यह विचारणीय है। मालूम पड़ता है कि अन्यत्र सर्वत्र मोहनीयका उदय देखकर यहाँ भी उसका उपचार किया गया है। कारणका निर्देश वीरसेन स्वामीने स्वयं किया है।

इस प्रकार भावानुगम समाप्त हुआ।

*** अब सन्निकर्षानुगमका अधिकार है।**

§ १६३. यह सूत्र सुगम है; क्योंकि इसका फल अधिकारकी सम्हाल करनामात्र है।

*** जो मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिसत्कर्मवाला है वह कदाचित् सम्यक्त्वकी अल्पतरस्थितिसत्कर्मवाला है और कदाचित् सम्यक्त्वसत्कर्मसे रहित है।**

§ १६४. यदि सम्यक्त्वकर्मका अस्तित्व है तो मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिविभक्तिके होने पर सम्यक्त्वकी नियमसे अल्पतर स्थितिविभक्ति होती है; क्योंकि सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयको छोड़कर अन्यत्र सम्यक्त्व प्रकृतिके भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य पद नहीं होते हैं। यदि सम्यक्त्व सत्कर्मसे रहित है तो सन्निकर्ष नहीं होता, क्योंकि सत्के साथ असत्का सन्निकर्ष माननेमें विरोध आता है।

*** इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वका भी सन्निकर्ष जानना चाहिए।**

[1] ता० आ० प्रत्योः –संभालणहेउत्तादो इति पाठः।

§ १६५. जहा सम्मत्तेण सण्णियासो कदो, तहा सम्मामिच्छत्तेण वि कायव्वो; विसेसाभावादो।

* सेसाणं णेदव्वो[1]।

§ १६६. सेसाणं कम्माणं सण्णियासो जाणिदूण णेदव्वो[2]। तं जहा—मिच्छत्तस्स जो भुजगारविहत्तिओ सो सोलसकसाय-णवणोकसायाणं सिया भुजगारविहत्तिओ सिया अप्पदरविहत्तिओ सिया अवट्ठिदविहत्तिओ। एवं मिच्छत्तअवट्ठिदस्स वि वत्तव्वं। मिच्छत्त० अप्पदरस्स जो विहत्तिओ तस्स सम्मत्तट्ठिदिसंतकम्मं सिया अत्थि सिया णत्थि। जदि अत्थि तो सिया अप्पदरविहत्तिओ सिया भुजगारविहत्तिओ सिया अवट्ठिदविहत्तिओ सिया अवत्तव्वविहत्तिओ। एवं सम्मामिच्छत्तस्स वि सण्णियासो कायव्वो। बारसकसाय-णवणोकसायाणं सिया भुजगारविहत्तिओ सिया अप्पदरवि० सिया अवट्ठिदवि०। एवमणंताणुबंधिचउक्काणं। णवरि सिया अवत्तव्वविहत्तिओ सिया अविहत्तिओ वि।

§ १६५. जिस प्रकार सम्यक्त्वके साथ सन्निकर्ष किया उसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वके साथ भी करना चाहिये, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है।

* शेष कर्मोंका सन्निकर्ष यथायोग्य जानना चाहिये।

§ १६६. शेष कर्मोंका सन्निकर्ष जानकर कथन करना चाहिये। इसका खुलासा इस प्रकार है—जो मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिविभक्तिवाला है वह सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी कदाचित् भुजगार स्थितिविभक्तिवाला है, कदाचित् अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है और कदाचित् अवस्थित स्थितिविभक्तिवाला है। इसी प्रकार मिथ्यात्वकी अवस्थित स्थितिविभक्तिकी अपेक्षा भी कथन करना चाहिये। जो मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है उसके सम्यक्त्व स्थितिसत्कर्म कदाचित् है और कदाचित् नहीं है। यदि है तो वह मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला जीव सम्यक्त्व-की कदाचित् अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है, कदाचित् भुजगार स्थितिविभक्तिवाला है कदाचित् अवस्थित स्थितिविभक्तिवाला है और कदाचित् अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाला है। इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वका भी सन्निकर्ष कहना चाहिये। बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी कदाचित् भुज-गारस्थितिविभक्तिवाला है, कदाचित् अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है और कदाचित् अवस्थित स्थितिविभक्तिवाला है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धी चतुष्कका सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि वह इस अपेक्षा कदाचित् अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाला है और कदाचित् अनन्ता-नुबन्धीचतुष्कसे रहित है।

**विशेषार्थ**—सन्निकर्ष संयोगका नाम है। प्रकृतमें यह विचार किया है कि किस प्रकृतिकी किस स्थितिके रहते हुए तदन्य प्रकृतिकी कौन-सी स्थिति हो सकती है। पहले मिथ्यात्वको मुख्य मानकर उसकी भुजगार आदि स्थितियोंके साथ अन्य प्रकृतियोंकी भुजगार आदि स्थितियोंका संयोग बतलाया गया है। यथा—मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका सत्त्व है भी और नहीं भी है। मिथ्यात्वकी भुजगार स्थिति मिथ्यात्व गुणस्थानमें होती है। अब

1. ता० प्रतौ सूत्रमिदं नापनिबद्धम्।
2. ता० प्रतौ सेसाणं कम्माणं सण्णियासो जाणिदूण णेदव्वो इत्यय टीकांशः सूत्रत्वेनोपनिबद्धः।

§ १६७. **सम्मत्तस्स जो भुजगारविहत्तिओ सो मिच्छत्त-सोलसकसाय-णवणोकसायाणं णियमा अप्पदरविहत्तिओ। सम्मामिच्छत्तस्स णियमा भुजगारविहत्तिओ। एवं**

जिस मिथ्यादृष्टिने सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना कर दी है उसके मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिके रहते हुए इन दोनोंका सत्त्व नहीं होता। और जिसने उद्वेलना नहीं की है उसके सत्त्व होता है। किन्तु मिथ्यात्व गुणस्थानमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी एक अल्पतर स्थिति ही होती है, क्योंकि इन दोनों प्रकृतियोंकी शेष स्थितियाँ सम्यक्त्वको प्राप्त करनेके प्रथम समयमें ही होती हैं। इसलिये सिद्ध हुआ कि मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिके समय सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका यदि सत्त्व है तो एक अल्पतर स्थिति होती है। अब रहे सोलह कषाय और नौ नोकषाय सो मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिके समय इनकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित ये तीनों स्थितियाँ सम्भव हैं क्योंकि किसी एक कर्मका जितना स्थितिबन्ध होता है तदन्य कर्मका आबाधाकाण्डकके भीतर न्यूनाधिक रूपसे बन्ध होता रहता है। इसलिये मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिके समय सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित ये तीनों पद सम्भव हैं। इस प्रकार मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिकी अपेक्षा सन्निकर्षका विचार किया। मिथ्यात्वकी अवस्थित स्थितिको मुख्य मानकर भी सन्निकर्ष पहलेके समान ही प्राप्त होता है इसलिये उसका अलगसे निर्देश नहीं करते हैं। अब रही मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिको मुख्य मानकर विचार करनेकी बात सो इसके रहते हुए सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अस्तित्व है और नहीं भी है। जिसने उद्वेलना कर दी है उसके नहीं है शेषके है। पर ऐसे जीवके मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिके रहते हुए सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर भुजगार अवस्थित और अवक्तव्य ये चारो स्थितियाँ सम्भव हैं। इनमेंसे भुजगार अवस्थित और अवक्तव्य तो सम्यक्त्वको प्राप्त होनेके प्रथम समयमें ही होते हैं। अल्पतर पद सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टि किसीके भी होता है। बारह कषाय और नौ नोकषायोंके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित ये तीनों पद होते हैं, क्योंकि मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिके समय उक्त प्रकृतियोंके तीन पद होनेमें कोई बाधा नहीं आती। तथा अनन्तानुबन्धी चतुष्क है भी और नहीं भी है। जिसने विसंयोजना कर दी है उसके नहीं है शेषके है। यदि है तो इसके भुजगार आदि चारो पद सम्भव हैं। कारण स्पष्ट है।

उक्त विशेषताओंका ज्ञापक कोष्ठक—

| मिथ्यात्व | भुजगार (में) | अवस्थित (में) | अल्पतर (में) |
|---|---|---|---|
| सम्यक्त्व व सम्यग्मिथ्यात्व | नहीं भी है। यदि है तो अल्पतर पद | नहीं भी है यदि है तो अल्पतर पद | नहीं भी है यदि है तो चारो पद |
| अनन्तानुबन्धी | भुजगार, अल्पतर व अवस्थित | भुजगार, अल्पतर व अवस्थित | नहीं है यदि है तो चारो पद |
| १२ कषाय और ९ कषाय | भुजगार, अल्पतर व अवस्थित | भुजगार, अल्पतर व अवस्थित | भुजगार, अल्पतर व अवस्थित |

§ १६७. जो सम्यक्त्वकी भुजगार स्थितिविभक्तिवाला है वह मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी नियमसे अल्पतरस्थितिविभक्तिवाला है। तथा सम्यग्मिथ्यात्वकी नियमसे भुजगार

**सम्मत्तस्स अवट्ठिद-अवत्तव्वाणं पि सण्णियासो कायव्वो। णवरि सम्मत्तस्स जो अवट्ठिद-विहत्तिओ सो सम्मामिच्छत्तस्स वि णियमा अवट्ठिदविहत्तिओ। जो सम्मत्तस्स अवत्तव्व-विहत्तिओ सो सम्मामिच्छत्तस्स सिया भुजगारविहत्तिओ सिया अवत्तव्वविहत्तिओ। सम्मत्तस्स जो अप्पदरविहत्तिओ सो मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोकसायाणं सिया भुज० सिया अप्पद० सिया अवट्ठि०विहत्तिओ। अणंताणु०चउक० अवत्तव्वस्स सिया विहत्तिओ। सम्मामि० णिय० अप्पदरविहत्तिओ। णवरि मिच्छत्त-सम्मामि०-अणंताणु०४ सिया अविहत्तिओ वि। एवं सम्मामिच्छत्तस्स[1] वि सण्णियासो कायव्वो। णवरि सम्मामि० जो अप्पदरसंतकम्मिओ सो सम्मत्तस्स सिया संतकम्मिओ। सम्मामिच्छत्तस्स जो अवत्तव्वविहत्तिओ सो सम्मत्तस्स णियमा अवत्तव्वविहत्तिओ।**

स्थितिविभक्तिवाला है। इसी प्रकार सम्यक्त्वके अवस्थित और अवक्तव्य पदोंका भी सन्निकर्ष करना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि जो सम्यक्त्वकी अवस्थितस्थितिविभक्तिवाला है वह सम्यग्मिथ्यात्वकी भी नियमसे अवस्थितस्थितिविभक्तिवाला है। तथा जो सम्यक्त्वकी अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाला है वह सम्यग्मिथ्यात्वकी कदाचित् भुजगार स्थितिविभक्तिवाला है और कदाचित् अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाला है। तथा जो सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है वह मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी कदाचित् भुजगार स्थितिविभक्तिवाला है, कदाचित् अल्पतरस्थितिविभक्तिवाला है और कदाचित् अवस्थित स्थितिविभक्तिवाला है। तथा अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी कदाचित् अवक्तव्यस्थितिविभक्तिवाला भी है और सम्यग्मिथ्यात्वकी नियमसे अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है। किन्तु इतनी विशेषता है कि वह जीव कदाचित् मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्कके सत्कर्मसे रहित भी है। इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा भी सन्निकर्ष करना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि जो सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है वह कदाचित् सम्यक्त्वसत्कर्मवाला है और कदाचित् उससे रहित है। तथा जो सम्यग्मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाला है वह नियमसे सम्यक्त्वकी अवक्तव्य स्थिति-विभक्तिवाला है।

**विशेषार्थ**—अब सम्यक्त्वके भुजगार आदि पदोंको मुख्य मानकर सयोगका विचार करते हैं। सम्यक्त्वके भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्यपद सम्यक्त्वको प्राप्त होनेके प्रथम समयमें होते हैं। किन्तु इस समय मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंका एक अल्पतर पद ही होता है क्योंकि विशुद्धिके कारण उक्त प्रकृतियोंकी उत्तरोत्तर अल्प स्थिति होती जाती है। अतः सिद्ध हुआ कि सम्यक्त्वके उक्त तीन पदोंमें मिथ्यात्व सोलह कषाय और नौ नो कषायोंका एक अल्पतर पद होता है। अब रही सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति सो इसका वही पद होता है जो सम्यक्त्वका होता है। अर्थात् सम्यक्त्वके भुजगारमें सम्यग्मिथ्यात्वका भुजगार पद होता है। सम्यक्त्वके अवस्थित पदमें सम्यग्मिथ्यात्वका अवस्थितपद होता है और सम्यक्त्वके अवक्तव्य पदमें सम्यग्मिथ्यात्वका अवक्तव्य पद होता है। किन्तु इसका एक अपवाद है। बात यह है कि सम्यक्त्वकी उद्वेलना हो जानेपर भी सम्यग्मिथ्यात्वका सत्त्व बना रहता है। अब यदि ऐसे जीवने सम्यक्त्वको प्राप्त किया तो उसके सम्यक्त्वके अवक्तव्य पदमें सम्यग्मिथ्यात्वका भुजगार पद भी बन जाता है। इसलिये सिद्ध हुआ कि सम्यक्त्वके अवक्तव्य पदमें सम्यग्मिथ्यात्वके अवक्तव्य और भुजगार ये दो पद होते हैं। अब

१ ता० प्रतौ सम्मत्तसम्मा- मिच्छत्तस्स इति पाठः।

रही सम्यक्त्वके अल्पतर पदको मुख्य मानकर सन्निकर्षके विचार करनेकी बात सो ऐसी अवस्थामें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके सब पद सम्भव हैं कारण स्पष्ट है। किन्तु सम्यग्मिथ्यात्वका एक अल्पतर पद ही होता है। तथा जिसने अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना और मिथ्यात्व तथा सम्यग्मिथ्यात्वकी क्षपणा कर ली है उसके सम्यक्त्वका अल्पतरपदके रहते हुए उक्त प्रकृतियोंका अभाव भी होता है, क्योंकि सम्यक्त्वकी क्षपणा सबके अन्तमें होती है, इसलिये सम्यक्त्वके रहते हुए भी इनका अभाव हो जाता है। इस प्रकार सम्यक्त्वको मुख्य मानकर सन्निकर्षका विचार किया। अब यदि सम्यग्मिथ्यात्वको मुख्य मानकर सन्निकर्षका विचार किया जाता है तो यही स्थिति प्राप्त होती है। किन्तु कुछ विशेषता है। बात यह है कि सम्यक्त्वकी उद्वेलना पहले हो जाती है और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना उसके बाद होती है। तथा ऐसे समयमें दोनों प्रकृतियोंकी अल्पतर स्थिति ही होती है। अतः सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थिति के समय सम्यक्त्वकी सत्ता होती भी है और नहीं भी होती है। यदि सत्ता होती है तो अल्पतर स्थिति ही पाई जाती है। तथा जिसने सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना कर ली है उसके सम्यक्त्व की उद्वेलना पहले हो जाती है, अतः सम्यग्मिथ्यात्वकी अवक्तव्य स्थितिमें सम्यक्त्वकी नियमसे अवक्तव्य स्थिति होती है।

अब सम्यक्त्वको मुख्य मानकर उक्त विशेषताओंका ज्ञापक कोष्ठक देते हैं—

| सम्यक्त्व | भुजगार | अवस्थित | अवक्तव्य | अल्पतर |
|---|---|---|---|---|
| सम्यग्मिथ्यात्व | भुजगार | अवस्थित | भुजगार या अवक्तव्य | नहीं है, यदि है तो अल्पतर |
| मिथ्यात्व | अल्पतर | अल्पतर | अल्पतर | नहीं है यदि है तो भुजगार, अल्पतर और अवस्थित |
| अनन्तानुबन्धी | अल्पतर | अल्पतर | अल्पतर | नहीं है, यदि है तो चारों पद |
| १२ कषाय और ९ नोकषाय | अल्पतर | अल्पतर | अल्पतर | भुजगार, अल्पतर और अवस्थित |

अब सम्यग्मिथ्यात्वको मुख्य मानकर उक्त विशेषताओंका ज्ञापक कोष्ठक देते हैं—

| सम्यग्मिथ्यात्व | भुजगार | अवस्थित | अवक्तव्य | अल्पतर |
|---|---|---|---|---|
| सम्यक्त्व | भुजगार | अवस्थित | अवक्तव्य | नहीं है यदि है तो अल्पतर |
| मिथ्यात्व | अल्पतर | अल्पतर | अल्पतर | नहीं है यदि है तो तीनों पद |
| अनन्तानुबन्धी | अल्पतर | अल्पतर | अल्पतर | नहीं है, यदि है तो चारों पद |
| १२ कषाय और ९ नोकषाय | अल्पतर | अल्पतर | अल्पतर | तीनों पद |

**§ १६८. अणंताणु०कोध० जो भुजगारविहत्तिओ सो मिच्छत्त-पण्णारसक० णव-णोकसायाणं सिया भुजगारविहत्तिओ सिया अप्पदरविहत्तिओ सिया अवट्ठिदविहत्तिओ। समत्त-सम्मामिच्छत्ताणि सिया अत्थि सिया णत्थि। जदि अत्थि णियमा अप्पदर-विहत्तिओ। एवमवट्ठिदस्स वि वत्तव्वं। अणंताणु०कोध० अवत्तव्वस्स जो विहत्तिओ सो मिच्छत्त बारसक०-णवणोकसायाणं णियमा अप्पदरविहत्तिओ। तिण्हं कसायाणं णियमा[1] अवत्तव्वविहत्तिओ। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं णियमा अप्पदरविहत्तिओ। अणं-ताणु०कोध० जो अप्पदरविहत्तिओ सो मिच्छत्त-पण्णारसक०-णवणोकसायाणं सिया भुज० अप्पदर० अवट्ठिदविहत्तिओ। सम्म०-सम्मामि० सिया विह० सिया अविह०। जइ विहत्तिओ सिया भुज० अप्पद० सिया अवट्ठि० सिया अवत्तव्वविहत्तिओ। एवमणंताणु०माण माया-लोहाणं। एवं बारसक० णवणोकसायाणं। णवरि एदेसिमप्प० विह० मिच्छ०-अणंताणु ४ अविहत्तिओ वि। अणंताणु०४ अवत्तव्व० मिच्छत्तणेव णेदव्वं। एवं च खवगोवसमं सेढिविवक्खमकादूण वुत्तं। तव्विवक्खाए पुण अण्णो वि विसेसो अत्थि सो जाणिय णेदव्वो।**

§ १६८. अनन्तानुबन्धी क्रोधकी जो भुजगार स्थितिविभक्तिवाला है वह मिथ्यात्व, पन्द्रह कषाय और नौ नोकषायोंकी कदाचित भुजगारस्थितिविभक्तिवाला है, कदाचित् अल्पतर स्थिति-विभक्तिवाला है और कदाचित अवस्थित स्थितिविभक्तिवाला है। इसके सम्यक्त्व और सम्य-ग्मिथ्यात्व कदाचित हैं और कदाचित नहीं है। यदि हैं तो वह उनकी नियमसे अल्पतर स्थिति-विभक्तिवाला है। इसी प्रकार अवस्थित स्थितिविभक्तिकी अपेक्षा भी कथन करना चाहिये। अनन्तानुबन्धी क्रोधकी जो अवक्तव्यस्थितिविभक्तिवाला है वह मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी नियमसे अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है। अनन्तानुबन्धी मान आदि तीन कषायोंकी नियमसे अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाला है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी नियमसे अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है। जो अनन्तानुबन्धी क्रोधकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है वह मिथ्यात्व, पन्द्रह कषाय और नौ नोकषायोंकी कदाचित भुजगार, अल्पतर और अवस्थित स्थितिविभक्तिवाला है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी कदाचित स्थितिविभक्तिवाला है और कदाचित् नहीं है। यदि है तो कदाचित् भुजगार स्थितिविभक्तिवाला, कदाचित् अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला, कदाचित् अवस्थित स्थितिविभक्तिवाला और कदाचित अवक्तव्य स्थिति-विभक्तिवाला है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धी मान, माया और लोभकी अपेक्षा जानना चाहिए। इसी प्रकार बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अपेक्षा जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवके मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्क की अविभक्ति भी होती है और इनके अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका भंग मिथ्यात्वके समान जानना चाहिये। इस प्रकार क्षपक और उपशमश्रेणीकी विवक्षा न करके यह कथन किया है। उनकी विवक्षा करने पर तो और भी विशेषता है सो जानकर कहना चाहिये।

**विशेषार्थ**—पहले मिथ्यात्व आदि प्रकृतियोंको मुख्य मानकर सन्निकर्षका विचार किया। इसी प्रकार अपनी अपनी विशेषताको जानकर अनन्तानुबन्धी आदि प्रकृतियोंको मुख्य मानकर

---

१ ता० प्रतौ –याण पि णियमा इति पाठः।

§ १६६. आदे० णेरइय० एवं चेव । णवरि सम्मामि० अप्प० विह० मिच्छ० णिय० अत्थि । एवं पढमाए । विदियादि जाव सत्तमा त्ति एवं चेव । णवरि सम्म० अप्प० मिच्छ०-सम्मामि० णिय० अत्थि । बारसक०-णवणोक० अप्प० मिच्छ० णिय० अत्थि । तिरिक्ख०-पंचिं०तिरिक्खतिय-देवा भवणादि जाव सहस्सार त्ति णारयभंगो । णवरि जोणिणि-भवण०-वाण०वेंतर-जोदिसियाणं विदियपुढविभंगो । मणुसतिय-

सन्निकर्षको घटित कर लेना चाहिये जो मूलमें बतलाया ही है । यहाँ केवल उन विशेषताओंका ज्ञापक कोष्ठक दिया जाता है—

अब अनन्तानुबन्धी कषायको मुख्य मानकर सन्निकर्षका कोष्ठक देते हैं—

| अनन्तानुबन्धी क्रोध | भुजगार | अवस्थित | अवक्तव्य | अल्पतर |
|---|---|---|---|---|
| अनन्तानुबन्धी मानआदि | भुजगार, अल्पतर और अव. | अवस्थित भुज० और अल्प. | अवक्तव्य | अल्पतर भुज० और अव० |
| १२ कषाय नौ नोक. और मिथ्यात्व | भुज० अल्प० और अव० | भुज० अल्प० और अव० | अल्पतर | भुज० अल्प और अवस्थित |
| सम्यक्त्व सम्यग्मि. | नहीं हैं यदि हैं तो अल्पतर | नहीं हैं यदि हैं तो अवस्थित | अल्पतर | नहीं हैं यदि हैं तो भुज० अल्प० अव० |

अब १२ कषाय और ९ नोकषायोंको मुख्य मानकर सन्निकर्षका कोष्ठक देते हैं—

| १२ कषाय और ९ नोकषाय | भुजगार | अल्पतर | अवस्थित |
|---|---|---|---|
| अनन्तानुबन्धी | भुज० अल्प० अव० | नहीं हैं यदि हैं तो भुज० अल्प० अव० अवक्तव्य | भुज० अल्प० अव० |
| मिथ्यात्व | भुज० अल्प० अव० | नहीं है यदि है तो भुज० अल्प० अव० | भुज० अल्प० अव० |
| सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व | नहीं हैं यदि हैं तो अल्पतर | नहीं हैं यदि हैं तो भुज० अल्प० अव० | नहीं हैं यदि हैं तो अल्पतर |

§ १६९. आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें इसी प्रकार जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवके मिथ्यात्व नियमसे है । इसी प्रकार पहली पृथिवीमें जानना चाहिए । दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवी तक भी इसी प्रकार जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवके मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व नियमसे है । बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवके मिथ्यात्व नियमसे है । तिर्यंच, पंचेन्द्रिय तिर्यंचत्रिक, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार स्वर्ग तकके देवोंके

**पंचिंदिय-पंचिं०पज्ज०-तस-तसपज्ज०-पंचमण०-पंचवचि०-कायजोगि-ओरालिय०-वेउव्विय०-तिण्णिवेद०-चत्तारिक०-असंजद०-चक्खु०-अचक्खु०-पंचले०-भवसि०-सण्णि०-आहारि त्ति मूलोघभंगो। णवरि वेउव्विय-किण्ह-णील-काउ० पढमपुढविभंगो। वेउव्वि०-किण्ह-णील० सम्म०-सम्मामि० विदियपुढविभंगो।**

§ १७०. **पंचिं०तिरिक्खअपज्जत्ताणं जोणिणिभंगो। णवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छ-**

---

नारकियोंके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि तिर्यंचयोनिनी, भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंके दूसरी पृथिवीके समान भंग है। मनुष्यत्रिक, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, त्रस, त्रस पर्याप्त, पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी, काययोगी, औदारिक काययोगी, वैक्रियिककाययोगी, तीनों वेदवाले, क्रोधादि चारों कषायवाले, असंयत, चक्षुदर्शनवाले, अचक्षुदर्शनवाले, कृष्णादि पाँच लेश्यावाले, भव्य, सञ्ज्ञी और आहारक जीवोंके मूलोघके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि वैक्रियिककाययोगी, कृष्णलेश्यावाले, नीललेश्यावाले और कापोतलेश्यावाले जीवोंके पहली पृथिवीके समान भंग है। इसमें भी वैक्रियिककाययोगी, कृष्णलेश्यावाले और नीललेश्यावाले जीवोंके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग दूसरी पृथिवीके समान है।

**विशेषार्थ**—पहले जो ओघ प्ररूपणा बतलाई है वह नारकियोंमें घट जाती है। किन्तु एक विशेषता है वह यह कि ओघमें सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिमें मिथ्यात्व है और नहीं है यह बतलाया है वह व्यवस्था यहाँ लागू नहीं होती; क्योंकि क्षायिकसम्यग्दर्शनकी प्राप्तिके समय ओघ प्ररूपणामें उक्त व्यवस्था घट जाती है पर नारकी जीवोंके क्षायिकसम्यग्दर्शनकी उत्पत्ति सम्भव नहीं। नरकमें या तो क्षायिकसम्यग्दर्शन होनेके बाद जीव उत्पन्न हो सकता है या कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि जीव उत्पन्न हो सकता है। अतः नरकमें सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिमें मिथ्यात्व नियमसे है। तथा इसके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित ये तीनों पद भी सम्भव हैं। यह ओघ प्ररूपणा पहले नरककी अपेक्षासे बतलाई है; क्योंकि यह विशेषता वहीं घटित होती है। द्वितीयादि नरकोंमें दो अपवादोंको छोड़कर और सब पूर्वोक्त कथन बन जाता है। बात यह है कि द्वितीय आदि नरकोंमें कृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टि उत्पन्न नहीं होता, अतः वहाँ सम्यक्त्वकी अल्पतर स्थितिके समय मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व नियमसे हैं। उसमें भी इस अवस्थामें मिथ्यात्वके भुजगार आदि तीनों पद सम्भव हैं और सम्यग्मिथ्यात्वका एक अल्पतर पद ही होता है। तथा उक्त नरकोंमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि नहीं उत्पन्न होता। अतः वहाँ बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अल्पतर स्थितिके समय मिथ्यात्व नियमसे है। तथा इसके तीनों पद भी सम्भव हैं। आगे मूलमें सामान्य तिर्यञ्च आदि कुछ ऐसी मार्गणाएँ बतलाई हैं जिनमें सन्निकर्षकी प्ररूपणा सामान्य नारकियोंके समान घटित होती है। किन्तु तिर्यञ्चयोनिमती आदि कुछ ऐसी मार्गणाएँ हैं जिनमें सम्यग्दृष्टि जीव नहीं उत्पन्न होते हैं। अतः उनमें दूसरे नारकियोंके समान सन्निकर्ष प्राप्त होता है। अतः इनके कथनको सामान्य नारकी या दूसरे नरकके नारकियोंके समान जानना चाहिये। तथा मनुष्यत्रिक आदि कुछ ऐसी भी मार्गणाएं हैं जिनमें ओघ प्ररूपणा अविकल घटित हो जाती है, अतः उनके कथनको ओघके समान जानना चाहिये। तो भी चार मार्गणाओंमें कुछ विशेषता है। बात यह है कि कापोतलेश्या कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टिके भी प्राप्त होती है इसलिये इसमें पहली पृथिवीके समान कथन बन जाता है और वैक्रियिककाययोग, कृष्ण तथा नील लेश्यामें कृतकृत्यवेदक सम्यक्त्वकी प्राप्ति नहीं होती, इसलिये इनमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका कथन दूसरी पृथिवीके समान प्राप्त होता है।

§ १७०. पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तक जीवोंके तिर्यञ्चयोनिनीके समान भंग है। किन्तु

त्ताणं भुजगार०-अवट्ठि०-अवत्तव्व० णत्थि। अप्पदरमेकं चेव अत्थि। अणंताणु०चउक्क० अवत्तव्वं णत्थि। एवं मणुसअपज्ज०-सव्वेइंदिय-सव्वविगलिंदिय-पंचिं०अपज्ज०-सव्व-पंचकाय०-तसअपज्ज०-ओरालि०मिस्स-वेउव्वियमिस्स-कम्मइय०-मदि०-सुद०-विहंग०-मिच्छादि०-असण्णि०-अणाहारि त्ति। णवरि ओरालियमिस्स०-वेउव्वियमिस्स० कम्म-इय०-अणाहारीसु विसेसो जाणियव्वो।

§ १७१. आणदादि जाव णवगेवज्जो त्ति मिच्छत्तस्स जो अप्पदरविहत्तिओ सो बारसकसाय-णवणोकसायाणं णियमा अप्पदरविहत्तिओ। अणंताणु०चउक्क० सिया अत्थि सिया णत्थि। जदि अत्थि सिया अप्पदरविहत्तिओ सिया अवत्तव्वविहत्तिओ। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि सिया अत्थि सिया णत्थि। जदि अत्थि सिया भुजगार० सिया अप्पदर० सिया अवत्तव्व० [सिया अवट्ठिद] विहत्तिओ। एवं बारसकसाय-णवणोकसायाणं। मिच्छ०सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०चउक्क० सिया अत्थि।

इतनी विशेषता है कि इनके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य ये तीन पद नहीं हैं। केवल एक अल्पतर पद हैं। तथा अनन्तानुबन्धी चतुष्कका अवक्तव्य पद नहीं है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तक, सब एकेन्द्रिय, सब विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय अपर्याप्तक, सब पाँचो स्थावरकाय, त्रस अपर्याप्त, औदारिकमिश्रकाययोगी, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, विभंगज्ञानी मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी और अनाहारक जीवोंके जानना। किन्तु इतनी विशेषता है कि औदारिकमिश्रकाययोगी, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंमें विशेष जानना चाहिये।

**विशेषार्थ**—पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति नहीं होती इसलिये इनके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य ये तीन पद सम्भव नहीं किन्तु एक अल्पतर पद ही होता है। और इसीलिये इनके अनन्तानुबन्धीका अवक्तव्यपद नहीं होता। शेष कथन योनिमती तिर्यञ्चोंके समान है यह स्पष्ट ही है। मनुष्य लब्धपर्याप्तक आदि कुछ और मार्गणाएँ हैं जिनमें यह अवस्था बन जाती है, अतः इनके कथनको पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च लब्ध्यपर्याप्तकोंके समान बतलाया है। किन्तु औदारिकमिश्रकाययोग, वैक्रियिकमिश्रकाययोग, कार्मणकाययोग और अनाहारक अवस्थामें विशेषके जाननेकी सूचना की है सो इसका इतना ही मतलब है कि इन मार्गणाओंमें कृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टि जीव भी उत्पन्न होते हैं, अतः इनमें पहली पृथिवीके समान भंग बन जाता है।

§ १७१. आनतसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें जो मिथ्यात्वकी अल्पतरस्थितिविभक्तिवाला है वह बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी नियमसे अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है। इसके अनन्तानुबन्धी चतुष्क कदाचित् हैं और कदाचित नहीं है। यदि है तो उसकी अपेक्षा यह कदाचित् अल्पतरविभक्तिवाला और कदाचित अवक्तव्यस्थितिविभक्तिवाला होता है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व कदाचित हैं और कदाचित् नहीं हैं। यदि हैं तो इनकी अपेक्षा कदाचित् भुजगार स्थितिविभक्तिवाला, कदाचित अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला कदाचित अवक्तव्य और कदाचित् अवस्थित स्थितिविभक्तिवाला होता है। इसी प्रकार बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अपेक्षामें सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इसके मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्क कदाचित है।

§ १७२. सम्मत्तस्स जो अप्पदरट्ठिदिविहत्तिओ सो मिच्छत्त-बारसकसाय-णवणोकसायाणं णियमा अप्पदरट्ठिदिविहत्तिओ । णवरि मिच्छत्तं सिया अत्थि । अणंताणु०-चउक्क० सिया अत्थि । जदि अत्थि सिया अप्पदरविहत्तिओ सिया अवत्तव्वविहत्तिओ । सम्मामिच्छत्तस्स सिया विहत्तियो । जदि विहत्तिओ णियमा अप्पदरविहत्तिओ । सम्मत्त-भुजगारस्स जो विहत्तिओ मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० अप्पदर० णियमा विहत्तिओ । सम्मामिच्छत्तस्स भुजगारस्स णियमा विहत्तिओ । एवमवत्तव्वस्स वि सण्णियासो कायव्वो । णवरि सम्मामिच्छत्तस्स सिया भुजगारविहत्तिओ सिया अवत्तव्वविहत्तिओ । सम्मामिच्छत्तस्स सम्मत्तभंगो । णवरि सम्मत्तं सिया अत्थि । अप्पदरविहत्तियम्मि त्ति वत्तव्वं । सम्मामिच्छत्तस्स अवत्तव्वविहत्तिओ सम्मत्तस्स णियमा अवत्तव्वविहत्तिओ।

§ १७३. अणंताणु०कोध०अप्प० जो विहत्तिओ सो मिच्छत्त-पण्णारसकसाय-णवणोकसायाणमप्पद० णियमा विहत्तिओ । सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि सिया अत्थि । जदि अत्थि सिया भुज० विह० सिया अप्प०विहत्तिओ सिया अवत्तव्वविहत्तिओ[1] [सिया अवट्ठिदविहत्तिओ] अणंताणु०कोध० जो अवत्तव्वविहत्तिओ सो मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० णियमा

§ १७२. सम्यक्त्वकी जो अल्पतरस्थितिविभक्तिवाला है वह मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी नियमसे अल्पतरस्थितिविभक्तिवाला है। किन्तु इतनी विशेषता है कि कदाचित् मिथ्यात्व है। अनन्तानुबन्धी चतुष्क कदाचित् है। यदि है तो उसकी अपेक्षा यह जीव कदाचित् अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला और कदाचित् अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाला है। सम्यग्मिथ्यात्व कदाचित् है यदि है तो उसकी अपेक्षा नियमसे अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है। जो सम्यक्त्वकी भुजगार स्थितिविभक्तिवाला है वह मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी नियमसे अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है। सम्यग्मिथ्यात्वकी नियमसे भुजगार स्थितिविभक्तिवाला है। इसी प्रकार अवक्तव्यपदका भी सन्निकर्ष करना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि यह कदाचित् सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिविभक्तिवाला है और कदाचित् अवक्तव्यस्थितिविभक्तिवाला है। सम्यग्मिथ्यात्वका भंग सम्यक्त्वके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर विभक्तिवालेके सम्यक्त्व कदाचित् है ऐसा कहना चाहिये और जो सम्यग्मिथ्यात्वकी अवक्तव्य विभक्तिवाला है वह सम्यक्त्वकी नियमसे अवक्तव्य विभक्तिवाला है।

§ १७३. जो अनन्तानुबन्धी क्रोधकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है वह मिथ्यात्व, पन्द्रह कषाय और नौ नोकषायोंकी नियमसे अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व कदाचित् है। यदि हैं तो इनकी अपेक्षा यह जीव कदाचित् भुजगार स्थितिविभक्तिवाला, कदाचित् अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला और कदाचित् अवक्तव्य और कदाचित् अवस्थित स्थितिविभक्तिवाला है। जो अनन्तानुबन्धी क्रोधकी अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाला जीव है वह मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी नियमसे अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला होता है। अनन्तानुबन्धी मान आदि तीन कषायोंकी नियमसे अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाला होता है। सम्यक्त्व और सम्य-

1. ता० प्रतौ सिया अवत्तव्वविहत्तिओ इति कोष्ठान्तर्गतः पाठः ।

अप्पदरविहत्तिओ। तिण्हं कसायाणं णियमा अवत्तव्वविहत्तिओ। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं णियमा अप्पदरविहत्तिओ। एवं तिण्हं कसायाणं। एवं सुक्क०।

§ १७४. अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठे त्ति मिच्छत्तस्स जो अप्पदरविहत्तिओ सो सेस-सत्तावीसपयडीणं णियमा अप्प०विह०। णवरि अणंताणु० अविहत्तिओ वि। सम्म-त्तस्स जो अप्पदरविहत्तिओ तस्स मिच्छत्त-सम्मामि०-अणंताणु०-चउक्क० सिया अत्थि। जदि अत्थि णियमा तेसिमप्पदरविहत्तिओ। बारसक० णवणोकसायाणं णियमा अप्पदर-विहत्तिओ। सम्मामि० जो अप्पदरविहत्तिओ तस्स मिच्छत्तभंगो। एवमणंताणु०चउक्कस्स। णवरि एक्कम्मि णिरुद्धे सेसतियं णियमा अत्थि। अपच्चक्खाणकोध० जो अप्पदरविह-त्तिओ तस्स मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि०-अणंताणु०चउक्क० सिया अत्थि। जदि अत्थि णियमा अप्प०विहत्तिओ। एक्कारसक०-णवणोकसायाणं णियमा अप्प०विहत्तिओ। एवमेक्कारसक०-णवणोकसायाणं। आहार०-आहारमिस्स०-आभिणि०-सुद०-ओहि०-मणपज्ज०-संजद०-सामाइय-छेदो०-परिहार०-संजदासंजद०-ओहिदंस०-सम्मादिट्ठि-वेदय०-दिट्ठीणमणुद्दिसभंगो। णवरि विसेसो जाणिय वत्तव्वो।

§ १७५. अवगदवेदेसु जो मिच्छत्तस्स अप्पदरविहत्तिओ सो सम्मत्त०-सम्मामि०-बारसक०-णवणोक० णियमा अप्पद०विहत्तिओ। एवं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं।

मिथ्यात्वकी नियमसे अल्पतरस्थितिविभक्तिवाला होता है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धी मान आदि तीन कषायोंकी अपेक्षा कहना चाहिये। इसी प्रकार शुक्ललेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिए।

§ १७४. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें जो मिथ्यात्वकी अल्पतरस्थितिविभक्ति-वाला है वह शेष सत्ताईस प्रकृतियोंकी नियमसे अल्पतरस्थितिविभक्तिवाला होता है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इसके अनन्तानुबन्धीचतुष्कका अभाव भी होता है। सम्यक्त्वकी जो अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है उसके मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्क कदाचित है। यदि हैं तो उनकी अपेक्षा नियमसे अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है। तथा बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अपेक्षा नियमसे अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है। जो सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है उसके मिथ्यात्वके समान भंग है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि एक प्रकृतिके रहते हुए शेष तीन नियमसे हैं। अप्रत्याख्यानावरण क्रोधकी जो अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है उसके मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मि-थ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्क कदाचित् हैं। यदि हैं तो उनकी अपेक्षा नियमसे अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है। तथा ग्यारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अपेक्षा नियमसे अल्पतरस्थिति-विभक्तिवाला है। इसी प्रकार ग्यारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अपेक्षा जानना चाहिए। आहारक-काययोगी, आहारकमिश्रकाययोगी, आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत, संयतासंयत, अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि और वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके अनुदिशके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि विशेष जानकर कहना चाहिये।

§ १७५. अपगतवेदियोंमें जो मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है वह सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी नियमसे अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है। इसी

**अपच्चक्खाणकोह० जो अप्प०विहत्तिओ तस्स मिच्छत्त०-सम्मत्त०-सम्मामि० सिया अत्थि। जदि अत्थि णियमा अप्प०विहत्तिओ। एक्कारसक०-णवणोकसायाणं णियमा अप्प०विहत्तिओ। एवमेक्कारसक०-णवणोकसायाणं। णवरि चदुसंजल०-सत्तणोक० सण्णियासविसेसो जाणियव्वो। अकसा०-सुहुम०-जहाक्खाद० अवगद०भंगो।**

**१७६. खइयसम्मादिट्ठीसु जो अपच्चक्खाणकोध० अप्प०विहत्तिओ सो एक्कारसक०-णवणोक० णियमा अप्प०विहत्तिओ। एवमेक्कारसक०-णवणोकसायाणं। [णवरि विसेसो जाणियव्वो।] उवसम० मिच्छत्तस्स जो अप्पदरविहत्तिओ सो सम्मत्त-सम्मामि०-बारसक०-णवणोक० णियमा अप्पद०विहत्तिओ। अणंताणु०चउक्क० सिया अत्थि। जदि अत्थि णियमा अप्प०विहत्तिओ। एवं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं। अणंताणु०कोध० जो अप्प० विहत्तिओ सो सेससत्तावीसं पयडी० णियमा अप्प०विहत्तिओ। एवमणंताणु०माण-माया-लोहाणं। अपच्चक्खाण कोध० अप्प० जो विहत्तिओ सो मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-एक्कारसक०-णवणोक० अप्प० णियमा विहत्तिओ। अणंताणु०चउक्क० सिया अत्थि। जदि अत्थि णियमा अप्प०विहत्तिओ। एवमेक्कारसक०-णवणोकसायाणं। एवं सम्मामि०। सासण० जो मिच्छत्तस्स अप्पदरविहत्तिओ सो सेससत्तावीसपयडीणं**

प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा जानना चाहिए। अप्रत्याख्यानावरण क्रोधकी जो अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है उसके मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व कदाचित् हैं। यदि हैं तो उनकी अपेक्षा नियमसे अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है। तथा ग्यारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अपेक्षा नियमसे अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है। इसी प्रकार ग्यारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अपेक्षा जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि चार संज्वलन और सात नोकषायोंका सन्निकर्षविशेष जानना चाहिये। अकषायी, सूक्ष्मसांपरायिकसंयत और यथाख्यातसंयतोंके अवगतवेदियोंके समान भंग है।

§ १७६. क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें जो अप्रत्याख्यानावरण क्रोधकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है वह ग्यारह कषाय और नौ नोकषायोंकी नियमसे अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है। इसी प्रकार ग्यारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अपेक्षा जानना चाहिए। परन्तु चार संज्वलन और सात नोकषायोंका सन्निकर्ष विशेष जानना चाहिये। उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें जो मिथ्यात्वकी अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है वह सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी नियमसे अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है। अनन्तानुबन्धीचतुष्क कदाचित् हैं। यदि हैं तो उनकी अपेक्षा नियमसे अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है। इसीप्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा जानना चाहिए। अनन्तानुबन्धी क्रोधकी जो अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है वह शेष सत्ताईस प्रकृतियोंकी नियमसे अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है। इसीप्रकार अनन्तानुबन्धी मान, माया और लोभकी अपेक्षा जानना चाहिए। अप्रत्याख्यानावरण क्रोधकी जो अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है वह मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, ग्यारह कषाय और नौ नोकषायोंकी नियमसे अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है। अनन्तानुबन्धी चतुष्क कदाचित् हैं और कदाचित् नहीं हैं। यदि हैं तो इनकी अपेक्षा नियमसे अल्पतरस्थितिविभक्तिवाला है। इसीप्रकार ग्यारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अपेक्षा जानना चाहिए। इसीप्रकार सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंमें जो मिथ्यात्वकी अल्पतर

णियमा अप्प०विहत्तिओ। एवं सेससत्तावीसं पयडीणं पुध पुध सण्णियासो कायव्वो। अभव० छव्वीसं पय० असण्णि०भंगो।

एवं सण्णियासाणुगमो समत्तो।

* अप्पाबहुअं।

१७७. सुगममेदं।

* मिच्छत्तस्स सव्वत्थोवा भुजगारट्ठिदिविहत्तिया।

१७८. कुदो ? अद्धासंकिलेसक्खएण[1] दुसमयसंचिदत्तादो। एइंदिएहिंतो विगल-सगलिंदिएसुप्पज्जिय भुजगारं कुणमाणजीवा अत्थि, किं तु ते अप्पहाणा; जगपदरस्स असंखेज्जदिभागपमाणत्तादो।

* अवट्ठिदट्ठिदिविहत्तिया असंखेज्जगुणा।

१७९. को गुणगारो ? अंतोमुहुत्तं संखेज्जावलियमेत्तं। कुदो ? एगट्ठिदिबंधकालस्स उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तपमाणत्तादो। एगट्ठिदिबंधस्स उक्कस्सकालो बहुओ[2] ण संभवदि त्ति संखेज्जसमयमेत्तो ट्ठिदिबंधकालो घेप्पदि त्ति ण वोत्तुं जुत्तं; मूलग्गसमासं काढूण अद्धिय ट्ठिदिबंधमज्झिमद्धाए गहिदाए वि संखेज्जावलियमेत्तस्स अवट्ठिदट्ठिदिबंधकालस्सुवलंभादो। एत्थ अवट्ठिदजीवपमाणाणयणं वुच्चदे। तं जहा—एक्कम्मि समए जदि अणंतो जीवरासी

स्थितिविभक्तिवाला है वह शेष सत्ताईस प्रकृतियोंकी नियमसे अल्पतर स्थितिविभक्तिवाला है। इसीप्रकार शेष सत्ताईस प्रकृतियोंकी अपेक्षा अलग अलग सन्निकर्ष करना चाहिये। अभव्योंमें छब्बीस प्रकृतियोका भंग असंज्ञियोंके समान है।

इसप्रकार सन्निकर्षानुगम समाप्त हुआ।

* अब अल्पबहुत्वानुगमका अधिकार है।

§ १७७. यह सूत्र सुगम है।

* मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिविभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं।

§ १७८. क्योंकि अद्धाक्षय और संक्लेशक्षयके केवल दो समयोंमें जितने जीवोंका सञ्चय होता है उतने जीव ही मिथ्यात्वकी भुजगार स्थितिविभक्तिवाले यहाँपर ग्रहण किये हैं। यद्यपि एकेन्द्रियोंमेंसे विकलेन्द्रिय और सकलेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर भुजगार स्थितिविभक्तिको करनेवाले जीव होते हैं परन्तु वे यहाँपर अप्रधान हैं, क्योंकि वे जगप्रतरके असंख्यातवें भागप्रमाण होते हैं।

* अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं।

§ १७९. गुणकारका प्रमाण क्या है ? संख्यात आवलि प्रमाण अन्तर्मुहूर्त गुणकारका प्रमाण है, क्योंकि एक स्थितिबन्धका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। यदि कहा जाय कि एक स्थितिबन्धका उत्कृष्ट काल बहुत संभव नहीं है, अतः संख्यात समयमात्र स्थितिबन्धकाल लेना चाहिये सो भी कहना युक्त नहीं है, क्योंकि स्थितिबन्धके मूल और अग्रकालको जोड़कर और आधा करके स्थितिबन्धके मध्यमकालके ग्रहण करने पर भी अवस्थित स्थितिबन्धकाल संख्यात आवलिप्रमाण प्राप्त होता है। अब यहाँ अवस्थित जीवोंका प्रमाण लानेकी विधि कहते हैं। वह इस प्रकार है—

1 ता० प्रतौ अद्धासंकिलेसक्खय इति पाठः। 2 ता० आ० प्रत्योः बहुआणं इति पाठः।

**एगसमयसंचिदभुजगारमेत्तो लब्भदि तो अवट्ठिदकालम्मि केत्तियं लभामो त्ति पमाणेणिच्छागुणिदफले ओवट्ठिदे अवट्ठिदविहत्तियरासी होदि, तेणेसो भुजगारविहत्तिएहिंतो असंखे०गुणो।**

*** अप्पदरट्ठिदिविहत्तिया संखेज्जगुणा।**

**१८०. कुदो ? अवट्ठिदट्ठिदिबंधकालादो अप्पदरट्ठिदिबंधकालस्स संखेज्जगुणत्तादो। किं कारणं ? एगट्ठिदीए पाओग्गट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणेसु चेव अवट्ठिदट्ठिदिविहत्तिया परिणमंति, अण्णहा ट्ठिदिबंधस्स अवट्ठिदत्तविरोहादो। अप्पदरविहत्तिया पुण तत्तो हेट्ठिमसव्वट्ठिदीणं ट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणेसु परिणमंति तेण ते तत्तो संखेज्जगुणा। जदि अवट्ठिदविहत्तियाणमेगट्ठिदीए ट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणाणि चेव विसओ तो हेट्ठिमअसंखेज्जट्ठिदीणं ट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणेसु परिणमंता अप्पदरविहत्तिया तत्तो असंखेज्जगुणा किण्ण होंति ? ण, संखेज्जवारमप्पदरं कादूण सइमवट्ठिदट्ठिदिबंधकरणादो। संते संभवे असंखेज्जवारमप्पदरट्ठिदिसंतकम्मं किण्ण कुणदि ? सहावियादो। ण च सहावो पडिबोयणाजोग्गो; अव्ववत्थावत्तीदो। जेत्तिओ एगट्ठिदिबंधकालो सव्वुक्कस्सो अत्थि तत्तो**

एक समयमें यदि एक समय द्वारा संचित हुई भुजगार स्थितिबन्धरूप अनन्त जीवराशि प्राप्त होती है तो अवस्थित कालमें कितनी प्राप्त होगी इसप्रकार इच्छाराशिमें फलराशिको गुणित करके और उसमें प्रमाणराशिका भाग देनेपर अवस्थित स्थितिविभक्तिवाली जीवराशि प्राप्त होती है। अतः यह राशि भुजगार स्थितिविभक्तिवाली जीवराशिसे असंख्यातगुणी है यह सिद्ध हुआ।

*** अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं।**

§ १८०. क्योंकि अवस्थितस्थितिबन्धके कालसे अल्पतर स्थितिबन्धका काल संख्यातगुणा है। इसका क्या कारण है। आगे इसे बतातें हैं—एक स्थितिके योग्य स्थितिबन्धाध्यवसान स्थानोंमें ही अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीव परिणमन करते रहते हैं, अन्यथा स्थितिबन्धके अवस्थित होनेमें विरोध आता है। परन्तु अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीव उससे नीचेकी सभी स्थितियोंके योग्य स्थितिबन्धाध्यवसानस्थानोंमें परिणमन करते रहते हैं अतः अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीव अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीवोंसे संख्यातगुणे होते हैं।

**शंका**—यदि अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीव एक स्थितिके योग्य स्थितिबन्धाध्यवसान स्थानमें ही रहते हैं तो नीचेका असंख्यात स्थितियोंके योग्य स्थितिबन्धाध्यवसान स्थानोंमें परिणमन करनेवाले अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीव अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीवोंसे असंख्यातगुणे क्यों नहीं होते हैं ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि जीव संख्यातबार अल्पतर बन्धको करके एक बार अवस्थित स्थितिबन्धको करता है, अतः अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीवोंसे अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे नहीं होते हैं।

**शंका**—संभव होते हुए जीव असंख्यातबार अल्पतर स्थितिसत्कर्मको क्यों नहीं करता है ?

**समाधान**—ऐसा स्वभाव है। और स्वभाव दूसरेके द्वारा प्रतिबोध करनेके योग्य नहीं होता, अन्यथा अव्यवस्था प्राप्त होती है।

संखेज्जगुणं कालं ट्ठिदिसंतादो हेट्ठा भुजगार-अप्पदर-अवट्ठिदसरूवेण ट्ठिदीओ बंधमाणो अधट्ठिदिगलणाए संतकम्मस्स अप्पदरं कादूण पुणो तस्स अवट्ठिदं करेदि त्ति भणिदं होदि। काले संखेज्जगुणे संते जीवा वि संखेज्जगुणा चेव; अवट्ठिद-अप्पदरभावं समयं पडि पडिवज्जमाणजीवाणं समाणत्तादो। अप्पदरावट्ठिदाणि सव्वकालमत्थि त्ति अणंतकालसंचओ किण्ण घेप्पदे? ण, अप्पदरमवट्ठिदं च पडिवण्णेगजीवो जाव अणप्पिदपदं ण गच्छदि तावदियमेत्तकालम्मि चेव संचयस्सुवलंभादो। ण च एगजीवो उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं मोत्तूण अणंतकालमप्पदरमवट्ठिदं वा कुणमाणो अत्थि; एगट्ठिदिपरिणामाणमाणंतियप्पसंगादो। एगट्ठिदीए ट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणमेत्तो अवट्ठिदट्ठिदिबंधकालो किण्ण होदि? ण, एगस्स जीवस्स एगट्ठिदीए ट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणेसु परिणमणकालो जहण्णेण एगसमयमेत्तो, उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तमेत्तो चेव त्ति परमगुरूवएसादो।

*** एवं बारसकसाय-णवणोकसायाणं।**

§ १८१. जहा मिच्छत्तस्स अप्पाबहुअं परूविदं तहा बारसकसाय-णवणोकसायाणं परूवेदव्वं विसेसाभावादो।

*** सम्मत्त सम्मामिच्छत्ताणं सव्वत्थोवा अवट्ठिदट्ठिदिविहत्तिया।**

एक स्थितिका जितना सर्वोत्कृष्ट बन्धकाल है उससे संख्यातगुणे कालतक स्थितिसत्त्वसे नीचे भुजगार, अल्पतर और अवस्थितरूपसे स्थितियोंका बन्ध करता हुआ यह जीव अधःस्थिति गलनाके द्वारा सत्कर्मको अल्पतर करके पुनः उसे अवस्थित करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। जब कि काल संख्यातगुणा है तो जीव भी संख्यातगुणे ही होते हैं, क्योंकि अवस्थित और अल्पतर भावको प्रत्येक समयमें प्राप्त होनेवाले जीव समान हैं।

**शंका**—अल्पतर और अवस्थितविभक्तियाँ सर्वदा पाई जाती हैं, अतः यहाँ अनन्तकालमें होनेवाला संचय क्यों नहीं लिया जाता है?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि अल्पतर और अवस्थितपदको प्राप्त हुआ एक जीव जबतक अविवक्षित पदको नहीं प्राप्त होता है उतने कालमें होनेवाले संचयका ही यहाँ ग्रहण किया है। और एक जीव उत्कृष्टरूपसे अन्तर्मुहूर्त कालको छोड़कर अनन्तकाल तक अल्पतर और अवस्थितपदको करता हुआ नहीं पाया जाता, अन्यथा एक स्थितिके परिणाम अनन्त हो जायगे।

**शंका**—एक स्थितिके योग्य स्थितिबन्धाध्यवसायस्थानोंका जितना प्रमाण है अवस्थित स्थितिबन्धकाल उतना क्यों नहीं होता है?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि एक जीवके एक स्थितिके योग्य स्थितिबन्धाध्यवसायस्थानोंमें परिणमन करनेका जघन्यकाल एक समयमात्र और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्तप्रमाण है, ऐसा परमगुरुका उपदेश है।

*** इसी प्रकार बारह कषाय और नौ नोकषायोंका अल्पबहुत्व जानना चाहिए।**

§ १८१. जिस प्रकार मिथ्यात्वका अल्पबहुत्व कहा है उसी प्रकार बारह कषाय और नौ नोकषायोंका कहना चाहिये, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है।

*** सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं।**

§ १८२. कुदो, समउत्तरमिच्छत्तट्ठिदिसंतकम्मेणेव सम्मत्तं पडिवज्जमाणाणमवट्ठिद-ट्ठिदिविहत्तिसंभवादो। सम्मत्तट्ठिदिसंतादो समयुत्तरमिच्छत्तट्ठिदिसंतकम्मेण सम्मत्तं पडि-वज्जमाणा सुट्ठु थोवा। तं कुदो णव्वदे ? सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तभुजगार-अवत्तव्वट्ठिदि-विहत्तियाणमुक्कस्संतरं चउवीस अहोरत्ते सादिरेगे त्ति परूविय तेसिमवट्ठियस्स अंगुलस्स असंखेज्जदिभागमेत्तंतरपरूवणादो।

* भुजगारट्ठिदिविहत्तिया असंखेज्जगुणा।

§ १८३. को गुणगारो ? आवलियाए असंखे० भागो। कुदो, सम्मत्तेगट्ठिदीए णिरुद्धाए तत्तो समयुत्तरमिच्छत्तट्ठिदिसंतकम्मेणेव सम्मत्तं पडिवज्जमाणाणमवट्ठिदट्ठिदि-विहत्ती होदि। दुसमयुत्तरादिसेसासेसट्ठिदिवियप्पेहि सम्मत्तं पडिवज्जमाणाणं भुजगारो चेव होदि। एवं सव्वसम्मत्तट्ठिदीओ अस्सिदूण भुजगार-अवट्ठिदाणं विसयपरूवणाए कीरमाणाए भुजगारविसओ चेव बहुओ। किं च मिच्छत्तधुवट्ठिदीदो हेट्ठा दुसमयूणादि-सम्मत्तट्ठिदिसंतकम्मेण सम्मत्तं पडिवज्जमाणाणं भुजगारविहत्ती चेव। तेण अवट्ठिद-विहत्तिएहिंतो भुजगारविहत्तिया असंखेज्जगुणा।

* अवत्तव्वट्ठिदिविहत्तिया असंखेज्जगुणा।

§ १८४. कुदो ? सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं संतकम्मेहि सह सम्मत्तं पडिवज्जमाण-

§ १८२. क्योंकि मिथ्यात्वकी एक समय अधिक स्थितिसत्कर्मके साथ सम्यग्दर्शनको प्राप्त होनेवाले जीवोंके ही सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अवस्थित स्थितिविभक्ति संभव है।

**शंका**—सम्यक्त्वकी स्थितिसत्त्वसे मिथ्यात्वकी एक समय अधिक स्थितिसत्कर्मके साथ सम्यग्दर्शनको प्राप्त होनेवाले जीव सबसे थोड़े हैं यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

**समाधान**—सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक चौबीस दिनरात है यह कहकर उन्हीं दोनों प्रकृतियोंकी अवस्थित स्थितिविभक्तिका अन्तरकाल अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है इससे जाना जाता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं।

* भुजगार स्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं।

§ १८३. गुणकार क्या है ? आवलिका असंख्यातवाँ भाग गुणकार है; क्योंकि सम्यक्त्वकी एक स्थितिके रहते हुए उससे मिथ्यात्वकी एक समय अधिक स्थितिसत्कर्मके साथ ही सम्यग्दर्शनको प्राप्त होनेवाले जीवोंके अवस्थित स्थितिविभक्ति होती है। तथा दो समय अधिक आदि शेष सम्पूर्ण स्थितिविकल्पोंके साथ सम्यग्दर्शनको प्राप्त होनेवाले जीवोंके भुजगार स्थितिविभक्ति ही होती है। इस प्रकार सम्यक्त्वकी सब स्थितियोंके आश्रयसे भुजगार और अवस्थित स्थितिविभक्तियोंके विषयकी प्ररूपणा करने पर भुजगारका विषय ही बहुत प्राप्त होता है। दूसरे मिथ्यात्वकी ध्रुवस्थितिके नीचे सम्यक्त्वकी दो समय कम आदि स्थितिसत्कर्मके साथ सम्यग्दर्शनको प्राप्त होनेवाले जीवोंके भुजगार स्थितिविभक्ति ही होती है। अतः अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीवोंसे भुजगार स्थिति-विभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं।

* अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं।

§ १८४ क्योंकि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व सत्कर्मके साथ सम्यग्दर्शनको प्राप्त होनेवाले

मिच्छादिट्ठीहिंतो णिस्सतकम्मियमिच्छादिट्ठीणं सम्मत्तं पडिवज्जमाणाणमसंखेज्जगुणत्तादो। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं ट्ठिदिसंतकम्मे अणुव्वेल्लिदे किमट्ठं बहुआ जीवा सम्मत्तं ण पडिवज्जंति ? ण, उव्वेल्लणकिरियाए पारद्धाए तं किरियं छंडिय विसोहिं गंतूण अधापमत्तादिकिरियंतराणं गच्छमाणजीवाणं बहुआणमसंभवादो। जेणेकिस्से किरियाए 'खल्लीविल्लसंजोगेण किरियंतरं होदि तेण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तसंतकम्मेण सम्मत्तं पडिवज्जमाणेहिंतो उव्वेल्लिदसम्मत्त-सम्मामिच्छत्तसंतकम्मिया सम्मत्तं पडिवज्जमाणा असंखेज्जगुणा होंति। भुजगारं कुणमाणरासी पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तकाल-संचिदो अवत्तव्वं कुणमाणरासी पुण अद्धपोग्गलपरियट्टसंचिदो तेण भुजगारविहत्तिएहिंतो-अवत्तव्वविहत्तिया असंखेज्जगुणा त्ति वा वत्तव्वं। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तसंतपच्छायद-जीवा उवड्ढपोग्गलपरियट्टसंचिदा अणंता अत्थि त्ति कुदो णव्वदे ? महाबंधम्मि वुत्तपयडिबंधप्पाबहुआदो। तं जहा—"छण्हं कम्माणं सव्वत्थोवा धुवबंधया। सादियबंधया अणंतगुणा। अबंधया अणंतगुणा। अणादियबंधया अणंतगुणा। अद्धुवबंधया विसेसाहिया' त्ति एदेण सुत्तेण उवसंतचराण मिच्छादिट्ठीणमणंतगुणत्तं णव्वदे। सम्मत्तचराणं पुण

मिथ्यादृष्टि जीवोंसे सम्यग्दर्शनको प्राप्त होनेवाले सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व कर्मसे रहित मिथ्या-दृष्टि जीव असंख्यातगुणे हैं।

**शंका**—सम्यक्त्व और साम्यग्मिथ्यात्वके स्थितिसत्कर्मकी उद्वेलना किये बिना बहुत जीव सम्यक्त्वको क्यों नहीं प्राप्त होते हैं ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि उद्वेलनारूप क्रियाके प्रारम्भ हो जाने पर उस क्रियाको छोड़कर और विशुद्धिको प्राप्त होकर अधःप्रवृत्तादि रूप दूसरी क्रियाओंको प्राप्त होनेवाले बहुत जीवोंका होना असंभव है। चूंकि जैसे खल्वाट पुरुषके शिरपर बेलका गिरना कदाचित् सम्भव है उसी तरह एक क्रिया के रहते हुए दूसरी क्रिया कचित् ही होती है, अतः सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व सत्कर्मके साथ सम्यग्दर्शनको प्राप्त होनेवाले जीवोंसे सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वसत्कर्मकी उद्वेलना कर सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीव असंख्यातगुणे होते हैं। अथवा भुजगार स्थिति-विभक्तिको करनेवाली जीवराशिका संचयकाल पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है परन्तु अव-क्तव्य स्थितिविभक्तिको करनेवाली जीवराशिका संचय काल अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है, इसलिये भुजगार स्थितिविभक्तिवाले जीवोंसे अवक्तव्यस्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे होते हैं ऐसा कहना चाहिये।

**शंका**—सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व की उद्वेलना करके जो जीव अर्धपुद्गल परिवर्तन कालके भीतर सचित होते हैं वे अनन्त हैं यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

**समाधान**—महाबन्धमें कहे गये प्रकृतिबन्ध सम्बन्धी अल्पबहुत्वसे जाना जाता है। जो इस प्रकार है—छह कर्मोंके ध्रुवबन्धवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे सादिबन्धवाले जीव अनन्तगुणे हैं। इनसे अबन्धक जीव अनन्तगुणे हैं। इनसे अनादिबन्धवाले जीव अनन्तगुणे हैं। इनसे अध्रुवबन्धवाले जीव विशेष अधिक हैं। इस सूत्रसे जिन्होंने पहले उपशमसम्यक्त्व प्राप्त किया ऐसे मिथ्यादृष्टि

१ ता० प्रतौ खल्लविल्ल इति पाठः।

**मिच्छादिट्ठीणं धुवबंधएहिंतो अणंतगुणत्तं जुत्तीदो णव्वदे। तं जहा—वासपुधत्तमंतरिय जदि संखेज्जा उवसंतचरा मिच्छत्तं पडिवज्जमाणा लब्भंति तो उवड्ढपोग्गलपरियट्टब्भंतरे केत्तिए लभामो त्ति पमाणेणिच्छागुणिदफले ओवट्टिदे सादियबंधयाणं रासी होदि। संखेज्जावलियाओ अंतरिय जदि पलिदो० असंखे०भागमेत्ता सम्मादिट्ठिणो मिच्छत्तं पडिवज्जमाणा लब्भंति तो उवड्ढपोग्गलपरियट्टम्मि किं लभामो त्ति पमाणेणिच्छागुणिदफले ओवट्टिदे सम्मत्तचरमिच्छादिट्ठिरासी होदि। एसो पुव्विल्लरासीदो असंखेज्जगुणो; असंखेज्जगुणफलत्तादो। एसो च रासी सव्वकालमवट्ठिदो; चदुगदिणिगोदरासिं व आयाणुसारिवयत्तादो। णासिद्धो दिट्ठंतो; अट्ठुत्तरछस्सदजीवेसु चदुगदिणिगोदेहिंतो णिव्वाणं गदेसु णिच्चणिगोदेहिंतो चदुगदिणिगोदेसु एत्तिया चेव जीवा अट्ठसमयाहिय-छम्मासंतरेण पविस्संति त्ति परमगुरूवदेसादो। जदि ण पविस्संति तो को दोसो? चदुगदिणिगोदाणमायवज्जियाणं सव्वयाणं खओ होज्ज; असंखेज्जलोगमेत्तपोग्गलपरियट्ट-पमाणत्तादो। ते तत्तियमेत्ता त्ति कुदो णव्वदे? जुत्तीदो। तं जहा—एक्कम्हि समए जदि असंखेज्जलोगमेत्ता पत्तेयसरीरा चदुगदिणिगोदसरूवेण पविसमाणा लब्भंति, तो**

जीव अनन्तगुणे होते हैं यह जाना जाता है। परन्तु जिन्होंने पहले सम्यक्त्वको प्राप्त किया ऐसे मिथ्यादृष्टि जीव ध्रुवबन्धक जीवोंसे अनन्तगुणे हैं यह बात युक्तिसे जानी जाती है। जो युक्ति इस प्रकार है—वर्षपृथक्त्वके अन्तरालसे यदि संख्यात उपशान्तचर जीव मिथ्यात्वको प्राप्त होते हुए पाये जाते हैं तो उपार्धपुद्गलपरिवर्तन कालके भीतर कितने जीव प्राप्त होते हैं इस प्रकार इच्छाराशिसे फलराशिको गुणित करके जो लब्ध आवे उसमें प्रमाणराशिका भाग देनेपर सादिबन्धक जीवराशि प्राप्त होती है। तथा संख्यात आवलियोंके अन्तरालसे यदि पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण सम्यग्दृष्टि जीव मिथ्यात्वको प्राप्त होते हुए पाये जाते हैं तो उपार्धपुद्गलपरिवर्तन कालके भीतर कितने प्राप्त होंगे इस प्रकार इच्छाराशिसे फलराशिको गुणित करके जो लब्ध आवे उसमें प्रमाणराशिका भाग देनेपर सम्यक्त्वचर मिथ्यादृष्टि जीवराशि प्राप्त होती है। यह जीवराशि पूर्वोक्त जीवराशिसे असंख्यातगुणी है; क्योंकि इसका गुणनफल पूर्वोक्तराशिसे असंख्यातगुणा है। यह जीवराशि सर्वदा अवस्थित है, क्योंकि जिस प्रकार चतुर्गति निगोद जीवराशिका आयके अनुसार व्यय होता है उसी प्रकार इस राशिका भी आयके अनुसार ही व्यय होता है। यदि कहा जाय कि दृष्टान्त असिद्ध है सो भी बात नहीं है क्योंकि चतुर्गतिनिगोदसे निकलकर छहसौ आठ जीवोंके मोक्षको चले जानेपर नित्यनिगोदसे उतने ही जीव छह महीना और आठ समयके अन्तरसे चतुर्गति निगोदमें प्रवेश करते हैं ऐसा परम गुरुका उपदेश है।

**शंका**—यदि नित्यनिगोदसे उतने जीव चतुर्गतिनिगोदमें प्रवेश न करें तो क्या दोष है?

**समाधान**—यदि उतने जीव प्रवेश न करें तो आयरहित और व्ययसहित होनेके कारण चतुर्गतिनिगोद जीवोंका क्षय हो जायगा, क्योंकि असंख्यात लोक प्रमाण पुद्गलपरिवर्तनके जितने समय हैं उतना चतुर्गति निगोद जीवोंका प्रमाण है।

**शंका**—चतुर्गतिनिगोद जीव इतने हैं यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

**समाधान**—युक्तिसे जाना जाता है। वह इस प्रकार है—एक समयमें यदि असंख्यात लोक-प्रमाण प्रत्येकशरीर जीव चतुर्गतिनिगोदरूपसे प्रवेश करते हुए पाये जाते हैं तो ढाई पुद्गल

अड्ढाइज्जपोग्गलपरियट्टेसु किं लभामो त्ति पमाणेणोवट्टिय फलेण गुणिदे असंखेज्जलोग मेत्तपोग्गलपरियट्टपमाणा चदुगदिणिगोदजीवा होंति। एदे च अदीदकालादो अणंतगुण-हीणा; तत्थाणंतपोग्गलपरियट्टुवलंभादो।

§ १८५. तं जहा—अदीदकाले एयजीवस्स सव्वत्थोवा भावपरियट्टवारा। भवपरि-यट्टणवारा अणंतगुणा। कालपरियट्टवारा अणंतगुणा। खेत्तपरियट्टवारा अणंतगुणा। पोग्गल-परियट्टवारा अणंतगुणा। एदस्स साहणट्ठमप्पाबहुगं वुच्चदे। तं जहा—सव्वत्थोवो पोग्गलपरियट्टकालो। खेत्तपरियट्टकालो अणंतगुणो। कालपरियट्टकालो अणंतगुणो। भव-परियट्टकालो अणंतगुणो। भावपरियट्टकालो अणंतगुणो त्ति। तदो सिद्धो दिट्ठंतो। एदेहि अणंतसम्मत्तचरमिच्छादिट्ठीहिंतो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ता भुजगारं कुणमाणे-हिंतो असंखेज्जगुणा अवत्तव्वं करेंति त्ति सिद्धं।

*** अप्पदरट्ठिदिविहत्तिया असंखेज्जगुणा।**

§ १८६. को गुणगारो? आवलियाए असंखेज्जदिभागो। केण कारणेण? उव्वेल्लमाणमिच्छादिट्ठीहि सह सयलवेदगुवसमसासणसम्मामिच्छादिट्ठीणं गहणादो। अणंतोवड्ढपोग्गलपरियट्टसंचिदरासीदो अवत्तव्वं कुणमाणा अप्पदरविहत्तिएहिंतो

परिवर्तनोंमें कितने प्राप्त होंगे ? इस प्रकार इच्छाराशिको प्रमाणराशिसे भाजित करके जो लब्ध आवे उसमे फलराशिसे गुणित करने पर असंख्यात लोक पुद्गल परिवर्तनप्रमाण चतुर्गतिनिगोद जीव प्राप्त होते हैं। ये जीव अतीत कालसे अनन्तगुणे हीन हैं; क्योंकि अतीत कालमें अनन्त पुद्गल परिवर्तन प्राप्त होते हैं।

§ १८५. खुलासा इस प्रकार है—अतीत कालमें एक जीवके भाव परिवर्तनवार सबसे थोड़े हुए हैं। इनसे भवपरिवर्तनवार अनन्तगुणे हुए हैं। इनसे काल परिवर्तनवार अनन्तगुणे हुए हैं। इनसे क्षेत्रपरिवर्तनवार अनन्तगुणे हुए हैं। इनसे पुद्गल परिवर्तनवार अनन्तगुणे हुए हैं। अब इसकी सिद्धिके लिये अल्पबहुत्वको कहते हैं। जो इस प्रकार है—पुद्गलपरिवर्तनका काल सबसे थोड़ा है। इससे क्षेत्र परिवर्तनका काल अनन्तगुणा है। इससे काल परिवर्तनका काल अनन्तगुणा है। इससे भव परिवर्तनका काल अनन्तगुणा है। इससे भावपरिवर्तनका काल अनन्तगुणा है, इसलिये दृष्टान्तकी सिद्धि होती है। इस सम्यक्त्वचर अनन्त मिथ्यादृष्टि जीवराशिसे पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण जीव और भुजगार स्थिति विभक्तिको करनेवाले जीवोंसे असंख्यातगुणे जीव अवक्तव्यस्थितिविभक्तिको करते हैं यह सिद्ध हुआ।

*** अल्पतरस्थितिविभक्ति करनेवाले जीव असंख्यातगुणे हैं।**

§ १८६. **शंका**—गुणकारका प्रमाण क्या है ?

**समाधान**—आवलीका असंख्यातवां भाग गुणकार का प्रमाण है।

**शंका**—इसका क्या कारण है ?

**समाधान**—क्योंकि यहाँ पर उद्वेलना करनेवाले मिथ्यादृष्टि जीवोंके साथ सभी वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका ग्रहण किया है।

असंखेज्जगुणा अणंतगुणा वा किण्ण होंति? ण, आयाणुसारिवयणियमादो।

*** अणंताणुबंधीणं सव्वत्थोवा अवत्तव्वट्ठिदिविहत्तिया।**

§ १८७. कुदो, पलिदोवमस्स असंखेज्जभागपमाणत्तादो।

*** भुजगारट्ठिदिविहत्तिया अणंतगुणा।**

§ १८८. सव्वजीवरासीए असंखेज्जदिभागमेत्तजीवाणं भुजगारं कुणमाणाणमुवलंभादो।

*** अवट्ठिदट्ठिदिविहत्तिया असंखेज्जगुणा।**

§ १८९. कुदो? भुजगारट्ठिदिविहत्तियसंचयणिमित्तदोसमएहिंतो अवट्ठिदट्ठिदिविहत्तिजीवसंचयणिमित्तंतोमुहुत्तकालस्स असंखेज्जगुणत्तादो।

*** अप्पदरट्ठिदिविहत्तिया संखेज्जगुणा।**

§ १९०. कुदो? अवट्ठिदट्ठिदिबंधकालं पेक्खिदूण अप्पदरट्ठिदिसंतकालस्स संखेज्जगुणत्तादो। एवं चुण्णिसुत्तत्थं परूविय मंदमेहाविजणाणुग्गहट्ठमुच्चारणाणुगमं कस्सामो।

§ १९१. अप्पाबहुअं दुविहं—ओघेण आदेसेण य। तत्थ ओघेण मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० सव्वत्थोवा भुज०। अवट्ठि० असंखे०गुणा। अप्प० संखे०गुणा। अणंताणु०-

**शंका**—उपार्ध पुद्गलपरिवर्तनके द्वारा संचित हुई अनन्त राशिमेंसे अवक्तव्य स्थितिविभक्तिको करनेवाले जीव अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीवोंसे असंख्यातगुणे या अनन्तगुणे क्यों नहीं होते हैं?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि आयके अनुसार व्ययका नियम है।

*** अनन्तानुबन्धीकी अवक्तव्यस्थितिविभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं।**

§ १८७. क्योंकि ये पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं।

*** भुजगार स्थितिविभक्तिवाले जीव अनन्तगुणे हैं।**

§ १८८. क्योंकि सब जीव राशिके असंख्यातवें भागप्रमाण जीव भुजगार स्थितिविभक्तिको करते हुए पाये जाते हैं।

*** अवस्थितस्थितिभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं।**

§ १८९. क्योंकि भुजगार स्थितिविभक्तिवाले जीवोंके संचयका निमित्त दो समय है और अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीवोंके संचयका निमित्त अन्तर्मुहूर्त काल है जो कि दो समयसे असंख्यातगुणा है, अतः भुजगार स्थितिविभक्तिवाले जीवोंसे अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं।

*** अल्पतरस्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं।**

§ १९०. क्योंकि अवस्थित स्थितिबन्धके कालको देखते हुए अल्पतर स्थितिसत्त्वका काल उससे संख्यातगुणा है। इस प्रकार चूर्णिसूत्रोंके अर्थका कथन करके अब मन्दबुद्धि जनोंके अनुग्रहके लिये उच्चारणाका अनुगम करते हैं—

§ १९१. ओघ और आदेशके भेदसे अल्पबहुत्व दो प्रकारका है। उनमेंसे ओघकी अपेक्षा मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगारस्थितिविभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीव

चउक्क० सव्वत्थोवा अवत्तव्व०। भुज० अणंतगुणा। सेस० मिच्छत्तभंगो। सम्मत्त-सम्मामि० सव्वत्थोवा अवत्तव्वट्ठिदिविहत्तिया। कुदो, सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तसंतकम्मिय-मिच्छादिट्ठीणमसंखेज्जदिभागो सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तसंतकम्मेण सह सम्मत्तं पडिवज्जमाण-रासी होदि। तस्स वि असंखेज्जदिभागो सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि उव्वेल्लिय उवड्ढ-पोग्गलपरियट्टं भमदि। एदेण कमेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टब्भंतरे संचिदणंतजीवरासीदो जेण संचयाणुसारेण वओ होदि तेण अवत्तव्वट्ठिदिविहत्तिया थोवा। ण च चुण्णिसुत्तेण सह विरोहो; पुधभूदाइरियउवदेसमवलंबिय अवट्ठाणादो। अवट्ठि० असंखेज्जगुणा। भुज० असंखेज्जगुणा। अप्प० असंखेज्जगुणा। एवं तिरिक्ख०-कायजोगि०-ओरालि०-णवुंस०-चत्तारिक०-असंजद०-अचक्खु०-तिण्णिले०-भवसि०-आहारि त्ति।

§ १९२. आदेसेण णेरइएसु एवं चेव। णवरि अणंताणु० सव्वत्थोवा अवत्तव्व०। भुज० असंखे०गुणा। एवं सव्वणेरइय-पंचिंदियतिरिक्खतिय०-देव-भवणादि जाव सहस्सार०-पंचिंदिय०-पंचि०पज्ज०-तस-तसपज्ज०-पंचमण०-पंचवचि०-वेउव्वि०-इत्थि०-पुरिस०-चक्खु०-तेउ०-पम्म०-सण्णि त्ति।

§ १९३. पंचिं०तिरिक्खअपज्ज० मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोकसाय० णिरयभंगो।

संख्यातगुणे हैं। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे भुजगार स्थितिविभक्तिवाले जीव अनन्तगुणे हैं। शेष भंग मिथ्यात्वके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं; क्योंकि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व सत्कर्मवाले मिथ्यादृष्टियोंके असंख्यातवें भागप्रमाण जीवराशि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व सत्कर्मके साथ सम्यक्त्व को प्राप्त होती है। तथा इसके भी असंख्यातवें भागप्रमाण जीवराशि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करके उपार्धपुद्गल परिवर्तनकाल तक घूमती है। इस क्रमसे उपार्धपुद्गल परिवर्तन कालके भीतर संचित हुई अनन्त जीवराशिमेंसे चूंकि संचयके अनुसार व्यय होता है, इसलिये अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीव थोड़े हैं। इस कथनका चूर्णिसूत्रके साथ विरोध भी नहीं आता है, क्योंकि यह कथन पृथग्भूत आचार्यके उपदेशका अवलम्ब लेकर अवस्थित है। इनसे अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे भुजगार स्थिति-विभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार सामान्य तिर्यंच, काययोगी, औदारिककाययोगी, नपुंसकवेदी, क्रोधादि चार कषायवाले, असंयत, अचक्षुदर्शनवाले, कृष्णादि तीन लेश्यावाले, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिए।

§ १९२. आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें इसी प्रकार अर्थात् ओघके समान ही जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अपेक्षा अवक्तव्य स्थितिविभक्ति-वाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे भुजगार स्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार सब नारकी, पचेन्द्रिय तिर्यंचत्रिक, सामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार स्वर्ग तकके देव, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रियपर्याप्त, त्रस, त्रसपर्याप्त, पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी, वैक्रियिककाययोगी, स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी, चक्षुदर्शनवाले, पीतलेश्यावाले, पद्मलेश्यावाले और संज्ञी जीवोंके जानना चाहिए।

§ १९३. पंचेन्द्रियतिर्यंच अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंका भंग

**णवरि अणंताणु०चउक्क० अवत्तव्वं णत्थि। सम्मत्त-सम्मामि० अप्पाबहुअं णत्थि; एगपदत्तादो। एवं मणुसअपज्ज०-सव्वएइंदिय-सव्वविगलिंदिय-पंचिंदियअपज्ज०-सव्व-पंचकाय०-तसअपज्ज०-ओरालियमिस्स०-वेउ०मिस्स०-कम्मइय०-तिण्णिअण्णाण-मिच्छा-दिट्ठि-असण्णि०-अणाहारि त्ति।**

**§ १६४. मणुस० मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक०-सम्मत्त-सम्मामि० ओघं। णवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त० अवत्त० थोवा। अवट्ठि० संखे०गुणा। भुज० संखे०गुणा। अप्पदर० असंखे०गुणा। अथवा सम्म०-सम्मामि० अवट्ठि० थोवा। भुज० संखे० गुणा। अवत्तव्व० संखे०गुणा। अप्पद० असंखे०गुणा। अणंताणु०चउक्क० णिरओघ-भंगो। मणुसपज्ज०-मणुसिणीसु एवं चेव। णवरि जम्मि असंखेज्जगुणं तम्मि संखेज्ज-गुणं कायव्वं।**

**§ १९५. आणदादि जाव उवरिमगेवज्जो त्ति अणंताणु०चउक्क० सव्वत्थोवा अव-त्तव्व०। अप्पदर० असंखेज्जगुणा। सम्मत्त०-सम्मामि० ओघं। चुण्णिसुत्ते आणदादिसु सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं अवट्ठिदविहत्ती णत्थि। एत्थ पुण उच्चारणाए अत्थि। एदं**

नारकियोंके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके अनन्तानुबन्धी चतुष्कका अवक्तव्यपद नहीं है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अल्पबहुत्व नहीं है, क्योंकि यहाँ इन दो प्रकृतियोंका एक अल्पतरपद ही पाया जाता है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्त, सब एकेन्द्रिय, सब विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त, सब पांचो स्थावरकाय, त्रस अपर्याप्त, औदारिक मिश्रकाययोगी, वैक्रियिक-मिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, तीनों अज्ञानी, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी और अनाहारकोंके जानना चाहिए।

§ १६४. मनुष्योंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय, नौ नोकषाय, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे भुजगार स्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अल्पतर स्थिति-विभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। अथवा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा अवस्थित-स्थितिविभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे भुजगार स्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। अनन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग सामान्य नारकियोंके समान है। मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यनियोंमें इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि जहाँ असंख्यातगुणा है वहाँ संख्यातगुणा कहना चाहिये।

§ १९५. आनतकल्पसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अपेक्षा अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीव असं-ख्यातगुणे हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। चूर्णिसूत्रके अनुसार आनतादिकमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अवस्थितस्थितिविभक्ति नहीं है। परन्तु यहाँ उच्चा-रणामें है। सो जानकर इसकी संगति बिठा लेना चाहिये। यहां शेष प्रकृतियोंका अल्पबहुत्व नहीं है,

जाणिदूण घडावेदव्वं । सेसपयडीणं णत्थि अप्पाबहुअं; एयपदत्तादो । एवं सुक्कले० । अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठ० सव्वपयडि० अप्पाबहुअं णत्थि; एगपदत्तादो । एवमाहार०-आहारमिस्स०-अवगद०-अकसा०-आभिणि०-सुद०-ओहि०-मणपज्ज०—संजद०-सामाइय-छेदो० परिहार०-सुहुम०-जहाक्खाद०-संजदासंजद०-ओहिदंस०-सम्मादि०-खइय०-वेदय०-उवसम०-सासण०-सम्मामिच्छादिट्ठि त्ति । अभव० छव्वीसं पयडीणं मदि०भंगो ।

एवमप्पाबहुगाणुगमे समत्ते भुजगाराणुगमो समत्तो ।

# पदणिक्खेवो

*** एत्तो पदणिक्खेवो ।**

§ १६६. सुगममेदं; भुजगारविसेसो पदणिक्खेवो एत्तो अहिकओ दट्ठव्वो त्ति अहियारसंभालणफलत्तादो । कथं भुजगारविसेसो पदणिक्खेवो त्ति णासंकणिज्जं; तत्थ परूविदाणं चेव भुजगारादिपदाणं वड्ढि-हाणि-अवट्ठाणमण्णं कादूण जहण्णुक्कस्सविसेसेण विसेसिदूणेत्थ परूवणादो ।

*** पदणिक्खेवे परूवणा सामित्तमप्पाबहुअं अ ।**

§ १६७. एदं सुत्तं पदणिक्खेवत्थाहियारपमाणेण सह तण्णामाणि परूवेदि । एत्थ

क्योंकि उनका एक पद है । इसी प्रकार शुक्ललेश्यामें जानना चाहिए । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि-तकके देवोंमें सब प्रकृतियोंका अल्पबहुत्व नहीं है, क्योंकि एक पद है । इसी प्रकार आहारककाय-योगी, आहारकमिश्रकाययोगी, अपगतवेदी, अकषायी, आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत छेदोपस्थापनसंयत, परिहारविशुद्धिसंयत, सूक्ष्मसम्पराय-संयत, यथाख्यातसंयत, संयतासंयत, अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। अभव्योंमें छब्बीस प्रकृतियोंका भङ्ग मत्यज्ञानी जीवोंके समान है ।

इस प्रकार अल्पबहुत्वके समाप्त होने पर भुजगारानुगम समाप्त हुआ ।

## पदनिक्षेप

*** यहाँसे पदनिक्षेपानुगमका अधिकार है ।**

§ १६६. यह सूत्र सुगम है । भुजगार विशेषको पदनिक्षेप कहते हैं । जिसका यहाँसे अधि-कार है । इस प्रकार अधिकारकी सम्हाल करना इस सूत्रका फल है ।

**शंका**—भुजगारविशेषका नाम पदनिक्षेप कैसे है ?

**समाधान**—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि भुजगार अनुयोगद्वारमें कहे गये भुजगार आदि पदोंकी ही वृद्धि, हानि और अवस्थानरूप संज्ञा करके तथा उन्हें जघन्य और उत्कृष्ट विशेषणसे विशेषित करके उनका यहाँ कथन किया गया है ।

*** पदनिक्षेपमें प्ररूपणा, स्वामित्व अल्पबहुत्व ये तीन अनुयोगद्वार होते हैं ।**

§ १६७. यह सूत्र पदनिक्षेपके अर्थाधिकारोंकी संख्याके साथ उनके नामोंका कथन करता है ।

परूवणा-सामित्ताणं विवरणं ण लिहिदं; सुगमत्तादो।

§ १९८. संपहि उच्चारणमस्सिदूण तेसिं विवरणं कस्सामो—पदणिक्खेवे तत्थ इमाणि तिण्णि अणिओगद्दाराणि—समुक्कित्तणा सामित्तमप्पाबहुअं चेदि। तत्थ समुक्कित्तणा दुविहा–जह० उक्क०। उक्क० पयदं। दुविहो णिद्देसो–ओघे० आदेसे०। ओघेण सव्वपयडीणमत्थि उक्क० वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च। एवं चदुसु गदीसु। णवरि पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० सम्मत्त-सम्मामि० अत्थि उक्क० हाणी। आणदादि जाव उवरिमगेवज्जो त्ति छव्वीसपयडीणमत्थि उक्क० हाणी। सम्म०-सम्मामि० अत्थि उक्क० वड्ढी हाणी। अवट्ठाणं णत्थि। अणुदिसादि जाव सव्वट्ठे त्ति अट्ठावीसपय० अत्थि उक्क० हाणी। एवं णेदव्वं जाव अणाहारए त्ति। एवं जहण्णं पि णेदव्वं।

चूर्णिसूत्रमें प्ररूपणा और स्वामित्वका विशेष व्याख्यान निबद्ध नहीं किया है, क्योंकि उनका व्याख्यान सुगम है।

§ १९८. अब उच्चारणाका आश्रय लेकर उनका व्याख्यान करते हैं—पदनिक्षेपमें ये तीन अनुयोगद्वार हैं—समुत्कीर्तना, स्वामित्व और अल्पबहुत्व। उनमेंसे समुत्कीर्तना दो प्रकारकी है—जघन्य और उत्कृष्ट। उनमेंसे उत्कृष्टका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। उनमेंसे ओघकी अपेक्षा सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट वृद्धि, हानि और अवस्थान है। इसी प्रकार चारों गतियोंमें जानना। किन्तु इतनी विशेषता है कि पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्त जीवोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानि है। आनतकल्पसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट हानि है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट वृद्धि और हानि है। अवस्थान नहीं है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट हानि है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक कथन करना चाहिये। इसी प्रकार जघन्य वृद्धि आदिका भी जानना चाहिये।

**विशेषार्थ**—यहाँ भुजगार विशेषको पदनिक्षेप कहा है। इसका यह तात्पर्य है कि पहले जो भुजगार, अल्पतर और अवस्थित पद बतलाये हैं उनकी क्रमसे वृद्धि, हानि और अवस्थित संज्ञा करके और उनमें जघन्य और उत्कृष्ट भेद करके कथन करना पदनिक्षेप कहलाता है। यहाँ पदसे वृद्धि आदि रूप पदोंका ग्रहण किया है और उनका जघन्य तथा उत्कृष्टरूपसे निक्षेप करना पदनिक्षेप कहलाता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस अधिकारकी यतिवृषभ आचार्यने केवल तीन अधिकारों द्वारा कथन करनेकी सूचना की है। वे तीन अधिकार प्ररूपणा, स्वामित्व और अल्पबहुत्व हैं। इसके कालादि और अधिकार क्यों नहीं स्थापित किये गये इस प्रश्नका उत्तर देना कठिन है। बहुत सम्भव है परम्परासे इन तीन अधिकारों द्वारा ही इस अनुयोगद्वारका वर्णन किया जाता रहा हो। षट्खण्डागममें भी इस अधिकारका उक्त तीन अनुयोगद्वारोंके द्वारा वर्णन किया गया है। यतिवृषभाचार्यने यहाँ नामनिर्देश तो तीनोंका किया है परन्तु वर्णन केवल अल्पबहुत्वका ही किया है। फिर भी उच्चारणामें इन सबका वर्णन है। वीरसेन स्वामीने उसके अनुसार उन अनुयोगद्वारोंका खुलासा किया है। प्ररूपणा अनुयोगद्वारका खुलासा करते हुए जो यह बतलाया है कि ओघसे सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट वृद्धि, उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान है सो इसका यह भाव है कि जिस कर्मकी उत्कृष्ट स्थितिके प्राप्त होनेके पूर्व समयमें जितनी जघन्य स्थिति सम्भव हो, उसके रहते हुए भी तदनन्तर समयमें संक्लेश आदि अपने अपने कारणोंके अनुसार वह जीव उस कर्मकी उत्कृष्ट स्थितिको

§ १९९. **सामित्तं दुविहं—जहण्णमुक्कस्सं च। उक्कस्सए पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण च। तत्थ ओघेण मिच्छत्त-सोलसक० उक्क० वड्ढी कस्स? अण्णदरस्स जो चउट्ठाणियजवमज्झस्स उवरिमंतोमुहुत्तं अंतोकोडाकोडिट्ठिदिं बंधमाणो अच्छिदो, पुण्णाए ट्ठिदिबंधगद्धाए उक्कस्ससंकिलेसं गदो तदो उक्कस्सट्ठिदी पबद्धा तस्स उक्क० वड्ढी। तस्सेव से काले उक्कस्समवट्ठाणं। उक्क० हाणी कस्स? अण्णद० उक्कस्सट्ठिदिसंतकम्मम्मि उक्कस्स-ट्ठिदिखंडयं पादेंतस्स उक्क० हाणी। णवणोक० उक्क० वड्ढी कस्स०? अण्णद० तप्पा-ओग्गजहण्णट्ठिदिसंतकम्मिएण उक्कस्सकसायट्ठिदीए पडिच्छिदाए तस्स उक्क० वड्ढी। तस्सेव से काले उक्क० अवट्ठाणं। उक्क० हाणी कस्स? अण्णद० उक्क० ट्ठिदिसंतकम्मम्मि जेण उक्कस्सट्ठिदिकंडओ पादिदो तस्स उक्क० हाणी। सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० वड्ढी**

प्राप्त हो सकता है। उदाहरणार्थ मिथ्यात्वकी अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरकी स्थितिवाला जीव भी संक्लेशके कारण तदनन्तर समयमें सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण उत्कृष्ट स्थितिको प्राप्त हो सकता है। इसी प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सागरपृथक्त्व स्थितिवाला जीव भी तदनन्तर समयमें अन्तर्मुहूर्तकम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण स्थितिको प्राप्त हो सकता है। इसी प्रकार यथायोग्य अन्य कर्मोंकी उत्कृष्ट वृद्धि जानना चाहिये। यह उत्कृष्ट वृद्धि हुई। इसके बाद जो अवस्थान होता है उसे वृद्धिसम्बन्धी उत्कृष्ट अवस्थान कहते हैं। इसी प्रकार उत्कृष्ट काण्डकघातका विचार करके उत्कृष्ट हानि और हानिसम्बन्धी उत्कृष्ट अवस्थान जान लेना चाहिये। ये उत्कृष्ट वृद्धि आदि तीनों पद चारों गतियोंके जीवोंके सम्भव हैं। किन्तु पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्यअपर्याप्त जीवोंके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उक्त पदोंमें से एक उत्कृष्ट हानि ही होती है। आनतादिकमें २६ प्रकृतियोंका एक अल्पतर पद है इसलिये २६ प्रकृतियोंकी केवल उत्कृष्ट हानि होती है। किन्तु सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार और अल्पतर पद सम्भव हैं अतः इन दो प्रकृतियोंके उत्कृष्ट अवस्थानके विना दो पद होते हैं। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंके २८ प्रकृतियोंका एक अल्पतर पद ही सम्भव है इसलिये एक उत्कृष्ट हानि होती है। इसीप्रकार जहाँ भुजगार आदि जितने पद बतलाये हों उनका विचार करके अन्य मार्गणाओंमें भी ये उत्कृष्ट वृद्धि आदि पद जान लेना चाहिये।

इसप्रकार प्ररूपणा अनुयोगद्वारका कथन समाप्त हुआ।

§ १९९. स्वामित्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उनमेंसे उत्कृष्टका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। उनमेंसे ओघकी अपेक्षा मिथ्यात्व और सोलह कषायोंकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? जो कोई एक जीव चतुःस्थानिक यवमध्यके ऊपर अन्तर्मुहूर्त काल तक अन्तःकोडाकोडी सागरप्रमाण स्थितिको बाँधता हुआ अवस्थित है। पुनः स्थितिबन्धकालके पूर्ण होनेपर उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त हुआ और तदनन्तर उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध किया उसके उत्कृष्ट वृद्धि होती है। तथा उसके तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है। उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जिसने उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मके रहते हुए उत्कृष्ट स्थितिखण्डका घात किया है उसके उत्कृष्ट हानि होती है। नौ नोकषायोंकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? नौ नोकषायोंकी तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिसत्कर्मवाले जिस जीवने कषायकी उत्कृष्ट स्थितिको नौ नोकषायरूपसे स्वीकार किया है उसके उत्कृष्ट वृद्धि होती है। तथा उसी जीवके तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है। उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जिस जीवने उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मके रहते हुए उत्कृष्ट स्थिति-काण्डकका घात किया है उसके उत्कृष्ट हानि होती है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट

कस्स० ? अण्णदरस्स वेदगसम्मत्तपाओग्गजहण्णट्ठिदिसंतकम्मियमिच्छादिट्ठिणा मिच्छत्त-कस्सट्ठिदिं बंधिदूण ट्ठिदिघादमकाऊण अंतोमुहुत्तेण सम्मत्ते पडिवण्णे तस्स पढमसमय-वेदगसम्मादिट्ठिस्स उक्क० वड्ढी। उक्क० हाणी कस्स० ? अण्णद० उक्कस्सट्ठिदिसंतकम्मम्मि उक्कस्सट्ठिदिकंडगे हदे तस्स उक्कस्सहाणी। उक्क० अवट्ठाणं कस्स० ? अण्णद० जो सम्मत्तट्ठिदिसंतादो समयुत्तरमिच्छत्तट्ठिदिसंतकम्मिओ तेण समत्ते पडिवण्णे तस्स पढमसमयसम्मादिट्ठिस्स उक्कस्समवट्ठाणं। एवं चदुसु गदीसु। णवरि पंचिं०तिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज० छव्वीसपयडीणमुक्क० वड्ढी कस्स० ? अण्णद० तप्पाओग्गजहण्णट्ठिदिसंत-कम्मिएण तप्पाओग्गउक्कस्सट्ठिदीए पबद्धाए तस्स उक्कस्सिया वड्ढी। तस्सेव से काले उक्कस्समवट्ठाणं। उक्क० हाणी कस्स० ? अण्णदरस्स मणुस्सो मणुस्सिणो पंचिंदियतिरि-क्खजोणिओ वा उक्कस्सट्ठिदिं घादयमाणो अपज्जत्तएसु उववण्णो तेण उक्कस्सट्ठिदिकंडए हदे तस्स उक्क० हाणी। सम्मत्त०-सम्मामि० उक्क० हाणी कस्स ? अण्णद० मणुस्सो मणुस्सिणी पंचिं०तिरि०जोणिणीओ वा सम्मत्त०-सम्मामि० उक्कस्सट्ठिदिकंडयं घादय-माणो अपज्जत्तएसुववण्णो तेण उक्कस्सट्ठिदिकंडए हदे तस्स उक्क० हाणी।

§ २००. आणदादि जाव उवरिमगेवज्जो त्ति छव्वीसं पयडीणमुक्क०हाणी कस्स ? अण्णद० पढमसम्मत्ताहिमुहेण पढमट्ठिदिखंडए हदे तस्स उक्क० हाणी। सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० वड्ढी कस्स ? अण्णद० जो वेदगसम्मत्तप्पाओग्गसम्मत्तजहण्णट्ठिदि-

वृद्धि किसके होती है ? वेदकसम्यक्त्वके योग्य जघन्य स्थितिसत्कर्मवाले जिस मिथ्यादृष्टि जीवने मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके और स्थितिघात न करके अन्तर्मुहूर्तकालमें सम्यक्त्वको प्राप्त किया उस वेदकसम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें उत्कृष्ट वृद्धि होती है। उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? उत्कृष्ट स्थिति सत्कर्मके रहते हुए जिस जीवने उत्कृष्ट स्थितिकाण्डकका घात किया उसके उत्कृष्ट हानि होती है। उत्कृष्ट अवस्थान किसके होता है ? सम्यक्त्वके स्थितिसत्कर्मसे मिथ्यात्वकी एक समय अधिक स्थितिसत्कर्मवाला जो जीव सम्यक्त्वको प्राप्त होता है उस सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है। इसी प्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्त जीवोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ? तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिसत्कर्मवाले जिस जीवने तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध किया उसके उत्कृष्ट वृद्धि होती है। तथा उसीके तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है। उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? जो मनुष्य, मनुष्यनी या पचेन्द्रिय तिर्यंच योनिवाला जीव उत्कृष्ट स्थिति-का घात करता हुआ अपर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ और वहाँ उसने उत्कृष्ट स्थितिकाण्डकका घात किया उसके उत्कृष्ट हानि होती है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? जो मनुष्य, मनुष्यनी या पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिवाला जीव सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका घात करता हुआ अपर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ और वहाँ उसने उत्कृष्ट स्थितिकाण्डकका घात किया उसके उत्कृष्ट हानि होती है।

§ २००. आनतकल्पसे लेकर उपरिम ग्रैवेयकतकके देवोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? प्रथम सम्यक्त्वके अभिमुख जिस जीवने प्रथम स्थितिकाण्डकका घात कर दिया है उसके उत्कृष्ट हानि होती है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ?

संतकम्मिओ मिच्छत्तस्स तप्पाओग्गुक्कस्सट्ठिदिसंतकम्मिओ वेदगसम्मत्तं पडिवण्णो तस्स उक्क० वड्ढी। उवसमसम्मत्तं चरिमफालीए सह पडिवज्जंतम्मि उक्कस्सिया वड्ढी किण्ण दिज्जदे ? ण; तिण्णि वि करणाणि कादूण उवसमसम्मत्तं पडिवज्जमाणस्स ट्ठिदिकंडयघादेण घादिय दहरीकयट्ठिदिम्मि उक्कस्सट्ठिदीए अभावादो। उक्क० हाणी कस्स ? अण्णद० अणंताणु०चउक्कं विसंजोएंतेण पढमे ट्ठिदिकंडए हदे तस्स उक्क० हाणी।

§ २०१. अणुदिसादि जाव सव्वट्ठ त्ति अट्ठावीसपयडी० उक्क० हाणी कस्स ? अण्णद० अणंताणु०चउक्क० विसंजोएंतेण पढमट्ठिदिखंडए हदे तस्स उक्कस्सिया हाणी। एवं जाणिदूण णेदव्वं जाव अणाहारए त्ति।

§ २०२. जहण्णए पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघे० आदेसे०। ओघेण छव्वीसं पयडीणं जह० वड्ढी कस्स ? अण्णद० समयूणुक्कस्सट्ठिदिं बंधिय जेणुक्कस्सट्ठिदी[1] पबद्धा तस्स जह० वड्ढी। ज० हाणी कस्स ? अण्णद० उक्कस्सट्ठिदिं बंधमाणेण जेण समयूणुक्कस्सट्ठिदी पबद्धा तस्स जह० हाणी। एगदरत्थ अवट्ठाणं। सम्मत्त-सम्मामि० जह० वड्ढी कस्स ? अण्णद० जो पुव्वुप्पण्णादो सम्मत्तादो मिच्छत्तस्स दुसमयुत्तरट्ठिदिं

वेदकसम्यक्त्वके योग्य सम्यक्त्वकी जघन्य स्थिति सत्कर्मवाला और मिथ्यात्वकी तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मवाला जो जीव वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ उसके उत्कृष्ट वृद्धि होती है।

**शंका**—जो सम्यक्त्व प्रकृतिकी अन्तिम फालिके साथ उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होता है उसे उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी क्यों नहीं बतलाया ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि तीनों ही करणोंको करके उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जिस जीवने स्थितिकाण्डकघातके द्वारा दीर्घ स्थितिका घात करके उसे ह्रस्व कर दिया है उसके उत्कृष्ट स्थिति नहीं पाई जाती है।

उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करनेवाले जिस जीवने प्रथम स्थितिकाण्डकका घात कर दिया है उसके उत्कृष्ट हानि होती है।

§ २०१. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना करनेवाले जिस जीवने प्रथम स्थितिकाण्डकका घात कर दिया है उसके उत्कृष्ट हानि होती है। इसी प्रकार जानकर अनाहारक मार्गणातक ले जाना चाहिये।

§ २०२. अब जघन्य स्वामित्वका प्रकरण है—उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। उनमेंसे ओघकी अपेक्षा छब्बीस प्रकृतियोंकी जघन्य वृद्धि किसके होती है ? एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिको बांधकर जिसने उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध किया है उसके जघन्य वृद्धि होती है। जघन्य हानि किसके होती है ? उत्कृष्ट स्थितिका बांधनेवाले जिस जीवने एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध किया उसके जघन्य हानि होती है। तथा किसी एक जगह अवस्थान होता है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य वृद्धि किसके होती है ? जो पहले प्राप्त सम्यक्त्वकी स्थिति से मिथ्यात्वकी दो समय अधिक स्थितिको बांधकर सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ उसके जघन्य वृद्धि

1 ता. आ. प्रत्योः बंधिय जो अणुक्कस्सट्ठिदी इति पाठः।

बंधिय सम्मत्तं पडिवण्णो तस्स जह० वड्डी । जह० हाणी कस्स ? अण्णद० गलमाण-अधट्ठिदिस्स । अवट्ठाणस्स उक्कस्सभंगो । एवं चदुसु गदीसु । णवरि पंचि०तिरि०अपज्ज० मणुसअपज्जत्तएसु सम्मत्त०-सम्मामि० जह० हाणी कस्स ? अण्णद० गलमाणअधट्ठिदिस्स।

§ २०३. आणदादि जाव णवगेवज्जा त्ति छव्वीसं पयडीणं जहण्णिया हाणी कस्स ? अण्णद० गलमाणअधट्ठिदिस्स । सम्मत्त०-सम्मामि० जह० वड्डी कस्स ? अण्णद० जो मिच्छत्तं गंतूण एगमुव्वेल्लणकंडयमुव्वेल्लेदूण पुणो सम्मत्तं पडिवण्णो तस्स पढमसमय-सम्माइट्ठिस्स सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं जह० वड्डी । जह० हाणी कस्स ? गलमाण-अधट्ठिदिस्स । अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठे त्ति अट्ठावीसपयडीणं जह० हाणी कस्स ? अण्णद० गलमाणअधट्ठिदिस्स । एवं जाणिदूण णेदव्वं जाव अणाहारए त्ति ।

*** अप्पाबहुए पयदं ।**

§ २०४. संपहि पत्तावसरमप्पाबहुअं परूवेमि त्ति भणिदं होदि ।

*** मिच्छत्तस्स सव्वत्थोवा उक्कस्सिया हाणी ।**

§ २०५. कुदो ? जत्तियमेत्तट्ठिदीओ उक्कस्सेण वड्ढिदूण बंधदि । पुणो कंडयघादेण उक्कस्सेण घादयमाणस्स तत्तियमेत्तट्ठिदीणं घादणसत्तीए अभावादो । तं कुदो णव्वदे ?

होती है। जघन्य हानि किसके होती है ? जिसके प्रति समय अधःस्थिति गल रही है ऐसे किसी जीवके जघन्य हानि होती है। जघन्य अवस्थानका भंग उत्कृष्टके समान है। इसी प्रकार चारों गतियोंमे जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्त जीवोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य हानि किसके होती है ? जिसके अधःस्थिति गल रही है उसके जघन्य हानि होती है।

§ २०३. आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी जघन्य हानि किसके होती है ? जिसके प्रति समय अधःस्थिति गल रही है उसके जघन्य हानि होती है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य वृद्धि किसके होती है ? जो मिथ्यात्वको प्राप्त होकर और एक उद्वेलना-काण्डककी उद्वेलना करके पुनः सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ है उस सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य वृद्धि होती है। जघन्य हानि किसके होती है ? जो प्रति समय अधःस्थितिको गला रहा है उसके जघन्य हानि होती है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी जघन्य हानि किसके होती है ? जिसके प्रति समय अधःस्थिति गल रही है उसके जघन्य हानि होती है। इसी प्रकार जानकर अनाहारक मार्गणातक कथन करना चाहिये।

*** अब अल्पबहुत्वका प्रकरण है ।**

§ २०४. अब अवसरप्राप्त अल्पबहुत्वानुगमका कथन करते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

*** मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानि सबसे थोड़ी है ।**

§ २०५. क्योंकि यह जीव जितनी स्थितिको उत्कृष्टरूपसे बढ़ाकर बाँधता है, काण्डकघातके द्वारा उत्कृष्ट रूपसे घात करते हुए उस जीवके उतनी स्थितिके घात करनेकी शक्ति नहीं पाई जाती है। तात्पर्य यह है कि एक बारमें जितनी स्थिति बढ़ाकर बांधता है उतनी स्थितिका एक बारमें घात नहीं होता।

एदम्हादो चेव अप्पाबहुगादो ।

*** उक्कस्सिया वड्ढी अवट्ठाणं च सरिसा विसेसाहिया ।**

§ २०६. केत्तियमेत्तेण ? उक्कस्सियाए वड्ढीए उक्कस्सहाणिं सोहिय सुद्धसेससंखेज्ज-सागरोवमट्ठिदिमेत्तेण । वड्ढिअवट्ठाणाणं कथं सरिसत्तं ? [1]पुव्वट्ठिदीओ पेक्खिदूण जेहि ट्ठिदिविसेसेहि ट्ठिदीए वड्ढी होदि तेसिं ट्ठिदिविसेसाणं वड्ढि त्ति सण्णा । जेहि ट्ठिदि-विसेसेहि वड्ढिदूण हाइदूण वा अवचिट्ठदि तेसिं वड्ढिद-हाइदट्ठिदिविसेसाणमवट्ठाणमिदि जेण सण्णा तेण वड्ढि-अवट्ठाणाणं सरिसत्तं ण विरुज्झदे ।

*** एवं सव्वकम्माणं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तवज्जाणं ।**

§ २०७. जहा मिच्छत्तस्स अप्पाबहुअं परूविदं तहा सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तवज्जाणं सव्वकम्माणमप्पाबहुअं परूवेदव्वं; विसेसाभावादो । जासु पयडीसु विसेसो अत्थि तस्स विसेसस्स परूवणट्ठमुत्तरसुत्तं [2]भणदि ।

*** णवरि णवुंसयवेद-अरदि-सोग-भय-दुगुंछाणमुक्कस्सिया वड्ढी अवट्ठाणं थोवा ।**

§ २०८. कुदो, पलिदो० असंखे०भागेणब्भहियवीससागरोवमकोडाकोडिपमाणत्तादो ।

**शंका**—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

**समाधान**—इसी अल्पबहुत्वसे जाना जाता है ।

*** उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थान ये दोनों समान होते हुए विशेष अधिक हैं ।**

§ २०६. कितने अधिक हैं ? उत्कृष्ट वृद्धिमेंसे उत्कृष्ट हानिको घटाकर जो संख्यात सागर स्थिति शेष रहती है तत्प्रमाण अधिक हैं ।

**शंका**—वृद्धि और अवस्थान समान कैसे हो सकते हैं ?

**समाधान**—पहलेकी स्थितियोंको देखते हुए जिस स्थिति विशेषकी अपेक्षा स्थितिकी वृद्धि हो उन स्थितिविशेषोंकी चूंकि वृद्धि यह संज्ञा है । तथा जिन स्थिति विशेषोंकी अपेक्षा बढ़कर या घट कर स्थिति स्थित रहती है उन बढ़ी हुई या घटाई हुई स्थितियोंकी चूंकि अवस्थान यह संज्ञा है इसलिये वृद्धि और अवस्थानके समान होनेमें कोई विरोध नहीं आता है ।

*** इसी प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वको छोड़कर सब कर्मोंका अल्प-बहुत्व जानना चाहिए ।**

§ २०७. जिसप्रकार मिथ्यात्वके अल्पबहुत्वका कथन किया उसी प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वको छोड़कर शेष सब कर्मोंके अल्पबहुत्वका कथन करना चाहिये, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है । तथा जिन प्रकृतियोंमें विशेषता है उनकी विशेषताके कथन करनेके लिये आगेके सूत्रको कहते हैं—

*** किन्तु इतनी विशेषता है कि नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, और जुगुप्साकी उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थान थोड़ा है ।**

§ २०८. क्योंकि इनकी वृद्धि और अवस्थानका प्रमाण पल्योपमके असंख्यातवें भागसे

---

1 आ. प्रतौ पुध ट्ठिदीओ इति पाठः । 2 आ. प्रतौ भणिदं इति पाठः ।

तं जहा—कसाएसु उक्कस्सट्ठिदिं बंधमाणेसु णवुंसयवेदअरदिसोगभयदुगुंछाणं णियमेण बंधो होदि। होंतो वि एदासिं पयडीणं ट्ठिदिबंधो उक्कस्सेण वीसंसागरोवमकोडाकोडिमेत्तो होदि। जहण्णेण समयूणाबाहाकंडएणूणवीसंसागरोवमकोडाकोडिमेत्तो; एत्थ उक्कस्सवड्ढि-अवट्ठाणेहिं अहियारत्तादो। एगाबाहाकंडएणूणवीसंसागरोवमकोडाकोडिमेत्तट्ठिदिं पंच णोकसाया बंधावेदव्वा। एवं बंधिय पुणो बंधावलियादिक्कंतकसायट्ठिदीए पंचणोकसाएसु संकंताए पलिदोवमस्स असंखे०भागेणब्भहियवीसंसागरोवमकोडाकोडिमेत्ता वड्ढी अवट्ठाणं च होदि तेणेगा थोवा।

* उक्कस्सिया हाणी विसेसाहिया।

§ २०९. कुदो? हेट्ठा अंतोकोडाकोडिं मोत्तूण उवरिम-किंचूणचालीससागरोवमकोडाकोडिमेत्तट्ठिदीणं कंडयघादेण घादुवलंभादो। केत्तियमेत्तेण विसेसाहिया? अंतोकोडाकोडीए ऊणवीसंसागरोवमकोडाकोडिमेत्तेण। इत्थिपुरिसहस्सरदीणमेस कमो णत्थि; उक्कस्सट्ठिदिबंधकाले तासिं बंधाभावादो। पडिहग्गद्धाए अंतोकोडाकोडिमेत्तट्ठिदिं बंधमाणचदुणोकसायाणमुवरि बंधावलियादिक्कंतकसायुक्कस्सट्ठिदीए संकंतिसंभवादो।

* सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वत्थोवमुक्कस्समवट्ठाणं।

§ २१०. कुदो? एगसमयत्तादो।

अधिक बीस कोड़ाकोड़ी सागर है। खुलासा इस प्रकार है—कषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध होते हुए नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय और जुगुप्साका नियमसे बन्ध होता है। बन्ध होता हुआ भी इन प्रकृतियोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध बीस कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण होता है और जघन्य स्थितिबन्ध एक समयकम एक आबाधाकाण्डकसे न्यून बीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण होता है। प्रकृतमें उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थानका अधिकार है अतः पांच नोकषायोंका स्थितिबन्ध एक आबाधाकाण्डक कम बीस कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण कराना चाहिये। इस प्रकार बन्ध कराके पुनः बन्धावलिसे रहित कषायकी स्थितिके पाँच नोकषायोंमें संक्रान्त कराने पर चूंकि पल्योपमके असंख्यातवें भागसे अधिक बीस कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण वृद्धि और अवस्थान होता है इसलिये यह थोड़ी है।

* उत्कृष्ट हानि विशेष अधिक है।

§ २०९. क्योंकि नीचे अन्तःकोड़ाकोड़ी प्रमाण स्थितिको छोड़कर कुछ कम चालीस कोड़ाकोड़ी प्रमाण उपरिम स्थितियोंका काण्डकघातके द्वारा घात पाया जाता है।

**शंका**—कितनी अधिक है?

**समाधान**—अन्तःकोड़ाकोड़ी कम बीस कोड़ाकोड़ी सागर अधिक है।

किन्तु स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य और रतिका यह क्रम नहीं है, क्योंकि उत्कृष्ट स्थिति बन्धके समय इन प्रकृतियोंका बन्ध नहीं होता है। अतः प्रतिभग्नकालके भीतर अन्तःकोड़ाकोड़ी प्रमाण स्थितिका लेकर बंधनेवाली चार नोकषायोंके ऊपर बन्धावलिसे रहित कषायकी उत्कृष्ट स्थितिका संक्रमण देखा जाता है।

* सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट अवस्थान सबसे थोड़ा है।

§ २१०. क्योंकि उसका प्रमाण एक समय है।

*** उक्कस्सिया हाणी असंखेज्जगुणा।**

§ २११ कुदो ? अंतोकोडाकोडीए ऊणसत्तरिसागरोवमकोडाकोडिपमाणत्तादो।

*** उक्कस्सिया वड्ढी विसेसाहिया।**

§ २१२. सागरोवमेण सागरोवमपुधत्तेण वा ऊणसत्तरिसागरोवमकोडाकोडिपमाणत्तादो। सागरोवमेण सागरोवमपुधत्तेण वा ऊणत्तस्स किं कारणं ? वुच्चदे—एइंदिएसु ठाइदूण[1] जेण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि उव्वेल्लिदाणि सो तेसिं सागरोवममेत्तट्ठिदिसंते सेसे वेदगसम्मत्तपाओग्गो जदि तसकाइएसु अच्छिदूण उव्वेल्लदि तो सागरोवमपुधत्ते सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तट्ठिदिसंते सेसे वेदगपाओग्गो होदि तेणेत्तिएण ऊणसत्तरिसागरोवमकोडाकोडिमेत्तट्ठिदी उक्कस्सवड्ढी होदि। एत्थ पुण एगसागरोवमेणूणुक्कस्सट्ठिदी घेत्तव्वा; उक्कस्सवड्ढीए अहियारादो।

§ २१३. संपहि चुण्णिसुत्तमस्सिदूण अप्पाबहुअपरूवणं काऊण विसेसावगमणट्ठमेत्थ उच्चारणाणुगमं कस्सामो। अप्पाबहुअं दुविहं—जहण्णमुक्कस्सं च। उक्कस्सए पयदं। दुविहो णि०—ओघे० आदेसे०। तत्थ ओघेण छब्बीसं पयडीणं सव्वत्थोवा उक्कस्सिया हाणी। वड्ढी अवट्ठाणं च विसेसाहिया। एदस्स आइरियस्स अहिप्पाएण कसाएसु उक्कस्सट्ठिदिं बंधमाणेसु पंचणोकसायाणमुक्कस्सट्ठिदिबंधणियमो णत्थि; हाणीदो वड्ढी विसेसाहिया

* उत्कृष्ट हानि असंख्यातगुणी है।

§ २११. क्योंकि इसका प्रमाण अन्तःकोड़ाकोड़ी सागर कम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर है।

* उत्कृष्ट वृद्धि विशेष अधिक है।

§ २१२. क्योंकि इसका प्रमाण एक सागर या सागरपृथक्त्व कम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर है।

**शंका**—सत्तर कोड़ीकोड़ी सागरमेंसे जो एक सागर या सागरपृथक्त्व कम किया है सो इसका क्या कारण है ?

**समाधान**—जिसने एकेन्द्रियोंमें रहकर सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना की है वह उनकी एक सागर प्रमाण स्थितिके रहते हुए वेदकसम्यक्त्वके योग्य होता है। और यदि त्रसकायिकोंमें रहकर उद्वेलना की है तो वह सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सागर पृथक्त्व प्रमाण स्थितिके रहनेपर वेदकसम्यक्त्वके योग्य होता है, अतः इतनी स्थिति कम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण उत्कृष्ट वृद्धि होती है। परन्तु यहाँ पर एक सागर कम उत्कृष्ट स्थिति लेनी चाहिये, क्योंकि यहाँ उत्कृष्ट वृद्धिका अधिकार है।

§ २१३. इस प्रकार चूर्णिसूत्रके आश्रयसे अल्पबहुत्वका कथन करके अब उसका विशेष ज्ञान करानेके लिये यहाँ पर उच्चारणाका अनुगम करते हैं। अल्पबहुत्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उनमेंसे उत्कृष्टका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेंसे ओघकी अपेक्षा छब्बीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट हानि सबसे थोड़ी है। उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थान विशेष अधिक हैं। उच्चारणाचार्यके अभिप्रायानुसार कषायोंकी उत्कृष्ट स्थिति बंधते समय पाँच नोकषायोंकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धका नियम नहीं है। अन्यथा पाँच नोकषायोंके

१ आ० प्रतौ ठाइदूण इति पाठः।

त्ति पंचणोकसायाणमप्पाबहुअण्णहाणुववत्तीदो। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त० सव्वत्थोवा उक्क० अवट्ठाणं। उक्क० हाणी असंखे०गुणा। उक्क० वड्ढी विसेसा०। एवं चदुसु गदीसु। णवरि पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० मणुस्सअपज्ज० छव्वीसं पयडीणं सव्वत्थोवा उक्क० वड्ढी अवट्ठाणं च। उक्क० हाणी संखे०गुणा। सम्मत्त-सम्मामि० णत्थि अप्पाबहुअं; एगपदत्तादो। एवं सव्वविगलिंदिय-पंचिंदियअपज्ज०-तसअपज्ज०-असण्णि त्ति।

§ २१४. आणदादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति छव्वीसं पयडीणमप्पाबहुअं णत्थि; एगपदत्तादो। सम्मत्त०-सम्मामि० सव्वत्थोवा उक्क० हाणी। उक्क० वड्ढी संखेज्जगुणा। अणुदिसादि जाव सव्वट्ठे त्ति णत्थि अप्पाबहुगं; एगपदत्तादो।

§ २१५. इंदियाणुवादेण एइंदिएसु छव्वीसं पयडीणं सव्वत्थोवा वड्ढी अवट्ठाणं च। हाणी असंखे०गुणा। एइंदियाणं सत्थाणवड्ढि-अवट्ठाणविवक्खाए एदमप्पाबहुअं परूविदं। परत्थाणविवक्खाए पुण णवणोकसाएसु विसेसो अत्थि सो जाणियव्वो। एसो अत्थो जहासंभवमण्णत्थ वि जोजेयव्वो। सम्मत्त-सम्मामि० णत्थि अप्पाबहुअं। एवं सव्वेइंदिय सव्वपंचकायाणं।

§ २१६. पंचिंदिय-पंचिं०पज्जत्तएसु मूलोघभंगो। एवं तस-तसपज्ज०-पंचमण०-पंचवचि०-कायजोगि०-ओरालिय०-वेउव्विय०-तिण्णिवेद०-चत्तारिकसाय-असंजद०-

अल्पबहुत्वमें हानिसे वृद्धि विशेष अधिक है यह नहीं बन सकता है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट अवस्थान सबसे थोड़ा है। इससे उत्कृष्ट हानि असंख्यातगुणी है। इससे उत्कृष्ट वृद्धि विशेष अधिक है। इसी प्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थिति सबसे थोड़ी है। इससे उत्कृष्ट हानि संख्यातगुणी है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अल्पबहुत्व नहीं है, क्योंकि यहाँ उसका एक अल्पतर पद ही पाया जाता है। इसी प्रकार सब विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त, त्रस अपर्याप्त और असंज्ञी जीवोंके जानना चाहिए।

§ २१४. आनतकल्पसे लेकर उपरिम ग्रैवेयकतकके देवोंमें छब्बीस प्रकृतियोंका अल्पबहुत्व नहीं है, क्योंकि यहाँ पर इन प्रकृतियोंका एक अल्पतर पद ही पाया जाता है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानि सबसे थोड़ी है। इससे उत्कृष्ट वृद्धि संख्यातगुणी है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें अल्पबहुत्व नहीं है, क्योंकि यहाँपर सभी प्रकृतियोंका एक अल्पतर पद ही पाया जाता है।

§ २१५. इन्द्रियमार्गणाके अनुवादसे एकेन्द्रियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी वृद्धि और अवस्थान सबसे थोड़ा है। इससे हानि असंख्यातगुणी है। एकेन्द्रियोंकी स्वस्थान वृद्धि और अवस्थानकी विवक्षासे यह अल्पबहुत्व कहा है। परस्थानकी विवक्षासे तो नौ नोकषायोंके अल्पबहुत्वमें विशेषता है जो जानना चाहिये। इस अर्थकी यथासम्भव अन्यत्र भी योजना करनी चाहिये। यहाँ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अल्पबहुत्व नहीं है। इसी प्रकार सब एकेन्द्रिय और सब पाँचों स्थावरकाय जीवोंके जानना चाहिए।

§ २१६. पंचेन्द्रिय और पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंमें मूलोघके समान भंग है। इसी प्रकार त्रस, त्रसपर्याप्त, पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी, काययोगी, औदारिककाययोगी, वैक्रियककाययोगी, तीनों वेदवाले, चारों कषायवाले, असंयत, चक्षुदर्शनवाले, अचक्षुदर्शनवाले, कृष्णादि पाँच

चक्खु-अचक्खु०-पंचले०-भवसि०-सण्णि-आहारि त्ति।

§ २१७. ओरालियमिस्स० सव्वत्थोवा छव्वीसं पयडीणं उक्क० वड्ढी अवट्ठाणं च। उक्क० हाणी संखे०गुणा। सम्मत्त-सम्मामि० णत्थि अप्पाबहुगं। एवं वेउव्विय-मिस्स०-कम्मइय०-अणाहारि त्ति। आहार०-आहारमिस्स० अट्ठावीसपयडीणं णत्थि अप्पाबहुगं; एगप्पदरपदत्तादो। एवमवगद०-अकसा०-आभिणि०-सुद०-ओहि० मणपज्ज०-संजद०-समाइय-छेदो०-परिहार० सुहुम०-जहाक्खाद०-संजदासंजद०-ओहिदंस०-सुक्कले०-सम्मादि०-वेदगसम्मादि०-उवसम०-सासण०-सम्मामिच्छादिट्ठि त्ति। णवरि आभिणि०-सुद०-ओहि०-संजद०-सामाइय-छेदो०-संजदासंजद-ओहिदंस०-सुक्कले०-सम्मादि०-वेदगसम्मादिट्ठीसु सम्मत्त-सम्मामि० सव्वत्थोवमवट्ठाणं। हाणी असंखे०गुणा। वड्ढी विसेसाहिया त्ति किण्ण वुच्चे ? ण, अप्पिदमग्गणाए सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं वड्ढि-अवट्ठाणाभावादो। णवरि सुक्कलेस्सिएसु तेसिं सव्वत्थोवा उक्कस्समवट्ठाणं। हाणी असंखे०-गुणा। वड्ढी विसेसा०।

§ २१८. मदि-सुदअण्णा० छव्वीसपयडीणं मूलोघभंगो। सम्मत्त-सम्मामि० णत्थि अप्पाबहुगं। एवं विहंग०-मिच्छादिट्ठि त्ति। अभविय० छव्वीसं पयडीणं मूलोघं। खइय०

लेश्यावाले, भव्य संज्ञी और आहारक जीवोंके जानना चाहिए।

§ २१७. औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थान सबसे थोड़ा है। इससे उत्कृष्ट हानि संख्यातगुणी है। यहाँ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अल्प-बहुत्व नहीं है। इसी प्रकार वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए। आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंका अल्प-बहुत्व नहीं है, क्योंकि यहाँ इनका एक अल्पतर पद है। इसी प्रकार अपगतवेदी, अकषायी, आभिनि-बोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापना संयत, परिहारविशुद्धि संयत, सूक्ष्मसांपरायिकसंयत, यथाख्यातसंयत, संयतासंयत, अवधिदर्शनी, शुक्ललेश्यावाले, सम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्य-ग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिए।

**शंका**—आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोप-स्थापनासंयत, संयतासंयत, अवधिदर्शनी, शुक्ललेश्यावाले, सम्यग्दृष्टि और वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अवस्थान सबसे थोड़ा है। इससे हानि असंख्यातगुणी है तथा इससे वृद्धि विशेष अधिक है ऐसा क्यों नहीं कहा है ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि विवक्षित मार्गणाओंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी वृद्धि और अवस्थानका अभाव है। किन्तु इतनी विशेषता है कि शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें उक्त दो प्रकृतियोंका उत्कृष्ट अवस्थान सबसे थोड़ा है। इससे हानि असंख्यातगुणी है तथा इससे वृद्धि विशेष अधिक है।

§ २१८. मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें छब्बीस प्रकृतियोंका अल्पबहुत्व मूलोघके समान है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अल्पबहुत्व नहीं है। इसी प्रकार विभंगज्ञानी और मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। अभव्योंमें छब्बीस प्रकृतियोंका अल्पबहुत्व मूलोघके

एक्कवीसपयडीणं णत्थि अप्पाबहुअं ।

एवमुक्कस्सप्पाबहुगाणुगमो समत्तो ।

*** जहण्णिया वड्ढी जहण्णिया हाणी जहण्णमवट्ठाणं च सरिसाणि ।**

§ २१९. कुदो, एगसमयत्तादो । तेण कारणेण णत्थि अप्पाबहुअं । संपहि एदं चुण्णिसुत्तं देसामासियं तेणेदेण सूचिदत्थाणुगमणट्ठमुच्चारणं भणिस्सामो ।

§ २२०. जहण्णए पयदं । दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण । ओघे० अट्ठावीसं पयडीणं जहण्णिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च तिण्णि वि सरिसाणि । एवं सव्वणिरय०-तिरिक्ख०-पंचिं०तिरिक्ख०-पंचिं०तिरि०पज्ज०-पंचिं०तिरि०जोणिणि-मणुस-मणुसपज्ज०-मणुसिणी-देव-भवणादि जाव सहस्सार०-पंचिंदिय-पंचिं०पज्ज०-तस-तसपज्ज०-पंचमण०-पंचवचि०-कायजोगि०-ओरालि०-वेउव्विय०-तिण्णिवे०-चत्तारिकसाय०-असंजद०-चक्खु०-अचक्खु०-पंचले०-भवसि०-सण्णि०-आहारि त्ति । पंचिं०तिरि०अपज्ज० एवं चेव । णवरि सम्मत्त-सम्मामि० णत्थि अप्पाबहुगं; जहण्णहाणिमेत्तत्तादो । एवं मणुसअपज्ज०-सव्वएइंदिय-सव्वविगलिंदिय-पंचिं०अपज्ज०-सव्वपंचकाय-तसअपज्ज०-ओरालियमिस्स०-वेउव्वियमि०-कम्मइय०-तिण्णिअण्णाण-मिच्छादि-असण्णि-अणाहारि त्ति ।

§ २२१. आणदादि जाव उवरिमगेवज्जो त्ति छव्वीसं पयडीणं णत्थि अप्पाबहुगं; एगपदत्तादो । सम्मत्त०-सम्मामि० सव्वत्थोवा जह० हाणी । जह० वड्ढी असंखे०-

समान है । क्षायिक सम्यग्दृष्टियोंमें इक्कीस प्रकृतियोंका अल्पबहुत्व नहीं है ।

इस प्रकार उत्कृष्ट अल्पबहुत्वानुगम समाप्त हुआ ।

*** जघन्य वृद्धि, जघन्य हानि और जघन्य अवस्थान समान हैं ।**

§ २१९. क्योंकि इनका प्रमाण एक समय है । इसलिये इनमें परस्पर अल्पबहुत्व नहीं है । यह चूर्णिसूत्र देशामर्षक है, इसलिये इससे सूचित होनेवाले अर्थका अनुसरण करनेके लिये अब उच्चारणाका कथन करते हैं—

§ २२०. जघन्य अल्पबहुत्वका प्रकरण है । इसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश । उनमेंसे ओघकी अपेक्षा अट्ठाईस प्रकृतियोंकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान ये तीनों ही समान हैं । इसी प्रकार सब नारकी, तिर्यंच, पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च, पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्त, पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिमती, मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यनी, देव, भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देव, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रियपर्याप्त, त्रस, त्रसपर्याप्त, पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी, काययोगी औदारिककाययोगी, वैक्रियिककाययोगी, तीनों वेदवाले, चारों कषायवाले, असंयत, चक्षुदर्शनवाले, अचक्षुदर्शनवाले, कृष्णादि पाँच लेश्यावाले, भव्य, संज्ञी और आहारक जीवोंके जानना चाहिए । पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त जीवोंमें इसी प्रकार जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा अल्पबहुत्व नहीं है; क्योंकि इनकी यहाँ जघन्य हानि मात्र पाई जाती है । इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्त, सब एकेन्द्रिय, सब विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त, सब पाँचों स्थावरकाय, त्रस अपर्याप्त, औदारिकमिश्रकाययोगी, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, तीनों अज्ञानी, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए ।

§ २२१. आनतकल्पसे लेकर उपरिम ग्रैवेयकतकके देवोंमें छब्बीस प्रकृतियोंका अल्पबहुत्व नहीं है; क्योंकि इनका यहाँ एक पद पाया जाता है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य हानि

गुणा। कुदो, तप्पाओग्गुव्वेल्लणकंडयमेत्तत्तादो। एवं सुक्कलेस्सिएसु। णवरि तिरि०-मणुस्सेसु सुक्कलेस्सिएसु सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं जहण्णमवट्ठाणं पि संभवदि।

§ २२२. अणुदिसादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति अट्ठावीसपयडीणं णत्थि अप्पाबहुगं। एवमाहार०-आहारमिस्स०-अवगद०-अकसा०-आभिणि०-सुद०-ओहि०मणपज्ज०-संजद[1]-सामाइय-छेदो०-परिहार०-सुहुम०-जहाक्खाद०-संजदासंजद०-ओहिदंस०-सम्मादि०-खइय०-वेदय०-उवसम०-सासण०-सम्मामि०दिट्ठि त्ति। अभविय० छव्वीसं पयडीणं जहण्णवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणाणं णत्थि अप्पाबहुगं; समाणत्तादो।

एवमप्पाबहुए समत्ते पदणिक्खेवाणुगमो समत्तो।

## वड्ढी

* एत्तो वड्ढी।

§ २२३. एत्तो पदणिक्खेवादो उवरिं वड्ढिं भणामि त्ति भणिदं होदि। का वड्ढी णाम? पदणिक्खेवविसेसो वड्ढी। तं जहा—पदणिक्खेवे उक्क० वड्ढी उक्क० हाणी उक्कस्समवट्ठाणं च परूविदं ताणि च वड्ढि-हाणि-अवट्ठाणाणि एगसरूवाणि ण होंति, अणेगसरूवाणि त्ति जेण जाणावेदि तेण पदणिक्खेवविसेसो वड्ढि त्ति घेत्तव्वं।

सबसे थोड़ी है। इससे जघन्य वृद्धि असंख्यातगुणी है; क्योंकि उसका प्रमाण तत्प्रायोग्य उद्वेलन-काण्डकमात्र है। इसी प्रकार शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि तिर्यञ्च और मनुष्य शुक्लेश्यावाले जीवोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य अवस्थान भी सम्भव है।

§ २२२. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंका अल्पबहुत्व नहीं है। इसी प्रकार आहारककाययोगी, आहारकमिश्रकाययोगी, अपगतवेदवाले, अकषायी, आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत, सूक्ष्मसांपरायिकसंयत, यथाख्यातसंयत, संयतासंयत, अवधिदर्शनी, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना। अभव्योंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान नहीं होनेसे अल्पबहुत्व नहीं है; क्योंकि ये तीनों समान हैं।

इस प्रकार अल्पबहुत्वके समाप्त होनेपर पदनिक्षेपानुगम समाप्त हुआ।

## वृद्धि

* अब यहाँ से वृद्धि का कथन करते हैं।

§ २२३. इसके अथात् पदनिक्षेपके अनन्तर अब वृद्धिका कथन करते हैं। यह इस सूत्रका तात्पर्य है।

**शंका**—वृद्धि किसे कहते हैं?

**समाधान**—पदनिक्षेपविशेषको वृद्धि कहते हैं। खुलासा इस प्रकार है—पदनिक्षेपमें उत्कृष्ट वृद्धि, उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थानका कथन किया। किन्तु वे वृद्धि, हानि और अवस्थान एकरूप न होकर अनेकरूप हैं यह बात चूंकि इससे जानी जाती है, अतः पदनिक्षेप विशेषको वृद्धि कहते हैं ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए।

1 ता० प्रतौ मणपज्ज० [ संजदा ] संजद आ० प्रतौ मणपज्ज० संजदासंजद० इति पाठः।

§ २२४. एत्थ वड्ढिहाणीणमत्थपरूवणाए कीरमाणाए तत्थ ताव तासिं सरूवं वुच्चदे। तत्थ वड्ढी दुविहा—सत्थाणवड्ढी परत्थाणवड्ढी चेदि। तत्थ एगजीवसमासमस्सिदूण ट्ठिदीणं जा वड्ढी सा सट्ठाणवड्ढी णाम। तं जहा—चदुण्हमेइंदियाणमप्पप्पणो जहण्णबंधस्सुवरि समयुत्तरादिकमेण जाव तेसिं चेव उक्कस्सबंधो त्ति ताव णिरंतरं बंधमाणाणमसंखेज्जदि-भागवड्ढी चेव होदि। कुदो? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ताणं चेव वीचारट्ठाणाणं तत्थुवलंभादो। हेट्ठा ओदरिदूण बंधमाणाणं पि एक्का चेव असंखेज्जभागहाणी होदि। बेइंदिय-तेइंदिय-चउरिंदिय-असण्णिपंचिंदिय-पज्जत्तापज्जत्ताणमट्ठण्णं पि जीवसमासाणम-प्पप्पणो जहण्णबंधप्पहुडि समयुत्तरादिकमेण जाव तेसिमुक्कस्सबंधो त्ति ताव बंधमाणाण-मसंखेज्जभागवड्ढी संखेज्जभागवड्ढि त्ति एदाओ दो चेव वड्ढीओ होंति; एदेसु अट्ठसु जीवसमासेसु पलिदो० संखे०भागमेत्तवीचारट्ठाणुवलंभादो। पुणो उक्कस्सबंधादो समयूणादि-कमेण हेट्ठा ओसरिदूण बंधमाणाणमसंखेज्जभागहाणी संखेज्जभागहाणी च होदि। सण्णिपंचिंदियपज्जत्तापज्जत्ताणं दोण्हं पि जीवसमासाणमप्पप्पणो जहण्णबंधप्पहुडि जाव सगुक्कस्सबंधो त्ति ताव समयुत्तरादिकमेण बंधमाणाणमसंखेज्जभागवड्ढी संखेज्जभागवड्ढी संखेज्जगुणवड्ढि त्ति एदाओ तिण्णि वड्ढीओ होंति। पुणो हेट्ठा ओसरिदूण बंधमाणाणम-संखेज्जभागहाणी संखेज्जभागहाणी संखेज्जगुणहाणि त्ति एदाओ तिण्णि हाणीओ होंति। णवरि सण्णिपंचिंदियपज्जत्तएसु केसिं चि कम्माणमसंखेज्जगुणवड्ढी असंखेज्जगुणहाणी च होदि।

§ २२४. यहाँपर वृद्धि और हानि की अर्थप्ररूपणा करनेपर पहले उनका स्वरूप कहते हैं। इन दोनोंमेंसे वृद्धि दो प्रकारकी है—स्वस्थानवृद्धि और परस्थानवृद्धि। उनमेंसे एक जीवसमासके आश्रयसे स्थितियोंकी जो वृद्धि होती है वह स्वस्थान वृद्धि है। यथा—चार एकेन्द्रियोंके अपने अपने जघन्य बन्धके ऊपर एक समय अधिक आदिके क्रमसे लेकर जबतक उन्हींका उत्कृष्टबन्ध होता है तबतक निरन्तर बन्धवाले उन कर्मोंकी असंख्यातभागवृद्धि ही होती है, क्योंकि वहाँपर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण वीचारस्थान पाये जाते हैं। तथा उत्कृष्टस्थितिसे नीचे उतरकर बंधवाले कर्मोंकी भी एक असंख्यात-भागहानि ही होती है। दोइन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और असंज्ञीपंचेन्द्रिय पर्याप्त और इनके अपर्याप्त इन आठों ही जीवसमासोंके भी अपने अपने जघन्यबन्धसे लेकर एक समय अधिक आदिके क्रमसे उत्कृष्टबन्ध तक बंधनेवाले कर्मोंकी असंख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागवृद्धि ये दोनों ही वृद्धियां होती हैं; क्योंकि इन आठ जीवसमासोंमें पल्यके संख्यातवें भागप्रमाण वीचारस्थान पाये जाते हैं। पुनः उत्कृष्टबन्धसे एक समय कम आदि क्रमसे नीचे उतरकर बंधनेवाले कर्मोंकी असंख्यात-भागहानि और संख्यातभागहानि होती है। संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त और अपर्याप्त इन दोनों जीवसमासोंके अपने अपने जघन्यबन्धसे लेकर अपने अपने उत्कृष्टबन्ध तक एक समय अधिक आदिके क्रमसे बंधनेवाले कर्मोंकी असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धि ये तीन वृद्धियां होती हैं। पुनः नीचे उतरकर बंधनेवाले कर्मोंकी असंख्यात भागहानि, संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानि ये तीन हानियां होती हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि संज्ञीपंचेन्द्रिय पर्याप्तकोंमें किन्हीं कर्मोंकी असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानि होती है।

**विशेषार्थ**—जीवसमास चौदह हैं। इसमेंसे प्रत्येकमें जो अपनी अपनी जघन्य स्थितिसे लेकर अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति तक वृद्धि होती है उसे स्वस्थानवृद्धि कहते हैं। और अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर जो अपनी अपनी जघन्य स्थिति तक हानि होती है उसे स्वस्थान हानि कहते हैं। इसी प्रकार नीचेके जीवसमासको ऊपरके जीवसमासमें उत्पन्न कराने पर जो स्थिति में वृद्धि होती है उसे परस्थानवृद्धि कहते हैं और ऊपरके जीवसमासको नीचेके जीवसमासमें उत्पन्न कराने पर जो स्थितिमें हानि होती है उसे परस्थान हानि कहते हैं। इनमेंसे पहले किस जीवसमास में कितनी स्वस्थानवृद्धि और स्वस्थान हानि सम्भव है इसका विचार करते हैं। मोहनीयके २८ भेद हैं। उन सबकी अपेक्षा एक साथ ज्ञान करना सम्भव नहीं इसलिये पहले मिथ्यात्वकी अपेक्षा विचार करते हैं। पर कहाँ कौन-सी हानि और वृद्धि होती है इसका ज्ञान होना तब सम्भव है जब हम प्रत्येक जीवसमासमें जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिको जान लें। अतः पहले प्रत्येक जीवसमासमें जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिका विचार किया जाता है—सामान्यतः यह नियम है कि एकेन्द्रियके एक सागरप्रमाण, द्वीन्द्रियके पच्चीस सागर प्रमाण, त्रीन्द्रियके पचास सागरप्रमाण, चौइन्द्रियके सौ सागरप्रमाण और असंज्ञी पंचेन्द्रियके एक हजार सागरप्रमाण उत्कृष्ट स्थितिबन्ध होता है। तथा एकेन्द्रियके अपनी उत्कृष्ट स्थितिमेंसे पल्यका असंख्यातवाँ भाग कम कर देने पर और शेषके अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिमेंसे पल्यका संख्यातवाँ भाग कम कर देने पर जो स्थिति शेष रहती है वह अपना अपना जघन्य स्थितिबन्ध है। एकेन्द्रियके चार भेद हैं। तथा जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिकी अपेक्षा उनके आठ भेद हो जाते हैं। अब प्रत्येककी जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति लानेके लिये उनकी निम्न प्रकारसे स्थापना करो।

| १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| बा. प. उ. | सू. प. उ. | बा. अ. उ. | सू. अ. उ. | सू. अ. ज. | बा. अ. ज. | सू. प. ज. | बा. प. ज. |
| | १९६ | २८ | ४ | १ | २ | १४ | ९८ |

आशय यह है कि एकेन्द्रियकी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर जघन्य स्थिति तक मध्यके जितने विकल्प हैं उसके ३४३ खण्ड करो। बादर पर्याप्तकके स्थितिके ये सब खण्ड पाये जाते हैं। सूक्ष्म पर्याप्तकके उत्कृष्ट स्थितिकी तरफके १९६ और जघन्य स्थितिकी तरफके ९८ खण्ड छूट जाते हैं। बादर अपर्याप्तकके उत्कृष्ट स्थितिकी तरफके २२४ और जघन्य स्थितिकी तरफके ११२ खण्ड छूट जाते हैं। तथा सूक्ष्म अपर्याप्तकके उत्कृष्ट स्थितिकी तरफके २२८ और जघन्य स्थितिकी तरफके ११४ खण्ड छूट जाते हैं।

द्वीन्द्रियके दो भेद है। तथा जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिकी अपेक्षा उसके चार भेद हो जाते हैं। अब प्रत्येककी जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति प्राप्त करनेके लिये उनकी निम्न प्रकारसे स्थापना करो—

| १ | २ | ३ | ४ |
|---|---|---|---|
| द्वी० प० उ० | द्वी० अ० उ० | द्वी० अ० ज० | द्वी० प० ज० |
| | ४ | १ | २ |

आशय यह है कि द्वीन्द्रियकी उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर जघन्य स्थिति तक कुल स्थितिके जितने विकल्प हैं उनके सात खण्ड करो। द्वीन्द्रियपर्याप्तकके ये सब खण्ड सम्भव हैं। पर द्वीन्द्रिय अपर्याप्तकके उत्कृष्ट स्थितिकी ओरके चार खण्ड और जघन्य स्थितिकी ओरके दो खण्ड छूट जाते हैं। त्रीन्द्रिय आदिके द्वीन्द्रियके समान ही विवेचन करना चाहिये।

इससे स्पष्ट है कि एकेन्द्रियोंके सब भेदोंमें अपने अपने जघन्य स्थितिबन्धमें अपना अपना उत्कृष्ट स्थितिबन्ध पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक है और द्वीन्द्रियादिके अपने अपने जघन्य

स्थितिबन्धसे अपना अपना उत्कृष्ट स्थितिबन्ध पल्यका संख्यातवाँ भाग अधिक है। इतने विवेचनके बाद कहाँ कौनसी हानि और वृद्धि होती है इसका विचार करते हैं—

एकेन्द्रिय सम्बन्धी चार जीवसमासोंमेंसे प्रत्येकके जब अपने जघन्य स्थितिबन्धसे उत्कृष्ट स्थितिबन्ध पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक है या उत्कृष्ट स्थितिबन्धसे जघन्य स्थितिबन्ध पल्यका असंख्यातवाँ भाग हीन है तो यहाँ वृद्धिमें असंख्यातभागवृद्धि और हानिमें असंख्यातभागहानि ही सम्भव हैं; क्योंकि यहाँ जघन्य स्थितिमें एक एक समय स्थितिके बढ़ाने पर या उत्कृष्ट स्थितिमेंसे एक एक समय स्थितिके घटाने पर असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानि ही होती है। पर इन जीवसमासोंके कुल स्थिति विकल्प भी अपनी अपनी स्थितिके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं, अतः जघन्यसे उत्कृष्ट या उत्कृष्टसे जघन्य स्थितिबन्धके होने पर भी क्रमसे असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानि ही होती हैं। इस प्रकार एकेन्द्रियके वृद्धिमें असंख्यातभागवृद्धि और हानिमें असंख्यातभागहानि ही सम्भव हैं।

तथा द्वीन्द्रियादिकके अपने अपने जघन्य स्थितिबन्धसे अपना अपना उत्कृष्ट स्थितिबन्ध पल्यका संख्यातवाँ भाग अधिक है। तथा उत्कृष्ट स्थितिबन्धसे जघन्य स्थितिबन्ध पल्यका संख्यातवाँ भाग हीन है, अतः यहाँ वृद्धिमें असंख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागवृद्धि ये दो वृद्धियाँ सम्भव हैं और हानिमें असंख्यातभागहानि और संख्यातभागहानि ये दो हानियाँ सम्भव हैं। अपनी अपनी स्थितिके असंख्यातवें भागवृद्धि होने तक असंख्यातभागवृद्धि और हानि होने तक असंख्यात भागहानि होती है। तथा जब अपनी अपनी स्थितिके संख्यातवें भागकी वृद्धि या हानि होने लगती है तब संख्यातभागवृद्धि या संख्यातभागहानि होती है। यहाँ तक एकेन्द्रियादि जीवसमासोंमें कहाँ कितनी वृद्धि और हानि होती हैं इसका विचार किया। अब संज्ञी पंचेन्द्रियके विचार करते हैं। सामान्यतः संज्ञी पंचेन्द्रियोंके मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर प्राप्त होती है और जघन्य स्थितिबन्ध एक अन्तर्मुहूर्त होता है। पर यह जघन्य स्थितिबन्ध क्षपकश्रेणीमें ही होता है। वैसे यदि एकेन्द्रियादिक जीव संज्ञियोंमें उत्पन्न होते हैं तो विग्रहगतिमें असंज्ञी पचेन्द्रियके योग्य स्थितिबन्ध होता है और शरीर ग्रहण करनेके बाद संज्ञीके योग्य कमसे कम अन्तःकोड़ाकोड़ी सागर स्थितिका बन्ध होता है। तथा यदि संज्ञी पंचेन्द्रिय संज्ञियोंमें उत्पन्न होता है तो उसके कमसे कम अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण स्थितिबन्ध नियमसे होता है। अब इनके उत्तर भेदोंमें जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति प्राप्त करनेके लिये उनकी निम्न प्रकारसे स्थापना करो—

संज्ञी प० ज० संज्ञी अ० ज० संज्ञी अ० उ० संज्ञी प० उ०

आशय यह है कि संज्ञी पर्याप्तकी जघन्य स्थिति अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरसे संज्ञी अपर्याप्तककी जघन्य स्थिति संख्यातगुणी अधिक है। इसी प्रकार उत्तरोत्तर आगे आगे भी जानना चाहिये। इससे इतना स्पष्ट हो जाता है कि यहाँ अपने अपने जघन्य स्थितिबन्धसे अपना अपना उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा अधिक है और अपने अपने उत्कृष्ट स्थितिबन्धसे अपना अपना जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा हीन है इसलिये यहाँ प्रत्येक भेदमें असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धि ये तीन वृद्धियाँ तथा असंख्यातभागहानि, संख्यातभागहानि और संख्यात गुणहानि ये तीन हानियाँ बन जाती हैं। इनका विशेष खुलासा मूलमें किया ही है तथा हम भी आगे लिखे अनुसार खुलासा करनेवाले हैं अतः यहाँ विशेष नहीं लिखा गया है। तथा संज्ञी-पर्याप्तकोंमेंसे किसी किसी जीवके किसी किसी कर्मकी असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानि भी होती है। जैसे जब किसी जीवके सम्यक्त्व या सम्यग्मिथ्यात्वकी स्थिति पल्यके असंख्यातवें भागके भीतर शेष रह जाती है और तब वह जीव उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होता है तो उसके सम्यक्त्वको ग्रहण करनेके प्रथम समयमें सम्यक्त्व या सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणवृद्धि होती है। इसीप्रकार अनिवृत्तिकरणमें दूरापकृष्टिकी प्रथमस्थिति कांडकघातकी अन्तिम फालिके पतन

§ २२५. संपहि परत्थाणवड्डी उच्चदे ।। का परत्थाणवड्डी ? एइंदियादिहेट्ठिम-जीवसमासाओ उवरिमजीवसमासासु उप्पाइदे जा ट्ठिदीणं वड्ढी सा परत्थाण-वड्ढी णाम ।

§ २२६. संपहि सत्थाणवड्ढीए ताव णिरंतरवड्ढिपरूवणं कस्सामो । तं जहा—सण्णिपंचिंदियपज्जत्तो मिच्छत्तस्स सव्वजहण्णियमंतोकोडाकोडिमेत्तट्ठिदिं बंधमाणो अच्छिदो तेण समयुत्तरजहण्णट्ठिदीए पबद्धाए असंखेज्जभागवड्ढी होदि । पुणो तिस्से को पडिभागो ? धुवट्ठिदी । दुसमयुत्तरादिट्ठिदीए पबद्धाए वि असंखेज्जभागवड्ढी चेव होदि । तिस्से को पडिभागो ? पुव्वभागहारस्स दुभागो । तिसमयुत्तरजहण्णट्ठिदीए पबद्धाए[1] वि असंखेज्जभागवड्ढी चेव होदि; तिस्से भागहारो पुव्वभागहारस्स तिभागो । तस्स को पडि-भागो ? वड्ढिरूवाणि । एवं चत्तारि पंच-छ-सत्तट्ठादिकमेण वड्ढावेदव्वं जाव धुवट्ठिदीए उवरि धुवट्ठिदी पलिदोवमसलागमेत्तट्ठिदीओ वड्ढिदाओ त्ति । तासु वड्ढिदासु वि असंखेज्ज-भागवड्ढी चेव होदि ; तक्काले धुवट्ठिदिभागहारस्स पलिदोवमपमाणत्तादो । पुणो तदुवरि एगसमयं वड्ढिदूण बंधमाणस्स वि असंखेज्जभागवड्ढी चेव होदि । कुदो, तत्थ

होनेपर असंख्यातगुणहानि होती है । क्योंकि दूरापकृष्टि संज्ञावाली स्थितिके प्रथम स्थितिकांडकसे लेकर ऊपरकी सब स्थितिकांडकोंको घातकर शेष रही हुई सब स्थिति असंख्यातवें भाग प्रमाण होती है । इस प्रकार संज्ञीपर्याप्तकके चार वृद्धियाँ और चार हानियां होती हैं तथा संज्ञी अपर्याप्तकके तीन वृद्धियाँ और तीन हानियां होती हैं यह निश्चित होता है ।

§ २२५. अब परस्थानवृद्धिका कथन करते हैं ।

**शंका**—परस्थानवृद्धि किसे कहते हैं ?

**समाधान**—एकेन्द्रियादिक नीचेके जीवसमासोंको ऊपरके जीवसमासोंमें उत्पन्न करानेपर जो स्थितियोंकी वृद्धि होती है उसे परस्थानवृद्धि कहते हैं ।

§ २२६. अब पहले स्वस्थानवृद्धिसंबन्धी निरन्तरवृद्धिका कथन करते हैं जो इस प्रकार है—जो संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव मिथ्यात्वकी सबसे जघन्य अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण स्थितिको बांधकर अवस्थित है पुनः उसके एक समय अधिक जघन्य स्थितिका बन्ध होनेपर असंख्यातभाग-वृद्धि होती है । इसका क्या प्रतिभाग है ? ध्रुवस्थिति । दो समय अधिकआदि स्थितिका बन्ध होनेपर भी असंख्यातभागवृद्धि ही होती है । इसका क्या प्रतिभाग है ? पूर्व भागहार अर्थात् ध्रुवस्थितिका दूसरा भाग प्रतिभाग है । तीन समय अधिक जघन्यस्थितिका बन्ध होनेपर भी असंख्यातभागवृद्धि ही होती है । इसका भागहार पूर्व भागहारका तीसरा भाग है । इस तीसरे भागको प्राप्त करनेके लिये क्या प्रतिभाग है ? वृद्धिके अङ्क इसका प्रतिभाग है । इसी प्रकार चार, पाच, छह, सात और आठ आदिके क्रमसे ध्रुवस्थितिके ऊपर एक ध्रुवस्थितिमें पल्यकी जितनी शलाकाएँ हों उतनी स्थितिकी वृद्धि होनेतक ध्रुवस्थितिको बढ़ाते जाना चाहिये । इतनी स्थितियोंके बढ़ जानेपर भी असंख्यातभागवृद्धि ही होती है; क्योंकि उस समय ध्रुवस्थितिका भागहार एक पल्य है । पुनः इसके ऊपर एक समय बढ़ाकर बाँधनेवाले जीवके भी असंख्यातभागवृद्धि ही होती है, क्योंकि यहाँपर ध्रुव-

[1] ता० प्रतौ पडिबद्धाए इति पाठः ।

धुवट्ठिदीए किंचूणपलिदोवममेत्तभागहारत्तादो। एवं समयुत्तरदुसमयुत्तरादिकमेण वड्ढावेदव्वं जाव दुगुणपलिदोवमसलागाओ वड्ढिदाओ त्ति। तत्थ वि असंखेज्जभागवड्ढी चेव होदि। कुदो, धुवट्ठिदीए पलिदोवमस्स दुभागमेत्तभागहारत्तादो। एवं गंतूण पलिदोवमसलागमेत्तपढमवग्गमूलाणि वड्ढिदूण बंधमाणस्स वि असंखेज्जभागवड्ढी चेव होदि; तत्थ धुवट्ठिदीए पलिदोवमपढमवग्गमूलभागहारत्तादो। एवं धुवट्ठिदिभागहारो कमेण विदियवग्गमूलं तदियवग्गमूलं चउत्थवग्गमूलं च होदूण पंचमवग्गमूलादिकमेण जहण्णपरित्तासंखेज्जं पत्तो। ताधे वि असंखेज्जभागवड्ढी चेव। पुणो एवं वड्ढिदूणच्छिदट्ठिदीए उवरिमेगसमयं वड्ढिदूण बंधमाणस्स छेदभागहारो होदि। एसो छेदभागहारो केत्तियमेत्तमद्धाणं गंतूण फिट्टदि त्ति वुत्ते वुच्चदे। जहण्णपरित्तासंखेज्जेण धुवट्ठिदिं खंडिय पुणो तत्थ एगखंडे उक्कस्ससंखेज्जेण खंडिदे तत्थ जत्तियाणि रूवाणि रूवूणाणि तत्तियाणि रूवाणि जाव वड्ढिदूण बंधदि ताव छेदभागहारो होदि। संपुण्णेसु वड्ढिदेसु छेदभागहारो फिट्टदि; धुवट्ठिदीए उक्कस्ससंखेज्जमेत्तभागहारस्स जादत्तादो।

§ २२७. संपहि छेदभागहारो असंखेज्जसंखेज्जभागवड्ढीसु कत्थ णिवददि? ण ताव असंखेज्जभागवड्ढीए; जहण्णपरित्तासंखेज्जादो हेट्ठिमसंखाए असंखेज्जत्ताभावादो। भावे वा जहण्णपरित्तासंखेज्जस्स जहण्णविसेसणं फिट्टदि; तत्तो हेट्ठा वि असंखेज्जस्स संभवादो। ण संखेज्जभागवड्ढीए; उक्कस्ससंखेज्जादो उवरिमसंखाए संखेज्जत्तविरोहादो। अविरोहे वा

स्थितिका भागहार कुछ कम पल्य है। इसी प्रकार एक समय अधिक, दो समय अधिक आदि क्रमसे एक ध्रुवस्थितिके पल्योंसे दूनी शलाकाओंकी वृद्धि होने तक स्थितिको बढ़ाते जाना चाहिये। यहाँ पर असंख्यातभागवृद्धि ही होती है; क्योंकि यहाँपर ध्रुवस्थितिका भागहार पल्यका द्वितीय भाग है। इसी प्रकार आगे जाकर पल्योपमकी जितनी शलाकाएँ हैं उतने प्रथम वर्गमूलप्रमाण स्थितिको बढ़ाकर बांधनेवाले जीवके भी असंख्यातभागवृद्धि ही होती है; क्योंकि वहाँपर ध्रुवस्थितिका भागहार पल्योपमका प्रथम वर्गमूल है। इस प्रकार ध्रुवस्थितिका भागहार क्रमसे द्वितीय वर्गमूल, तृतीय वर्गमूल और चतुर्थ वर्गमूल होता हुआ पांचवाँ वर्गमूल आदि क्रमसे जघन्य परीतासंख्यातको प्राप्त होता है। वहां पर भी असंख्यातभागवृद्धि ही होती है। पुनः इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुई स्थितिके ऊपर एक समय बढ़ाकर बाँधनेवाले जीवके छेदभागहार होता है। यह छेदभागहार कितने स्थान जाकर समाप्त होता है ऐसा पूछनेपर कहते हैं—जघन्य परीतासंख्यातका ध्रुवस्थितिमें भाग देनेपर जो एक भाग प्राप्त हो उसे उत्कृष्ट संख्यातसे भाजित करनेपर वहाँ जितनी संख्या प्राप्त हो एक कम उतने अंकप्रमाण स्थितिको बढ़ाकर बांधने तक छेदभागहार होता है और संपूर्ण अंकप्रमाण बढ़ाकर स्थितिको बांधनेपर छेदभागहार समाप्त होता है; क्योंकि यहाँ ध्रुवस्थितिका उत्कृष्ट भागहार उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण हो जाता है।

§ २२७. अब छेदभागहारका असंख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागवृद्धि इन दोनोंमेसे किसमे समावेश होता है? असंख्यात भागवृद्धिमें तो होता नहीं, क्योंकि जघन्य परीतासंख्यातसे नीचे की संख्या असंख्यात नहीं हो सकती। यदि वह असंख्यात मान ली जाय तो जघन्यपरीतासंख्यातका असंख्यात यह विशेषण नष्ट होता है, क्योंकि उसके नीचे भी असंख्यातकी संभावना मान ली गई। तथा संख्यातभागवृद्धिमें भी उसका समावेश नहीं होता, क्योंकि उत्कृष्ट संख्यातसे

उक्कस्ससंखेज्जस्स उक्कस्सविसेसणं फिट्टदि; तत्तो उवरिं पि संखेज्जस्स संभवुवलंभादो त्ति अवत्तव्ववड्डीए णिवददि। कधमवत्तव्वदा? संखेज्जासंखेज्जसंखाहिंतो पुधभूदत्तादो। संखेज्जासंखेज्जाणंतेहिंतो जदि पुधभूदा तो संखा चेव ण होदि। अध होदि तो अव्वावी तिविहसंखाववहारो त्ति? ण ताव संखेज्जासंखेज्जाणंतेहिंतो पुधभूदा संखा णत्थि; तिण्हं संखाणं विच्चालेसु अणंतवियप्पसंखाए उवलंभादो। ण संखासण्णा अव्वाविणी, दव्वट्ठिय-णए अवलंबिज्जमाणे तेसिं सव्वेसिं पि अणंतसाणं एगरूवम्मि पविट्ठाणं भेदाभावेण असंखेज्जाणंतेसु चेव पवेसादो। एत्थ पुण णइगमणए अविलंबिज्जमाणे संखेज्जासंखेज्जा-णंतावत्तव्वभेएण चउव्विहा संखा होदि। कुदो दव्वट्ठियपज्जवट्ठियणयविसयमवलंबिय णइगमणयसमुप्पत्तीदो। संपहि उक्कस्ससंखेज्जे भागहारे जादे संखेज्जभागवड्ढीए आदी जादा।

§ २२८. एत्तो पहुडि छेदभागहारो समभागहारो च होदूणुवरि गच्छदि जाव धुवट्ठिदिभागहारो एगरूवं जादो त्ति। पुणो तक्काले संखेज्जगुणवड्ढी होदि; धुवट्ठीदीए उवरि धुवट्ठीदीए चेव बंधेण वड्ढिदंसणादो। एत्तो पहुडि जाव उक्कस्सट्ठिदिं वड्ढिदूण

ऊपरकी संख्याको संख्यात माननेमें विरोध आता है। यदि उसे संख्यात मान लिया जाय तो उत्कृष्ट संख्यातका उत्कृष्ट यह विशेषण नष्ट होता है; क्योंकि उसके ऊपर भी संख्यातकी संभावना है। अतः छेदभागहारका अवक्तव्य वृद्धिमें समावेश होता है।

**शंका**—यह संख्या अवक्तव्य कैसे है?

**समाधान**—संख्यात और असंख्यातसे पृथग्भूत होनेके कारण यह संख्या अवक्तव्य है।

**शंका**—संख्यात, असंख्यात और अनन्तसे यदि यह संख्या पृथग्भूत है तो वह संख्या ही नहीं है। और यदि वह संख्या है तो तीन प्रकारका संख्याव्यवहार अव्यापी होजाता है।

**समाधान**—संख्यात, असंख्यात और अनन्तसे पृथग्भूत संख्या नहीं है यह बात नहीं है, क्योंकि तीन प्रकारकी संख्याके अन्तरालमें अनन्त विकल्पवाली संख्या पाई जाती है। पर इससे संख्या यह संज्ञा अव्याप्त भी नहीं होती है, क्योंकि द्रव्यार्थिकनयका अवलम्बन करनेपर वे सभी अनन्त अंश एकमें प्रविष्ट हैं अतः भेद नहीं होनेसे उनका असंख्यात और अनन्तमें ही समावेश हो जाता है। परन्तु यहाँ पर नैगमनयका अवलम्ब लेने पर संख्यात, असंख्यात, अनन्त और अवक्तव्यके भेदसे संख्या चार प्रकारकी है क्योंकि द्रव्यार्थिक और पर्यायार्थिक नयके विषयका अवलम्ब लेकर नैगमनय उत्पन्न हुआ है। इस प्रकार उत्कृष्ट संख्यात भागहार हो जाने पर संख्यात-भागवृद्धिका प्रारम्भ हुआ।

§ २२८. यहाँसे लेकर छेदभागहार और समभागहार होकर आगे तबतक जाता है जबतक ध्रुव स्थितिका भागहार एकरूपको प्राप्त होता है। अर्थात् ध्रुवस्थितिके ऊपर ध्रुवस्थितिकी वृद्धि होने तक उक्त भागहारकी प्रवृत्ति होती है। पुनः उस समय संख्यातगुणवृद्धि होती है; क्योंकि यहाँ ध्रुव स्थितिके ऊपर ध्रुवस्थितिकी ही बन्धरूपसे वृद्धि देखी जाती है। इससे आगे स्थितिमें उत्तरोत्तर वृद्धि करते

**बंधदि ताव संखेज्जगुणवड्ढी चेव होदि। असंखेज्जगुणवड्ढी मिच्छत्तस्स किण्ण होदि? ण, धुवट्ठीदीए पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागपमाणत्तप्पसंगादो। ण च धुवट्ठिदी तत्तियमेत्ता अत्थि; तिस्से अंतोकोडाकोडिसागरोवमपमाणत्तादो। एसा धुवट्ठिदी असंखेज्जरूवेहि गुणिदमेत्ता बंधेण किण्ण वड्ढदि? ण, उक्कस्सट्ठिदीए असंखेज्जसागरोवमपमाणत्तप्पसंगादो। ण च एवं; तहोवदेसाभावादो।**

हुए उत्कृष्ट स्थितिके बन्ध तक संख्यातगुणवृद्धि ही होती है।

**शंका**—मिथ्यात्वकी असंख्यात गुणवृद्धि क्यों नहीं होती है?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणवृद्धि मानने पर ध्रुवस्थिति पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होती है। परन्तु ध्रुवस्थिति इतनी तो है नहीं, क्योंकि वह अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण है।

**शंका**—इस ध्रुवस्थितिमें बन्धरूपसे असंख्यातगुणी वृद्धि क्यों नहीं होती है?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि इसप्रकार वृद्धि मानने पर उत्कृष्ट स्थिति असंख्यात सागरप्रमाण हो जायगी। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि इस प्रकारका उपदेश नहीं पाया जाता है।

**विशेषार्थ**—यहाँ यह बतलाया है कि ध्रुवस्थितिके ऊपर एक समय, दो समय आदि स्थितियोंके बढ़ने पर कहाँ तक असंख्यातभागवृद्धि होती है, कहाँसे संख्यातभागवृद्धिका प्रारम्भ होता है और कहाँसे संख्यातगुणवृद्धि चालू होती है। जबतक स्थिति विवक्षित स्थितिके असंख्यातवें भाग प्रमाण तक बढ़ती है तब तक असंख्यातभागवृद्धि होती है। इसके आगे संख्यातभागवृद्धि होती है जो विवक्षित स्थितिके दूने होनेके पूर्वतक होती है। तथा जब विवक्षित स्थिति दूनी या इससे अधिक बढ़ती है तब संख्यातगुणवृद्धि होती है। विशेष खुलासा इस प्रकार है—

ऐसा जीव लो जिसने पहले समयमें ध्रुवस्थितिका बन्ध किया था। किन्तु दूसरे समयमें उसने ध्रुवस्थितिसे एक समय अधिक ध्रुवस्थितिका बन्ध किया तो पिछले समयके बन्धसे यह बन्ध असंख्यातवें भाग अधिक हुआ। अतः यहाँ असंख्यातभागवृद्धि हुई। यहाँ भागहारका प्रमाण ध्रुवस्थिति है; क्योंकि ध्रुवस्थितिका ध्रुवस्थितिमें भाग देनेपर एक प्राप्त होता है। अब एक ऐसा जीव लो जिसने पिछले समयमें ध्रुवस्थितिका बन्ध किया और अगले समयमें दो समय अधिक ध्रुवस्थितिका बन्ध किया तो पिछले समयके बन्धसे यह बन्ध भी असंख्यातवें भाग अधिक हुआ, क्योंकि दो यह ध्रुवस्थितिके असंख्यातवें भाग प्रमाण है, अतः यहाँ असंख्यातभागवृद्धि हुई। यहाँ दोके प्राप्त करनेके लिये भागहारका प्रमाण ध्रुवस्थितिका आधा हो जाता है। अब एक ऐसा जीव लो जिसने पिछले समयमें ध्रुवस्थितिका बन्ध किया और अगले समयमें तीन समय अधिक ध्रुवस्थितिका बन्ध किया तो पिछले समयके बन्धसे यह बन्ध भी असंख्यातवें भाग अधिक हुआ; क्योंकि तीन यह संख्या भी ध्रुवस्थितिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अतः यहाँ भी असंख्यातभागवृद्धि हुई। यहाँ वृद्धिरूप अंक तीनके प्राप्त करनेके लिये भागहारका प्रमाण ध्रुवस्थितिका तीसरा भाग हो जाता है। इसी प्रकार पिछले समयमें ध्रुवस्थितिका तथा अगले समयमें चार, पाँच समय आदि अधिक ध्रुवस्थितिका बन्ध कराने पर भी असंख्यातभागवृद्धि ही होती है, क्योंकि यहाँ

भागहारका प्रमाण ध्रुवस्थितिका चौथा भाग, पाँचवाँ भाग आदि प्राप्त होता है। अब मान लो एक जीव ऐसा है जिसने पिछले समयमें ध्रुवस्थितिका बन्ध किया और अगले समयमें ध्रुवस्थितिमें जितने पल्य हों उतने समय अधिक ध्रुवस्थितिका बन्ध किया तब भी असंख्यात भागवृद्धि ही प्राप्त होती है; क्योंकि यहाँ भागहारका प्रमाण पल्य है। इसी प्रकार उत्तरोत्तर पिछले समयमें बँधनेवाली ध्रुवस्थितिसे अगले समयमें बँधनेवाली स्थितिमें एक एक समय बढ़ाते जाओ और उनका भागहार प्राप्त करते जाओ। ऐसा करते करते भागहारका प्रमाण जघन्य परीतासंख्यात प्राप्त होगा। अर्थात् पिछले समयमें किसीने ध्रुवस्थितिका बन्ध किया और अगले समयमें इतनी अधिक स्थितिका बन्ध किया जो, ध्रुवस्थितिमें जघन्य परीतासंख्यातका भाग देनेपर जितना लब्ध प्राप्त हो, उतनी अधिक है तो भी असंख्यातभागवृद्धि ही होती है। इस प्रकार यहाँ तक असंख्यातभागवृद्धिका क्रम चालू रहा। अब इसके आगे भागहारमें यदि एक और कम हो जाय तो संख्यातभागवृद्धि प्राप्त होवे। किन्तु पूर्वोक्त बढ़ी हुई स्थितिमें एक समय आदि स्थितिके बढ़नेसे भागहारमें एककी कमी न होकर वह बटोंमें प्राप्त होता है। किन्तु इसकी परीतासंख्यात और उत्कृष्ट संख्यात इनमेंसे किसीमें भी गणना नहीं की जा सकती है, क्योंकि उत्कृष्ट संख्यातमें एकके मिलाने पर जघन्य परीतासंख्यात होता है, या जघन्य परीतासंख्यातमेंसे एकके घटाने पर उत्कृष्ट संख्यात होता है ऐसा नियम है। किन्तु यहाँ पर जघन्य परीतासंख्यातमेंसे पूरा एक न घटकर उत्तरोत्तर एकके अंशोंकी कमी होती गई है अतः इसे अवक्तव्यभागवृद्धि कहते हैं। किन्तु इसका यह मतलब नहीं कि यह गणना संख्याके बाहर है। यदि द्रव्यदृष्टिसे विचार किया जाता है तो वे सब अंश उत्कृष्ट संख्यातके ऊपर प्राप्त होनेवाले एकके हैं अतः उनका अन्तर्भाव जघन्य परीतासंख्यातमें हो जाता है। और यदि पर्यायदृष्टिसे विचार किया जाता है तो वे सब अंश एकसे कथञ्चित् भिन्न हैं इसलिये उनका जघन्य परीतासंख्यातमें अन्तर्भाव नहीं होता। जब अन्तर्भाव हो जाता है तब तो उनका भेदरूपसे विचार नहीं किया जाता है। और जब अन्तर्भाव नहीं होता तब उनकी अवक्तव्य संज्ञा रहती है। प्रकृतमें वृद्धिका विचार चला है अतः उसकी अवक्तव्यवृद्धि यह संज्ञा हो जाती है। ध्रुवस्थितिमें जघन्य परीतासंख्यातका भाग देनेसे जो प्राप्त हो उसमें उत्कृष्ट संख्यातका भाग दो और जो प्राप्त हो उसमें से एक कम कर दो ऐसा करनेसे जितने विकल्प प्राप्त होते हैं उतने विकल्प होने तक अवक्तव्य भागवृद्धिका क्रम चालू रहता है। अर्थात् पूर्वोक्त बढ़ी हुई स्थितिमें स्थितिके इतने समय बढ़ जाने तक अवक्तव्यभागवृद्धि होती है। यहाँ सर्वत्र पिछले समयमें ध्रुवस्थितिका बन्ध कराना चाहिये और अगले समयमें एक एक समय अधिक स्थितिका बन्ध कराना चाहिये; क्योंकि जैसा कि पहले बतला आये हैं तदनुसार ध्रुवस्थितिकी अपेक्षा ही यहाँ असंख्यातभागवृद्धि आदिका विचार किया जा रहा है। इस क्रमसे स्थितिमें एक एक समयके बढ़ाने पर जब छेदभागहार समाप्त हो जाता है तब संख्यात भागवृद्धि प्राप्त होती है। और जब संख्यातभागवृद्धि समाप्त हो जाती है तब संख्यातगुणवृद्धि प्राप्त होती है। संख्यातगुणवृद्धिका पहला विकल्प प्राप्त होने पर ध्रुवस्थिति दूनी हो जाती है। अर्थात् पहले समयमें जब कोई ध्रुवस्थितिका बन्ध करता है और अगले समयमें उससे दूनी स्थितिका बन्ध करता है तो यह जघन्य संख्यातगुणवृद्धि होती है; क्योंकि पहले समयमें बँधी हुई स्थितिसे अगले समयमें बँधनेवाली स्थिति दूनी हो जाती है। इस प्रकार अब आगे सत्त कोड़ाकोड़ी सागर स्थितिके प्राप्त होने तक संख्यातगुणवृद्धि ही होती जाती है। इतने विचारसे इतना निश्चित होता है कि ध्रुवस्थितिको माध्यम मानकर असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धि ये तीन वृद्धियाँ ही प्राप्त होती हैं। अब इस विषयका उदाहरण देकर स्पष्ट किया जाता है—नीचे उदाहरणमें जहाँ······इस प्रकार चिन्ह हैं वहाँ मध्यके विकल्प छोड़ दिये हैं ऐसा समझना चाहिये।

§ २२९. अथवा पलिदोवमं धुवट्ठिदिं च दो एदूण[1] गणिय सत्थम्मि अणिउणसिस्ससंबोहणट्ठं पलिदोवमस्स संखेज्जभागवड्ढीए जादाए धुवट्ठिदीए संखेज्जभागवड्ढी होदि

| मानलो—ध्रुवस्थिति | पल्य | प्रथम वर्गमूल | परीतासंख्यात |
|---|---|---|---|
| ११५२ | १४४ | १२ | ९ |

| उत्कृष्ट संख्यात | उत्कृष्ट स्थिति |
|---|---|
| ८ | ११५२० |

| पहले समयमें बाँधी हुई स्थिति | अगले समयमें बाँधी हुई स्थिति | भागहार | वृद्धि |
|---|---|---|---|
| ११५२ | ११५३ | ध्रुवस्थिति | असंख्यात भा० वृ० |
| ११५२ | ११५४ | ध्रु० स्थि० का आधा | ,, |
| ११५२ | ११५५ | ,, तीसरा भा० | ,, |
| ... | ... | .... | .... |
| ११५२ | १२९० | १४४, पल्य | ,, |
| ... | ... | ... | ... |
| ११५२ | १२४८ | १२, पल्यका प्र. व. मू. | ,, |
| .... | ... | .... | ... |
| ११५२ | १२८० | ९, ज० परीता सं० | ,, |
| ११५२ | १२८१ | ८ $\frac{१२०}{१२९}$ | अवक्तव्य भा० वृ० |
| ११५२ | १२८२ | ८ $\frac{११२}{१३०}$ | ,, |
| ११५२ | १२८३ | ८ $\frac{१०४}{१३१}$ | ,, |
| ... | ... | ... | ... |
| ११५२ | १२९४ | ८ $\frac{९६}{१३२}$ | ,, |
| ११५२ | १२९६ | ८, उत्कृ० संख्यात | संख्यात भा० वृ० |
| ११५२ | १२९७ | ७ $\frac{१३७}{१४५}$ | ,, |
| ... | ... | ... | ... |
| ११५२ | १३४४ | ६ | ,, |
| ... | ... | ... | ... |
| ११५२ | १७२८ | २ | ,, |
| ... | ... | ... | ... |
| ११५२ | २३०४ | २ गुणकार | संख्या० गु० वृ० |
| ११५२ | ३४५६ | ३ ,, | ,, |
| ... | ... | ... | ... |
| ११५२ | ११५२० | १० ,, | ,, |

§ २२९. अथवा पल्य और ध्रुवस्थिति इन दोनोंको लेकर शास्त्रमें अनिपुण शिष्योंके सम्बोधन करनेके लिये पल्यकी संख्यातभागवृद्धिके होनेपर ध्रुवस्थितिकी संख्यातभागवृद्धि होती

1. ता. प्रतौ ढोएदूण इति पाठः।

त्ति णियमणिराकरणदुवारेण पुणरुत्तदोसमजोएदूण पुणरवि सत्थाणवड्ढिपरूवणं कस्सामो। तं जहा—पलिदोवमं ट्ठविय पुणो तस्स हेट्ठा भागहारो त्ति संकप्पिय अण्णम्मि पलिदोवमे ठविदे पलिदोवमं पेक्खिय लद्धरूवे वड्ढाविदे असंखेज्जभागवड्ढी होदि। पुणो धुवट्ठिदि त्ति संखेज्जपलिदोवमाणि ठविय तेसिं हेट्ठा भागहारो त्ति संकप्पिय धुवट्ठिदीए ठविदाए धुवट्ठिदिं पडुच्च असंखेज्जभागवड्ढीए आदी होदि। दुसमयुत्तरट्ठिदिं बंधमाणाणं पि असंखेज्जभागवड्ढी चेव होदि; पलिदोवमस्स पलिदोवमदुभागभागहारत्तादो। एवं तिण्णि-चत्तारि-पंचआदिसरूवेण वड्ढमाणेसु धुवट्ठिदीए अब्भंतरे पलिदोवमसलागमेत्तसमएसु बंधेण वड्ढिदेसु पलिदोवमं धुवट्ठिदिं च पेक्खिदूण असंखेज्जभागवड्ढी चेव होदि; पलिदोवमस्स धुवट्ठिदिपलिदोवमसलागोवट्टिद[1]पलिदोवमभागहारत्तादो धुवट्ठिदीए पलिदोवमभागहारत्तादो। एवं रूवुत्तरादिकमेण वड्ढिरूवाणि गच्छमाणाणि आवलियं पाविय पुणो कमेण पदरावलियं पाविय पुणो जधाकमेण पलिदोवमपढमवग्गमूलं पत्ताणि ताधे वि पलिदोवमं धुवट्ठिदिं च पेक्खिदूण असंखेज्जभागवड्ढी चेव; पलिदोवमस्स पलिदोवमपढमवग्गमूलभागहारत्तादो धुवट्ठिदीए धुवट्ठिदिपलिदोवमसलागगुणिदपलिदोवमपढमवग्गमूलभागहारत्तादो। एवं गंतूण जहण्णपरित्तासंखेज्जमादिं कादूण जाव पलिदोवमपढमवग्गमूलं त्ति एदेसिमसंखेज्जाणं वग्गाणमण्णोण्णब्भासे कदे जत्तिया समया तत्तियमेत्तं धुवट्ठिदीए उवरि वड्ढिदूण बंधमाणस्स वि पलिदोवमं धुवट्ठिदिं च पेक्खिदूण असंखेज्जभागवड्ढी

है इस नियमके निराकरण द्वारा पुनरुक्त दोषको नहीं गिनते हुए दूसरी बार भी स्वस्थानवृद्धिका कथन करते हैं। जो इस प्रकार है—पल्यको स्थापित करके पुनः उसके नीचे भागहाररूपसे एक दूसरे पल्यके स्थापित कर देने पर पल्यको देखते हुए लब्ध एकके बढ़ाने पर असंख्यातभागवृद्धि होती है। पुनः यह ध्रुवस्थिति है ऐसा जानकर संख्यात पल्योंकी स्थापना करके और उसके नीचे यह भागहार है ऐसा संकल्प करके ध्रुवस्थितिके स्थापित करने पर ध्रुवस्थितिको देखते हुए लब्ध एकके बढ़ाने पर असंख्यातभागवृद्धिका प्रारम्भ होता है। दो समय अधिक स्थितिको बाँधनेवाले जीवोंके भी असंख्यातभागवृद्धि ही होती है, क्योंकि यहाँ पर पल्योपमका भागहार पल्योपमका द्वितीय भाग है। इसी प्रकार पल्योपममें तीन, चार पाँच आदिके बढ़ाने पर तथा ध्रुवस्थितिमें जितने पल्य हों उतने समयोंके बन्धरूपसे ध्रुवस्थितिमें बढ़ानेपर पल्य और ध्रुवस्थितिको देखते हुए असंख्यातभागवृद्धि ही होती है क्योंकि ध्रुवस्थितिमें जितने पल्य हैं उनका भाग पल्यमें देनेपर जो लब्ध आवे उतना यहाँ पल्यका भागहार होता है और ध्रुवस्थितिका भागहार एक पल्य होता है। इस प्रकार एक अधिक आदिके क्रमसे वृद्धिके अंक आगे जाकर एक आवलीप्रमाण हो जाते हैं। पुनः प्रतरावलिप्रमाण हो जाते हैं। पुनः यथाक्रमसे पल्योपमके प्रथम वर्गमूलको प्राप्त होते हैं। तब उस समय भी पल्योपम और ध्रुवस्थितिको देखते हुए असंख्यातभागवृद्धि ही होती है क्योंकि यहाँ पल्यका भागहार पल्यका प्रथमवर्गमूल है और ध्रुवस्थितिका भागहार ध्रुवस्थितिमें जितने पल्य हों उनसे पल्यके प्रथम वर्गमूलको गुणित करनेपर जो लब्ध आवे उतना है। इस प्रकार वृद्धि करते हुए जघन्य परीतासंख्यातसे लेकर पल्यके प्रथमवर्गमूलतक इन असंख्यात वर्गोंका परस्पर गुणा करनेपर जितने समय प्राप्त हों उतने समय ध्रुवस्थितिके ऊपर बढ़ाकर बाँधनेवाले जीवके भी पल्य और ध्रुवस्थितिको देखते हुए असंख्यातभागवृद्धि होती है; क्योंकि यहाँ पल्यका भागहार जघन्य परीता-

1. आ-प्रतौ वट्टिद इति पाठः।

होदि; पलिदोवमस्स जहण्णपरित्तासंखेज्जभागहारत्तादो धुवट्ठिदीए धुवट्ठिदिपलिदोवम-सलागगुणिदजहण्णपरित्तासंखेज्जभागहारत्तादो। एदिस्से ट्ठिदीए उवरि एगसमयं वड्ढिदूण बंधमाणाणं पलिदोवमं धुवट्ठिदिं च पेक्खिदूण छेदभागहारो होदि। तं जहा—जहण्ण-परित्तासंखेज्जं विरलेदूण पलिदोवमं समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स वड्ढिपमाणं पावदि। संपहि एदिस्से उवरि एगसमयं वड्ढिदूण बंधमाणस्स भागहारमिच्छामो त्ति एगरूवधरिदं विरलेदूण एगरूवधरिदमेव समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स एगेग-रूवपरिमाणं पावदि। पुणो एत्थ एगरूवधरिदं घेत्तूण उवरिमविरलणाए एगेगरूवधरिदम्मि दुविदे इच्छिदवड्ढिपमाणं होदि एगरूवपरिहाणी च लब्भदि। एवं होदि त्ति कादूण हेट्ठिमविरलणं रूवाहियं गंतूण जदि एगरूवपरिहाणी लब्भदि तो जहण्णपरित्ता-संखेज्जविरलणाए केवडियरूवपरिहाणिं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टि-दाए जं लद्धं तं जहण्णपरित्तासंखेज्जम्मि सरिसच्छेदं कादूण सोहिदे सेसमुक्कस्ससंखेज्जमेत्त-रूवाणि एगरूवस्स असंखेज्जा भागा च पलिदोवमस्स धुवट्ठिदीए उवरि वड्ढिरूवाणं भागहारो होदि। एसो पलिदोवमस्स छेदभागहारो। संपहि धुवट्ठिदिछेदभागहारपरूवणा वि एवं चेव कायव्वा। णवरि पलिदोवमछेदभागहारम्मि ज्झीयमाणएगरूवंसादो धुव-ट्ठिदिछेदभागहारम्मि ज्झीयमाणअंसो संखेज्जगुणो[1] होदि; पलिदोवमभागहारस्स अंस-

संख्यात है और ध्रुवस्थितिका भागहार एक ध्रुवस्थितिमें जितने पल्य हों उनसे जघन्य परीता-संख्यातको गुणित करने पर जितना लब्ध आवे उतना है। पुनः इस स्थितिके ऊपर एक समय बढ़ाकर बन्ध करनेवाले जीवोंके पल्य और ध्रुवस्थितिको देखते हुए छेदभागहार होता है। जो इस प्रकार है—जघन्य परीतासंख्यातका विरलन करके और उस पर पल्यको समान खण्ड करके देय-रूपसे दे देने पर एक एक रूपके प्रति वृद्धिका प्रमाण प्राप्त होता है। अब पूर्वोक्त बढ़ी हुई स्थितिके ऊपर एक समय बढ़ाकर बाँधनेवालेका भागहार लाना इष्ट है इसलिये एक रूपके ऊपर रखी गई संख्याका विरलन करके और एक रूपके ऊपर रखी गई संख्याको ही समान खण्ड करके देय-रूपसे दे देने पर एक एकके प्रति एक एक प्राप्त होता है। पुनः यहाँ एक रूपके ऊपर रखी गई संख्याको लेकर उपरिम विरलनमें एक रूपके ऊपर रखी गई संख्यामें मिला देने पर इच्छित वृद्धिका प्रमाण प्राप्त होता है और एक रूपकी हानि प्राप्त होती है। ऐसा होता है ऐसा समझकर अधस्तन विरलनमें एक अधिक जाने पर यदि एकरूपकी हानि प्राप्त होती है तो जघन्य परीतासंख्यातरूप विरलनमें कितने रूपोंकी हानि प्राप्त होगी इस प्रकार त्रैराशिक करके फलराशिसे इच्छाराशिको गुणित करके और उसमें प्रमाण राशिका भाग देने पर जो लब्ध आवे उसे जघन्य परीतासंख्यातमेंसे उसके समान छेद करके घटा देने पर जो शेष रहे वह उत्कृष्ट संख्यातप्रमाण और एक रूपका असंख्यात बहुभाग होता है जो कि पल्यप्रमाण ध्रुवस्थितिके ऊपर बढ़ी हुई संख्याका भागहार होता है। यह पल्यका छेद भागहार है। ध्रुवस्थितिके छेदभागहारका कथन भी इसी प्रकार करना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि पल्यके छेदभागहारमें क्षीण होनेवाले एक रूपके अंशोंसे ध्रुवस्थितिके छेदभागहारमें क्षीण होनेवाले अंश संख्यातगुणे होते हैं; क्योंकि पल्यके भागहारके जो

1 आ० प्रतौ असंखेज्जगुणो इति पाठः।

भागहारादो धुवड्ढिदिभागहारस्स जो अंसो तब्भागहारस्स संखेज्जगुणहीणत्तुवलंभादो। एवं समयं पडि छेदभागहारे होदूण गच्छमाणे धुवड्ढिदिभागहारम्मि एगरूवे परिहीणे धुवड्ढिदीए समभागहारो होदि। तक्काले पलिदोवमस्स पुण छेदभागहारो चेव; पलिदोवम-भागहारम्मि ज्झीयमाणअंसादो धुवड्ढिदिभागहारम्मि झीयमाणअंसस्स संखेज्जगुणत्तादो। पुणो समयुत्तरं वड्ढिदूण बंधमाणाणं वड्ढीए आणिज्जमाणाए पलिदोवमधुवड्ढिदीए[1] छेदभाग-हारो होदि।

§ २३०. एवं छेदसमभागहारेसु धुवड्ढिदीए होदूण गच्छमाणेसु धुवड्ढिदिभाग-हारम्मि जाव धुवड्ढिदिपलिदोवमसलागमेत्तरूवाणं रूवूणाणं परिहाणी होदि ताव पलिदो-वमस्स छेदभागहारो चेव। संपुण्णेसु परिहीणेसु पलिदोवमस्स धुवड्ढिदीए च समभाग-हारो होदि। तक्काले पलिदोवमं पेक्खिदूण संखेज्जभागवड्ढी; पलिदोवममुक्कस्ससंखेज्जेण-खंडिदूणेगखंडस्स धुवड्ढिदीए उवरि वड्ढिदत्तादो। धुवड्ढिदिं पेक्खिदूण पुण असंखेज्ज-भागवड्ढी; धुवड्ढिदीए उक्कस्ससंखेज्जगुणिदधुवड्ढिदिपलिदोवमसलागभागहारत्तादो। तदो जम्मि पदेसे पलिदोवमं पेक्खिदूण संखेज्जभागवड्ढी होदि तम्हि चेव पदेसे धुवड्ढिदिं पेक्खिदूण संखेज्जभागवड्ढी होदि त्ति णियमो णत्थि त्ति घेत्तव्वं। एवमुवरिं पि समउत्त-रादिकमेण वड्ढावेदव्वं। णवरि सव्वत्थ धुवड्ढिदिभागहारम्मि धुवड्ढिदिपलिदोवमसलाग-मेत्तरूवेसु परिहीणेसु पलिदोवमभागहारम्मि एगरूवं परिहायदि त्ति घेत्तव्वं।

अंशका भागहार है उसमें ध्रुवस्थितिके भागहारका जो अंश है उसका भागहार संख्यातगुणा हीन पाया जाता है। इस प्रकार एक एक समयके प्रति छेदभागहार होता हुआ जब तक चला जाता है जब जाकर ध्रुवस्थितिके भागहारमें एक रूपकी हानि होकर ध्रुवस्थितिका समभागहार प्राप्त होता है। परन्तु उस समय पल्यका छेदभागहार ही होता है; क्योंकि पल्यके भागहारमें क्षीण होनेवाले अंश-से ध्रुवस्थितिके भागहारमें क्षीण होनेवाला अंश संख्यातगुणा होता है। पुनः एक समय स्थितिको बढ़ाकर बाँधनेवाले जीवोंकी वृद्धिके लाने पर पल्य और ध्रुवस्थितिका छेदभागहार होता है।

§ २३०. इस प्रकार ध्रुवस्थितिके छेदभागहार और समभागहार होते हुए चले जानेपर जब जाकर ध्रुवस्थितिके भागहारमें ध्रुवस्थितिमें जितने पल्य हों उनमेंसे एक कम रूपोंकी हानि होती है तबतक पल्योपमका छेदभागहार ही होता है। तथा पूरे रूपोंकी हानि होने पर ध्रुवस्थिति और पल्योपमका समभागहार होता है। उस समय पल्योपमको देखते हुए संख्यातभागवृद्धि होती है; क्योंकि यहाँ पल्योपमके उत्कृष्ट संख्यातप्रमाण खण्ड करके उनमेंसे एक खण्ड प्रमाण संख्याकी ध्रुवस्थितिके ऊपर वृद्धि हुई है। परन्तु ध्रुवस्थितिको देखते हुए असंख्यातभागवृद्धि है; क्योंकि यहाँ ध्रुवस्थितिका भागहार ध्रुवस्थितिमें जितने पल्योंका प्रमाण हो उनमें उत्कृष्ट संख्यातको गुणित करनेपर जो लब्ध आवे उतना है। अतः जिस स्थानपर पल्योपमको देखते हुए संख्यातभागवृद्धि होती है उसी स्थानपर ध्रुवस्थितिको देखते हुए संख्यातभागवृद्धि होती है ऐसा नियम नहीं है ऐसा ग्रहण करना चाहिये। इसी प्रकार ऊपर भी एक समय अधिक आदि क्रमसे स्थितिको बढ़ाना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि सर्वत्र ध्रुवस्थितिके भागहारमें एक ध्रुवस्थितिमें जितने पल्य हों उतने रूपोंके कम होनेपर पल्योपमके भागहारमें एक रूपकी हानि होती है ऐसा ग्रहण करना चाहिये।

---

1 आ० प्रतौ -ड्ढिदीणं इति पाठः।

§ २३१. जत्थ पलिदोवमभागहारो जहण्णपरित्तासंखेज्जस्स अद्धमेत्तो होदि तत्थ वि धुवट्ठिदिवड्ढिभागहारो असंखेज्जो होदि; धुवट्ठिदिपलिदोवमसलागाणमद्धेण गुणिद-जहण्णपरित्तासंखेज्जपमाणत्तादो। पलिदोवमस्स भागहारे जहण्णपरित्तासंखेज्जस्स तिभाग-मेत्ते जादे वि धुवट्ठिदीए वड्ढिरूवाणं भागहारो असंखेज्जं चेव; धुवट्ठिदिपलिदोवमसला-गाणं तिभागेण गुणिदजहण्णपरित्तासंखेज्जपमाणत्तादो। पलिदोवमवड्ढिरूवभागहारे जहण्ण-परित्तासंखेज्जस्स चदुब्भागमेत्ते जादे वि धुवट्ठिदीए वड्ढिरूवाणं भागहारो असंखेज्जं चेव; धुवट्ठिदिपलिदोवमसलागाणं चदुब्भागेण गुणिदजहण्णपरित्तासंखेज्जपमाणत्तादो। धुवट्ठिदि-पलिदोवमसलागाहि खंडिदजहण्णपरित्तासंखेज्जे वड्ढिरूवागमणं पडि पलिदोवमस्स भागहारे जादे वि धुवट्ठिदिभागहारो असंखेज्जं चेव; जहण्णपरित्तासंखेज्जपमाणत्तादो। संपहि एत्तियमद्धाणं जाव पावेदि ताव धुवट्ठिदिं पेक्खिदूण असंखेज्जभागवड्ढी पलिदोवमं पेक्खिदूण पुण असंखेज्जभागवड्ढी संखेज्जभागवड्ढी च जादा। पुणो एवं वड्ढिदूणच्छिद-ट्ठिदीए उवरि एगसमयं वड्ढिदूण बंधमाणाणं पलिदोवमधुवट्ठिदीणं छेदभागहारो होदि। एवं छेदभागहारो होदूण गच्छमाणो जाव धुवट्ठिदीए समभागहारो ण होदि ताव धुवट्ठिदिं पेक्खिदूण असंखेज्जभागवड्ढी चेव होदि। पलिदोवमं पेक्खिदूण पुण संखेज्जभागवड्ढी; दव्वट्ठियणयालंबणादो। पज्जवट्ठियणए पुण अवलंबिज्जमाणे धुवट्ठिदिभागहारस्स अवत्तव्व-

§ २३१. तथा जहाँपर पल्योपमका भागहार जघन्य परीतासंख्यातसे आधा होता है वहाँपर भी ध्रुवस्थितिकी वृद्धिका भागहार असंख्यात होता है; क्योंकि यहाँ ध्रुवस्थितिके भागहारका प्रमाण एक ध्रुवस्थितिमें जितने पल्य हों उनके आधेसे जघन्य परीतासंख्यातको गुणित करनेपर जो लब्ध आवे उतना है। पल्योपमका भागहार जघन्य परीतासंख्यातका तीसरा भाग होनेपर भी ध्रुवस्थितिके बढ़े हुए रूपोंका भागहार असंख्यात ही होता है, क्योंकि एक ध्रुवस्थितिमें जितने पल्य हों उनके तीसरे भागसे जघन्य परीतासंख्यातको गुणित करनेपर जो लब्ध आवे उतना यहाँ ध्रुवस्थितिके ऊपर बढ़े हुए रूपोंका भागहार है। पल्योपमके ऊपर बढ़े हुए रूपोंका भागहार जघन्य परीतासंख्यातका चौथा भाग होनेपर भी ध्रुवस्थितिमें बढ़े हुए रूपोंका भागहार असंख्यात ही है, क्योंकि एक ध्रुवस्थितिमें पल्योंका जितना प्रमाण हो उसके चौथे भागसे जघन्य परीतासंख्यातको गुणित करनेपर जो लब्ध आवे उतना यहाँ ध्रुवस्थितिमें बढ़े हुए रूपोंका भागहार है। तथा बढ़े हुए रूपोंकी भी अपेक्षा पल्यका भागहार एक ध्रुवस्थितिमें जितनी पल्यशलाका हो उनसे जघन्य परीतासंख्यातके खण्डित कर देनेपर जितना लब्ध आवे उतना हो जानेपर भी ध्रुवस्थितिका भागहार असंख्यात ही होता है; क्योंकि यहाँपर ध्रुवस्थितिका भागहार जघन्य परीतासंख्यात प्राप्त होता है। इसप्रकार इतने स्थान जबतक प्राप्त होते हैं तबतक ध्रुवस्थितिको देखते हुए असंख्यातभागवृद्धि होती है। परन्तु पल्योपमको देखते हुए असंख्यातभागवृद्धि होती है और संख्यातभागवृद्धि होती है। पुनः इस प्रकार बढ़ाकर स्थित हुई स्थितिके ऊपर एक समय बढ़ाकर बांधनेवाले जीवोंके पल्योपम और ध्रुवस्थितिका छेदभागहार होता है। इसप्रकार छेदभागहार होकर जाता हुआ जबतक ध्रुवस्थितिका सम भागहार नहीं होता है तबतक ध्रुवस्थितिको देखते हुए असंख्यातभागवृद्धि ही होती है। परन्तु पल्योपमको देखते हुए संख्यातभागवृद्धि होती है, पर यह असंख्यातभागवृद्धि द्रव्यार्थिकनयकी अपेक्षासे जानना चाहिये। परन्तु पर्यायार्थिकनयका अवलम्ब करनेपर ध्रुवस्थितिके भागहारकी

वड्ढी होदि। तत्थ अंसं मोत्तूण अंसीणमभावादो। संपहि केद्दूरं गंतूण धुवड्ढिदीए समभागहारो होदि। उवरिमविरलणाए एगरूवधरिदमुक्कस्ससंखेज्जेण खंडेदूण तत्थ एगखंडं रूवूणं जाव वड्ढदि ताव छेदभागहारो संपुण्णो[1] वड्ढिदे समभागहारो। ताधे धुवट्ठिदिं पेक्खिदूण संखेज्जभागवड्ढीए आदी जादा। कुदो, धुवट्ठिदिवड्ढिभागहारो उक्कस्स-संखेज्जं पत्तो त्ति।

§ २३२. एवं पुणो वि उवरि छेदसरूवेण[2] भागहारो गच्छमाणो जहण्णपरित्ता-संखेज्जस्स अद्धमेत्तो धुवट्ठिदिभागहारो जादो ताधे पलिदोवमस्स भागहारो दुगुणिदधुव-ट्ठिदिपलिदोवमसलागोवट्टिदजहण्णपरित्तासंखेज्जमेत्तो होदि। धुवट्ठिदिभागहारे जहण्ण-परित्तासंखेज्जस्स तिभागे संते तिगुणपलिदोवमसलागाहि खंडिदजहण्णपरित्तासंखेज्जं पलिदोवमस्स भागहारो होदि। धुवट्ठिदिभागहारे जहण्णपरित्तासंखेज्जस्स चदुब्भागे संते चदुग्गुणधुवट्ठिदिपलिदोवमसलागोवट्टिदजहण्णपरित्तासंखेज्जं पलिदोवमभागहारो होदि। धुवट्ठिदिपलिदोवमसलागाहि खंडिदजहण्णपरित्तासंखेज्जे धुवट्ठिदिभागहारे संते पलिदो-वमस्स धुवट्ठिदिपलिदोवमसलागाणं वग्गेण खंडिदजहण्णपरित्तासंखेज्जभागहारो होदि। एवं भागहारो हीयमाणो जाधे पलिदोवमस्स दोरूवमेत्तो जादो ताधे दुगुणधुवट्ठिदि-पलिदोवमसलागाओ धुवट्ठिदिभागहारो होदि। जाधे पलिदोवमभागहारो एगरूवं जादो, ताधे धुवट्ठिदिपलिदोवमसलागाओ धुवट्ठिदिभागहारो होदि। संपहि पलिदोवम-

अवक्तव्यवृद्धि होती है; क्योंकि वहाँपर अंशको छोड़कर अंशीका अभाव है। अब कितनीदूर जाकर ध्रुवस्थितिका समभागहार प्राप्त होता है इसे बतलाते हैं—उपरिम विरलनमें एक रूपके प्रति जो संख्या प्राप्त है उसे उत्कृष्ट संख्यातसे खण्डित करके जो एक खण्ड लब्ध आवे एक कम उसकी जबतक वृद्धि हो तबतक छेदभागहार होता है और पूरेकी वृद्धि होनेपर समभागहार होता है। उस समय ध्रुवस्थितिको देखते हुए संख्यातभागवृद्धिकी आदि हुई; क्योंकि यहाँपर ध्रुवस्थितिके वृद्धिरूपोंका भागहार उत्कृष्ट संख्यातको प्राप्त हुआ।

§ २३२. इस प्रकार फिर भी ऊपर छेद और समानरूपसे भागहार जाता हुआ जब ध्रुवस्थितिका भागहार जघन्य परीतासंख्यातका आधा होता है तब पल्योपमका भागहार एक ध्रुवस्थितिमें जितनी पल्यशलाकाएं हो उनके दूनेप्रमाणसे जघन्य परीतासंख्यातको भाजित करनेपर जो लब्ध आवे उतना होता है। ध्रुवस्थितिके भागहारके जघन्य परीतासंख्यातके तीसरे भागप्रमाण होनेपर एक ध्रुवस्थितिकी तिगुनी पल्यशलाकाओंसे जघन्य परीतासंख्यातको भाजित करके जो लब्ध आवे उतना पल्योपमका भागहार होता है। ध्रुवस्थितिके भागहारके जघन्य परीतासंख्यातके चौथे भाग-प्रमाण होनेपर ध्रुवस्थितिकी चौगुनी पल्यशलाकाओंसे भाजित जघन्य परीतासंख्यातका जितना प्रमाण हो उतना पल्योपमका भागहार होता है। ध्रुवस्थितिका भागहार ध्रुवस्थितिकी पल्योपम शलाकाओंसे भाजित जघन्य परीतासंख्यातप्रमाण होनेपर पल्योपमका भागहार ध्रुवस्थितिकी पल्य-शलाकाओंके वर्गसे जघन्य परीतासंख्यातको भाजित करनेपर जितना लब्ध आवे उतना होता है। इस प्रकार घटता हुआ पल्योपमका भागहार जहाँपर दो अंक प्रमाण होता है वहाँपर ध्रुवस्थितिका भागहार ध्रुवस्थितिकी दुगुनी पल्यशलाकाप्रमाण होता है। तथा जहाँ पर पल्योपमका भागहार एक अंक प्रमाण होता है वहाँपर ध्रुवस्थितिका भागहार ध्रुवस्थितिकी पल्यशलाकाप्रमाण होता है।

१ ता० प्रतौ संपुण्णो इति पाठः। २ आ० प्रतौ छेदसमरूवेण इति पाठः।

**भागहारे णट्ठे धुवट्ठिदिभागहारो समयूणादिकमेण झीयमाणो जाधे धुवट्ठिदिपलिदोवमसलागाणमद्धमेत्तो जादो ताधे पलिदोवमस्स गुणगारो तिण्णि रूवाणि होंति। जाधे धुवट्ठिदिभागहारो तप्पलिदोवमसलागाणं तिभागमेत्तो जादो ताधे पलिदोवमगुणगारो चत्तारि रूवाणि। जाधे धुवट्ठिदिभागहारो तप्पलिदोवमसलागाणं चदुब्भागमेत्तो जादो ताधे पलिदोवमगुणगारो पंचरूवाणि। एवं गंतूण जाधे धुवट्ठिदिभागहारो दोरूवाणि ताधे पलिदोवमगुणगारो धुवट्ठिदिपलिदोवमसलागाणमद्धं रूवाहियं होदि। जाधे धुवट्ठिदिभागहारो एगरूवं जादो ताधे पलिदोवमगुणगारो रूवाहियाओ धुवट्ठिदिपलिदोवमसलागाओ। तक्काले धुवट्ठिदीए संखेज्जगुणवड्ढीए आदी जादा। एत्तो उवरि संखेज्जगुणवड्ढी चेव होदूण सव्वत्थ गच्छदि जाव सत्तरिसागरोवमकोडाकोडीणं चरिमसमओ त्ति। एवं मिच्छत्तस्स तिण्हं वड्ढीणं सत्थाणेण अत्थपरूवणा कदा।**

आगे पल्योपमके भागहारके नष्ट हो जानेपर ध्रुवस्थितिका भागहार एक समयकम आदि क्रमसे नष्ट होता हुआ जहाँ वह ध्रुवस्थितिकी पल्यशलाकाओंका आधा भागप्रमाण होता है वहाँ पल्योपमका गुणकार तीनअंक प्रमाण होता है। जहाँपर ध्रुवस्थितिका भागहार ध्रुवस्थितिकी पल्यशलाकाओंका तीसरा भागप्रमाण होता है वहाँपर पल्यका गुणकार चार अंकप्रमाण होता है। जहाँपर ध्रुवस्थितिका भागहार ध्रुवस्थितिकी पल्यशलाकाओंका चौथाभागप्रमाण होता है वहाँपर पल्यका गुणकार पाँच अंकप्रमाण होता है। इसप्रकार जाकर जिस समय ध्रुवस्थितिका भागहार दो अंकप्रमाण होता है उस समय पल्योपमका गुणकार ध्रुवस्थितिकी पल्यशलाकाओंके अर्धभागप्रमाणसे रूपाधिक होता है। अर्थात् ध्रुवस्थितिमें जितने पल्योपमोंकी संख्या हो उस संख्याको आधा करके उसमें एक जोड़ देनेसे रूपाधिक पल्यशलाकाओंके अर्धभाग प्रमाण आता है। तथा जिस समय ध्रुवस्थितिका भागहार एक अंकप्रमाण हो जाता है उस समय पल्योपमका गुणकार ध्रुवस्थितिकी रूपाधिक पल्यशलाकाप्रमाण हो जाता है। यहाँसे ध्रुवस्थितिकी संख्यातगुणवृद्धिका प्रारम्भ होता है। यहाँ से ऊपर सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरका अन्तिम समय प्राप्त होने तक सर्वत्र संख्यातगुणवृद्धि ही होकर जाती है। इस प्रकार मिथ्यात्वकी तीन वृद्धियोंकी स्वस्थानकी अपेक्षा अर्थप्ररूपणा की।

**विशेषार्थ**—संज्ञी पचेन्द्रिय जीव पहले समयमें ध्रुवस्थितिका बन्ध करके यदि अगले समयमें बढ़ी हुई किसी भी स्थितिका बन्ध करता है तो उसके वहाँ असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धि इनमेंसे कोई एक वृद्धि ही सम्भव है यह बात पहले बतलाई जा चुकी है। अब यहाँ पर पल्य और ध्रुवस्थिति इन दोनोंको रखकर यदि उत्तरोत्तर समान वृद्धि की जाती है अर्थात् जब पल्यमें एक अंककी वृद्धि करते हैं तब ध्रुवस्थितिमें भी एक अंककी वृद्धि होती है, जब पल्यमें दो अंककी वृद्धि करते हैं तब ध्रुवस्थितिमें भी दो अंककी वृद्धि होती है और जब पल्यमें तीन आदि अंकोंकी वृद्धि करते हैं तब ध्रुवस्थितिमें भी उतने ही स्थितिविकल्पोंकी वृद्धि होती है तो कहाँ कौनसी वृद्धि होती है इसका विचार किया गया है। यह तो सुनिश्चित है कि ध्रुवस्थिति पल्यसे संख्यातगुणी होती है, क्योंकि अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण ध्रुवस्थितिमें संख्यात पल्य प्राप्त होते हैं, अतः पल्यके एक आदिकी वृद्धि होने पर भागहारका जितना प्रमाण होता है ध्रुवस्थितिमें उतनी वृद्धि होने पर भागहारका प्रमाण उससे संख्यातगुणा होता है। जैसे पल्यमें एककी वृद्धि करने पर वृद्धिके भागहारका प्रमाण पल्य है; क्योंकि पल्यमें पल्यका भाग देनेसे एक प्राप्त होता है। अब यदि ध्रुवस्थितिमें एककी वृद्धिकी जाती है तो वहां वृद्धिके भागहारका प्रमाण ध्रुवस्थिति प्राप्त होता है जो

पूर्वोक्त भागहारसे संख्यातगुणा है। यहाँ संख्यातसे ध्रुवस्थितिमें जितने पल्य हों उतने संख्यात लेना चाहिये। इस व्यवस्थाके अनुसार दोनोंकी असंख्यातभागवृद्धि एक साथ समाप्त न होकर पल्यकी असंख्यातभागवृद्धि पहले समाप्त हो जाती है और ध्रुवस्थितिकी असंख्यातभागवृद्धि उससे संख्यात स्थान आगे जाकर समाप्त होती है; क्योंकि पल्यमें वृद्धिका संख्यातरूप भागहार संख्यात स्थान पहले प्राप्त हो जाता है और ध्रुवस्थितिमें वृद्धिका संख्यातरूप भागहार संख्यात स्थान आगे जाकर प्राप्त होता है। इसी प्रकार पल्यमें संख्यात स्थान पहले संख्यातगुणवृद्धिका प्रारम्भ हो जाता है किन्तु ध्रुवस्थितिमें संख्यात स्थान आगे जाकर संख्यातगुणवृद्धिका प्रारम्भ होता है। अब आगे इसी विषयको स्पष्ट रूपसे समझनेके लिये उदाहरण प्रस्तुत करते हैं—

पल्यकी अपेक्षा—

पल्यका प्रमाण १४४, ज० असंख्यात ९, उ० संख्यात ८.

| क्रमांक | पल्य | बढ़े हुए स्थान | भागहार | वृद्धि |
|---|---|---|---|---|
| १ | १४४ | १४५ | पल्य | असं० भा० वृ० |
| २ | ... | १४६ | पल्यका आधा | ” |
| ३ से ७ | ... | ... | ... | ... |
| ८ | १४४ | १५२ | १८ | ” |
| ९ से ११ | ... | ... | ... | ... |
| १२ | १४४ | १५६ | १२ | ” |
| १३ से १५ | ... | ... | ... | ... |
| १६ | १४४ | १६० | ९, परीतासं० | ” |
| १७ | १४४ | १६१ | $८\frac{८}{१७}$ छेदभागहार | अवक्तव्यभागवृद्धि |
| १८ | १४४ | १६२ | ८ उ० संख्यात | संख्यातभागवृद्धि |
| १९ | १४४ | १६३ | $७\frac{११}{१९}$ | ” |
| ... | ... | ... | ... | ... |
| ३१ | १४४ | १७५ | $४\frac{२०}{३१}$ | संख्यातभागवृद्धि |
| ... | ... | ... | ... | ... |
| ४८ | १४४ | १९२ | ३ ” | ” |
| ... | ... | ... | ... | ... |
| ६४ | १४४ | २०८ | $२\frac{१}{४}$ | ” |
| ... | ... | ... | ... | ... |
| १२८ | १४४ | २७२ | $१\frac{१}{८}$ | ” |
| ... | ... | ... | ... | ... |
| १४४ | १४४ | २८८ | २ गुणकार | संख्यातगुणवृद्धि |
| ... | ... | ... | ... | ... |
| २८८ | १४४ | ४३२ | ३ ” | ” |

ध्रुवस्थितिकी अपेक्षा—

ध्रुवस्थितिका प्रमाण ११५२

| क्रमांक | ध्रुवस्थिति | बढ़ी हुई स्थिति | भागहार | वृद्धि |
|---|---|---|---|---|
| १ | ८ पल्य- ११५२ | ११५३ | ध्रुवस्थिति | अ० भा० वृ० |
| २ | ” | ११५४ | ध्रुवस्थितिकाआधा | ” |
| ३ से ७ | ... | .... | ... | ... |
| ८ | ” | ११६० | १४४ | ” |
| ९ से ११ | .... | .... | ... | ... |
| १२ | ११५२ | ११६४ | ९६ | —” |
| १३ से १५ | ... | ... | ... | ... |
| १६ | ११५२ | ११६८ | ७२ | ” |
| १७ | ११५२ | ११६९ | ६७$\frac{१३}{१७}$ | ” |
| १८ | ११५२ | ११७० | ६४ | ” |
| १९ | ” | ११७१ | ६०$\frac{१२}{१९}$ | ” |
| ... | ... | .... | ... | ... |
| ३१ | ११५२ | ११८३ | ३७$\frac{५}{३१}$ | ” |
| ... | ... | ... | ... | ... |
| ४८ | ११५२ | १२०० | २४ | ” |
| ... | ... | ... | ... | ... |
| ६४ | ११५२ | १२१६ | १८ | ” |
| ... | ... | ... | ... | ... |
| १२८ | ११५२ | १२८० | ९ | ” |
| ... | ... | ... | ... | ... |
| १४४ | ११५२ | १२९६ | ८ | संख्यातभागवृद्धि |
| ... | ... | ... | ... | ... |
| २८८ | ११५२ | १४४० | ४ | ” |
| ... | ... | ... | ... | ... |
| ११५२ | ११५२ | २३०४ | २ गुणकार | संख्यातगुणवृद्धि |

इन दोनों अंकसंदृष्टियोंके देखनेसे विदित होता है कि जहाँ पल्यमें १४४ अंककी वृद्धि होनेपर संख्यातगुणवृद्धि प्रारम्भ हो जाती है वहाँ ध्रुवस्थितिमें १४४ अंककी वृद्धि होनेपर संख्यातभागवृद्धिका ही प्रारम्भ होता है। कारण यह है कि पल्यका प्रमाण अल्प है और ध्रुवस्थितिका प्रमाण पल्यके प्रमाणसे संख्यातगुणा है, इसलिए जितने स्थान आगे जाकर पल्यका प्रमाण दूना होता है, ध्रुवस्थितिको दूना करनेके लिए उससे अधिक स्थान आगे जाना पड़ता है। इसी प्रकार अर्थसंदृष्टिमें भी जानना चाहिए।

**§ २३३. संपहि तस्सेव मिच्छत्तस्स परत्थाणेण तिण्णं वड्ढीणमत्थपरूवणं कस्सामो।** तं जहा—एइंदिएण पंचिंदियसंतकम्मं घादिय बीइंदियादीणं तप्पाओग्गजहण्णबंधस्स हेट्ठा एगसमएणूणं कादूण पुणो बीइंदियादिसु उप्पज्जिय एगसमयं वड्ढिदूण बद्धे असंखेज्ज-भागवड्ढी होदि; वड्ढिदेगसमयस्स णिरुद्धट्ठिदीए असंखेज्जदिभागत्तादो। पुणो तमेव पंचिंदियट्ठिदिं बीइंदियादितप्पाओग्गजहण्णट्ठिदिबंधादो विसमयूणं घादिय बीइंदियादिसु उप्पण्णपढमसमए वि असंखेज्जभागवड्ढी चेव होदि। कुदो? ऊणीकददोसमयाणं चेव बंधेण वड्ढिदत्तादो। एवं तिसमयादिकमेण ऊणिय णेदव्वं जाव पंचिंदियसंतकम्मं बीइं-दियादीणं तप्पाओग्गजहण्णबंधादो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण जहा ऊणं होदि तहा घादिय बेइंदियादिसुप्पण्णस्स वि असंखेज्जभागवड्ढी चेव होदि। संपहि एत्तो उवरि समयुत्तरादिकमेण ऊणिय णेदव्वं जाव असंखेज्जभागवड्ढीए दुचरिमवियप्पो त्ति।

§ २३४. संपहि चरिमवियप्पं वत्तइस्सामो। बीइंदियाणं तप्पाओग्गजहण्णट्ठिदिबंधं जहण्णपरित्तासंखेज्जेण खंडिय तत्थेगखंडेणूणं बेइंदियादीणं तप्पाओग्गजहण्णट्ठिदिबंधेण जहा सरिसं होदि तहा पंचिंदियट्ठिदिसंतकम्मं घादिय बेइंदियादिसु उप्पण्णपढमसमए असंखेज्जभागवड्ढी होदि। एसा असंखेज्जभागवड्ढी सव्वपच्छिमा; एत्तो उवरि संखेज्ज-भागवड्ढीए विसयत्तादो। एवं बेइंदियादीणं पि पंचिंदियट्ठिदिं घादयमाणाणं सगसग-

§ २३३. अब परस्थानकी अपेक्षा उसी मिथ्यात्वकी तीन वृद्धियोंकी अर्थप्ररूपणा करते हैं। जो इस प्रकार है—जिस एकेन्द्रियने पचेन्द्रिय सत्कर्मको घातकर द्वीन्द्रियादिके योग्य जघन्य बन्धके नीचे स्थितिको एक समय कम किया पुनः उसके द्वीन्द्रियादिकमें उत्पन्न होकर एक समय बढ़ाकर स्थितिके बाँधने पर असंख्यातभागवृद्धि होती है; क्योंकि यहाँ पर जो एक समयकी वृद्धि हुई है वह निरुद्ध अर्थात् सत्तामें स्थित पूर्व स्थितिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। पुनः किसी एक एकेन्द्रिय जीवने उसी पचेन्द्रियकी स्थितिको द्वीन्द्रियादिके योग्य जघन्य स्थितिबन्धमें दो समय कम करके उसका घात किया और द्वीन्द्रियादिकमें उत्पन्न हुआ तो उसके उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें भी असंख्यातभागवृद्धि ही होती है; क्योंकि कम किये गये दो समयोंकी ही यहाँ बन्धके द्वारा वृद्धि हुई है। इसी प्रकार तीन समय आदिके क्रमसे कम करके ले जाना चाहिये। कहाँ तक ले जाना चाहिये आगे इसीको बतलाते हैं—कोई एकेन्द्रिय जीव पचेन्द्रियके योग्य सत्कर्मको द्वीन्द्रिय के योग्य जघन्य स्थितिबन्धसे पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग जिस प्रकार कम हो उस प्रकार घात करके द्वीन्द्रियादिकमें उत्पन्न हुआ तो उसके भी असंख्यातभागवृद्धि ही होती है। अब इसके ऊपर असंख्यातभागवृद्धिका द्विचरमविकल्प प्राप्त होने तक एक समय अधिक आदिके क्रमसे कम करके ले जाना चाहिये।

§ २३४. अब अन्तिम विकल्पको बतलाते हैं—द्वीन्द्रियोंके तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिबन्धमें जघन्य परीतासंख्यातका भाग दे, भाग देने पर जो एक भाग प्राप्त हो उससे न्यून द्वीन्द्रियोंके तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिबन्धके समान घात द्वारा पंचेन्द्रियोंके स्थितिसत्कर्मको कोई एकेन्द्रिय प्राप्त करके यदि द्वीन्द्रियोंमें उत्पन्न हो तो उसके प्रथम समयमें असंख्यातभागवृद्धि होती है। यह सबसे अन्तिम असंख्यातभागवृद्धि है; क्योंकि इसके ऊपर संख्यातभागवृद्धि होती है। इसी प्रकार पंचेन्द्रियोंकी स्थितिका घात करनेवाले द्वीन्द्रियादिकके भी, उन्हें अपने अपने उपरिम जीवोंमें

उवरिमजीवेसुप्पादिय असंखेज्जभागवड्ढी वत्तव्वा ।

§ २३५. संपहि संखेज्जभागवड्ढी परत्थाणेण वुच्चदे । तं जहा—एइंदियो पंचिंदिय-संतकम्मं घादयमाणो बेइंदियादीणं तप्पाओग्गजहण्णबंधस्स हेट्ठा पलिदोवमस्स संखेज्जदि-भागमेत्तं घादिय बेइंदियादिसु उववण्णो तस्स पढमसमए संखेज्जभागवड्ढी होदि; तप्पाओग्गजहण्णट्ठिदिबंधे उक्कस्ससंखेज्जेण खंडिदे तत्थ एगखंडमेत्तसमयाणं वड्ढिदंस-णादो । पुव्वघादिदसंतकम्मस्स हेट्ठा एगसमयं घादिय बेइंदियादिसुप्पज्जिय तत्तियं चेव वड्ढिदूण बद्धे संखेज्जभागवड्ढी चेव होदि । एवं बिसमयूण तिसमयूणादिकमेण णेदव्वं जाव बेइंदियादितप्पाओग्गजहण्णट्ठिदिबंधादो हेट्ठा रूवूणतदद्धमेत्तेण पंचिंदियट्ठिदिं घादिय बेइंदियादिसुप्पण्णपढमसमए तप्पाओग्गजहण्णट्ठिदिं बंधमाणस्स संखेज्जभागवड्ढी चेव होदि । तप्पाओग्गजहण्णट्ठिदिबंधस्स संपुण्णमद्धं जाव पावेदि ताव सण्णिपंचिंदियट्ठिदि-संतकम्मं किण्ण घादिदं ? ण, सगलमद्धमेत्तं घादिय बेइंदियादिसुप्पज्जिय वड्ढिदूण बंधमाणस्स संखेज्जगुणवड्ढीए समुप्पत्तीदो । एवं बेइंदियादीणं पि वत्तव्वं ।

§ २३६. संपहि संखेज्जगुणवड्ढी वुच्चदे । तं जहा—एइंदिओ पंचिंदियसंतकम्मं घादयमाणो बेइंदियादिसुप्पज्जिय बज्झमाणजहण्णट्ठिदिबंधादो हेट्ठा सगलमद्धमेत्तं घादिय पुणो बेइंदियादिसुप्पण्णपढमसमए सव्वजहण्णट्ठिदिं बंधमाणस्स संखेज्जगुणवड्ढी होदि ।

उत्पन्न कराके असंख्यातभागवृद्धि कहनी चाहिये ।

§ २३५. अब परस्थानकी अपेक्षा संख्यातभागवृद्धिको बतलाते हैं । जो इस प्रकार है—पंचेन्द्रियसत्कर्मका घात करनेवाला जो कोई एक एकेन्द्रिय जीव द्वीन्द्रियादिकके योग्य जघन्य बन्धके नीचे पल्योपमके संख्यातवें भागका घात करके द्वीन्द्रियादिकमें उत्पन्न हुआ उसके उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें संख्यातभागवृद्धि होती है; क्योंकि द्वीन्द्रियादिकके योग्य जघन्य स्थितिबन्धमें उत्कृष्ट संख्यातका भाग देनेपर जितने खण्ड प्राप्त हों उनमेंसे एक खण्डप्रमाण समयोंकी वहाँ वृद्धि देखी जाती है । तथा पहले घाते हुए सत्कर्मके नीचे एक समयका घात करके और द्वीन्द्रियादिकमें उत्पन्न होकर जो जीव उतनी स्थितिकी ही वृद्धि करके बन्ध करता है उसके संख्यात भागवृद्धि ही होती है । इसीप्रकार दो समय कम, तीन समयकम आदि क्रमसे ले जाना चाहिये । यह क्रम, द्वीन्द्रियादिकके योग्य जघन्य स्थितिबन्धसे नीचे एककम उसकी जघन्य आधी स्थिति प्राप्त होने तक चलता है । इसप्रकार पचेन्द्रियकी स्थितिका घात करके जो एकेन्द्रिय द्वीन्द्रियादिकमें उत्पन्न हुआ उसके उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें द्वीन्द्रियादिकके योग्य जघन्य स्थितिका बन्ध करते हुए संख्यातभागवृद्धि ही होती है ।

**शंका**—द्वीन्द्रियादिके योग्य जघन्य स्थितिबन्धके सम्पूर्ण आधा प्राप्त होनेतक संज्ञी पंचेन्द्रियके स्थिति सत्कर्मका घात क्यों नहीं कराया ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि पूरी आधी स्थितिका घात करके जो एकेन्द्रिय द्वीन्द्रियादिकमें उत्पन्न होकर बढ़ा कर स्थिति बाँधता है उसके संख्यातगुणवृद्धि होती है । इसी प्रकार द्वीन्द्रियादिक-के भी कहना चाहिये ।

§ २३६. अब संख्यातगुणवृद्धिका कथन करते हैं । जो इस प्रकार है—कोई एकेन्द्रिय पंचे-न्द्रिय सत्कर्मका घात कर रहा है और ऐसा करते हुए उसने द्वीन्द्रियादिकमें उत्पन्न होकर जितना जघन्य स्थितिका बन्ध होता है उससे नीचे पूरी आधी स्थितिका घात किया पुनः उसने द्वीन्द्रिया-

**पुणो एगसमयं हेट्ठा ओसरिय घादेदूण उप्पण्णस्स वि संखेज्जगुणवड्ढी चेव होदि। पुणो एदेण कमेण ओसरिदूण सव्वजहण्णएइंदियट्ठिदिसंतकम्मेण बेइंदियादिसुप्पज्जिय तप्पाओग्गजहण्णट्ठिदिं बंधमाणस्स संखेज्जगुणवड्ढी चेव होदि। एवं बेइंदियादीणं पि संखेज्जगुणवड्ढिपरूवणा कायव्वा।**

**§ २३७. संपहि ट्ठाणहाणिपरूवणा कीरदे। तं जहा—जहा वड्ढी तहा हाणी। णवरि अप्पणो उक्कस्सट्ठिदीए असंखेज्जदिभागो जाव झीयदि ताव असंखेज्जभागहाणी**

दिकमे उत्पन्न होकर प्रथम समयमे सबसे जघन्य स्थितिका बन्ध किया तब उसके संख्यातगुणवृद्धि होती है। पुनः एक समय नीचे उतर कर घात करके द्वीन्द्रियादिकमें उत्पन्न होनेवाले जीवके भी संख्यातगुणवृद्धि ही होती है। पुनः इसी क्रमसे नीचे उतर कर जिसके सबसे जघन्य एकेन्द्रिय स्थिति सत्कर्म है वह यदि द्वीन्द्रियादिकमें उत्पन्न होकर उनके योग्य जघन्य स्थितिका बन्ध करता है तो उसके संख्यातगुणवृद्धि ही होती है। इसी प्रकार द्वीन्द्रियादिकके भी संख्यातगुणवृद्धिका कथन करना चाहिये।

**विशेषार्थ**—नीचेके जीवसमासको ऊपरके जीवसमासमें उत्पन्न कराके जो स्थितिमें वृद्धि प्राप्त होती है उसे परस्थानवृद्धि कहते हैं। जैसे एकेन्द्रियको द्वीन्द्रियादिमें, द्वीन्द्रियको त्रीन्द्रियादिकमें, त्रीन्द्रियको चतुरिन्द्रियादिकमें, चतुरिन्द्रियको असंज्ञी आदि में और असंज्ञीको संज्ञीमें उत्पन्न करानेसे परस्थानवृद्धि प्राप्त होती है। इनमेंसे पहले एकेन्द्रियको द्वीन्द्रियमें उत्पन्न कराके यह वृद्धि प्राप्त की गई है। वैसे तो एकेन्द्रियके मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध एक सागरसे अधिक नहीं होता। अब यदि ऐसा एकेन्द्रिय जीव है जिसके अपने स्थितिबन्धसे अधिक सत्त्व नहीं है तो उसको द्वीन्द्रियमें उत्पन्न कराने पर केवल संख्यातगुणवृद्धि ही प्राप्त होती है, क्योंकि एकेन्द्रियकी उत्कृष्ट स्थितिसे द्वीन्द्रियकी जघन्य स्थिति भी कुछ कम पच्चीस गुनी है। किन्तु जो ऊपरकी पर्यायसे च्युत होकर एकेन्द्रिय होता है उसके अपने स्थितिबन्धसे अधिक स्थितिसत्त्व भी पाया जाता है। यह स्थितिसत्त्व किसी किसी एकेन्द्रियके अन्तर्मुहूर्त कम सत्तर कोडाकोडी सागर भी प्राप्त होता है। किन्तु यहाँ ऐसा स्थितिसत्त्व ग्रहण करना है जिससे एकेन्द्रियके द्वीन्द्रियमें उत्पन्न होनेपर असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धि बन जावे। जिस एकेन्द्रियके द्वीन्द्रियकी जघन्य स्थितिसे एक समय कम दो समय कम आदि पल्यके असंख्यातवें भागकम तक स्थितिसत्त्व होता है उसके द्वीन्द्रियमें उत्पन्न होने पर असंख्यातभागवृद्धि होती है, क्योंकि यहां पूर्व स्थितिसे असंख्यातवें भाग प्रमाण स्थितिकी ही वृद्धि देखी जाती है। वीरसेन स्वामीने असंख्यात भागवृद्धिका अन्तिम विकल्प बतलाते हुए लिखा है कि द्वीन्द्रियकी जघन्य स्थितिमें परीतासंख्यातका भाग दो, भाग देने पर जो एक भाग आवे उतना द्वीन्द्रियकी जघन्य स्थितिमें से कम कर दो। बस जिस एकेन्द्रियके पंचेन्द्रियकी स्थितिका घात करते हुए इतनी स्थिति शेष रह जाय उसे द्वीन्द्रियमें उत्पन्न कराने पर असंख्यातभागवृद्धिका अन्तिम विकल्प प्राप्त होता है। एकेन्द्रियके द्वीन्द्रियमें उत्पन्न होने पर उसके असंख्यातभागवृद्धि कैसे प्राप्त होती है इसका यहाँ तक विचार किया। पञ्चेन्द्रियकी स्थितिका घात करनेवाले जो द्वीन्द्रियादिक त्रीन्द्रियादिकमें उत्पन्न होते हैं उनके भी पूर्वोक्त प्रकारसे असंख्यातभागवृद्धि घटित कर लेना चाहिये। आगे परस्थानकी अपेक्षा संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिका कथन सुगम है अतः उसे मूलमें ही जान लेना चाहिये।

§ २३७ अब स्थानहानिका कथन करते हैं। जो इस प्रकार है—जिस प्रकार वृद्धि होती है उसी प्रकार हानि होती है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अपनी उत्कृष्ट स्थितिका असंख्यातवाँ भाग जब तक

होदि । तदो संखेज्जभागहाणी होदूण गच्छदि जाव तिस्से ट्ठिदीए रूवूणमद्धं झीणं ति । तदो सगले अद्धे घादिदे संखेज्जगुणहाणी होदि । एत्तो संखेज्जगुणहाणी चेव होदूण गच्छदि जाव तप्पाओग्गधुवट्ठिदिसंतकम्मे त्ति । सम्मत्तं घेत्तूण पुण किरियाविरहिदो होदूण जाव अच्छदि ताव असंखेज्जभागहाणी चेव होदि । अणंताणुबंधिविसंजोयणाए ट्ठिदिखंडएसु पदमाणेसु संखेज्जभागहाणी अण्णत्थ असंखेज्जभागहाणी । दंसणमोहक्खवयस्स अपुव्वकरणपढमसमयप्पहुडि जाव पलिदोवमट्ठिदिसंतकम्मे त्ति ताव ट्ठिदिकंडयाणं चरिमफालीसु पदमाणियासु संखेज्जभागहाणी होदि; तम्मि अद्धाणे ट्ठिदिखंडयस्स पलिदोवमसंखेज्जदिभागपमाणत्तादो । अण्णत्थ असंखेज्जभागहाणी चेव ।। अधट्ठिदिगलणाए संसारावत्थाए पुण ट्ठिदिखंडयस्स णियमो णत्थि; कत्थ वि पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागायामाणं, कत्थ वि पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागायामाणं कत्थ वि संखेज्जसागरोवमायामाणं ट्ठिदिखंडयाणं संसारावत्थाए उवलंभादो । पलिदोवमट्ठिदिसंतकम्मप्पहुडि जाव दूरावकिट्टी चेट्ठदि ताव ट्ठिदिकंडयचरिमफालीए पडमाणाए संखेज्जगुणहाणी होदि । अण्णत्थ असंखेज्जभागहाणी अधट्ठिदिगलणाए । का दूरावकिट्टी ? जत्थ घादिदसेसट्ठिदिसंतकम्मस्स संखेज्जेसु भागेसु घादिदेसु अवसेसट्ठिदी पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ता होदि सा ट्ठिदी दूरावकिट्टी णाम । सा च एयवियप्पा; सव्वेसिमणियट्टीणमेगसमए वट्टमाणाणं परिणामेसु समाणेसु संतेसु ट्ठिदिखंडयाणमसमाणत्तविरोहादो ।

क्षीण होता है तब तक असंख्यातभागहानि होती है। उसके बाद संख्यातभागहानि होकर तब तक जाती है जब तक उस स्थितिकी एक कम आधी स्थिति क्षीण होती है। तदनन्तर पूरी आधी स्थितिके क्षीण होने पर संख्यातगुणहानि होती है। तथा यहाँसे तत्प्रायोग्य ध्रुवस्थिति सत्कर्म प्राप्त होने तक संख्यात गुणहानि ही होकर जाती है। सम्यक्त्वकी अपेक्षा तो जबतक जीव क्रियासे रहित होकर रहता है तबतक असंख्यातभागहानि ही होती है। अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाके समय स्थितिकाण्डकोंके पतन होने पर संख्यातभागहानि होती है। तथा अन्यत्र असंख्यातभागहानि होती है। दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवाले जीवके अपूर्वकरणके प्रथम समयसे लेकर जबतक पल्योपम प्रमाण स्थितिसत्कर्म रहता है तबतक स्थितिकाण्डकोंकी अन्तिम फालियोंका पतन होते समय संख्यातभागहानि होती है, क्योंकि उस स्थानमें स्थितिकाण्डक पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण होता है। तथा अन्यत्र असंख्यातभागहानि ही होती है। अधःस्थितिगलनाके समय संसारावस्थामें तो स्थितिकाण्डकघातका नियम नहीं है; क्योंकि संसारावस्थामें कहीं पर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण आयामवाले, कहीं पर पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण आयामवाले, तथा कहीं पर संख्यात सागरप्रमाण आयामवाले स्थितिकाण्डकोंकी उपलब्धि होती है। पल्योपमप्रमाण स्थितिसत्कर्मसे लेकर जब तक दूरापकृष्टि प्राप्त होती है तबतक स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिके पतन होने पर संख्यातगुणहानि होती है। अन्यत्र अधःस्थितिगलनामें असंख्यातभागहानि होती है।

**शंका—**दूरापकृष्टि किसे कहते हैं ?

**समाधान—**जहाँ पर घात करके शेष रहे स्थितिसत्कर्मके संख्यात बहुभागके घात होने पर अवशेष स्थिति पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण रह जाती है वह स्थिति दूरापकृष्टि कहलाती है और वह एक विकल्पवाली होती है; क्योंकि एक समयमें विद्यमान सभी अनिवृत्तिकरणगुणस्थानवाले जीवोंके परिणामोंके समान रहते हुए स्थितिकाण्डकोंको असमान माननेमें विरोध आता है।

§ २३८. पुणो एदिस्से दूरावकिट्टीए पढमट्ठिदिखंडयचरिमफालीए पडमाणाए असंखेज्जगुणहाणी होदि । कुदो, दूरावकिट्टीसण्णिदट्ठिदीए पढमट्ठिदिकंडयप्पहुडि उवरिम-सव्वट्ठिदिकंडयाणं घादिदसेसासेसट्ठिदीए असंखेज्जभागपमाणत्तादो । सव्वट्ठिदिकंडयाणं पुण समयूणुक्कीरणद्धासु असंखेज्जभागहाणी चेव अधट्ठिदिगलणाए । एवं णेदव्वं जाव मिच्छत्तस्स समयूणावलियमेत्तट्ठिदिसंतकम्मं चेट्ठिदं ति । तदो असंखेज्जभागहाणी होदूण गच्छदि जावुक्कस्ससंखेज्जमेत्तट्ठिदिसंतकम्मं सेसं ति । तदो संखेज्जभागहाणी होदूण गच्छदि जाव मिच्छत्तस्स तिसमयकालदोट्ठिदिपमाणं सेसं ति । पुणो एगाए ट्ठिदीए सम्मत्तस्सुवरि थिवुक्कसंकमेण संकंताए संखेज्जगुणहाणी होदि णिसेगे पडुच्च । कालं पडुच्च पुण संखेज्जभागहाणी चेव । एवं मिच्छत्तस्स सत्थाणपरत्थाणेहि वड्ढिहाणिपरूवणा कदा । एवं सोलसकसाय-णवणोकसायाणं वड्ढिहाणिपरूवणा कायव्वा ।

§ २३८. पुनः इस दूरापकृष्टिकी प्रथम स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिके पतन होने पर असंख्यातगुणहानि होती है; क्योंकि दूरापकृष्टि संज्ञावाली स्थितिके प्रथम स्थितिकाण्डकसे लेकर ऊपरकी सब स्थितिकाण्डकोंकी घातकर शेष रही हुई सब स्थिति असंख्यातवें भागप्रमाण होती है। सब स्थितिकाण्डकोंकी तो एक समय कम उत्कीरणाकालोंमें अधःस्थितिगलनाके द्वारा असंख्यात भागहानि ही होती है। जबतक मिथ्यात्वसम्बन्धी एक समयकम आवलिमात्र स्थितिसत्कर्म शेष रहे तबतक इसी प्रकार ले जाना चाहिये। तदनन्तर उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण स्थितिसत्कर्म शेष रहने तक असंख्यातभागहानि होकर जाती है। तदनन्तर मिथ्यात्वकी तीन समय कालवाली दो स्थितियोंके शेष रहने तक संख्यात भागहानि होकर जाती है। पुनः एक स्थितिके स्तिवुकसंक्रमणके द्वारा सम्यक्त्वके ऊपर संक्रान्त होनेपर निषेकोंकी अपेक्षा संख्यातगुणहानि होती है। कालकी अपेक्षा तो संख्यातभागहानि ही होती है। इस प्रकार मिथ्यात्वकी वृद्धि और हानिकी स्वस्थान और परस्थानकी अपेक्षा प्ररूपणा की। इसी प्रकार सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी वृद्धि और हानिका कथन करना चाहिये।

**विशेषार्थ**—वृद्धिका विचार करते समय जिस प्रकार यह बतला आये हैं कि किस जीवसमासमें किस स्थितिसे कितनी स्थिति बढ़ने पर कौन सी वृद्धि प्राप्त होती है। उसी प्रकार हानिमें भी समझना चाहिये। किन्तु यहाँ विलोमक्रमसे विचार करना चाहिये। अर्थात् उत्कृष्ट स्थितिसे असंख्यातवें भागके कम होने तक असंख्यातभागहानि होती है। इसके बाद संख्यातभागहानि होती है जो एक कम आधी स्थिति प्राप्त होने तक होती है। और इसके बाद तत्प्रायोग्य ध्रुवस्थिति के प्राप्त होने तक संख्यातगुणहानि होती है। पहले जिस प्रकार सर्वत्र ध्रुवस्थितिकी अपेक्षा वृद्धियोंका विचार कर आये हैं इसी प्रकार यहाँ पर उत्कृष्ट स्थितिकी अपेक्षा ही हानियोंका विचार किया है, यहाँ इतना विशेष समझना चाहिये। यह तो हानिविषयक सामान्य कथन हुआ। किन्तु सम्यग्दृष्टि जीवके हानिके कथनमें कुछ विशेषता है। बात यह है कि सम्यग्दृष्टि जीवकी दो अवस्थाएँ होती हैं एक क्रियारहित और दूसरी क्रियासहित। सर्वत्र क्रियारहित अवस्थामें तो असंख्यातभागहानि ही होती है, क्योंकि वहाँ अधःस्थितिगलनाके द्वारा एक एक निषेकका ही गलन होता है। किन्तु क्रियासहित अवस्थामें यदि अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना हो रही है तो स्थितिकाण्डकोंकी अन्तिम फालिके पतनके समय संख्यातभागहानि होती है, क्योंकि उस समय पल्यके संख्यातवें भागप्रमाण स्थितिका पतन होता है। अन्यत्र असंख्यातभागहानि ही होती है। और यदि दर्शनमोहनीयकी

*** मिच्छत्तस्स अत्थि असंखेज्जभागवड्ढी हाणी, संखेज्जभागवड्ढी हाणी, संखेज्जगुणवड्ढी हाणी, असंखेज्जगुणहाणी अवट्ठाणं।**

§ २३९. एदासिं वड्ढीणं हाणीणं च जहा पढमसुत्तम्मि देसामासियत्तेण सूचिद-हाणिम्मि वड्ढिहाणीणं सत्थाणपरत्थाणमरूवेण परूवणा कदा तहा एत्थ वि कायव्वा; विसेसाभावादो। तिव्व-तिव्वयर-तिव्वतमेहि ट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणेहि ट्ठिदीए असंखेज्ज-भागवड्ढी संखेज्जभागवड्ढी संखेज्जगुणवड्ढी च होदि त्ति णव्वदे। 'ट्ठिदिअणुभागे कसायादो कुणदि' त्ति सुत्तादो। ट्ठिदिखंडयाणं पुण णत्थि संभवो; णिक्कारणत्तादो त्ति? ण, विसोहीए ट्ठिदिखंडयघादसंभवादो। का विसोही णाम? जेसु जीवपरिणामेसु

क्षपणा कर रहा है तो अपूर्वकरणसे लेकर प्रत्येक स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिके पतनके समय संख्यातभागहानि होती है जो पल्यप्रमाण स्थितिके शेष रहने तक चालू रहती है किन्तु जब स्थिति एक पल्य रह जाती है तब स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिके पतनके समय संख्यातगुणहानि होती है; क्योंकि यहाँ काण्डकका प्रमाण संख्यात बहुभाग है। तथा दूरापकृष्टि संज्ञावाली स्थितिके शेष रहने पर प्रथम स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिके पतनके समय असंख्यातगुणहानि होती है; क्योंकि यहाँ असंख्यातगुणी स्थितिका घात हो जाता है। इसी प्रकार आगे भी एक समय कम आवलि-प्रमाण स्थितिके शेष रहने तक जानना चाहिये। किन्तु इसके आगे उत्कृष्ट संख्यातप्रमाण स्थितिके शेष रहने तक असंख्यातभागहानि होती है, क्योंकि यहाँ अधःस्थितिगलनाके द्वारा एक एक निषेकका ही प्रति समय गलन होता है। इसके आगे संख्यातभागहानि होती है। यद्यपि यहाँ भी एक एक निषेकका ही गलन होता है पर यह एक एक निषेक विद्यमान स्थितिके संख्यातवें भागप्रमाण है, अतः यहाँ संख्यातभागहानि बन जाती है। किन्तु यह क्रम जिनकी स्थिति तीन समय है ऐसे दो निषेकोंके शेष रहने तक ही चालू रहता है। पर दो निषेकोंके शेष रहने पर उनमेंसे एक निषेकके स्तिवुकसंक्रमणके द्वारा अन्य प्रकृतिमें संक्रान्त हो जाने पर संख्यातगुणहानि प्राप्त होती है; क्योंकि तदनन्तर समयमें दो समय कालप्रमाण स्थितिवाला एक निषेक पाया जाता है। फिर भी यह संख्यातगुणहानि निषेकोंकी अपेक्षासे कही है। कालकी अपेक्षासे नहीं; क्योंकि कालकी अपेक्षासे तो वहाँ भी संख्यातभागहानि ही है; क्योंकि तीन समयकी स्थितिवाले द्वितीय निषेकके दो समयकी स्थितिवाले बचे हुए अन्तिम निषेकमें संक्रान्त होने पर संख्यातभागहानि ही प्राप्त होती है। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिये कि संसार अवस्थामें कब कितनी हानि होती है ऐसा कोई नियम नहीं है।

*** मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि, संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणहानि असंख्यातगुणहानि और अव-स्थान होता है।**

§ २३९. जिस प्रकार पहले सूत्रमें देशामर्षकरूपसे सूचित हुई हानिमें वृद्धि और हानिका स्वस्थान और परस्थानरूपसे कथन किया उसी प्रकार यहां भी इन वृद्धि और हानियोंका कथन करना चाहिये; क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है।

**शंका**—तीव्र, तीव्रतर और तीव्रतम स्थितिबन्धाध्यवसायस्थानोंसे स्थितिकी असंख्यात-भागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धि होती है ऐसा जाना जाता है; क्योंकि स्थिति और अनुभाग कषायसे होता है ऐसा सूत्रवचन है। परन्तु स्थितिकाण्डकोंके होनेकी संभावना नहीं; क्योंकि उनके होनेका कोई कारण नहीं पाया जाता है?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि विशुद्धिसे स्थितिकाण्डकका घात होना संभव है।

समुप्पण्णेसु कसायाणं हाणी होदि, थिर-सुह-सुहग-साद-सुस्सुरादीणं सुहपयडीणं बंधो च ते परिणामा विसोही णाम। ताहिंतो ट्ठिदिखंडयाणं घादो। किमवट्ठाणं? पुव्विल्ल-ट्ठिदिसंतसमाणट्ठिदीणं बंधणमवट्ठाणं णाम।

* एवं सव्वकम्माणं।

§ २४०. जहा मिच्छत्तस्स तिविहा वड्ढी चउव्विहा हाणी अवट्ठाणं च होदि तहा सव्वेसिं पि कम्माणं। णवरि अणंताणुबंधिचउक्कस्स असंखेज्जगुणहाणी विसंजोएंतम्हि गेण्हिदव्वा। बारसकसाय-णवणोकसायाणं असंखेज्जगुणहाणी चारित्तमोहक्खवणाए गेण्हिदव्वा।

§ २४१. संपहि सम्मत्तस्स असंखेज्जभागवड्ढी उच्चदे। तं जहा—वेदगपाओग्गंतो-कोडाकोडिमेत्तट्ठिदीए उवरि दुसमयुत्तरमिच्छत्तट्ठिदिं बंधिय पडिहग्गेण सम्मत्ते गहिदे असंखेज्जभागवड्ढी होदि, मिच्छत्तम्मि वड्ढिददोण्हं ट्ठिदीणं गहिदसम्मत्तपढमसमए सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तेसु संकंतत्तादो। इमं पढमवारणिरुद्धट्ठिदीदो तिसमयुत्तर-चदुसमयु-त्तरादिकमेण मिच्छत्तट्ठिदिं वड्ढाविय सम्मत्तं गेण्हाविय सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमसंखेज्ज-भागवड्ढी परूवेदव्वा। तत्थ अंतिमवियप्पो वुच्चदे—णिरुद्धसम्मत्तट्ठिदिं जहण्णपरित्ता-

**शंका**—विशुद्धि किसे कहते हैं।

**समाधान**—जीवोंके जिन परिणामोंके होने पर कषायोंकी हानि होती है और स्थिर, शुभ, सुभग, साता और सुस्वर आदि शुभ प्रकृतियोंका बन्ध होता है उन परिणामोंका नाम विशुद्धि है। इन परिणामोंसे स्थितिकाण्डकोंका घात होता है।

**शंका**—अवस्थान किसे कहते हैं?

**समाधान**—पहलेका जो स्थितिसत्त्व है उसके समान स्थितियोंका बन्ध होना अवस्थान कहा जाता है।

* इसी प्रकार सब कर्मोंके जानना चाहिये।

§ २४०. जिस प्रकार मिथ्यात्वकी तीन प्रकारकी वृद्धि, चार प्रकारकी हानि और अवस्थान होता है उसी प्रकार सभी कर्मोंके जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी असंख्यातगुणहानि विसंयोजनाके समय ही ग्रहण करनी चाहिये। तथा बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातगुणहानि चारित्रमोहनीयकी क्षपणाके समय ग्रहण करनी चाहिये।

§ २४१. अब सम्यक्त्वकी असंख्यातभागवृद्धिका कथन करते हैं। जो इस प्रकार है—वेदक सम्यक्त्वके योग्य अन्तःकोड़ाकोड़ीप्रमाण स्थितिके ऊपर दो समय अधिक मिथ्यात्वकी स्थितिको बाँधकर प्रतिभग्न होकर सम्यक्त्वके ग्रहण करने पर असंख्यातभागवृद्धि होती है; क्योंकि मिथ्यात्वमें बढ़ी हुई दो स्थितियोंका सम्यक्त्वके ग्रहण होनेके प्रथम समयमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रमण होता है। इस प्रकार प्रथमबार विवक्षित स्थितिसे तीन समय अधिक और चार समय अधिक आदि क्रमसे मिथ्यात्वकी स्थितिको बढ़ाकर और सम्यक्त्वको ग्रहण कराके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धिका कथन करना चाहिये। उनमें अब अन्तिम विकल्पको कहते हैं—विवक्षित सम्यक्त्वकी स्थितिको जघन्य परीतासंख्यातसे खण्डित करके जो खण्ड प्राप्त हो उनमेंसे एक खण्ड-

संखेज्जेण खंडिय तत्थ एगखंडमेत्तट्ठिदीहि मिच्छत्तट्ठिदीओ बंधेण वड्ढाविय सम्मत्तं घेत्तूणावट्ठिदमिच्छत्तट्ठिदीसु सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तेसु संकंतासु अपच्छिमा असंखेज्ज-भागवड्ढी।

§ २४२. संपहि पढमवारणिरुद्धवेदगपाओग्गसम्मत्तसंतकम्मस्सुवरि समयुत्तरसंत-कम्मियमिच्छादिट्ठिं घेत्तूण असंखेज्जभागवड्ढिपरूवणं कस्सामो। एदम्हादो णिरुद्धट्ठिदीदो मिच्छत्तट्ठिदिं दुसमयुत्तरं बंधिय सम्मत्ते गहिदे असंखेज्जभागवड्ढी होदि। एवं तिसमयु-त्तरादिकमेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तट्ठिदीओ मिच्छत्तम्मि वड्ढाविय असंखेज्ज-भागवड्ढिपरूवणा कायव्वा। एवं विसमयुत्तर-तिसमयुत्तर-चदुसमयुत्तरादिकमेणब्भहिय-ट्ठिदिसंतकम्माणं णिरुंभणं काऊण णेदव्वं जाव तप्पाओग्गअंतोमुहुत्तणसत्तरिसागरो-वमकोडाकोडि त्ति। एवं णीदे एगेगसम्मत्तसंतकम्मट्ठिदीए उवरिं पलिदोवमस्स संखे-ज्जदिभागमेत्ता असंखेज्जभागवड्ढिवियप्पा लद्धा होंति। एवमेत्तिया चेव असंखेज्जभाग-वड्ढिवियप्पा लब्भंति त्ति णावहारणं कायव्वं; कत्थ वि एग-दो-तिण्णि-संखेज्ज-असंखेज्ज-अंतोमुहुत्तादिवियप्पाणमुवलंभादो। एवमसंखेज्जभागवड्ढिपरूवणा कदा।

§ २४३. संपहि संखेज्जभागवड्ढिपरूवणा कीरदे। एगो वेदगपाओग्गसम्मत्तसंत-कम्मिओ मिच्छादिट्ठी तत्तो उवरि तप्पाओग्गजहण्णं पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागमेत्त-मिच्छत्तट्ठिदिं वड्ढिदूण बंधिय सम्मत्ते गहिदे संखेज्जभागवड्ढी होदि। पुणो संपहि

---

प्रमाण स्थितियोंके द्वारा मिथ्यात्वकी स्थितियोंको बन्धके द्वारा बढ़ाकर और सम्यक्त्वको ग्रहण करके बढ़ी हुई मिथ्यात्वकी स्थितियोंके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रान्त होने पर उत्कृष्ट असंख्यातभागवृद्धि होती है।

§ २४२. अब प्रथमबार विवक्षित वेदकसम्यक्त्वके योग्य सम्यक्त्वसत्कर्मके ऊपर एक समय अधिक सत्कर्मवाले मिथ्यादृष्टिको ग्रहण करके असंख्यातभागवृद्धिका कथन करते हैं—इस विवक्षित स्थितिसे मिथ्यात्वकी दो समय अधिक स्थितिको बाँधकर सम्यक्त्वके ग्रहण करने पर असंख्यात-भागवृद्धि होती है। इसी प्रकार तीन समय अधिक आदि क्रमसे पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितियोंको मिथ्यात्वमें बढ़ाकर असंख्यातभागवृद्धिका कथन करना चाहिये। इस प्रकार तत्प्रायोग्य अन्तर्मुहूर्तकम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण स्थिति प्राप्त होने तक दो समय अधिक, तीन समय अधिक और चार समय अधिक आदि क्रमसे स्थितिसत्कर्मोंको ग्रहण करके कथन करना चाहिये। इस प्रकार कथन करने पर सम्यक्त्व सत्कर्मकी एक एक स्थितिके ऊपर पल्योपमके संख्यातवें भाग-प्रमाण असंख्यातभागवृद्धिके विकल्प प्राप्त होते हैं। इस प्रकार इतने ही असंख्यातभागवृद्धिके विकल्प प्राप्त होते हैं ऐसा निश्चय नहीं करना चाहिये, क्योंकि कहीं पर एक, दो, तीन, संख्यात, असंख्यात और अन्तर्मुहूर्त आदि विकल्प पाये जाते हैं। इस प्रकार असंख्यातभागवृद्धिका कथन किया।

§ २४३. अब संख्यातभागवृद्धिका कथन करते हैं—वेदकसम्यक्त्वके योग्य किसी एक सम्यक्त्वसत्कर्मवाले मिथ्यादृष्टि जीवने उसके ऊपर पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण तत्प्रायोग्य मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिको बढ़ाकर बाँधा पुनः उसके सम्यक्त्वके ग्रहण करने पर संख्यातभागवृद्धि होती है। पुनः इस समय विवक्षित सम्यक्त्वके स्थिति सत्कर्मके ऊपर बढ़ी हुई मिथ्यात्वकी स्थिति-

**णिरुद्धसम्मत्तट्ठिदिसंतकम्मस्सुवरि वड्ढिदमिच्छत्तट्ठिदिं समयुत्तर-दुसमयुत्तरादिकमेण वड्ढाविय सम्मत्तं घेत्तूण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं संखेज्जभागवड्ढिं काऊण णेदव्वं जाव अप्पिदसम्मत्तट्ठिदीए संखेज्जभागवड्ढिवियप्पाणं दुचरिमवियप्पो त्ति। संपहि चरिमवियप्पो वुच्चदे—अप्पिदसम्मत्तट्ठिदीए उवरि तत्तियमेत्तं समयूणं बंधेण मिच्छत्ते वड्ढाविय पडिहग्गेण मिच्छाइट्ठिणा सम्मत्ते गहिदे अप्पिदट्ठिदीए अपच्छिमो संखेज्जभागवड्ढिवियप्पो होदि। पुणो पढमवारणिरुद्धसम्मत्तसंतकम्मस्सुवरि समयुत्तरसंतकम्मिएण मिच्छादिट्ठिणा तप्पाओग्गजहण्णियं पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागमेत्तट्ठिदिं वड्ढिदूण बंधिय पडिहग्गेण सम्मत्ते गहिदे संखेज्जभागवड्ढी होदि। पुणो संपहियसम्मत्तसंतकम्मट्ठिदिमवट्ठिदं कादूण मिच्छत्तट्ठिदिं पुव्ववड्ढिदट्ठिदीदो समयुत्तरं वड्ढाविय सम्मत्ते गहिदे विदिओ संखेज्जभागवड्ढिवियप्पो होदि। एवं जाणिदूण णेदव्वं जाव एदिस्से वि णिरुद्धट्ठिदीए संखेज्जभागवड्ढिवियप्पा सव्वे समत्ता त्ति। एवमणेण विहाणेण पढमवारणिरुद्धसम्मत्तट्ठिदिं दुसमयुत्तरादिकमेणब्भहियं कादूण णेदव्वं जाव पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागेणूणसत्तरिसागरोवमकोडाकोडि त्ति। एवं णीदे एगेगसम्मत्तसंतकम्मट्ठिदीए उवरि कत्थ वि संखेज्जसागरोवममेत्ता, कत्थ वि संखेज्जपलिदोवममेत्ता, कत्थ वि असंखेज्जवस्समेत्ता, कत्थ वि संखेज्जवस्समेत्ता, कत्थ वि अंतोमुहुत्तमेत्ता, कत्थ वि संखेज्जसमयमेत्ता संखेज्जभागवड्ढिवियप्पा लद्धा होंति। णवरि अग्गट्ठिदिम्हि पलिदोवमस्स संखेज्जभागमेत्तट्ठिदिविसेसेहि एक्को वि संखेज्जभागवड्ढिवियप्पो ण लद्धो।**

को एक समय अधिक दो समय अधिक आदि क्रमसे बढ़ाकर और सम्यक्त्वका ग्रहण कराके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी संख्यातभागवृद्धि करते हुए सम्यक्त्वकी विवक्षित स्थितिके संख्यातभागवृद्धिसम्बन्धी विकल्पोंमेंसे द्विचरमविकल्पके प्राप्त होने तक ले जाना चाहिये। अब अन्तिम विकल्पको बतलाते हैं—सम्यक्त्वकी विवक्षित स्थितिके ऊपर बन्धके द्वारा मिथ्यात्वकी एक समय कम उतनी ही स्थिति और बढ़ाकर कोई एक मिथ्यादृष्टि जीव प्रतिभग्न होकर सम्यक्त्वको ग्रहण करले तो उसके विवक्षित स्थितिका संख्यातभागवृद्धिसम्बन्धी उत्कृष्ट विकल्प होता है। पुनः पहलीबार विवक्षित सम्यक्त्वसत्कर्मके ऊपर एक समय अधिक सत्कर्मवाले मिथ्यादृष्टि जीवने तत्प्रायोग्य पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण जघन्य स्थितिको बढ़ाकर बाँधा और प्रतिभग्न होकर सम्यक्त्वको ग्रहण किया तो उसके संख्यातभागवृद्धि होती है। पुनः इस समय जो सम्यक्त्व सत्कर्मकी स्थिति कही है उसे अवस्थित करके और मिथ्यात्वकी स्थितिको पहले बढ़ी हुई स्थितिसे एक समय और बढ़ाकर जो जीव सम्यक्त्वको ग्रहण करता है उसके संख्यातभागवृद्धिका दूसरा भेद होता है। इस प्रकार स विवक्षित स्थितिके भी संख्यातभागवृद्धिसम्बन्धी सब भेदोंके समाप्त होने तक इसी प्रकार जानकर कथन करना चाहिये। इस प्रकार इस विधिके अनुसार पहलीबार विवक्षित सम्यक्त्वकी स्थितिको दो समय अधिक आदि क्रमसे अधिक करके पल्योपमके संख्यातवें भागसे कम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर प्राप्त होने तक कथन करना चाहिये। इस प्रकार कथन करने पर सम्यक्त्वसत्कर्मकी एक एक स्थितिके ऊपर कहीं पर संख्यातसागर प्रमाण, कहीं पर संख्यात पल्यप्रमाण, कहीं पर असंख्यात वर्षप्रमाण, कहीं पर संख्यात वर्षप्रमाण, कहीं पर अन्तर्मुहूर्तप्रमाण और कहीं पर संख्यात समय प्रमाण संख्यातभागवृद्धिके भेद प्राप्त होते हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि अग्र स्थितिमें पल्योपमके संख्यातवेंभागप्रमाण स्थितिविशेषोंकी अपेक्षा संख्यातभागवृद्धिका एक भी विकल्प प्राप्त नहीं होता है।

§ २४४. संपहि संखेज्जगुणवड्डी वुच्चदे । तं जहा—पलिदोवमस्स संखेज्जदिभाग-मेत्तसम्मत्तट्ठिदिसंतकम्मियमिच्छादिट्ठिणा उवसमसम्मत्ते गहिदे संखेज्जगुणवड्डी होदि । एत्तो समयुत्तरादिकमेण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तट्ठिदीओ परिवाडीए वड्डाविय सम्मत्ते गहिदे वि संखेज्जगुणवड्डीओ चेव होंति । एवं णेदव्वं जाव सागरोवमं सागरोवमपुधत्तं वा पत्तं ति । कुदो ? उवसमसम्मत्तपाओग्गाणं ट्ठिदीणमेत्तियाणं चेव संभवादो । एत्तो समयुत्तरसम्मत्तट्ठिदिसंतकम्मियमिच्छादिट्ठिणा वेदगसम्मत्ते गहिदे संखेज्जगुणवड्डी होदि । एवं गंतूण मिच्छत्तधुवट्ठिदीए अद्धमेत्तसम्मत्तट्ठिदिसंतकम्मेण धुवट्ठिदिमेत्तमिच्छत्तट्ठिदीए वेदगसम्मत्ते गहिदे संखेज्जगुणवड्डी होदि । एवं मिच्छत्तधुवट्ठिदीए णिरुद्धाए एत्तिओ चेव संखेज्जगुणवड्डिविसयो । पुणो पढमवारणिरुद्धसम्मत्तट्ठिदिसंतं धुवं कादूण पुव्वुत्त-मिच्छत्तट्ठिदिसंतकम्मं समयुत्तरादिकमेण वड्डाविय णेदव्वं जाव सत्तरिसागरोवमकोडा-कोडिमेत्तमिच्छत्तट्ठिदिं बंधिय पडिहग्गो होदूण वेदगसम्मत्तं गहिदसमए सम्मत्त-सम्मा-मिच्छत्ताणं संखेज्जगुणवड्डिं कादूण ट्ठिदो त्ति । पुणो पुव्विल्लसम्मत्तट्ठिदीदो समयुत्तर-सम्मत्तट्ठिदिणिरुंभणं कादूण पुव्वं व संखेज्जगुणवड्डिवियप्पा अपरिसेसा वत्तव्वा । एवं दुसमयुत्तर-तिसमयुत्तरादिकमेण सम्मत्तट्ठिदिसंतं वड्डाविय णेदव्वं जाव सम्मत्तट्ठिदिसंतं धुवट्ठिदिं पत्तं ति । ताधे मिच्छत्तधुवट्ठिदीदो दुगुणमिच्छत्तट्ठिदिसंतकम्मिएण वेदगसम्मत्ते

§ २४४. अब संख्यातगुणवृद्धिका कथन करते हैं । जो इस प्रकार है—सम्यक्त्वकी पल्योपम-के संख्यातवें भागप्रमाण स्थितिसत्कर्मवाले मिथ्यादृष्टि जीवके द्वारा उपशमसम्यक्त्वके ग्रहण करने पर संख्यातगुणवृद्धि होती है । इसके आगे एक समय अधिक आदि क्रमसे सम्यक्त्व और सम्य-ग्मिथ्यात्वकी स्थितियोंको उत्तरोत्तर बढ़ाकर सम्यक्त्वके ग्रहण करने पर भी संख्यातगुणवृद्धियाँ ही होती हैं । सम्यक्त्वकी एक सागर या एक सागरपृथक्त्व प्रमाण स्थितिके प्राप्त होने तक इसी प्रकार कथन करना चाहिये, क्योंकि उपशमसम्यक्त्वके योग्य इतनी स्थितियाँ ही सम्भव हैं । इसके आगे सम्यक्त्वकी एक समय अधिक स्थिति सत्कर्मवाले मिथ्यादृष्टि जीवके द्वारा वेदकसम्यक्त्वके ग्रहण करने पर संख्यातगुणवृद्धि होती है । इस प्रकार उत्तरोत्तर एक एक समय प्रमाण स्थितिके बढ़ाने पर मिथ्यात्वकी ध्रुवस्थितिसे सम्यक्त्वकी आधी स्थिति सत्कर्मवाले जीवके द्वारा मिथ्यात्वकी ध्रुव-स्थितिप्रमाण स्थितिके साथ वेदक सम्यक्त्वके ग्रहण करने पर संख्यातगुणवृद्धि होता है । इस प्रकार मिथ्यात्वकी ध्रुवस्थितिके रहते हुए संख्यातगुणवृद्धिविषयक भेद इतने ही होते हैं । पुनः पहलीबार ग्रहण किये गये सम्यक्त्वके स्थितिसत्त्वको ध्रुव करके और पूर्वोक्त मिथ्यात्वके स्थितिसत्कर्मको एक समय अधिक आदि क्रमसे बढ़ाकर वहाँ तक ले जाना चाहिये । जहाँ तक सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण मिथ्यात्वकी स्थितिको बाँधकर और प्रतिभग्न होकर वेदकसम्यक्त्वके ग्रहण करनेके प्रथम समयमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी संख्यातगुणवृद्धि करके यह जीव स्थित हो । पुनः पहलेकी सम्यक्त्वकी स्थितिसे एक समय अधिक सम्यक्त्वकी स्थितिको ग्रहण करके पहलेके समान संख्यातगुणवृद्धिके सब विकल्प कहना चाहिये । इस प्रकार दो समय अधिक, तीन समय अधिक आदि क्रमसे सम्यक्त्वके स्थितिसत्त्वको बढ़ाकर सम्यक्त्वका स्थितिसत्त्व ध्रुवस्थितिको प्राप्त होने तक ले जाना चाहिये । उस समय मिथ्यात्वकी ध्रुवस्थितिसे मिथ्यात्वके दूने स्थितिसत्कर्मवाले जीवके

गहिदे संखेज्जगुणवड्ढी होदि। पुणो इमं मिच्छत्तधुवट्ठिदिमेत्तसम्मत्तट्ठिदिं धुवं कादूण दुगुणमिच्छत्तधुवट्ठिदिं समयुत्तरादिकमेण वड्ढाविय णेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तूणसत्तरिसागरोवमकोडाकोडिमेत्तमिच्छत्तट्ठिदिसंतकम्मं ति। पुणो समयुत्तरमिच्छत्तधुवट्ठिदिमेत्तसम्मत्तट्ठिदीए उवरि दुसमयाहियधुवट्ठिदिमेत्तं वड्ढिय वेदगसम्मत्ते गहिदे संखेज्जगुणवड्ढी होदि। एवमप्पप्पणो णिरुद्धट्ठिदिसंतकम्मस्सुवरि दुगुण-दुगुणकमेण मिच्छत्तट्ठिदिं बंधाविय वेदगसम्मत्ते गहिदे दुगुणवड्ढी होदि। एवं णेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तूणसत्तरिसागरोवमकोडाकोडि त्ति। एवं णीदे मिच्छत्तधुवट्ठिदीए उवरि समयुत्तरादिकमेण जाव सत्तरिसागरोवमकोडाकोडीणमद्धमेत्तट्ठिदीओ त्ति ताव एदाहि ट्ठिदीहि संखेज्जगुणवड्ढिवियप्पा लद्धा। पुणो उवरिमतदद्धमेत्तट्ठिदीहि ण लद्धा। सम्मत्त[1]सम्मामिच्छत्ताणमसंखेज्जगुणहाणी दंसणमोहणीयक्खवणाए जहा मिच्छत्तस्स दूरावकिट्टिट्ठिदिसंतकम्मे सेसे असंखेज्जगुणहाणी परूविदा तहा परूवेयव्वा; विसेसाभावादो।

§ २४५. संपहि असंखेज्जभागहाणी वुच्चदे। तं जहा—सम्मत्तं घेत्तूण जाव किरियाए विणा वेछावट्ठिसागरोवमाणि भवदि ताव अधट्ठिदिगलणाए असंखेज्जभागहाणी होदि। दंसणमोहक्खवणाए वि सव्वट्ठिदिकंडयाणं चरिमफालीणं पदणसमयं मोत्तूण अण्णत्थ अधट्ठिदिगलणाए असंखेज्जभागहाणी चेव। अथवा एवमसंखेज्जभागहाणी वत्तव्वा। तं जहा—अंतोमुहुत्तूणसत्तरिसागरोवमकोडाकोडिमेत्तसम्मत्तट्ठिदिसंतकम्मिय-

द्वारा वेदकसम्यक्त्वके ग्रहण करने पर संख्यातगुणवृद्धि होती है। पुनः मिथ्यात्वकी ध्रुवस्थिति प्रमाण सम्यक्त्वकी इस स्थितिको ध्रुव करके मिथ्यात्वकी दूनी ध्रुवस्थितिको एक समय अधिक आदि क्रमसे बढ़ाकर मिथ्यात्वकी अन्तर्मुहूर्तकम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण स्थितिसत्कर्म प्राप्त होने तक ले जाना चाहिये। पुनः मिथ्यात्वकी एक समय अधिक ध्रुवस्थितिप्रमाण सम्यक्त्वकी स्थितिके ऊपर दो समय अधिक ध्रुवस्थितिप्रमाण स्थितिको बढ़ाकर वेदकसम्यक्त्वके ग्रहण करने पर संख्यातगुणवृद्धि होती है। इस प्रकार अपने अपने विवक्षित हुए स्थितिसत्कर्मके ऊपर दूने दूने क्रमसे मिथ्यात्वकी स्थितिका बन्ध कराके वेदकसम्यक्त्वके ग्रहण करने पर दुगुनी वृद्धि होती है। इस प्रकार अन्तर्मुहूर्तकम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर तक ले जाना चाहिये। इस प्रकार ले जाने पर मिथ्यात्वकी ध्रुवस्थितिके ऊपर एक समय अधिक आदि क्रमसे सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरकी आधी स्थितिके प्राप्त होने तक इन स्थितियोंके द्वारा संख्यातगुणवृद्धिके भेद प्राप्त होते हैं। पुनः सम्यक्त्वकी आधी ऊपरकी स्थितियोंके द्वारा संख्यातगुणवृद्धिके भेद नहीं प्राप्त होते हैं। जिस प्रकार दर्शनमोहनीयकी क्षपणामें मिथ्यात्वकी दूरापकृष्टि स्थितिसत्कके शेष रहने पर असंख्यातगुणहानिका कथन किया उस प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानिका कथन करना चाहिये; क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है।

§ २४५. अब असंख्यातभागहानिका कथन करते हैं—सम्यक्त्वको ग्रहण करके जब तक क्रियाके विना एकसौ बत्तीस सागर काल होता है तबतक अधःस्थितिगलनाके द्वारा असंख्यात भागहानि होती है। दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके समय भी सब स्थितिकाण्डकोंकी अन्तिम फालियोंके पतन समयको छोड़कर अन्यत्र अधःस्थितिगलनाके द्वारा असंख्यातभागहानि ही होती है। अथवा इस प्रकार असंख्यातभागहानिका कथन करना चाहिये। जो इस प्रकार है—सम्यक्त्वकी अन्तर्मुहूर्तकम सत्तरकोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण स्थितिसत्कर्मवाले मिथ्यादृष्टि जीवके पल्योपमके

[1] ता० प्रतौ—मेत्तट्ठिदिहिंणलद्धसम्मत्त-इति पाठः।

**मिच्छाइट्ठिणा पलिदोवमस्स असंखेज्जभागमेत्तट्ठिदिखंडयघादेण विणा अधट्ठिदिगलणाए सम्मत्तट्ठिदीए गलिदाए असंखेज्जभागहाणी णिरंतरं जाव धुवट्ठिदि त्ति लब्भदि। कुदो? णाणाजीवे अस्सिदूण धुवट्ठिदीए ऊणसत्तरिसागरोवमकोडाकोडिमेत्तट्ठिदीणं अधट्ठिदीए गलणुवलंभादो। धुवट्ठिदीदो उवरिमसव्वसम्मत्तट्ठिदीणं णाणाजीवुव्वेल्लणमस्सिदूण असंखेज्जभागहाणी किण्ण लब्भदे? सुट्ठु लब्भदि। को भणदि ण लब्भदि त्ति। किंतु मिच्छत्तधुवट्ठिदीदो उवरिं सम्मत्तट्ठिदिमुव्वेल्लमाणस्स पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तो चेव ट्ठिदिखंडओ पददि त्ति णियमो णत्थि। कुदो? विसोहीए पलिदोवमस्स संखेज्जभागमेत्ताणं संखेज्जपलिदोवममेत्ताणं कत्थ वि संखेज्जसागरोवममेत्ताणं च ट्ठिदिकंडयाणं पदणसंभवादो। सव्वेसिमुव्वेल्लणकंडयाणं पमाणं पलिदोवमस्स असंखेज्जभागमेत्तं चेवे त्ति आइरियवयणेण कधं ण विरोहो? णत्थि विरोहो; पलिदोवमस्स संखेज्जभागट्ठिदिकंडयप्पहुडि उवरि सव्वट्ठिदिखंडयाणमुव्वेल्लणपरिणामेण विणा विसोहिकारणत्तादो। ण च विसोहीए पदमाणट्ठिदिकंडयाणमुव्वेल्लणपरिणामो कारणं होदि; अव्ववत्थावत्तीदो।**

§ २४६. **सम्मत्तस्स उव्वेल्लणाए पारद्धाए पुणो सम्मत्तम्मि पदमाणट्ठिकंडयपमाणं पलिदोवमस्स असंखेज्जभागमेत्तं चेवे त्ति के वि आइरिया भणंति, तण्ण घडदे, विसोहीए ट्ठिदिखंडयघादेण मिच्छत्तस्स संखेज्जगुणहाणीए संतोए मिच्छत्तट्ठिदिसंतकम्मादो सम्मत्त-**

असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिकाण्डकघातके विना अधःस्थितिगलनासे सम्यक्त्वकी स्थितिके गलित होने पर ध्रुवस्थितिके प्राप्त होने तक निरन्तर असंख्यातभागहानि होती है; क्योंकि नाना जीवोंकी अपेक्षा ध्रुवस्थितिसे न्यून सत्तर कोड़ाकोड़ी प्रमाण स्थितियोंकी अधःस्थितिगलना पाई जाती है।

**शंका**—ध्रुवस्थितिसे ऊपरकी सम्यक्त्वकी सब स्थितियोंकी नाना जीवोंकी अपेक्षा उद्वेलनाका आश्रय लेकर असंख्यातभागहानि क्यों नहीं प्राप्त होती है?

**समाधान**—अच्छी तरहसे प्राप्त होती है। कौन कहता है कि नहीं प्राप्त होती है। किन्तु मिथ्यात्वकी ध्रुवस्थितिके ऊपर सम्यक्त्वकी स्थितिकी उद्वेलना करनेवाले जीवके पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिकाण्डकका ही पतन होता है ऐसा कोई नियम नहीं है; क्योंकि विशुद्धि के कारण कहीं पर पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण, कहीं पर संख्यात पल्यप्रमाण और कहीं पर संख्यात सागरप्रमाण स्थितिकाण्डकोंका पतन सम्भव है।

**शंका**—'सभी उद्वेलनाकाण्डकोंका प्रमाण पल्योपमके असंख्यातवें भागमात्र ही है' आचार्योंके इस वचनके साथ उपर्युक्त कथनका विरोध क्यों नहीं प्राप्त होता है?

**समाधान**—कोई विरोध नहीं है, क्योंकि पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण स्थितिकाण्डकसे लेकर ऊपरके सब स्थितिकाण्डक उद्वेलनारूप परिणामोंसे न होकर विशुद्धिनिमित्तक होते हैं। यदि कहा जाय कि विशुद्धिके द्वारा पतनको प्राप्त होनेवाले स्थितिकाण्डकोंका उद्वेलनापरिणाम कारण होता है, सो भी बात नहीं है; क्योंकि ऐसा माननेमें अव्यवस्थाकी आपत्ति आती है।

§ २४६. सम्यक्त्वकी उद्वेलनाके प्रारम्भ होने पर तो सम्यक्त्वके पतनको प्राप्त होनेवाले स्थितिकाण्डकोंका प्रमाण पल्योपमके असंख्यातवें भागमात्र ही होता है ऐसा कितने ही आचार्य कहते हैं परन्तु उनका यह कहना नहीं बनता है; क्योंकि ऐसा मानने पर विशुद्धिसे स्थितिकाण्डकघात

ट्ठिदिसंतकम्मस्स संखेज्जगुणत्तप्पसंगादो। ण च एवमुव्वेल्लणसंकमेण मिच्छत्तस्सुवरि सम्मत्ते णिरंतरं संकममाणे सम्मत्तट्ठिदीदो मिच्छत्तट्ठिदीए संखेज्जगुणहीणत्तविरोहादो। तम्हा मिच्छत्तस्स ट्ठिदिखंडए पदंते सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं घादिदसेसमिच्छत्तट्ठिदीदो उवरिमट्ठिदीणं णियमा घादो होदि त्ति घेत्तव्वं। एवं संते सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमेग-णिसेगमेत्तो वि ट्ठिदिखंडओ होदि त्ति वुत्ते होदु णाम ण को वि एत्थ विरोहो।

२४७. उव्वेल्लणाए सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तेसु मिच्छत्तधुवट्ठिदिपमाणं पत्तेसु वि एसो चेव कमो; विगलिंदियविसोहीहि घादिज्जमाणमिच्छत्तट्ठिदिखंडयाणं पलिदोवमस्स संखेज्जभागायामाणमुवलंभादो। एइंदिएसु पुण उव्वेल्लमाणस्सेव विसुज्झमाणस्स वि पलिदो-वमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तो ट्ठिदिखंडओ होदि। एइंदिएसु विगलिंदिएसु च संखेज्जगुण-हाणी वि सुणिज्जदि, सा कुदो लब्भदे? ण, सण्णिपंचिंदिएण आढत्तट्ठिदिखंडए एइंदिय-विगलिंदिएसु णिवदमाणे तदुवलंभादो। एवमेइंदिए संखेज्जभागहाणी वि परत्थाणादो साहेयव्वा। तम्हा अंतोमुहुत्तूणसत्तरिमादिं कादूण जाव सव्वजहण्णचरिमुव्वेल्लणकंडयं ति ताव णिरंतरमसंखेज्जभागहाणीए वियप्पा लब्भंति त्ति घेत्तव्वं।

के द्वारा मिथ्यात्वकी सख्यातगुणहानिक होते हुए मिथ्यात्वके स्थितिसत्कर्मसे सम्यक्त्वके स्थितिसत्कर्मको संख्यातगुणे होनेका प्रसंग प्राप्त होता है। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि उद्वेलना संक्रमके द्वारा मिथ्यात्वके ऊपर सम्यक्त्वका निरन्तर संक्रमण होने पर सम्यक्त्वकी स्थितिसे मिथ्यात्वकी स्थितिको सख्यातगुणा हीन माननेमें विरोध आता है। अतः मिथ्यात्वके स्थितिकाण्डकके पतन होने पर घात करनेके बाद शेष रही मिथ्यात्वकी स्थितिसे सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी ऊपरकी स्थितियोंका नियमसे घात है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। ऐसा होने पर सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका एक निषेकप्रमाण भी स्थितिकाण्डक होता है ऐसा कहने पर आचार्यका कहना है कि रहा आओ इसमें कोई विरोध नहीं है।

§ २४७. उद्वेलनाके द्वारा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके मिथ्यात्वकी ध्रुवस्थितिप्रमाण प्राप्त होने पर भी यही क्रम होता है, क्योंकि विकलेन्द्रियोंकी विशुद्धिके द्वारा घातको प्राप्त होनेवाले मिथ्यात्वके स्थितिकाण्डकोंका आयाम पल्योपमके सख्यातवें भागप्रमाण पाया जाता है। परन्तु एकेन्द्रियोंमें उद्वेलना करनेवालेके समान विशुद्धिको प्राप्त होनेवाले जीवके भी पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिकाण्डक होता है।

**शंका**—एकेन्द्रियों और विकलेन्द्रियोंमें संख्यातगुणहानि भी सुनी जाती है, वह कैसे प्राप्त होती है?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि जिस संज्ञी पंचेन्द्रियने स्थितिकाण्डकका आरम्भ किया उसके एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रियोंमें उत्पन्न होने पर एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रियोंके संख्यातगुणहानि पाई जाती है।

इसी प्रकार एकेन्द्रियमें परस्थानकी अपेक्षा संख्यातभागहानि भी साधना चाहिये। अतः अन्तर्मुहूर्तकम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरसे लेकर सबसे जघन्य अन्तिम उद्वेलनाकाण्डकतक निरन्तर असंख्यातभागहानिके विकल्प प्राप्त होते हैं ऐसा ग्रहण करना चाहिये।

§ **विशेषार्थ**—वैसे तो सर्वत्र सम्यक्त्व प्रकृतिकी उत्तरोत्तर हानि ही होती है किन्तु वेदक सम्यक्त्व या उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीवके उसकी वृद्धि भी देखी जाती है। यहाँ पहले

§ २४८. संपहि संखेज्जभागहाणी वुच्चदे । तं जहा—अंतोमुहुत्तूणसत्तरिसागरोवम-कोडाकोडीणं संखेज्जभागमेत्ते सव्वजहण्णट्ठिदिखंडए हदे संखेज्जभागहाणी होदि । एवं समयुत्तरादिकमेण ट्ठिदिखंडए णिवदमाणे संखेज्जभागहाणी चेव होदि । एवं णेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तूणसत्तरिसागरोवमकोडाकोडीणं समयूणद्धमेत्तट्ठिदीओ एक्कसराहेण घादिदाओ त्ति । एवं समयाहियअंतोमुहुत्तूणसत्तरिसागरोवमकोडाकोडिट्ठिदिं पि णिरुंभिदूण संखेज्जभागहाणिपरूवणा कायव्वा । एवं हेट्ठिमसव्वट्ठिदीणं समयाविरोहेण णिरुंभणं कादूण संखेज्जभागहाणिपरूवणा कायव्वा । दंसणमोहक्खवणाए वि अपुव्वकरण-पढमसमयप्पहुडि जाव पलिदोवमट्ठिदिसंतकम्मं चेट्ठदि ताव एत्थंतरे पदमाणट्ठिदिकंडयाणं चरिमफालीसु णिवदमाणासु सव्वत्थ संखेज्जभागहाणी होदि; एत्थ णिवदमाण-ट्ठिदिकंडओ पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागमेत्तो चेवे त्ति णियमादो ।

§ २४९. संपहि संखेज्जगुणहाणी वुच्चदे । तं जहा—दंसणमोहक्खवणाए पलिदो-

वृद्धिका विचार क्रमप्राप्त है सम्यक्त्वकी स्थितिमें चार वृद्धियाँ होती हैं, असंख्यातवृद्धि, संख्यात-भागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणवृद्धि। यह नियम है कि जिसके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी स्थिति कमसे कम पृथक्त्व सागरसे एक या दो समय आदि अधिक होती है वह जीव यदि सम्यक्त्वको प्राप्त होता है तो नियमसे वेदकसम्यक्त्वको ही प्राप्त होता है। साथ ही यह भी नियम है कि ऐसे जीवके मिथ्यात्वकी स्थिति नियमसे अन्तःकोड़ाकोड़ी सागर होती है। पहले हमें असंख्यातभागवृद्धिका विचार करना है। किन्तु सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरसे नीचे उपर्युक्त सब स्थितिविकल्पोंमें असंख्यातभागवृद्धि सम्भव नहीं। हाँ *मिथ्यात्वकी ध्रुवस्थितिके नीचे पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिविकल्पोंमें असंख्यात-*भागवृद्धि हो सकती है, क्योंकि यदि कोई जीव मिथ्यात्वकी इस स्थितिके साथ वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त होता है और उस समय सम्यक्त्वकी स्थिति एक समयसे लेकर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कम है तो असंख्यातभागवृद्धि ही होगी।

§ २४८. अब संख्यातभागहानिका कथन करते हैं। जो इस प्रकार है—अन्तर्मुहूर्तकम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण स्थितियोंके संख्यातवें भागप्रमाण सबसे जघन्य स्थितिकाण्डकके घात होने पर संख्यातभागहानि होती है। इसी प्रकार एक समय अधिक आदि क्रमसे स्थिति-काण्डकके घात होने पर संख्यातभागहानि ही होती है। इसी प्रकार अन्तर्मुहूर्तकम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरकी एक समय कम अर्धप्रमाण स्थितियोंका एक साथ घात प्राप्त होनेतक कथन करना चाहिये। इसी प्रकार एक समय अधिक अन्तर्मुहूर्तकम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण स्थितिके रहते हुए भी संख्यातभागहानिका कथन करना चाहिये। इसी प्रकार नीचेकी सब स्थितियोंको यथाप्रमाण ग्रहण करके संख्यातभागहानिका कथन करना चाहिये। दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके समय भी अपूर्वकरणके प्रथम समयसे लेकर पल्यप्रमाण स्थितिसत्कर्मके रहने तक इस अन्तरालमें पतनको प्राप्त होनेवाले स्थितिकाण्डकोंकी अन्तिम फालियोंका पतन होने पर सर्वत्र संख्यातभागहानि होती है; क्योंकि यहाँ पर जिन स्थितिकाण्डकोंका पतन होता है उनका प्रमाण पल्यके संख्यातवेंभागमात्र ही है ऐसा नियम है।

§ २४९. अब संख्यातगुणहानिको कहते हैं। जो इस प्रकार है—दर्शनमोहनीयकी क्षपणामें

वमट्ठिदिसंतकम्मप्पहुडि जाव दूरावकिट्ठिट्ठिदिसंतकम्मं चेट्ठदि ताव एत्थ अंतरे पदमाणट्ठिदिखंडयाणं चरिमफालीसु णिवदमाणासु सव्वत्थ संखेज्जगुणहाणी होदि। संसारावत्थाए विसोहीए ट्ठिदिखंडए घादिज्जमाणे समयाविरोहेण सव्वत्थ संखेज्जगुणहाणी सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं वत्तव्वा।

२५०. संपहि असंखेज्जगुणहाणी वुच्चदे। तं जहा—दंसणमोहक्खवणाए दूरावकिट्ठिट्ठिदिसंतकम्मे चेट्ठिदे तत्तो उवरि जाणि ट्ठिदिकंडयाणि पदंति तेसिं सव्वेसिं पि चरिमफालीसु णिवदमाणासु असंखेज्जगुणहाणी चेव होदि। कुदो? साहावियादो। सव्वुक्कस्सचरिमुव्वेल्लणचरिमफालीए णिवदिदाए वि असंखेज्जगुणहाणी होदि। पुणो अण्णेगेण जीवेण इमाए सव्वुक्कस्सचरिमुव्वेल्लणफालियाए समयूणाए पादिदाए असंखेज्जगुणहाणी होदि। एवं दुसमयूण-तिसमयूणादिकमेण णेदव्वं जाव सव्वजहण्णुव्वेल्लणचरिमफालिं पादिय असंखेज्जगुणहाणिं कादूण ट्ठिदो त्ति। एवं कदे समयूणसव्वजहण्णुव्वेल्लणचरिमफालिं सव्वुक्कस्सउव्वेल्लणचरिमफालियाए सोहिदे सुद्धसेसम्मि पलिदो० असंखे०भागम्मि जत्तिया समया तत्तियमेत्ता असंखेज्जगुणहाणिवियप्पा उव्वेल्लणाए लद्धा होंति।

§ २५१ संपहि अवट्ठिदस्स परूवणा कीरदे। तं जहा—वेदगपाओग्गअंतोकोडाकोडिसागरोवमट्ठिदिसंतकम्मस्सुवरि समयुत्तरं मिच्छत्तट्ठिदिं बंधिदूण सम्मत्ते गहिदे अवट्ठिदं होदि। पुणो पुव्वुत्तट्ठिदीदो समयुत्तरसम्मत्तट्ठिदिसंतकम्मियसम्मादिट्ठिणा मिच्छत्तं गंतूण

पल्यप्रमाण स्थितिसत्कर्मसे लेकर दूरापकृष्टि स्थितिसत्कर्मतक इस अन्तरालमें पतनको प्राप्त होनेवाले स्थितिकाण्डकोंकी अन्तिम फालियोंके पतन होने पर सर्वत्र संख्यातगुणहानि होती है। तथा संसारावस्थामें विशुद्धिके द्वारा स्थितिकाण्डकका घात करने पर यथागम सर्वत्र सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी संख्यातगुणहानि कहनी चाहिये।

१५०. अब असंख्यातगुणहानिका कथन करते हैं। जो इस प्रकार है—दर्शनमोहनीयकी क्षपणामें दूरापकृष्टिप्रमाण स्थितिसत्कर्मके शेष रहने पर इसके आगे ऊपर जितने स्थितिकाण्डकोंका पतन होता है उन सबकी अन्तिम फालियोंका पतन होते समय असंख्यातगुणहानि ही होती है। क्योंकि ऐसा स्वभाव है। सबसे उत्कृष्ट अन्तिम उद्वेलनाकाण्डककी अन्तिम फालिके पतनके समय भी असंख्यातगुणहानि होती है। पुनः किसी एक अन्य जीवके द्वारा सबसे उत्कृष्ट अन्तिम उद्वेलनाकाण्डककी एक समय कम अन्तिम फालिका पतन करनेपर असंख्यातगुणहानि होती है। इस प्रकार दो समय कम तीन समय कम आदि क्रमसे लेकर सबसे जघन्य उद्वेलनाकाण्डककी अन्तिम फालिके पतन होने तक कथन करना चाहिये; क्योंकि इनके पतनमें भी असंख्यातगुणहानि होती है। इस प्रकार करने पर एक समय कम सबसे जघन्य उद्वेलनाकी अन्तिम फालिको सबसे उत्कृष्ट उद्वेलनाकी अन्तिम फालिमें से घटाने पर शेष रहे पल्योपमके असंख्यातवें भागमें जितने समय हों उद्वेलनामें असंख्यातगुणहानिके उतने विकल्प प्राप्त होते हैं।

§ २५१. अब अवस्थितका कथन करते हैं। जो इस प्रकार है—वेदकसम्यक्त्वके योग्य अन्तःकोड़ाकोड़ी सागर स्थितिसत्कर्मके ऊपर एक समय अधिक मिथ्यात्वकी स्थितिको बाँधकर सम्यक्त्वके ग्रहण करने पर अवस्थित होता है। पुनः पूर्वोक्त स्थितिसे सम्यक्त्वकी एक समय अधिक स्थितिसत्कर्मवाले सम्यग्दृष्टिके द्वारा मिथ्यात्वमें जाकर और मिथ्यात्वकी एक समय अधिक

मिच्छत्तट्ठिदिं समयुत्तरं बंधिय सम्मत्ते गहिदे अवट्ठिदं होदि। एवं जाणिदूण णेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तूणसत्तरिसागरोवमकोडाकोडि त्ति।

*** णवरि अणंताणुबंधीणमवत्तव्वं सम्मत्तसम्मामिच्छत्ताणमसंखेज्जगुणवड्ढी अवत्तव्वं च अत्थि।**

§ २५२. अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोइदसम्मादिट्ठिणा मिच्छत्ते गहिदे अवत्तव्वं होदि, पुव्वमविज्जमाणट्ठिदिसंतसमुप्पत्तीदो। अवत्तव्वसद्देण भण्णमाणस्स कधमवत्तव्वत्तं ? ण, वड्ढि हाणि-अवट्ठाणाणमभावेण भुजगार-अप्पदर-अवट्ठिदसद्देहि ण वुच्चदि त्ति अवत्तव्वत्तब्भुवगमादो।

§ २५३ संपहि सम्मत्तस्स असंखेज्जगुणवड्ढी वुच्चदे। तं जहा—सव्वजहण्णट्ठिदिचरिमुव्वेल्लणकंडयसंतकम्मियमिच्छाइट्ठिणा उवसमसम्मत्ते गहिदे असंखेज्जगुणवड्ढी होदि। पुणो एदस्स चरिमुव्वेल्लणकंडयस्सुवरि समयुत्तरादिकमेण जे ट्ठिदा पलिदोवमस्स असंखेज्जभागमेत्ता चरिमफालिवियप्पा तेहि सह पढमसम्मत्तं गेण्हमाणाणं तत्तिया चेव असंखेज्जगुणवड्ढिवियप्पा। एवमुवरिं पि असंखेज्जगुणवड्ढिवियप्पा वत्तव्वा। तत्थ सव्वपच्छिमवियप्पा वुच्चदे। तं जहा—सव्वजहण्णमिच्छत्तट्ठिदिं जहण्णपरित्तासंखेज्जेण खंडिय तत्थ एगखंडमेत्तसम्मत्तट्ठिदिसंतकम्मिएण मिच्छादिट्ठिणा सव्वजहण्णमिच्छत्त-

स्थितिको बांधकर सम्यक्त्वके ग्रहण करने पर अवस्थित होता है। इसी प्रकार अन्तमुहूर्तकम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर स्थिति तक जानकर कथन करना चाहिये।

*** किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीका अव्यक्तव्य पद होता है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणवृद्धि और अव्यक्तव्यस्थितिविभक्ति होती है।**

§ २५२. जिस सम्यग्दृष्टिने अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना की है उसके मिथ्यात्वके ग्रहण करने पर अवक्तव्यस्थितिविभक्ति होती है; क्योंकि सम्यग्दृष्टिके अनन्तानुबन्धीका स्थितिसत्त्व अविद्यमान था वह अब यहाँ पर उत्पन्न हो गया।

**शंका**—जो अवक्तव्य शब्दके द्वारा कहा जा रहा है वह अवक्तव्य कैसे हो सकता है ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि वृद्धि, हानि और अवस्थान न पाये जानेके कारण इसे भुजगार, अल्पतर और अवस्थित शब्दोंके द्वारा नहीं कह सकते, अतः इसमें अवक्तव्यभाव स्वीकार किया गया है।

§ २५३. अब सम्यक्त्वकी असंख्यातगुणवृद्धिका कथन करते हैं। जो इस प्रकार है—सबसे जघन्य अन्तिम उद्वेलनाकाण्डक स्थितिसत्कर्मवाले मिथ्यादृष्टिके द्वारा उपशमसम्यक्त्वके ग्रहण करने पर असंख्यातगुणवृद्धि होती है। पुनः इस अन्तिम उद्वेलनाकाण्डकके ऊपर एक समय अधिक आदि क्रमसे पल्योपमके असंख्यात बहुभाग जो अन्तिम फालिके भेद अवस्थित हैं उनके साथ प्रथमोपशमसम्यक्त्वको ग्रहण करनेवाले जीवोंके उतने ही असंख्यातगुणवृद्धिके भेद होते हैं। इसी प्रकार ऊपर भी असंख्यातगुणवृद्धिके भेद कहना चाहिये। उनमेंसे सबसे अन्तिम भेद कहते हैं। जो इस प्रकार है—मिथ्यात्वकी सबसे जघन्य स्थितिको जघन्य परीतासंख्यातसे खण्डित करके जो एक खण्ड प्राप्त हो उतनी जिसके सम्यक्त्वकी स्थिति है और जिसके मिथ्यात्वकी सबसे जघन्य स्थिति

ट्ठिदिसंतकम्मिएण पढमसम्मत्ते गहिदे एत्थतणचरिमअसंखेज्जगुणवड्ढी होदि। एवमुवसमसम्मत्तपाओग्गमिच्छत्तट्ठिदीणं पादेक्कं णिरुंभणं कादूण परूविदे असंखेज्जगुणवड्ढिवियप्पा लद्धा होंति। सम्मत्त सम्मामिच्छत्तणिस्संतकम्मिएण सादियमिच्छाइट्ठिणा अणादियमिच्छाइट्ठिणा वा पढमससम्मत्ते गहिदे अवत्तव्वं होदि। कुदो, पुव्वमविज्जमाणट्ठिदिसंतुप्पत्तीदो।

§ २५४. एवं चुण्णिसुत्तमस्सिदूण समुक्कित्तणपरूवणं करिय संपहि उच्चारणमस्सिदूण भणिस्सामो। वड्ढिविहत्तीए तत्थ इमाणि तेरस अणियोगद्दाराणि--समुक्कित्तणादि जाव अप्पाबहुए त्ति। समुक्कित्तणाए पयदं। दुविहो णिद्देसो--ओघे० आदेसे०। ओघेण मिच्छत्त बारसक०-णवणोकसायाणं अत्थि तिण्णिवड्ढि-चत्तारिहाणि-अवट्ठिदाणि। एवमणंताणु०चउक्क०। णवरि अवत्तव्वं पि अत्थि। सम्मत्त-सम्मामि० चत्तारिवड्ढि-चत्तारि हाणि अवट्ठिद-अवत्तव्वाणि अत्थि। एवं मणुसतिय पंचिंदिय-पंचि०पज्ज० तस-तसपज्ज०-पंचमण०-पंचवचि०-कायजोगि०-ओरालि०-तिण्णिवेद-चत्तारिक०-चक्खु०-अचक्खु०-भवसि०-सण्णि०-आहारि त्ति।

§ २५४. आदेसेण णेरइएसु मिच्छत्त बारसक० णवणो० अत्थि तिण्णिवड्ढी तिण्णिहाणि अवट्ठाणं च। असंखे०गुणहाणी णत्थि; दंसणचरित्तमोहाणं खवणाभावादो। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमत्थि चत्तारि वड्ढी चत्तारि हाणी अवट्ठि० अवत्तव्वं च। अणं-

सत्तामें है ऐसे मिथ्यादृष्टि जीवके प्रथम सम्यक्त्वके ग्रहण करने पर इस स्थान सम्बन्धी अन्तिम असंख्यातगुणवृद्धि होती है। इसी प्रकार उपशमसम्यक्त्वके योग्य मिथ्यात्वकी स्थितियोंको अलग अलग ग्रहण करके प्ररूपण करने पर असंख्यातगुणवृद्धिके भेद प्राप्त होते हैं। जिसने सम्यक्त्व या सम्यग्मिथ्यात्वस्थितिसत्कर्मका निःसत्त्व कर दिया है उसके सादि मिथ्यादृष्टि जीवके द्वारा या अनादि मिथ्यादृष्टि जीवके द्वारा प्रथम सम्यक्त्वके ग्रहण करने पर अवक्तव्य भंग होता है। क्योंकि पहले इनकी सत्ता नहीं थी किन्तु अब हो गई है।

§ २५४. इस प्रकार चूर्णिसूत्रके आश्रयसे समुत्कीर्तनाका कथन करके अब उच्चारणाके आश्रयसे समुत्कीर्तनाका कथन करते हैं—वृद्धिविभक्तिमें समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पबहुत्व तक तेरह अनुयोगद्वार होते हैं। उनमेंसे समुत्कीर्तनाका प्रकरण है। उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेंसे ओघकी अपेक्षा मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी तीन वृद्धियाँ चार हानियाँ और अवस्थानपद होते हैं। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्कके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इसका अवक्तव्य भंग भी होता है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धियाँ, चार हानियाँ अवस्थान और अवक्तव्य होते हैं। इसी प्रकार मनुष्यत्रिक पंचेन्द्रिय, पचेन्द्रियपर्याप्त, त्रस, त्रसपर्याप्त, पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी, काययोगी, औदारिककाययोगी, तीनों वेदवाले, चारों कषायवाले, चक्षुदर्शनवाले, अचक्षुदर्शनवाले, भव्य, संज्ञी और आहारक जीवोंके जानना चाहिये।

§ २५४. आदेशनिर्देशकी अपेक्षा नारकियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी तीन वृद्धियाँ, तीन हानियाँ और अवस्थान हैं। असंख्यातगुणहानि नहीं है क्योंकि वहाँ दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीयकी क्षपणा नहीं होती। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धियाँ, चार

ताणु०चउक्क० अत्थि तिण्णिवड्ढी चत्तारिहाणी अवट्ठि० अवत्तव्वं च। एवं सव्व-णेरइय तिरिक्ख०-पंचिंदियतिरिक्ख०-पंचिं०तिरि०पज्ज०-पंचिं०तिरि०जोणिणि-देव०-भवणादि जाव सहस्सार०-वेउव्वि०कायजोगि-तिण्णिलेस्सिया त्ति। पंचिंदियतिरिक्ख-अपज्ज० छव्वीसपयडीणमत्थि तिण्णिवड्ढी तिण्णिहाणी अवट्ठाणं च। सम्म०-सम्मामि० अत्थि चत्तारिहाणी। एवं मणुसअपज्ज०-पंचिं०अपज्ज०-तसअपज्जत्ते त्ति।

§ २५५. आणदादि जाव उवरिमगेवज्जे त्ति मिच्छत्त०-बारसक०-णवणोक० अत्थि असंखेज्जभागहाणी संखेज्जभागहाणी। सम्मत्त०-सम्मामि० अत्थि चत्तारिवड्ढी चत्तारिहाणी अवत्तव्वं च। अवट्ठाणं णत्थि; सम्मत्तट्ठिदीदो समयुत्तरमिच्छत्तट्ठिदिसंतकम्मेण सम्मत्तग्गहणाभावादो। अणंताणु०चउक्क० अत्थि चत्तारिहाणी अवत्तव्वं च। अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति मिच्छत्त सम्मामि०-बारसकसा०-णवणोक० अत्थि असंखेज्जभाग-

हानियाँ, अवस्थान और अवक्तव्य हैं। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी तीन वृद्धियाँ, चार हानियाँ, अवस्थान और अवक्तव्य हैं। इसी प्रकार सब नारकी, तिर्यंच, पंचेन्द्रिय तिर्यंच, पंचेन्द्रिय तिर्यंच पर्याप्त, पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमती, सामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार स्वर्गतकके देव, वैक्रियिककाययोगी, और तीन लेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिए। पचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी तीन वृद्धियाँ, तीन हानियाँ और अवस्थान हैं। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार हानियां हैं। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्त, पचेन्द्रिय अपर्याप्त और त्रस अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिये।

**विशेषार्थ**—ओघसे मिथ्यात्व आदि प्रकृतियोंकी जितनी वृद्धियाँ, हानियाँ व अवस्थान आदि बतलाये हैं वे सब सामान्य मनुष्य आदि मूलमें कही गई मार्गणाओंमें सम्भव हैं, अतः उनके कथनको ओघके समान कहा है, क्योंकि उक्त मार्गणाओंमें दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीयकी क्षपणा सम्भव है। किन्तु सामान्य नारकी आदि कुछ ऐसी मार्गणाएँ हैं जिनमें अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना और सम्यक्त्व तथा सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना पाई जानेसे इन छह प्रकृतियोंका कथन ओघके समान बन जाता है किन्तु शेष बाईस प्रकृतियोंकी एक असंख्यातगुणहानि नहीं पाई जाती, क्योंकि उक्त मार्गणाओंमें दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीयकी क्षपणा नहीं होती। पचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तक आदि कुछ ऐसी मार्गणाएँ हैं जिनमें सम्यक्त्वकी प्राप्ति नहीं होती; अतः इनमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी एक भी वृद्धि और अवस्थान नहीं होता किन्तु उद्वेलनाकी प्रधानतासे चारों हानियाँ बन जाती हैं। तथा अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना और दर्शनमोहनीय तथा चारित्रमोहनीयकी क्षपणा नहीं होती इसलिये यहाँ शेष २६ प्रकृतियोंकी असंख्यातगुणहानि भी नहीं होती। किन्तु शेष हानि, वृद्धि और अवस्थान बन जाते हैं।

§ २५५. आनतकल्पसे लेकर उपरिम ग्रैवेयकतकके देवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागहानि और संख्यातभागहानि है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धियाँ, चार हानियाँ और अवक्तव्य है। अवस्थान नहीं है, क्योंकि यहाँ पर सम्यक्त्वकी स्थितिसे एक समय अधिक मिथ्यात्वकी स्थिति सत्कर्मवाला जीव सम्यक्त्वको ग्रहण नहीं करता है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कको चार हानियाँ और अवक्तव्य हैं। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागहानि

हाणी संखेज्जभागहाणी। सम्मत्त० अत्थि असंखेज्जभागहाणी संखेज्जभागहाणी संखेज्ज-गुणहाणी च। अणंताणु०चउक्क० अत्थि चत्तारि हाणी।

§ २५६. इंदियाणुवादेण एइंदिय-बादरसुहुमपज्जत्तापज्जत्ताणं मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० अत्थि असंखेज्जभागवड्ढी। सेसवड्ढीओ णत्थि। कुदो? आवलियाए असंखे-ज्जदिभागमेत्तआबाहट्ठाणपमाणण्णहाणुववत्तीदो। असंखेज्जभागहाणी संखेज्जभागहाणी संखेज्जगुणहाणि त्ति अत्थि तिण्णि हाणीओ। संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणीणं कथं संभवो? ण एस दोसो; संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणीओ कुणमाणमण्णिपंचिंदिएसु असमत्तट्ठिदिकंडयउक्कीरणद्धेसु एइंदिएसु पविट्ठेसु तासिं दोण्हं हाणीणं तत्थुवलंभादो।

और संख्यातभागहानि है। सम्यक्त्वकी असंख्यातभागहानि, संख्यातभागहानि और संख्यात-गुणहानि है। तथा अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी चार हानियाँ हैं।

**विशेषार्थ**—आनतादिकमें स्थितिसत्त्वसे हीन स्थितिका ही बन्ध होता है इसलिये यहाँ मिथ्यात्व आदि २२ प्रकृतियोंकी वृद्धि तो सम्भव ही नहीं हाँ हानि अवश्य होती है फिर भी यहाँ मिथ्यात्व आदिकी जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरसे अधिक नहीं होती, इसलिये उक्त २२ प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानि और संख्यातभागहानि ये ही दो हानियाँ सम्भव हैं। इनमेंसे असंख्यातभागहानि तो अधःस्थितिगलनाकी अपेक्षा प्राप्त होती है और संख्यातभागहानि कचित स्थितिकाण्डकघातकी अपेक्षा प्राप्त होती है। अब रहीं छह प्रकृतियाँ। सो यहाँ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना, सम्यक्त्वकी प्राप्ति और अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना ये सब कुछ सम्भव हैं अतः यहाँ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चारों वृद्धियाँ, चारों हानियाँ, अवक्तव्य तथा अनन्तानुबन्धीकी चारों हानियाँ और अवक्तव्य बन जाते हैं। किन्तु अवस्थान किसीका नहीं बनता, क्योंकि जो बँधनेवाली २६ प्रकृतियाँ हैं उनका बन्ध तो स्थितिसत्त्वसे उत्तरोत्तर कम ही होता है, अतः इनका अवस्थान नहीं बनता और जो सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतियाँ हैं सो इनका अवस्थान तब बने जब सम्यक्त्व या सम्यग्मिथ्यात्वकी स्थितिसे मिथ्यात्वकी एक समय अधिक स्थितिवाला जीव सम्यक्त्वका ग्रहण करे पर यहाँ ऐसा सम्भव नहीं। परन्तु यतिवृषभाचार्यके मतसे अवस्थान सम्भव है। आनतादिकमें मिथ्यात्व आदि २२ प्रकृतियोंकी दो हानियोंका जिस प्रकार कथन किया उसी प्रकार अनुदिशादिकमें भी करना चाहिये। किन्तु यहाँ सब जीव सम्यग्दृष्टि ही होते हैं अतः सम्यग्मिथ्यात्वकी भी यहाँ हानियाँ ही प्राप्त होती हैं जो मिथ्यात्वके समान जानना चाहिये। अब रहीं शेष पाच प्रकृतियाँ सो यहाँ कृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टि भी उत्पन्न होते हैं और अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना भी होती है, अतः सम्यक्त्वकी असंख्यातगुणहानिके सिवा शेष तीन हानियाँ और अनन्तानुबन्धीकी चारों हानियाँ बन जाती हैं।

§ २५६. इन्द्रियमार्गणाके अनुवादसे एकेन्द्रिय तथा उनके बादर और सूक्ष्म तथा पर्याप्त और अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि है। शेष वृद्धियाँ नहीं हैं, क्योंकि आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण आबाधास्थानका प्रमाण अन्यथा बन नहीं सकता है। हानियोंमें असंख्यातभागहानि, संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानि ये तीन हानियाँ हैं।

**शंका**—यहाँ संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानि कैसे सम्भव है?

**समाधान**—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि जो संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिको कर रहे हैं तथा जिन्होंने स्थितिकाण्डकघातके उत्कीरणकालको समाप्त नहीं किया है ऐसे पंचेन्द्रियोंके

जेण तत्तिओ ट्ठिदिकंडओ अणुभागक्खंडओ वा पादेदुमाढत्तो तेण एइंदिएसु वि गदस्स तस्स णिच्छएण पदेदव्वमिदि कुदोवगम्मदे ? परमगुरूवएसादो। एइंदिएसु पुण ट्ठिदिकंदयायामो पलिदो० असंखेज्जभागमेत्तो चेव। एदं कुदो णव्वदे ? एइंदियाणं पलिदो० असंखेज्जभागमेत्तवीचारट्ठाणपरूवणादो। सण्णिपंचिंदियपच्छायदएइंदिओ छव्वीसण्हं कम्माणमंतोमुहुत्तूणसण्णिसंबंधिउक्कस्सट्ठिदिसंतकम्मिओ संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणीओ किण्ण करेदि? ण, एइंदिएसु संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणीणं कारणभूदविसोहीणमभावादो। तं कुदो णव्वदे ? तत्थ संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढीणं कारणभूदसंकिलेसाणमभावादो। संकिलेसाभावो[1] विसोहीए अभावस्स कधं गमओ ? ण, सव्वत्थ पडिओगीसु एक्कस्साभावे अवरस्स वि अभावुवलंभादो ट्ठिदिहदसमुप्पत्तियकालस्स पलिदो० असंखेज्जभागपमाणत्तण्णहाणुववत्तीदो वा संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणीणं तत्थाभावोवगम्मदे। तीहि वि पयारेहि ट्ठिदिखंडए घादिदे एसो कालो लब्भदि त्ति

एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होने पर वहाँ ये दोनों हानियाँ बन जाती हैं।

**शंका**—जिसने उतने स्थितिकाण्डक और अनुभागकाण्डकका पतन करनेके लिये आरम्भ किया है उस जीवके एकेन्द्रियोंमें भी चले जाने पर उस स्थितिकाण्डक और अनुभागकाण्डकका पतन होना ही चाहिये यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

**समाधान**—परम गुरुके उपदेशसे जाना जाता है। परन्तु एकेन्द्रियोंमें स्वस्थानकी अपेक्षा स्थितिकाण्डकका आयाम केवल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

**शंका**—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

**समाधान**—क्योंकि एकेन्द्रियोंके वीचारस्थान पल्यके असंख्यातवें भागमात्र कहे हैं, इससे जाना जाता है कि एकेन्द्रियोंमें स्थितिकाण्डकका आयाम पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

**शंका**—जो संज्ञी पचेन्द्रिय पर्यायसे आकर एकेन्द्रिय हुआ है और जिसके छब्बीस कर्मोंका अन्तर्मुहूर्तकम संज्ञीसम्बन्धी उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म है वह संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिको क्यों नहीं करता है ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि एकेन्द्रियोंमें संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिकी कारणभूत विशुद्धियोंका अभाव है।

**शंका**—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

**समाधान**—क्योंकि वहाँ पर संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिके कारणभूत संक्लेशका अभाव है।

**शंका**—संक्लेशका अभाव विशुद्धिके अभावका गमक कैसे हो सकता है ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि सर्वत्र प्रतियोगियोंमें एकका अभाव होने पर दूसरेका भी अभाव पाया जाता है। अथवा स्थितिहतसमुत्पत्तिक काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण अन्यथा बन नहीं सकता है, इससे जाना जाता है कि एकेन्द्रियोंमें संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका अभाव है।

तीनों ही प्रकारोंसे स्थितिकाण्डकका घात करने पर यह काल प्राप्त होता है ऐसी आशंका नहीं करनी

[1] ता० प्रतौ तं कुदो णव्वदे संकिलेसाभावो इति पाठः।

णासंकणिज्जं; एगभवट्ठिदीए असंखेज्जभागहाणिकंडयवारेहिंतो संखेज्जभागहाणि-संखेज्ज-गुणहाणिकंडयवाराणं संखेज्जदिभागत्तादो। एदं कुदो णव्वदे? एगभवट्ठिदीए सव्वत्थोवा संखेज्जगुणहाणिकंडयवारा, संखेज्जभागहाणिकंडयवारा संखेज्जगुणा, असंखेज्ज-भागहाणिकंडयवारा संखेज्जगुणा त्ति अप्पाबहुआदो णव्वदे। एदमप्पाबहुअमसिद्ध-मिदि ण वत्तव्वं; उवरि भण्णमाणजीवअप्पाबहुएण सिद्धत्तादो।

§ २५७. पलिदोवमस्स संखेज्जदिभागमेत्तेगट्ठिदिकंडयस्स जदि संखेज्जावलियमेत्तो ट्ठिदिकंडयउक्कीरणकालो लब्भदि तो संखेज्जपलिदोवमाणं[1] किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए संखेज्जावलियमेत्तो ट्ठिदिहदसमुप्पत्तियकालो होदि। ण च एत्तिओ कालो इच्छिज्जदि; पदरावलियाए उवरिमसंखाए पलिदोवमादो हेट्ठिमाए तप्पाओग्गाए[2] पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागत्तब्भुवगमादो। असंखेज्जभागहाणिकंडओ ण पहाणो, पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण कालेण असंखेज्जभागकंडएण जा ट्ठिदी हम्मदि तिस्से संखेज्जभागहाणिकंडएण एगसमए घादुवलंभादो। तम्हा एइंदिओ असंखेज्जभागहाणिं चेव कुणदि त्ति घेत्तव्वं। एदमत्थपदं सव्वएइंदिएसु वत्तव्वं।

§ २५८. एदेसिं पयडीणमवट्ठाणं पि अत्थि; एइंदिएसु समट्ठिदिबंधसंभवादो। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमत्थि चत्तारि हाणीओ। संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणीणं

चाहिये, क्योंकि एक भवस्थितिमें असंख्यातभागहानिके जितने काण्डकवार होते हैं उनसे संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानि काण्डकोंके वार संख्यातवें भागप्रमाण हैं।

**शंका**—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

**समाधान**—एक भवस्थितिमें संख्यातगुणहानि काण्डकवार सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यातभागहानिकाण्डकवार संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागहानिकाण्डकवार संख्यातगुणे हैं, इस अल्पबहुत्वसे जाना जाता है। यह अल्पबहुत्व असिद्ध है यह कहना ठीक नहीं है, क्योंकि आगे कहे जानेवाले जीव अल्पबहुत्वसे यह सिद्ध है।

§ २५७. पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण एक स्थितिकाण्डकका यदि संख्यात आवलिप्रमाण स्थितिकाण्डक-उत्कीरणाकाल प्राप्त होता है तो संख्यात पल्योंका कितना उत्कीरणाकाल प्राप्त होगा इस प्रकार त्रैराशिक द्वारा फलराशिसे इच्छाराशिको गुणित करके जो लब्ध आवे उसमें प्रमाणराशिका भाग देने पर संख्यातआवलिप्रमाण स्थितिहतसमुत्पत्तिक काल प्राप्त होता है। परन्तु प्रकृतमें इतना काल इष्ट नहीं है, क्योंकि यहाँ प्रतरावलिमें ऊपरकी संख्या और पल्यके नीचेकी तत्प्रायोग्य संख्याको पल्यका असंख्यातवाँ भाग स्वीकार किया है। यदि कहा जाय कि यहाँ असंख्यातभागहानिकाण्डक प्रधान नहीं है, सो भी बात नहीं है, क्योंकि पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके द्वारा असंख्यातभागकाण्डकरूपसे जो स्थिति घाती जाती है उसका संख्यातभागहानिकाण्डकके द्वारा एक समयमें घात पाया जाता है। इसलिये एकेन्द्रिय असंख्यातभागहानिको ही करता है ऐसा ग्रहण करना चाहिये। यह अर्थपद सब एकेन्द्रियोंमें कहना चाहिये।

§ २५८. एकेन्द्रियोंमें इन उपर्युक्त प्रकृतियोंका अवस्थान भी है, क्योंकि एकेन्द्रियोंमें समान स्थितिका बन्ध सम्भव है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार हानियाँ हैं। यहाँ संख्यातभाग-

1. ता॰ प्रतौ पलिदोवमाणाणं इति पाठः। 2. ता॰ प्रतौ तप्पाओग्गादो इति पाठः।

पुव्वं व अत्थपरूवणा कायव्वा। णवरि उव्वेल्लणाए त्ति उदयावलियाए उक्कस्ससंखेज्ज-मेत्तणिसेगेसु सेसेसु संखेज्जभागहाणी लब्भदि। तिसमयकालदोणिसेगेसु सेसेसु संखेज्ज-भागहाणी होदूण पुणो संखेज्जगुणहाणी होदि; से काले दुसमयकालेगणिसेगुवलंभादो। एवं सव्वपंचकायाणं।

§ २५९. सव्वविगलिंदिएसु मिच्छत्त-सोलसक० णवणोक० अत्थि असंखेज्जभागवड्ढी संखेज्जभागवड्ढी च; पलिदो० संखेज्जभागमेत्तवीचारट्ठाणाणं तत्थुवलंभादो। एइंदियाणं विगलिंदिएसुप्पण्णाणं पढमसमए संखेज्जगुणवड्ढी किण्ण लब्भदि? ण, वियलिंदियट्ठिदिं पेक्खिदूण वियलिंदियट्ठिदिवड्ढीए संखेज्जगुणत्ताणुवलंभादो। परत्थाणविवक्खाए णोक-सायाणमेत्थ संखेज्जगुणवड्ढीए[1] वि लब्भदि सा एत्थ ण विवक्खिया।

§ २६०. असंखेज्जभागहाणी संखेज्जभागहाणी संखेज्जगुणहाणि त्ति अत्थि तिण्णि हाणीओ। सत्थाणे दो चेव हाणीओ होंति। संखेज्जगुणहाणी पुण सण्णिपंचिंदिएसु पारद्धट्ठिदिकंडयउक्कीरणद्धाए अब्भंतरे चेव विगलिंदिएसुप्पण्णेसु लब्भदि। एदेसिं कम्माण-मवट्ठाणं पि अत्थि। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमेइंदियभंगो। एवमसण्णीणं। णवरि संखेज्जगुणवड्ढी वि अत्थि;[2] एइंदियाणं विगलिंदिएसुप्पण्णाणं तदुवलंभादो।

हानि और संख्यातगुणहानिकी अर्थप्ररूपणा पहलेके समान करनी चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि उद्वेलनाके समय भी उदयावलिमें उत्कृष्ट संख्यात निषेकोंके शेष रहने पर संख्यातभागहानि प्राप्त होती है। तथा तीन समय काल स्थितिवाले दो निषेकोंके शेष रहने तक संख्यातभागहानि होकर पुनः संख्यातगुणहानि होती है; क्योंकि तदनन्तर समयमें दो समय कालप्रमाण स्थितिवाला एक निषेक पाया जाता है। इस प्रकार सब पाँचों स्थावरकायिक जीवोंके जानना चाहिए।

§ २५९. सब विकलेन्द्रियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभाग-वृद्धि और संख्यातभागवृद्धि है; क्योंकि वहाँ पर पल्योपमके संख्यातवें भागप्रमाण वीचारस्थान पाये जाते हैं।

**शंका**—जो एकेन्द्रिय विकलेन्द्रियोंमें उत्पन्न होते हैं उनके उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें संख्यातगुणवृद्धि क्यों नहीं पाई जाती है?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि विकलेन्द्रियोंकी स्थितिको देखते हुए एकेन्द्रियोंसे विकलेन्द्रियोंमें उत्पन्न होने पर विकलेन्द्रियोंकी स्थितिमें जो वृद्धि होती है उसमें संख्यातगुणापना नहीं पाया जाता है। परस्थानकी विवक्षासे नोकषायोंकी यहाँ पर संख्यातगुणवृद्धि भी प्राप्त होती है पर उसकी यहाँ विवक्षा नहीं है।

§ २६०. हानियोंमें असंख्यातभागहानि, संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानि ये तीन हानियाँ होती हैं। परन्तु स्वस्थानमें दो ही हानियाँ होती हैं। संख्यातगुणहानि तो, जो संज्ञी पंचेन्द्रिय प्रारम्भ किये गये स्थितिकाण्डक उत्कीरणाकालके भीतर ही विकलेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुए हैं उनके ही, पाई जाती है। इन उपर्युक्त कर्मोंका अवस्थान भी है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मि-थ्यात्वका भंग एकेन्द्रियोंके समान है। इसी प्रकार असंज्ञियोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके संख्यातगुणवृद्धि भी है; क्योंकि जो एकेन्द्रिय विकलेन्द्रियोंमें उत्पन्न होते हैं उनके वह पाई जाती है।

---

[1] ता० प्रतौ संखेज्जे वड्ढी [ ए ] इति पाठः। [2] ता० प्रतौ गुणवड्ढी अत्थि इति पाठः

§ २६१. ओरालियमिस्सकायजोगीणं पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो। एवं वेउव्विय-मिस्स०-कम्मइय०-अणाहारि त्ति। सण्णीसु विग्गहगदीए उप्पण्णविगलिंदियाणं व सण्णीसु विग्गहगदीए उप्पण्णसण्णीणं पि विदियविग्गहे संखेज्जगुणवड्ढी णत्थि त्ति ण वत्तव्वं; कम्मइय० जोगे महाबंधम्मि पठिदसंखेज्जगुणवड्ढीए विसयाभावेण अभावावत्तीदो।

**विशेषार्थ**—एकेन्द्रियोंमें जघन्य स्थितिबन्धसे उत्कृष्ट स्थितिबन्ध पल्यके असंख्यातवें भागसे अधिक नहीं होता, इसलिये इनमें मिथ्यात्व आदि २६ प्रकृतियोंकी एक असंख्यातभागवृद्धि ही होती है। यही कारण है कि यहाँ अन्य वृद्धियोंका निषेध किया। किन्तु हानियाँ तीन होती हैं। यहाँ असंख्यात-भागहानिका पाया जाना तो सम्भव है पर संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका पाया जाना कैसे सम्भव है? इसका वीरसेन स्वामीने यह समाधान किया है कि जो संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव उक्त प्रकृतियोंकी संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानि कर रहे हैं वे स्थितिकाण्डकके उत्कीरण कालके भीतर मरकर यदि एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न हो जाँय तब भी उनकी उस स्थितिकाण्डकके घात होने तक वह क्रिया चालू रहती है, अतः एकेन्द्रियोंमें भी उक्त प्रकृतियोंकी संख्यातभागहानि और संख्यात-गुणहानि बन जाती है। किन्तु स्वयं एकेन्द्रिय जीव संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका प्रारम्भ नहीं करते, क्योंकि उनके इनके योग्य विशुद्धि नहीं पाई जाती। चूँकि इनके संख्यातभाग वृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिके कारणभूत संक्लेश परिणाम नहीं पाये जाते हैं इसलिये मालूम होता है कि इनके संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिके कारणभूत विशुद्धिरूप परिणाम भी नहीं पाये जाते हैं। दूसरे इनके स्थितिहतसमुत्पत्तिक काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण बतलाया है इससे भी मालूम होता है कि इनके संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानि नहीं होती। अन्य इन्द्रियवाले जीवोंकी स्थितिका घात करके एकेन्द्रियके योग्य स्थितिके उत्पन्न करनेमें जितना काल लगता है वह एकेन्द्रियका स्थितिहतसमुत्पत्तिक काल कहा जाता है। कदाचित् यह कहा जाय कि असंख्यातभागहानि, संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानि इन तीनों प्रकारोंसे स्थिति हतसमु-त्पत्तिक काल उक्त प्रमाण प्राप्त हो जायगा सो भी बात नहीं है, क्योंकि एक भवस्थितिमें जितने असंख्यातभागहानि काण्डकबार होते हैं उनमें संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानि काण्डकबार उनके संख्यातवें भागप्रमाण होते हैं। फल यह होता है कि यदि संख्यातभागहानिके द्वारा संख्यात पल्य प्रमाण स्थितिका घात किया जाता है तो उसमें कुल संख्यात आवलिप्रमाण काल लगता है जब कि यह काल पल्यके असंख्यातवें भागरूपसे विवक्षित नहीं है। किन्तु पल्यका असंख्यातवाँ भाग काल प्रतरावलिसे ऊपरका काल कहलाता है अतः सिद्ध हुआ कि एकेन्द्रिय जीव स्वयं संख्यात-भागहानि और संख्यातगुणहानिका प्रारम्भ नहीं करते हैं। एकेन्द्रियोंके उक्त प्रकृतियोंका अवस्थान भी होता है, क्योंकि पूर्व समयके स्थितिसत्त्वके समान इनके दूसरे समयमें स्थितिबन्ध देखा जाता है। अब रहीं सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतियाँ, सो इनकी यहाँ चारों हानियाँ पाई जाती हैं। इनके कारणका खुलासा मूलमें किया ही है। पाँचों स्थावरकायिक जीवोंके भी इसी प्रकार समझना चाहिये। विकलेन्द्रिय और असंज्ञीके किस कर्मकी कितनी हानि और वृद्धि होती हैं इसका खुलासा भी मूलसे हो जाता है, अतः यहाँ उसका निर्देश नहीं किया है।

§ २६१. औदारिकमिश्रकाययोगियोंके पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंके समान भंग है। इसी प्रकार वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए। जिस प्रकार विकलेन्द्रियके विग्रहगतिसे संज्ञियोंमें उत्पन्न होने पर संख्यातगुणवृद्धि सम्भव है उस प्रकार जो संज्ञी विग्रहगतिसे संज्ञियोंमें उत्पन्न हुए हैं उनके दूसरे विग्रहमें संख्यातगुणवृद्धि नहीं होती है ऐसा नहीं

विग्गहगदीए जो बंधो सो ट्ठिदिसंतादो हेट्ठा चेवे त्ति णासंकणिज्जं, बद्धणिरयाउआणं पच्छा तिव्वविसोहीए ट्ठिदिघादं कादूण अपज्जत्तट्ठिदिबंधादो संखेज्जगुणहाणीकयट्ठिदीणं णिरएसुप्पज्जिय विदियविग्गहे अपज्जत्तजोगुक्कस्सकसायं गयाणमुक्कस्सट्ठिदिबंधस्स जहण्णट्ठिदिसंतादो संखेज्जगुणत्तं पडि विरोहाभावादो। आहार-आहारमिस्स० मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि०-सोलसक०-णवणोक० अत्थि असंखेज्जभागहाणी। एवमकसा०-जहाक्खाद०-सासण०दिट्ठि त्ति।

§ २६२. अवगद० मिच्छत्त०-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त० अत्थि असंखेज्जभागहाणी संखेज्जभागहाणी च। एवमट्ठकसायाणं इत्थि-णवुंसयवेदाणं च। अंतरकरणे कदे उवसमसेढिम्मि मोहणीयस्स ट्ठिदिघादो णत्थि। एत्थ एत्थुच्चारणाए पुण अत्थि[1] त्ति भणिदं तं जाणिय वत्तव्वं। सत्तणोकसाय-चदुसंजलणाणमत्थि असंखेज्जभागहाणी संखेज्जभागहाणी संखेज्जगुणहाणी च।

कहना चाहिये, क्योंकि ऐसा मानने पर महाबन्धमें जो कार्मणकाययोगमें संख्यातगुणवृद्धि कही है उसका फिर कोई विषय न रहनेसे अभाव हो जायगा। यदि कहा जाय कि विग्रहगतिमें जो बन्ध होता है वह स्थितिसत्त्वसे नीचे ही होता है सो ऐसी आशंका भी नहीं करनी चाहिये, क्योंकि जिन्होंने पहले नरकायुका बन्ध किया है और पीछेसे जिन्होंने तीव्र विशुद्धिके कारण स्थितिघात करके अपनी कर्मस्थितिको अपर्याप्तकाके स्थितिबन्धसे संख्यातगुणा हीन कर दिया है और जो नरकमें उत्पन्न होकर दूसरे विग्रहमें अपर्याप्त योगके रहते हुए उत्कृष्ट कषायको प्राप्त हो गये हैं उनके उस समय उत्कृष्ट स्थितिबन्ध जघन्य स्थितिसत्त्वसे संख्यातगुणा होता है इसमें कोई विरोध नहीं है। आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागहानि है। इसी प्रकार अकषायी, यथाख्यातसंयत और सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चहिए।

§ २६२. अवगतवेदियोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानि और संख्यातभागहानि है। इसी प्रकार आठ कषाय, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी जानना चाहिए। अन्तरकरण करने पर उपशमश्रेणीमें मोहनीयका स्थितिघात नहीं होता। परन्तु यहाँ इस उच्चारणामें तो है ऐसा कहा है सो उसको समझ कर कथन करना चहिए। सात नोकषाय और चार संज्वलनोंकी असंख्यातभागहानि, संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानि है।

**विशेषार्थ**—ऐसा नियम है कि दर्शनमोहनीयका उपशम हो जाने पर भी अपवर्तन और संक्रमण होता रहता है अतः अपगतवेदी जीवके तीन दर्शनमोहनीयकी स्थितिकी असंख्यातभागहानि और संख्यातभागहानि बन जाती हैं। मध्यकी आठ कषायोंकी तो क्षपकश्रेणिके सवेदभागमें ही क्षपणा हो जाती है किन्तु उपशमश्रेणिमें इनकी अवेदभागमें उपशमना होती है इसलिये अपगतवेदीके इनकी स्थितिकी भी असंख्यातभागहानि और संख्यातभागहानि ये दो हानियाँ बन जानी चाहिये। किन्तु इस विषयमें दो मत हैं। चूर्णिसूत्रकारका तो यह मत है कि उपशमश्रेणिमें अन्तरकरण हो जाने पर मोहनीयका स्थितिकाण्डकघात नहीं होता। वीरसेन स्वामीने इसका यह कारण बतलाया है कि यदि उपशमश्रेणिमें अन्तरकरणके बाद मोहनीयका स्थितिकाण्डकघात मान लिया जाय तो उपशमनाके क्रमानुसार नपुंसकवेदसे स्त्रीवेद आदिकी उत्तरोत्तर संख्यातगुणी हीन स्थिति

1 ता० प्रतौ एत्थुच्चारणाए अत्थि इति पाठः।

**§ २६३. मदिअण्णाणि-सुदअण्णाणि-विभंगणाणीसु मिच्छत्त-सोलसक०–णवणोक० अत्थि तिण्णिवड्ढी तिण्णिहाणी अवट्ठाणं च। अणंताणु०चउक्क० अवत्तव्वं णत्थि; पुव्विल्लसमए अण्णाणाभावादो। सम्मत्त-सम्मामि० अत्थि चत्तारि हाणीओ। एवं मिच्छाइट्ठी०।**

**§ २६४. आभिणि०–सुद०–ओहि० मिच्छत्त०–सोलसक०–णवणोक० असंखेज्ज-भागहाणी संखेज्जभागहाणी संखेज्जगुणहाणी असंखेज्जगुणहाणि त्ति अत्थि चत्तारि हाणीओ। सम्मत्त०–सम्मामि० अत्थि चत्तारि हाणीओ। चत्तारिवड्ढि–अवत्तव्वावट्ठा-णाणि णत्थि; पुव्विल्लसमए तिण्हं णाणाणमभावादो। एवं मणपज्ज०-संजद०-सामाइय-छेदो०-ओहिदंस०-सुक्कले०-सम्मादिट्ठि त्ति। णवरि सुक्कले० सम्म०–सम्मामि० चत्तारि-वड्ढि–अवट्ठा०–अवत्तव्व० अणंताणु०चउक्क० अवत्तव्वं च अत्थि।**

**§ २६५. परिहार० मिच्छत्त–सम्मत्त–सम्मामिच्छत्ताणंताणुबंधिचउक्काणं अत्थि**

हो जायगी जो इष्ट नहीं है, क्योंकि उपशम हो जाने पर सबकी समान स्थिति होती है ऐसा नियम है। अतः चूर्णिसूत्रकारके मतानुसार अपगतवेदीके आठ कषायोंकी संख्यातभागहानि न होकर एक असंख्यातभागहानि ही प्राप्त होती है। किन्तु यहाँ इनकी दो हानियाँ बतलाई हैं इससे मालूम होता है कि उच्चारणाचार्य अन्तकरणके बाद भी मोहनीयका स्थितिकाण्डकघात मानते हैं। नपुंसकवेद और स्त्रीवेदके विषयमें भी इसी प्रकार समझना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है इन दोनोंकी उक्त दो हानियाँ क्षपक अपगतवेदीके भी बन जाती है। यहाँ अनन्तानुबन्धी तो है ही नहीं अतः उसका तो विचार ही नहीं है। अब शेष रहीं सात नोकषाय और चार संज्वलन ये ग्यारह प्रकृतियाँ सो इनमें असंख्यातभागहानि, संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानि ये तीन हानियाँ बन जाती हैं। यह कथन क्षपकश्रेणिकी मुख्यतासे किया है। उच्चारणाचार्यके मतसे उपशमश्रेणिमें अपगतवेदीके इनकी असंख्यातभागहानि और संख्यातभागहानि ये दो हानियाँ ही प्राप्त होती हैं। किन्तु चूर्णि-सूत्रकारके मतसे एक असंख्यातभागहानि ही प्राप्त होती है।

**§ २६३.** मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी और विभंगज्ञानियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी तीन वृद्धियाँ, तीन हानियाँ और अवस्थान है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कका अवक्तव्यभंग नहीं है, क्योंकि पूर्व समयमें अज्ञानका अभाव है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार हानियाँ हैं। इसी प्रकार मिथ्यादृष्टियोंके जानना चाहिए।

**§ २६४.** आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागहानि, संख्यातभागहानि संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानि ये चार हानियाँ हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार हानियाँ हैं। चार वृद्धियाँ, अवक्तव्य और अवस्थान नहीं हैं, क्योंकि पूर्व समयमें तीन ज्ञानोंका अभाव है। इसी प्रकार मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, अवधिदर्शनवाले, शुक्ललेश्या-वाले और सम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धियाँ, अवस्थान और अवक्तव्य तथा अनन्तानुबन्धी चतुष्कका अवक्तव्य हैं।

**§ २६५.** परिहारविशुद्धिसंयतोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी

चत्तारि हाणी। बारसक०-णवणोक० अत्थि असंखेज्जभागहाणी संखेज्जभागहाणी च। एवं संजदासंजद०। असंजद० मिच्छत्त० अत्थि तिण्णि वड्ढी चत्तारि हाणीओ अवट्ठाणं च। सम्मत्त-सम्मामि०-अणंताणु०चउक्क० मूलोघं। बारसक०-णवणोक० अत्थि तिण्णि वड्ढी तिण्णि हाणी अवट्ठाणं च। एवं तेउ०-पम्म०। सुहुमसंप० मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि० अत्थि असंखेज्जभागहाणी संखेज्जभागहाणी। बारसक०-णवणोक० अत्थि असंखेज्जभागहाणी। णवरि लोभसंजल० संखेज्जभागहाणी संखेज्जगुणहाणी च अत्थि।

§ २६६. अभवि० छव्वीसं पयडीणमत्थि तिण्णि वड्ढी तिण्णि हाणी अवट्ठाणं च। वेदगसम्माइट्ठी० आभिणिबोहिय०भंगो। णवरि बारसक०-णवणोक० असंखेज्जगुणहाणी णत्थि। खइय० एक्कवीसपयडीणमत्थि असंखेज्जभागहाणी संखेज्जभागहाणी संखेज्ज-गुणहाणी असंखेज्जगुणहाणी च। उवसम० अट्ठावीसपयडीणमत्थि असंखेज्जभागहाणी संखेज्जगुणहाणी अणंताणु० दोहाणीओ च। सम्मामि० अत्थि अट्ठावीसपयडीण-मसंखेज्जभागहाणी संखेज्जभागहाणी संखेज्जगुणहाणी च।

एवं समुक्कित्तणा समत्ता।

§ २६७. सामित्ताणुगमेण दुविहो णिद्देसो-ओघे० आदेसे०। ओघेण छव्वीसं पयडीणं तिण्णि वड्ढी अवट्ठाणं च कस्स? अण्णदरस्स मिच्छादिट्ठिस्स। तिण्णि हाणी कस्स? अण्णद० सम्माइट्ठिस्स मिच्छाइट्ठिस्स वा। असंखेज्जगुणहाणी कस्स? अण्णद० सम्मा-

चतुष्ककी चार हानियाँ हैं। बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागहानि और संख्यात-भागहानि है। इसी प्रकार संयतासंयतोंके जानना चाहिए। असंयतोंमें मिथ्यात्वकी तीन वृद्धियाँ, चार हानियाँ और अवस्थान हैं। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग मूलोघके समान है। बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी तीन वृद्धियाँ तीन हानियाँ और अवस्थान है। इसी प्रकार पीत और पद्मलेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिए। सूक्ष्मसांपरायिकसंयतोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानि और संख्यातभागहानि है। तथा बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागहानि है। किन्तु इतनी विशेषता है कि लोभसंज्वलनकी संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानि है।

§ २६६. अभव्योंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी तीन वृद्धियाँ, तीन हानियाँ और अवस्थान हैं। वेदकसम्यग्दृष्टियोंका भंग अभिनिबोधिकज्ञानियोंके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातगुणहानि नहीं है। क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें इक्कीस प्रकृतियोंकी असंख्यात-भागहानि, संख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानि है। उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानि और संख्यातभागहानि है। तथा अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी शेष दो हानियाँ हैं। सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानि, संख्यात-भागहानि और संख्यातगुणहानि हैं।

इस प्रकार समुत्कीर्तनानुगम समाप्त हुआ।

§ २६७. स्वामित्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेश-निर्देश। उनमेंसे ओघकी अपेक्षा छब्बीस प्रकृतियोंकी तीन वृद्धियाँ और अवस्थान किसके होते हैं? किसी एक मिथ्यादृष्टिके होते हैं। तीन हानियाँ किसके होती हैं? अन्यतर सम्यग्दृष्टि या मिथ्या-

इट्ठिस्स । णवरि अणंताणु०चउक्क० अवत्तव्वं कस्स? मिच्छाइट्ठिस्स पढमसमयसंजुत्तस्स। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं चत्तारि वड्ढी अवट्ठाणमवत्तव्वं च कस्स? अण्णद० पढमसमयसम्माइट्ठिस्स। चत्तारि हाणी० कस्स? अण्णद० सम्माइट्ठिस्स मिच्छाइट्ठिस्स वा। एवं मणुसतिय-पंचिंदिय--पंचिं०पज्ज०-तस-तसपज्ज०-पंचमण०-पंचवचि०-कायजोगि-ओरालि०-तिण्णिवेद-चत्तारिक०-चक्खु०-अचक्खु०-भवसि०-सण्णि-आहारि त्ति।

§ २६८. आदेसेण णेरइएसु मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० ओघं। णवरि असंखेज्जगुणहाणी णत्थि। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमोघं। णवरि असंखेज्जगुणहाणी मिच्छाइट्ठिस्स चेव। अणंताणु०चउक्क० सव्वपदाणमोघं। एवं सव्वणेरइय-तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्ख-पंचिं०तिरि०पज्ज०-पंचिं०तिरि०जोणिणि-देव० भवणादि जाव सहस्सार०-

---

ग्दृष्टिके होती हैं। असंख्यातगुणहानि किसके होती है? अन्यतर सम्यग्दृष्टिके होती है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्कका अवक्तव्य किसके होता है? जो सम्यग्दृष्टि मिथ्यात्वमें जाकर अनन्तानुबन्धीसे संयुक्त होता है उस मिथ्यादृष्टिके प्रथम समयमें होता है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धियाँ, अवस्थान और अवक्तव्य किसके होते हैं? अन्यतर सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें होते हैं। चार हानियाँ किसके होती है? अन्यतर सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टिके होती हैं। इसी प्रकार मनुष्यत्रिक, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रियपर्याप्त, त्रस, त्रसपर्याप्त, पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी, काययोगी, औदारिककाययोगी, तीनों वेदवाले, चारों कषायवाले, चक्षुदर्शनवाले, अचक्षुदर्शनवाले, भव्य, संज्ञी और आहारकोंके जानना चाहिए।

**विशेषार्थ**—स्वामित्व अनुयोगद्वारमें वृद्धि और हानि आदिका कौन स्वामी है इसका विचार किया है। यह तो सुनिश्चित है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वको छोड़कर सम्यग्दृष्टिके शेष प्रकृतियोंकी स्थितिमें वृद्धि नहीं होती। उसमें भी सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी वृद्धि सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें ही होती है। अतः यह निश्चित हुआ कि २६ प्रकृतियोंकी तीन वृद्धियाँ और अवस्थान मिथ्यादृष्टिके ही होते हैं। किन्तु हानियाँ सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि दोनोंके सम्भव हैं। उसमें भी असंख्यातगुणहानि दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीयके क्षपणामें ही होती है, अतः निश्चित हुआ कि तीन हानियाँ सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि दोनोंके होती हैं। किन्तु असंख्यातगुणहानि सम्यग्दृष्टिके ही होती है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कका अवक्तव्य भी होता है। जिसने अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना कर दी है वह जब नीचे जाता है तभी अनन्तानुबन्धीका अवक्तव्य होता है। यही कारण है कि जो मिथ्यात्वके प्रथम समयमें अनन्तानुबन्धीसे संयुक्त होता है उसके अनन्तानुबन्धीका अवक्तव्य बतलाया। अब रही सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृति सो जैसा कि पहले बतला आये हैं कि इनकी वृद्धियाँ सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें ही सम्भव हैं तदनुसार चार वृद्धियाँ अवस्थान और अवक्तव्य तो सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें ही होते हैं। हाँ चारों हानियाँ मिथ्यादृष्टि और सम्यग्दृष्टि दोनोंके होती हैं।

§ २६८. आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंका कथन ओघके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ असंख्यातगुणहानि नहीं है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका कथन ओघके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणहानि मिथ्यादृष्टिके ही होती है। तथा अनन्तानुबन्धीचतुष्कके सब पदोंका भंग ओघके समान है। इसी प्रकार सब नारकी, तिर्यंच, पंचेन्द्रिय तिर्यंच, पंचेन्द्रिय तिर्यंच पर्याप्त, पचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमती, सामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार स्वर्गतकके देव, वैक्रियिककाययोगी, असंयत और

**वेउव्वियकायजोगि–असंजद-पंचलेस्सा त्ति। णवरि असंजद–तेउ–पम्म० मिच्छ० असंखेज्जगुणहाणी ओघं।**

**§ २६९. पंचिं०तिरि०अपज्ज० अट्ठावीसं पयडीणं सव्वपदा कस्स ? अण्णद०। एवं मणुसअपज्ज०–सव्वएइंदिय–सव्वविगलिंदिय–पंचिंदियअपज्ज०–सव्वपंचकाय–तस-अपज्ज०–तिण्णिअण्णाण-अभवसि० मिच्छादि०-असण्णि त्ति। णवरि अभव० छव्वीसं पयडिआलाओ कायव्वो।**

**§ २७०. आणदादि जाव णवगेवज्जो त्ति मिच्छत्त–बारसक०–णवणोक० असंखेज्ज-भागहाणी संखेज्जभागहाणी कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठिस्स मिच्छाइट्ठिस्स वा। अणं-ताणु०चउक्क० एवं चेव। णवरि संखेज्जगुणहाणी असंखेज्जगुणहाणी च कस्स ? सम्मा-इट्ठिस्स। अवत्तव्वमोघं। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं चत्तारि वड्ढी अवत्तव्वं कस्स ? अण्णद० पढमसमयसम्माइट्ठिस्स। तिण्णि हाणी कस्स ? सम्माइट्ठिस्स मिच्छाइट्ठिस्स वा। असं-खेज्जगुणहाणी कस्स ? अण्णद० मिच्छाइट्ठिस्स। णवरि सम्मामिच्छत्तस्स संखेज्जगुण-हाणी मिच्छाइट्ठिस्स चेव।**

**§ २७१. अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति अट्ठावीसं पयडीणं सव्वपदा कस्स ? सम्माइट्ठिस्स। एवमाहार०–आहारमिस्स०–अवगद०–अकसा०-आभिणि०-सुद०-ओहि०-मणपज्ज०-संजद०–सामाइय-छेदो०-परिहार०-सुहुमसांपराय०-जहाक्खाद०-संजदासंजद०-**

पाँच लेश्यवाले जीवोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंयत, पीतलेश्यावाले और पद्मलेश्यावाले जीवोंमें मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानि ओघके समान है।

§ २६९. पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंके सब पद किसके होते हैं ? अन्यतरके होते हैं। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्त, सब एकेन्द्रिय, सब विकलेन्द्रिय, पचेन्द्रिय अपर्याप्त, सब पाँचों काय, त्रस अपर्याप्त, तीनों अज्ञानी, अभव्य, मिथ्यादृष्टि और असंज्ञी जीवोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अभव्योंमें छब्बीस प्रकृतियोंका आलाप कहना चाहिये।

§ २७०. आनत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागहानि और संख्यातभागहानि किसके होती हैं ? अन्यतर सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टिके होती हैं। अनन्तानुबन्धी चतुष्कका कथन इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानि किसके होती हैं ? सम्यग्दृष्टिके होती हैं। अवक्तव्य-का भंग ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धियाँ और अवक्तव्य किसके होते हैं ? अन्यतर सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें होते हैं। तीन हानियाँ किसके होती हैं ? सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टिके होती हैं। असंख्यातगुणहानि किसके होती है ? अन्यतर मिथ्यादृष्टिके होती है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिथ्यात्वकी संख्यातगुणहानि मिथ्यादृष्टिके ही होती है।

§ २७१. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंके सब पद किसके होते हैं ? सम्यग्दृष्टिके होते हैं। इसी प्रकार आहारककाययोगी, आहारकमिश्रकाययोगी, अपगत-वेदी, अकषायी, आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत, सूक्ष्मसांपरायिकसंयत, यथाख्यातसंयत, संयतासंयत,

ओहिदंस०-सम्मादि०-खइय०-वेदय०-उवसमसम्मादिट्ठि त्ति। णवरि अप्पप्पणो पय० पदविसेसो जाणियव्वो।

§ २७२. ओरालियमिस्स० मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० तिण्णिवड्ढी अवट्ठाणं च कस्स? अण्ण० मिच्छाइट्ठिस्स। असंखेज्जभागहाणी[1] कस्स? अण्णद० सम्माइट्ठिस्स मिच्छाइट्ठिस्स वा। संखेज्जभागहाणी संखेज्जगुणहाणी च कस्स? अण्णद० मिच्छाइट्ठिस्स। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं चत्तारि हाणीओ कस्स? अण्णद० मिच्छाइट्ठिस्स। णवरि सम्मत्तस्स असंखेज्जगुणहाणिवज्जाओ तिण्णि हाणीओ सम्मामि० असंखेज्जभागहाणी च सम्मादिट्ठिस्स वि होंति। एवं वेउव्वियमिस्स०-कम्मइय-अणाहारि त्ति।

§ २७३. सुक्कले० असंखेज्जभागहाणि–संखेज्जभागहाणि–संखेज्जगुणहाणीओ मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक०विसयाओ कस्स? अण्णद० मिच्छादिट्ठिस्स सम्मादिट्ठिस्स वा। असंखेज्जगुणहाणी कस्स? सम्माइट्ठिस्स। अणंताणु०चउक्क० अवत्तव्व० ओघं। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं चत्तारि वड्ढी अवट्ठाणं अवत्तव्वं च कस्स? पढमसमयसम्माइट्ठिस्स। चत्तारि हाणीओ कस्स? मिच्छाइट्ठिस्स सम्माइट्ठिस्स वा। सासण० अट्ठावीसं पयडीणमसंखेज्जभागहाणी कस्स? अण्णद०। सम्मामि० अट्ठावीसपयडीणं तिण्णि हाणीओ कस्स? सम्मामिच्छाइट्ठिस्स।

एवं सामित्ताणुगमो समत्तो।

अवधिदर्शनवाले, सम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि और उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अपनी अपनी प्रकृतियोंके पदविशेष जानना चाहिए।

§ २७२. औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी तीन वृद्धियाँ और अवस्थान किसके हैं? अन्यतर मिथ्यादृष्टिके हैं। असंख्यातभागहानि किसके है? अन्यतर सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टिके है। संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानि किसके हैं? अन्यतर मिथ्यादृष्टिके हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार हानियाँ किसके हैं? अन्यतर मिथ्यादृष्टिके हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वकी असंख्यातगुणहानिको छोड़कर शेष तीन हानियाँ तथा सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानि सम्यग्दृष्टिके भी होती है। इसी प्रकार वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए।

§ २७३. शुक्ललेश्यावालोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायविषयक असंख्यातभागहानि, संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानि किसके होती हैं? अन्यतर मिथ्यादृष्टि या सम्यग्दृष्टिके होती हैं। असंख्यातगुणहानि किसके होती है? सम्यग्दृष्टिके होती है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कका अवक्तव्यभंग ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धियाँ, अवस्थान और अवक्तव्य किसके होते हैं? सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें होते हैं। चार हानियाँ किसके होती हैं? मिथ्यादृष्टि या सम्यग्दृष्टिके होती हैं। सासादनसम्यग्दृष्टियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानि किसके होती है? अन्यतरके होती है। सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी तीन हानियाँ किसके होती हैं? सम्यग्मिथ्यादृष्टिके होती हैं।

इस प्रकार स्वामित्वानुगम समाप्त हुआ।

---

1 ता० प्रतौ असंखेज्जगुणहाणी इति पाठः।

* एगजीवेण कालो ।

§ २७४. एगजीवसंबंधिकालो वुच्चदि त्ति भणिदं होदि ।

* मिच्छत्तस्स तिविहाए वड्ढीए जहण्णेण एगसमओ ।

§ २७५. तं जहा—अद्धाक्खएण संकिलेसक्खएण वा अप्पणो संतकम्मस्सुवरि एगसमयं वड्ढिदूण बंधिय विदियसमए अप्पदरे अवट्ठाणे वा कदे असंखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढीणं कालो[1] जहण्णेण एगसमओ होदि ।

* उक्कस्सेण बे समया ।

§ २७६. तं जहा—एइंदिओ एगट्ठिदिं बंधमाणो अच्छिदो, तदो तिस्से ट्ठिदीए अद्धाक्खएण एगसमयमसंखेज्जभागवड्ढिबंधं कादूण पुणो विदियसमए संकिलेसक्खएण असंखेज्जभागवड्ढिबंधं कादूण तदियसमए अप्पदरे अवट्ठिदे वा कदे असंखेज्जभागवड्ढीए उक्कस्सेण वे समया लद्धा होंति । जधा एइंदियमस्सिदूण अद्धासंकिलेसक्खएण असंखेज्ज-भागवड्ढीए बिसमयपरूवणा कदा तधा बेइंदिय-तेइंदिय-चदुरिंदिय-असण्णिपंचिंदिय-सण्णि-पंचिंदिए वि अस्सिदूण सत्थाणे चेव वेसमयपरूवणा कायव्वा; अद्धाक्खएणेव संकिलेस-क्खएण वि असंखेज्जभागवड्ढीए संभवादो । वेइंदिओ संकिलेसक्खएण एगसमयं संखेज्जभागवड्ढिबंधं कादूण पुणो अणंतरसमए कालं कादूण तेइंदिएसुप्पज्जिय पढमसमए तप्पाओग्गजहण्णट्ठिदिबंधओ जादो । ताधे संखेज्जभागवड्ढीए विदिओ समओ लब्भदि;

---

* अब एक जीवकी अपेक्षा कालका कथन करते हैं ।

२७४. अब एक जीवसम्बन्धी कालका कथन करते हैं यह इस सूत्रके कहनेका तात्पर्य है ।

* मिथ्यात्वकी तीन वृद्धियोंका जघन्य काल एक समय है ।

§ २७५. जो इस प्रकार है—जिसने अद्धाक्षय या संक्लेशक्षयसे अपने सत्कर्मके ऊपर एक समय तक स्थितिको बढ़ाकर बाँधा और दूसरे समयमें अल्पतर या अवस्थान किया उसके असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय होता है ।

* उत्कृष्ट काल दो समय है ।

§ २७६. जो इस प्रकार है—जो एकेन्द्रिय एक स्थितिको बाँधता हुआ विद्यमान है तदनन्तर जिसने उस स्थितिका अद्धाक्षयसे एक समय तक असंख्यातभागवृद्धिरूप बन्ध किया पुनः दूसरे समयमें संक्लेशक्षयसे असंख्यातभागवृद्धिरूप बन्ध करके तीसरे समयमें अल्पतर या अवस्थित बन्ध किया उसके असंख्यातभागवृद्धिका उत्कृष्ट काल दो समय प्राप्त होता है । जिस प्रकार एकेन्द्रियकी अपेक्षा अद्धाक्षय और संक्लेशक्षयसे असंख्यातभागवृद्धिके दो समयोंका कथन किया उसी प्रकार द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय और संज्ञी पंचेन्द्रियकी अपेक्षा भी स्वस्थानमें ही दो समयोंका कथन करना चाहिये; क्योंकि वहाँ पर अद्धाक्षयके समान संक्लेशक्षयसे भी असंख्यातभागवृद्धि सम्भव है । कोई द्वीन्द्रिय संक्लेशक्षयसे एक समय तक संख्यातभागवृद्धि-रूप बन्ध करके पुनः अनन्तर समयमें मरकर त्रीन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर प्रथम समयमें तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिका बन्ध करनेवाला हो गया । उस समय संख्यातभागवृद्धिका दूसरा

---

१ आ० प्रतौ काले इति पाठः ।

बीइंदियट्ठिदिसंतादो तीइंदिएसुप्पण्णपढमट्ठिदिसंतस्स देसूणदुगुणत्तुवलंभादो। बेइंदिय-अपज्जत्तयस्स उक्कस्सट्ठिदिबंधादो तेइंदियअपज्जत्तयस्स उक्कस्सट्ठिदिबंधो दुगुणो होदि तस्स जहण्णट्ठिदिबंधादो वि एदस्स जहण्णट्ठिदिबंधो दुगुणो होदि। तेण कारणेण बीइंदियउक्कस्सट्ठिदिबंधं पेक्खिदूण तीइंदियअपज्जत्तयस्स जहण्णट्ठिदिबंधो संखेज्जभाग-ब्भहिओ। बीइंदियअपज्जत्तयस्स जहण्णट्ठिदिसंतादो पलिदो० संखेज्जभागब्भहिय-सगुक्कस्सट्ठिदिसंतं पेक्खिदूण बीइंदियअपज्जत्तजहण्णट्ठिदिसंतादो संखे०पलिदोवमेहि अब्भहियतेइंदियजहण्णट्ठिदिबंधो संखेज्जभागब्भहिओ त्ति भणिदं होदि। बेइंदिएसु सत्थाणे चेव संखेज्जभागवड्ढीए वेसमया किण्ण लब्भंति? ण एस दोसो, अद्धाक्खएण असंखेज्जभागवड्ढिबंधं मोत्तूण सेसवड्ढिबंधाणमभावादो। संकिलेसक्खएण संखेज्जभाग-वड्ढीए सत्थाणे चेव वेसमया किण्ण लब्भंति? ण, एगसमए संकिलेसक्खए जादे पुणो अंतोमुहुत्तेण विणा संखेज्जभागवड्ढिबंधपाओग्गसंकिलेसाणं गमणासंभवादो।

§ २७७. अथवा तेइंदिएण सत्थाणे चेव संकिलेसक्खएण एगसमयं कदसंखेज्जभाग-वड्ढिट्ठिदिबंधेण विदियसमए कालं कादूण चउरिंदिएसुप्पज्जिय पढमसमए जहण्णट्ठिदिबंधे पबद्धे संखेज्जभागवड्ढीए वे समया लब्भंति। महाबंधम्मि विगलिंदिएसु सत्थाणे चेव संकिलेसक्खएण संखेज्जभागवड्ढिबंधस्स वे समया परूविदा, तब्बलेण कसायपाहुडस्स ण पडिबोहणा काउं जुत्ता; तंतंतरेण भिण्णपुरिसकएण तंतंतरस्स पडिबोयणाणुववत्तीदो।

समय प्राप्त होता है; क्योंकि द्वीन्द्रियके स्थितिसत्त्वसे त्रीन्द्रियोंमें उत्पन्न होने पर जो प्रथम स्थितिसत्त्व होता है वह कुछ कम दूना पाया जाता है। द्वीन्द्रिय अपर्याप्तकके उत्कृष्ट स्थितिबन्धसे त्रीन्द्रिय अपर्याप्तकके उत्कृष्ट स्थितिबन्ध दूना होता है। तथा उसके जघन्य स्थितिबन्धसे भी इसके जघन्य स्थितिबन्ध दूना होता है इसलिये द्वीन्द्रियके उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी अपेक्षा त्रीन्द्रिय अपर्याप्तकके जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातवें भाग अधिक होता है। द्वीन्द्रिय अपर्याप्तकके जघन्य स्थितिसत्त्वसे पल्योपमके संख्यातवें भाग अधिक अपने उत्कृष्ट स्थितिसत्त्वकी अपेक्षा द्वीन्द्रिय अपर्याप्तकके जघन्य स्थितिसत्त्वसे संख्यात पल्य अधिक त्रीन्द्रियका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातवें भाग अधिक होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

**शंका**—द्वीन्द्रियोंमें स्वस्थानमें ही संख्यातभागवृद्धिके दो समय क्यों नहीं प्राप्त होते हैं?

**समाधान**—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि अद्धाक्षयसे असंख्यातभागवृद्धि रूप बन्धको छोड़कर शेष वृद्धिरूप बन्धोंका अभाव है।

**शंका**—संक्लेशक्षयसे स्वस्थानमें ही संख्यातभागवृद्धिके दो समय क्यों नहीं प्राप्त होते हैं?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि एक समयमें संक्लेशक्षय हो जाने पर पुनः अन्तर्मुहूर्त कालके बिना संख्यातभागवृद्धिरूप बन्धके योग्य संक्लेशकी प्राप्ति होना सम्भव नहीं है।

§ २७७. अथवा जिस त्रीन्द्रियने स्वस्थानमें ही संक्लेशक्षयसे एक समयतक संख्यातभाग-वृद्धिरूप स्थितिबन्धको किया है उसके दूसरे समयमें मरकर और चतुरिन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर प्रथम समयमें जघन्य स्थितिबन्धके करने पर संख्यातभागवृद्धिके दो समय प्राप्त होते हैं। महाबन्धमें विकलेन्द्रियोंमें स्वस्थानमें ही संक्लेशक्षयसे संख्यातभागवृद्धिरूप बन्धके दो समय कहे हैं। उसके बलसे कषायपाहुडको समझना ठीक नहीं है क्योंकि भिन्न पुरुषके द्वारा किये गये ग्रन्थान्तरसे ग्रन्था-न्तरका ज्ञान नहीं हो सकता है।

§ २७८. सण्णिमिच्छाइट्ठिणा तप्पाओग्गअंतोकोडाकोडिट्ठिदिसंतादो संकिलेसं पूरेदूण संखेज्जगुणवड्ढीए एगसमयं वड्ढिदूण बंधिय विदियसमए अवट्ठिदबंधे अप्पदरबंधे वा कदे संखेज्जगुणवड्ढीए एगसमओ लब्भदि, सत्थाणे वे समया ण लब्भंति चेव; अंतोमुहुत्तंतरं मोत्तूण संखेज्जगुणवड्ढिपाओग्गपरिणामाणं णिरंतरं दोसु समएसु गमणाभावादो। तेणेत्थ वि परत्थाणं चेव अस्सिदूण विसमयाणं परूवणा कायव्वा। तं जहा—एइंदिओ कालं कादूण एगविग्गहेण सण्णिपंचिंदिएसु उववण्णो तस्स पढमसमए संखेज्जगुणवड्ढी होदि; तत्थासण्णिपंचिंदियट्ठिदिबंधस्स संभवादो। विदियसमए सरीरं घेत्तूण संखेज्जगुणवड्ढिं करेदि; तत्थ अंतोकोडाकोडिसागरोवम[1]मेत्तट्ठिदिबंधुवलंभादो।

* असंखेज्जभागहाणीए जहण्णेण एगसमओ।

§ २७९. तं जहा—समट्ठिदिं बंधमाणेण पुणो संतकम्मस्स हेट्ठा एगसमयमोसरिदूण बंधिय तदो उवरिमसमए संतसमाणे पबद्धे असंखेज्जभागहाणीए जहण्णेण एगसमओ होदि।

* उक्कस्सेण तेवट्ठिसागरोवमसदं सादिरेयं।

§ २८०. तं जहा—एगो वड्ढीए अवट्ठाणे वा अच्छिदो पुणो सव्वुक्कस्समंतोमुहुत्तकालमप्पदरविहत्तिओ होदूणच्छिय वेदगसम्मत्तं पडिवण्णो। पुणो वेछावट्ठिसागरोवमाणि भमिय तदो एकत्तीससागरोवमिएसु उपज्जिय मिच्छत्तं गंतूण देवाउअमणुपालिय कालं

§ २७८. किसी संज्ञी मिथ्यादृष्टिने तद्योग्य अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण स्थितिसत्त्वसे संक्लेशको पूराकर एक समयतक संख्यातगुणवृद्धिरूपसे स्थितिको बढ़ाकर बन्ध किया पुनः दूसरे समयमें अवस्थितबन्ध या अल्पतरबन्धके करने पर संख्यातगुणवृद्धिका एक समय प्राप्त होता है। स्वस्थानमें दो समय प्राप्त होते ही नहीं, क्योंकि अन्तर्मुहूर्त अन्तरके बिना निरन्तर दो समय तक संख्यातगुणवृद्धिके योग्य परिणामोंकी प्राप्ति नहीं होती है, अतः यहाँ पर भी परस्थानकी अपेक्षासे ही दो समयोंका कथन करना चाहिये। जो इस प्रकार है—एक एकेन्द्रिय मरकर एक विग्रहसे संज्ञी पंचेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ उसके प्रथम समयमें संख्यातगुणवृद्धि होती है; क्योंकि वहाँ पर असंज्ञी पंचेन्द्रियका स्थितिबन्ध सम्भव है। तथा दूसरे समयमें शरीरको ग्रहण करके संख्यातगुणवृद्धिको करता है; क्योंकि वहाँ पर अन्तःकोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण स्थितिबन्ध पाया जाता है।

* मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है।

§ २७९. जो इस प्रकार है—समान स्थितिको बाँधनेवाले किसी जीवने सत्कर्मसे एक समय कम बन्ध किया तदनन्तर अगले समयमें सत्कर्मके समान बन्ध किया तो उसके असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय होता है।

* उत्कृष्ट काल साधिक एक सौ त्रेसठ सागर है।

§ २८०. जो इस प्रकार है—कोई एक जीव वृद्धि या अवस्थानमें स्थित है पुनः वह सबसे उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त काल तक अल्पतर विभक्तिवाला होकर रहा और वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ। पुन एक सौ बत्तीस सागर तक परिभ्रमण करके तदनन्तर इकतीस सागरप्रमाण आयुवाले देवोंमें उत्पन्न होकर और मिथ्यात्वको प्राप्त होकर उसके साथ देवायुका उपभोग करके मरा और पूर्व-

---

1 ता० प्रतौ कोडाकोडि रि सागरोवम इति पाठः।

कादूण पुव्वकोडाउअमणुस्सेसुप्पज्जिय मणुस्साउअम्मि अंतोमुहुत्ते गदे संकिलेसं पूरेदूण भुजगारट्ठिदिबंधं गदो। तम्हा तेवट्ठिसागरोवमसदं अंतोमुहुत्तेण सादिरेयमसंखेज्जभागहाणीए उक्कस्सकालो होदि। तिपलिदोवमिएसु उप्पाइय तेवट्ठिसागरोवमसदं तीहि पलिदोवमेहि सादिरेयं किण्ण गहिदं? अप्पदरस्स कालो उक्कस्सओ होदि एत्तिओ णासंखेज्जभागहाणीए; तिण्णि पलिदोवमाणि देसूणाणि असंखेज्जभागहाणीए गमिय पुणो अंतोमुहुत्तावसेसे आउए पढमसम्मत्तमुप्पाएंतेण संखेज्जभागहाणीए कदाए असंखेज्जभागहाणीए पक्कंताए विणासप्पसंगादो।

§ २८१. तेवट्ठिसागरोवमसदमंतोमुहुत्तेण सादिरेयमिदि जं वुत्तं तं थोरुच्चएण वुत्तमिदि तण्ण घेत्तव्वं। पुणो कधं घेप्पदि त्ति वुत्ते वुच्चदे—भोगभूमीए वेदयपाओग्गदीहुव्वेल्लणकालमेत्ताउए सेसे पढमसम्मत्तं घेत्तूण पुणो अंतोमुहुत्तेण मिच्छत्तं गंतूण अप्पदरेण पलिदोवमस्स असंखेज्जभागमेत्तकालं गमिय पुणो अवसाणे वेदगसम्मत्तं घेत्तूण देवेसुप्पज्जिय पुव्वं व तेवट्ठिसागरोवमसदं भमिय भुजगारे कदे पलिदोवमस्स असंखेज्जभागेणब्भहियतेवट्ठिसागरोवमसदमसंखेज्जभागहाणीए उक्कस्सकालो।

* संखेज्जभागहाणीए जहण्णेण एगसमओ।

कोटिकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और वहाँ मनुष्यायुमेंसे अन्तर्मुहूर्त कालके व्यतीत होने पर संक्लेशको प्राप्त होकर भुजगारस्थितिका बन्ध किया, अतः असंख्यातभागहानिका अन्तर्मुहूर्त अधिक एक सौ त्रेसठ सागर उत्कृष्ट काल होता है।

**शंका**—तीन पल्य प्रमाण आयुवाले जीवोंमें उत्पन्न कराके असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल तीन पल्य अधिक एक सौ त्रेसठ सागर क्यों नहीं ग्रहण किया है?

**समाधान**—यह ठीक है कि इस प्रकार अल्पतर स्थितिविभक्तिका इतना उत्कृष्ट काल प्राप्त होता है। पर इससे असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल नहीं प्राप्त हो सकता है, क्योंकि कुछ कम तीन पल्य असंख्यातभागहानिके साथ व्यतीत करके पुनः आयुके अन्तर्मुहूर्त प्रमाण शेष रहने पर प्रथम सम्यक्त्वको उत्पन्न करनेवालेके संख्यातभागहानि होने लगती है अतः प्रारम्भ की गई असंख्यातभागहानिका विनाश प्राप्त होता है।

§ २८१. दूसरे संख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल जो अन्तर्मुहूर्त अधिक एक सौ त्रेसठ सागर कहा है वह स्थूल रूपसे कहा है अतः उसका ग्रहण नहीं करना चाहिये।

**शंका**—तो फिर कौनसे कालका किस प्रकार ग्रहण करना चाहिये?

**समाधान**—भोगभूमिमें वेदकके योग्य दीर्घ उद्वेलना कालप्रमाण आयुके शेष रहने पर प्रथम सम्यक्त्वको ग्रहण करके पुनः अन्तर्मुहूर्त कालके द्वारा मिथ्यात्वको प्राप्त होकर अल्पतर स्थितिविभक्तिके साथ पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण कालको व्यतीत करके पुनः अन्तमें वेदकसम्यक्त्वको ग्रहण करके और देवोंमें उत्पन्न होकर पहलेके समान एक सौ त्रेसठ सागर काल तक परिभ्रमण करके भुजगारस्थितिविभक्तिके करने पर असंख्यातभागहानिका पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग अधिक एक सौ त्रेसठ सागर उत्कृष्ट काल प्राप्त होता है।

* मिथ्यात्वकी संख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है।

§ २८२. तं जहा—दंसणमोहक्खवणाए अण्णत्थ वा पलिदोवमस्स संखेज्जभागमेत्त-ट्ठिदि कंडए घादिदे संखेज्जभागहाणीए जहण्णेण एगसमओ होदि ।

*** उक्कस्सेण जहण्णमसंखेज्जयं तिरूवूणयमेत्तिए समए ।**

§ २८३. तं जहा—दंसणमोहक्खवणाए मिच्छत्तस्स चरिमट्ठिदिकंडए हदे उदयावलियाए उक्कस्ससंखेज्जमेत्तणिसेगट्ठिदीसु सेसासु संखेज्जभागहाणीए आदी होदि । तत्तो पहुडि ताव संखेज्जभागहाणी होदि जाव उदयावलियाए दो णिसेगट्ठिदीओ तिसमयकालाओ ट्ठिदाओ त्ति तेण जहण्णपरित्तासंखेज्जयम्मि तिरूवूणम्मि जत्तिया समया तत्तियमेत्तो संखेज्जभागहाणीए उक्कस्सकालो त्ति भणिदं ।

*** संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्जगुणहाणीणं जहण्णुक्कस्सेण एगसमओ ।**

§ २८४. तं जहा—दंसणमोहक्खवणाए पलिदोवमट्ठिदिसंतकम्मप्पहुडि जाव दूरावकिट्ठिट्ठिदो चेट्ठदि ताव एत्थंतरे पदमाणट्ठिदिखंडएसु पदंतेसु संखेज्जगुणहाणी होदि । तिस्से वि कालो एगसमओ चेव, चरिमफालिं मोत्तूण अण्णत्थ संखेज्जगुणहाणीए अभावादो । संसारावत्थाए वि संखेज्जगुणहाणीए एगसमओ चेव होदि, सत्तरिसागरोवमकोडाकोडीणं संखेज्जेसु भागेसु घादिदेसु घादिज्जमाणेसु तस्स ट्ठिदिखंडयस्स चरिमफालीए चेव संखेज्जगुणहाणीए उवलंभादो । दूरावकिट्ठिट्ठिदिप्पहुडि जाव चरिमट्ठिदिखंडयचरिमफालि त्ति एत्थंतरे ट्ठिदिखंडएसु पदमाणेसु असंखेज्जगुणहाणी होदि । एदिस्से वि कालो एगसमओ; ट्ठिदिखंडयाणं चरिमफालीसु चेव असंखेज्जगुणहीणत्तुवलंभादो ।

---

§ २८२. जो इस प्रकार है—दर्शनमोहनीयकी क्षपणामें या अन्यत्र पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिकाण्डकके घात करने पर संख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय होता है ।

*** उत्कृष्ट काल तीन कम जघन्य परीतासंख्यातके जितने समय हों उतना है ।**

§ २८३. जो इस प्रकार है—दर्शनमोहनीयकी क्षपणामें मिथ्यात्वके अन्तिम स्थितिकाण्डकका घात करने पर उदयावलिमें निषेकस्थितियोंके उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण शेष रहनेपर संख्यात भागहानिका प्रारम्भ होता है । यहाँसे लेकर तीन समयकाल स्थितिवाले दो निषेकोंके शेष रहनेतक संख्यातभागहानि होती है । अतः तीन कम जघन्यपरीतासंख्यातमें जितने समय हों उतना संख्यात भागहानिका उत्कृष्ट काल है ऐसा कहा है ।

*** मिथ्यात्वकी संख्यागुणहानि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्टकाल एक समय है ।**

§ २८४. जो इस प्रकार है—दर्शनमोहनीयकी क्षपणामें पल्यप्रमाण स्थितिसत्कर्मसे लेकर दूरापकृष्टिप्रमाण स्थितिके शेष रहने तक इस अन्तरालमें प्राप्त होनेवाले स्थितिकाण्डकोंके पतन होने पर संख्यातगुणहानि होती है, उसका भी काल एक समय ही है; क्योंकि अन्तिम फालिको छोड़कर अन्यत्र संख्यातगुणहानि नहीं होती है । संसार अवस्थामें भी संख्यातगुणहानिका काल एक समय ही प्राप्त होता है, क्योंकि सत्तरकोड़ाकोड़ीसागरप्रमाण स्थितियोंके संख्यात बहुभागके घात होते हुए घात होनेवाले काण्डकोंमें उस स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिमें ही संख्यातगुणहानि पाई जाती है । तथा दूरापकृष्टि स्थितिसे लेकर अन्तिम स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालितक इस बीच स्थितिकाण्डकके पतनमें असंख्यातगुणहानि होती है । इसका भी काल एक समय है, क्योंकि स्थितिकाण्डकोंकी अन्तिम फालिमें ही असंख्यातगुणहानि पाई जाती है ।

* अवट्ठिदट्ठिदिविहत्तिया केवचिरं कालादो होंति ।

§ २८५. सुगममेदं ।

* जहण्णेण एगसमओ ।

§ २८६. भुजगारमप्पदरं वा कुणंतेण एयसमयमवट्ठिदं काऊण विदियसमए भुजगारे अप्पदरे वा कदे जहण्णेण अवट्ठिदस्स एगसमओ ।

* उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

§ २८७. तं जहा—वड्ढिं हाणिं वा काऊण अवट्ठाणम्मि पडिय अंतोमुहुत्तं तत्थ ठाइदूण भुजगारे अप्पदरे वा कदे अवट्ठिदस्स अंतोमुहुत्तमेत्तो उक्कस्सकालो होदि ।

* सेसाणं पि कम्माणमेदेण बीजपदेण णेदव्वं ।

§ २८८. एदेण वयणेण सुत्तस्स देसामासियत्तं जेण जाणाविदं तेण चउण्हं गईणं उच्चारणाबलेण एलाइरियपसाएण य सेसकम्माणं परूवणा कीरदे । कालाणुगमेण दुविहो णिद्देसो–ओघे० आदेसे० । ओघे० मिच्छत्त० तिण्णि वड्ढि० जह० एगसमओ, उक्क० वे समया । असंखेज्जभागहाणी० जह० एगसमओ, उक्क० तेवट्ठिसागरोवमसदं सादिरेयं । संखेज्जभागहाणी० जह० एयसमओ, उक्क० उक्कस्ससंखेज्जं दुरूवूणयं । संखेज्ज-गुणहाणी० असंखेज्जगुणहाणी० जहण्णुक्क० एगसमओ । अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । एवं तेरसक० । णवरि असंखेज्जभागवड्ढीए जह० एगसमओ, उक्क० सत्तारस

* मिथ्यात्वकी अवस्थित स्थितिविभक्तिका कितना काल है ?

§ २८५. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य काल एक समय है ।

§ २८६. भुजगार या अल्पतरको करनेवाले किसी जीवके एक समयतक अवस्थित करके दूसरे समयमें भुजगार या अल्पतरके करनेपर अवस्थितस्थितिविभक्तिका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है ।

* उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ २८७. जो इस प्रकार है—वृद्धि या हानिको करके और अवस्थितमें पड़कर तथा अन्तर्मुहूर्त-कालतक वहाँ रहकर भुजगार या अल्पतरके करनेपर अवस्थितका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है ।

* शेष कर्मोंकी भी वृद्धि आदिका काल इसी बीजपदके अनुसार जान लेना चाहिये ।

§ २८८. इस वचनसे चूंकि सूत्रका देशामर्षकपना जता दिया, अतः उच्चारणाके बलसे और एलाचार्यके प्रसादसे चारों गतियोंमें शेष कर्मोंकी प्ररूपणा करते हैं—कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेंसे ओघकी अपेक्षा मिथ्यात्वकी तीन वृद्धियोंका जघन्य काल एक समय है तथा उत्कृष्ट काल दो समय हैं । असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल साधिक एक सौ त्रेसठ सागर है । संख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो कम उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण है । संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुण-हानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अवस्थितका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । इसी प्रकार तेरह कषायोंका जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यात-

समया। अणंताणु०चउक्क० अवत्तव्व० जहण्णुक्क० एगस०। तिण्णिसंजलण-णवणोकसायाणं एवं चेव। णवरि संखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० एगस०; सगसगट्ठिदीए संखेज्जे-भागे घादिदे संखेज्जभागहाणीए उवलंभादो। दुरूवूणुक्कस्ससंखेज्जमेत्तकालो एदासिं पयडीणं संखेज्जभागहाणीए किण्ण लद्धो? ण, अंतरकरणे कदे पढमट्ठिदीए विणा विदिय-ट्ठिदीए च ट्ठिदाण[1] चरिमकंडयचरिमफालीए पदिदाए संतीए उदयावलियाए समयूणा-वलियमेत्तट्ठिदीणं सेसकसायाणं अणुवलंभादो।

§ २८९. इत्थि-पुरिसवेदाणं संखेज्जभागवड्ढिकालो जहण्णुक्कस्सेण एगसमओ। बे समया ण लब्भंति। कुदो? बेइंदियाणं तीइंदिएसु तेइंदियाणं चउरिंदिएसु उप्पज्जमाणाणमप्पणो आउअचरिमसमए णवुंसयवेदं मोत्तूण अण्णवेदाणं बंधाभावादो। कुदो, जम्मि जादीए उप्पज्जदि तज्जादिपडिबद्धवेदस्सेव भुंजमाणाउअस्स चरिमअंतोमुहुत्तम्मि णिरंतरबंधसंभवादो। तेण इत्थिपुरिसवेदाण सगसगट्ठिदिसंतकम्मादो संखेज्जभागब्भहियं कसायट्ठिदिं बंधाविय बंधावलियादिक्कंतं बज्झमाणित्थि-पुरिसवेदेसु संकामिदेसु संखेज्जभागवड्ढीए एगसमओ चेव लब्भदि। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं चत्तारिवड्ढि-दोहाणि-अवट्ठिद-अवत्तव्वाणं जहण्णुक्क० एगसमओ। असंखेज्जभागहाणीए जह० एगसमओ। तं जहा—समयाहियजहण्णपरित्तासंखेज्जमेत्तसेसाए सम्मत्त-सम्मामि०पढमट्ठिदीए चरिमुव्वेल्लण-

भागवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सत्रह समय हैं। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्यस्थितिविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। तीन संज्वलन और नौ नोकषायोंका इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है; क्योंकि अपनी अपनी स्थितिके संख्यातवें भागका घात होने पर संख्यातभागहानि पाई जाती है।

**शंका**—इन प्रकृतियोंकी संख्यातभागहानिका दो कम उत्कृष्ट संख्यातप्रमाण काल क्यों नहीं प्राप्त होता है?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि अन्तरकरण करने पर प्रथम स्थिति के बिना दूसरी स्थितिमें स्थित कर्मोंके अन्तिमकाण्डककी अन्तिम फालिके पतन होते हुए शेष कषायोंके समान इन कर्मोंकी उदयावलिमें एक समय कम आवलिप्रमाण स्थितियाँ नहीं पाई जाती हैं।

§ २८९. स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी संख्यातभागवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। दो समय काल नहीं प्राप्त होता है, क्योंकि जो द्वीन्द्रिय त्रीन्द्रियोंमें और त्रीन्द्रिय चतुरिन्द्रियोंमें उत्पन्न होते हैं उनके अपनी आयुके अन्तिम समयमें नपुंसकवेदको छोड़कर अन्य वेदका बन्ध नहीं होता है, क्योंकि जो जीव जिस जातिमें उत्पन्न होता है उसके उस जातिसे सम्बन्ध रखनेवाले वेदका ही भुज्यमान आयुके अन्तिम अन्तर्मुहूर्तमें निरन्तर बन्ध सम्भव है। इसलिये स्त्रीवेद और पुरुषवेद-की अपने अपने स्थितिसत्कर्मसे संख्यातवें भाग अधिक कषायकी स्थितिका बन्ध कराके बन्धा-वलिके बाद बंधनेवाले स्त्रीवेद और पुरुषवेदमें उसके संक्रान्त होनेपर संख्यातभागवृद्धिका एक समय ही प्राप्त होता है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धि, दो हानि, अवस्थित और अवक्तव्यका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है। जो इस प्रकार है—सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी प्रथम स्थितिकी एक समय अधिक जघन्य

1 आ० प्रतौ चेट्ठिदाणं इति पाठः।

**कंडयचरिमफालीए उव्वेल्लिदाए एगसमयमसंखेज्जभागहाणी होदि; तत्थाणंतरसमए संखेज्जभागहाणीए पारंभदंसणादो। उक्क० बेछावट्टिसागरोवमाणि सादिरेयाणि। संखेज्जभागहाणीए मिच्छत्तभंगो। एवं तस-तसपज्ज०-णवुंसयवेद-अचक्खु-भवसिद्धि०-आहारि त्ति। णवरि णवुंसयवेदेसु असंखेज्जभागहाणीए जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। सम्मत्त०-सम्मामि० असंखेज्जभागहाणी० तेत्तीसं सागरो० सादिरेयाणि। लोभसंजल० संखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० एगस०। आहारीसु संखेज्जगुणवड्ढीए जहण्णुक्क० एयसमओ।**

परीतासंख्यातप्रमाण स्थितिके शेष रहनेपर अन्तिम उद्वेलनाकाण्डककी अन्तिम फालिकी उद्वेलनामें एक समय तक असंख्यातभागहानि होती है; क्योंकि वहाँ अनन्तर समयमें संख्यातभागहानिका प्रारम्भ देखा जाता है। असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल साधिक एक सौ बत्तीस सागर है। तथा संख्यातभागहानिका भंग मिथ्यात्वके समान है। इस प्रकार त्रस, त्रसपर्याप्त, नपुंसकवेदी, अचक्षुदर्शनवाले, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि नपुंसकवेदियोंमें असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर है। लोभसंज्वलनकी संख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। तथा आहारकोंमें संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है।

**विशेषार्थ**—पहले भुजगार विभक्तिमें जो भुजगार और अल्पतरका काल बतलाया है वह यहाँ घटित नहीं होता, क्योंकि वहाँ वृद्धि और हानियोंके अवान्तर भेद न करके वह काल कहा है और यहाँ अवान्तर भेदोंकी अपेक्षासे काल कहा है, अतः दोनोंके कालोंमें फरक पड़ जाता है। अब यहाँ जिसका खुलासा स्वयं वीरसेन स्वामीने किया है उसे छोड़कर शेषका खुलासा करते हैं। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धिका उत्कृष्ट काल सत्रह समय है, क्योंकि भुजगारविभक्तिमें सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी भुजगारस्थितिका उत्कृष्ट काल जो १९ समय बतलाया है उसमेंसे अद्धाक्षयसे प्राप्त होनेवाले भुजगारके सत्रह समय ले लेना चाहिये, क्योंकि अद्धाक्षयसे असंख्यातभागवृद्धि ही होती है। यद्यपि सामान्यसे संख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल दो समय कम उत्कृष्ट संख्यातप्रमाण बतलाया है पर क्रोधादि तीन संज्वलन और नौ नोकषायोंमें यह काल घटित नहीं होता, क्योंकि इनकी प्रथम स्थितिका द्वितीय स्थितिके रहते हुए ही अभाव हो जाता है। संख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो समय है। जो इस प्रकार है—किसी द्वीन्द्रिय या त्रीन्द्रिय जीवने संक्लेशक्षयसे एक समय तक संख्यातभागवृद्धि रूप बन्ध करके पुनः अनन्तर समयमें मर कर एकेन्द्रिय अधिकवाले जीवों अर्थात् तेइन्द्रिय या चौइन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर प्रथम समयमें तत्प्रायोग्य जघन्य स्थितिका बन्ध किया उस जीवके संख्यातभागवृद्धिका उत्कृष्ट काल दो समय पाया जाता है। परन्तु पुरुषवेद और स्त्रीवेदकी संख्यातभागवृद्धिका उत्कृष्ट काल एक ही समय कहा है। उसका कारण यह है कि जो द्वीन्द्रियसे तेइन्द्रियमें और तेइन्द्रियसे चतुरिन्द्रियमें उत्पन्न होते हैं उनके अपनी आयुके अन्तिम अन्तर्मुहूर्तमें नपुंसकवेदके अतिरिक्त अन्य वेदका बन्ध नहीं होता, क्योंकि तेइन्द्रिय या चतुरिन्द्रिय जीव जिनमें वह उत्पन्न होगा नियमसे नपुंसक वेदी होते हैं और सामान्य नियम यह है कि जो जीव जिस जातिमें उत्पन्न होता है उसके उस जातिसे सम्बन्ध रखनेवाले वेदका ही भुज्यमान आयुके अन्तिम अन्तर्मुहूर्तमें निरन्तर बन्ध सम्भव

§ २६०. आदेसेण णेरइएसु मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० असंखेज्जभागवड्डि-अवट्ठि० ओघं। असंखेज्जभागहाणी० जह० एगसमओ, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। दो वड्ढी दो हाणी० जहण्णुक्क० एगस०। णवरि अणंताणु०चउक्क० संखेज्जभागहाणि-असंखेज्जगुणहाणि-अवत्तव्वाणमोघं। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमोघभंगो। णवरि असंखेज्जभागहाणी० जह० एगसमओ, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। एवं सव्व-णेरइयाणं। णवरि सगट्ठिदी देसूणा।

है। इसलिये स्त्रीवेद या पुरुषवेदका जितना स्थितिसत्त्व है उससे संख्यातवें भाग अधिक स्थिति वाले कषायका बन्ध कराकर बन्धावलीके पश्चात् स्त्रीवेद या पुरुषवेदमें संक्रान्त होने पर उक्त दोनों वेदोंकी संख्यातभागवृद्धिका काल एक समय ही प्राप्त होता है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चारों वृद्धियाँ, अवस्थित और अवक्तव्य ये सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें ही होते हैं, अतः इनका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा। तथा इनकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है, क्योंकि जब अन्तिम उद्वेलनाकाण्डककी अन्तिम फालिकी उद्वेलना हो जाने पर इनकी प्रथम स्थिति एक समय अधिक जघन्य परीतासंख्यात प्रमाण शेष रहती है तब इनकी असंख्यातभागहानि एक समय तक देखी जाती है। इनकी उत्कृष्ट हानिका उत्कृष्ट काल साधिक एक सौ बत्तीस सागर है सो मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिके उत्कृष्ट कालका खुलासा जिस प्रकार पहले किया है उसी प्रकार यहाँ भी समझ लेना चाहिये। शेष कथन सुगम है। यह ओघ प्ररूपणा मूलमें गिनाई गई त्रस आदि कुछ अन्य मार्गणाओंमें भी अविकल बन जाता है, अतः उनके कथनको ओघके समान कहा है। किन्तु नपुंसकवेदमें सब प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल नरकमें ही सम्भव है, अतः यहाँ असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल ओघके समान न जानकर कुछ कम तेतीस सागर जानना चाहिये। इससे नपुंसकोंके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल भी कुछ कम तेतीस सागर प्राप्त होता है अतः उसका निवारण करनेके लिये इनकी असंख्यात-भागहानिका उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर कहा है। नपुंसकवेदकी उदयव्युच्छित्ति नौवें गुणस्थानमें ही हो जाती है और नौवें गुणस्थानमें लोभ संज्वलनकी संख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल नहीं प्राप्त होता, वह तो दसवें गुणस्थानमें प्राप्त होता है। इसके पहले तो अन्तिम फालिके पतनके समय संख्यातभागहानिका एक ही समय प्राप्त होता है, अतः नपुंसकोंके लोभसंज्वलनकी संख्यातभाग-हानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय ही समझना चाहिये। तथा यद्यपि संख्यातगुणवृद्धिका उत्कृष्ट काल दो समय बतलाया है सो एक समय संक्लेशक्षयसे प्राप्त होता है और दूसरा समय एकेन्द्रियके द्वीन्द्रियादिकमें और द्वीन्द्रियादिकके पंचेन्द्रियोंमें उत्पन्न होने पर प्राप्त होता है। पर इस दूसरे समयमें जीव अनाहारक रहता है। इसलिये आहारकोंके संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय समझना चाहिये।

§ २६० आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितका काल ओघके समान है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है। दो वृद्धि और दो हानियों का जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी संख्यातभागहानि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका काल ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है। इसी प्रकार सब नारकियोके जानना चाहिए। किन्तु

§ २६१. तिरिक्खेसु छव्वीसं पयडीणं तिण्णिवड्ढी अवट्ठिदमोघं। असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० सादिरेयाणि। दोहाणी० जहण्णुक्क० एगस०। णवरि अणंताणु०चउक्क० संखेज्जभागहाणी० असंखेज्जगुणहाणी० अवत्तव्व० ओघं। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वपदा० ओघं। णवरि असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० तिण्णि पलि० देसूणाणि। एवं पंचिंदियतिरिक्खतियस्स वत्तव्वं। णवरि छव्वीसं पयडीणं संखेज्जभागवड्ढी० संखेज्जगुणवड्ढी० जहण्णुक्क० एगसमओ। णवरि हस्स-

इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए।

**विशेषार्थ**—ओघसे मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो समय कहा है। तथा अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तमुहूर्त कहा है। नरकमें भी यह काल इसी प्रकार बन जाता है, अतः इनके कालको ओघके समान कहा है। उक्त प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय ओघके समान यहाँ भी घटित कर लेना चाहिये। तथा उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है, क्योंकि जो नरकमें उत्पन्न होकर अन्तर्मुहूर्तमें सम्यग्दृष्टि हो जाता है और नरकसे निकलनेके अन्तमुहूर्त काल पहले तक सम्यग्दृष्टि बना रहता है उसके कुछ कम तेतीस सागर काल तक असंख्यातभागहानि देखी जाती है। तथा उक्त प्रकृतियोंकी संख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि, संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है, क्योंकि यहाँ संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धि संक्लेशक्षयसे ही होती है अतः इन दोनोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय ही प्राप्त होता है। तथा उक्त दो हानियाँ स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिके पतनके समय ही होती हैं इसलिये इनका भी जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय प्राप्त होता है। किन्तु अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी संख्यातभागहानिके कालमें कुछ विशेपता है। बात यह है कि नारकी जीव भी अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करते हैं। और विसंयोजनामें संख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल दो समय कम उत्कृष्ट संख्यातप्रमाण प्राप्त होता है जो कि नरकमें भी सम्भव है अतः नरकमें अनन्तानुबन्धीकी संख्यातभागहानिका काल ओघके समान कहा है। तथा नरकमें अनन्तानुबन्धीकी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्ति भी होती हैं। फिर भी इनके कालमें ओघसे कोई विशेपता नहीं है, अतः इनके कालको भी ओघके समान कहा है। अब शेष रहीं दो प्रकृतियाँ सो इनकी असंख्यातभागहानिके उत्कृष्ट कालको छोड़कर शेष सब कथन ओघके समान बन जाता है। किन्तु असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर प्राप्त होता है। इसका खुलासा पहलेके समान है। प्रथमादि नरकोंमें भी इसी प्रकार जानना चाहिये, किन्तु असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल सर्वत्र कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है।

§ २८१. तिर्यंचोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी तीन वृद्धियों और अवस्थितका काल ओघके समान है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल साधिक तीन पल्य है। दो हानियोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। किन्तु इतनी विशेपता है कि अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी संख्यातभागहानि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका काल ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सब पद ओघके समान हैं। किन्तु इतनी विशेपता है कि असंख्यात भागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य है। इसी प्रकार पंचेन्द्रिय तिर्यंचत्रिकके कहना चाहिये। किन्तु इतनी विशेपता है कि इनके छब्बीस प्रकृतियोंकी संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। इसमें इतनी विशेपता और है

**रदि-अरदि-सोग-इत्थि-पुरिस-णवुंसयवेद० संखेज्जगुणवड्ढी० जह० एगसमओ, उक्क० बे समया।**

**§ २९२. पंचिंदियतिरिक्ख-मणुस्सअपज्जत्ताणं छव्वीसं पयडीणं पंचिंदियतिरिक्खभंगो। णवरि असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमुहुत्तं। णवरि अणंताणु०चउक्क० असंखेज्जगुणहाणी अवत्तव्वं च णत्थि। संखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० एयस०। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमसंखेज्जभागहाणी० जह० एयसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं। तिण्णि हाणी० ओघं।**

कि हास्य, रति, अरति, शोक, स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो समय है।

**विशेषार्थ**—तिर्यंचोंमें २६ प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल जो साधिक तीन पल्य कहा है इसका कारण यह है कि भोगभूमिमें यदि प्रथमोपशम सम्यक्त्वको नहीं प्राप्त करता है तो उक्त प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानि होती रहती है। इसलिये तीन पल्य तो ये हुए। तथा इसमें पूर्व पर्यायका अन्तर्मुहूर्तकाल और मिला देना चाहिये इस प्रकार तिर्यञ्चगतिमें उक्त प्रकृतियोंकी असख्यातभागहानिका साधिक तीन पल्य काल प्राप्त हो जाता है। तथा यहाँ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य है। कारण यह है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी दीर्घकालीन असंख्यातभागहानि सम्यग्दृष्टिके ही बन सकती है। मिथ्यादृष्टिके तो इनका अन्तर्मुहूर्तके बाद स्थितिकाण्डकघात होने लगता है। पर वेदक-सम्यग्दृष्टि जीव मर कर तिर्यंचोंमें नहीं उत्पन्न होता और यहाँ कृतकृत्यवेदककी विवक्षा नहीं है। अतः जो जीव उत्तम भोगभूमिमें तिर्यंच हुआ और कुछ कालके बाद वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त करके जीवन भर उसके साथ रहा उसके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य पाया जाता है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकके हास्य, रति, अरति, शोक, स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुसकवेद की संख्यातगुणवृद्धिका उत्कृष्ट काल दो समय बतलाया है सो इसका कारण यह है कि जिसने भवके पहले समयमें परस्थानकी अपेक्षा संख्यातगुणवृद्धि की है और दूसरे समयमें संक्लेशक्षयसे संख्यातगुणवृद्धि की है वह एक आवलिके बाद कषायकी उक्त स्थितिका इन प्रकृतियोंमें दो समय तक संक्रमण करता है अतः उक्त प्रकृतियोंमें संख्यातगुणवृद्धिका उत्कृष्ट काल दो समय प्राप्त होता है।

§ २९२. पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्त जीवोंके छब्बीस प्रकृतियोंका भंग पंचेन्द्रिय तिर्यंचके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। किन्तु इसमें भी इतनी विशेषता है कि इनके अनन्तानुबन्धी-चतुष्ककी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्य नहीं है। संख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट-काल एक समय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। तथा तीन हानियोंका काल ओघके समान है।

**विशेषार्थ**—पंचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्त और मनुष्य लब्ध्यपर्याप्तका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है, इसलिये इनके सब प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा। इन जीवोंके अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना नहीं होती, इसलिये इनके अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्य स्थितिका निषेध किया। तथा इसकी संख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा।

§ २९३. मणुसतिय० पंचिंदियतिरिक्खभंगो । णवरि मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० संखेज्जभागहाणी० असंखेज्जगुणहाणी० ओघं ।

§ २९४. देवाणं णेरइयभंगो । णवरि सव्वेसिमसंखेज्जभागहाणी० जह० एयस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० संपुण्णाणि । एवं भवणादि जाव सहस्सार त्ति । णवरि सगट्ठिदी । आणदादि जाव णवगेवज्ज त्ति मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असंखेज्जभागहाणी० जह० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदी । संखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० एगसमओ । सम्मत्त-सम्मामि० ओघं । णवरि असंखेज्जभागहाणी० जह० एयसमओ, उक्क० सगट्ठिदी । अवट्ठिदं णत्थि । अणंताणु०चउक्क० असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० सगट्ठिदी । तिण्णिहाणी अवत्तव्वं ओघं । अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति मिच्छत्त०-सम्मामि०-बारसक०-णवणोक० असंखेज्जभागहाणी० जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० सगट्ठिदी । संखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० एयस० । सम्मत्त० असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० सगट्ठिदी । संखेज्जभागहाणी० संखेज्जगुणहाणी० ओघं । अणंताणु०चउक्क० असंखेज्जभागहाणी जह० आवलिया जहण्णपरित्तासंखेज्जेणूणा, उक्क० सगट्ठिदी । तिण्णि हाणी० ओघं ।

§ २९३. मनुष्यत्रिकमें पंचेन्द्रियतिर्यंचके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी संख्यातभागहानि और असंख्यातगुणहानिका काल ओघके समान है।

§ २९४. देवोंमें नारकियोंके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सभी प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पूरा तेतीस सागर है। इसी प्रकार भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्प तक जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए। आनतसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है। संख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका काल ओघके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है। यहाँ अवस्थित पद नहीं है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है। तथा तीन हानि और अवक्तव्यका काल ओघके समान है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है। संख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। सम्यक्त्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है। संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका काल ओघके समान है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल जघन्य परीतासंख्यात कम एक आवलिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है। तथा तीन हानियोंका काल ओघके समान है।

**विशेषार्थ**—देवोंमें सब प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है सो यह देवोंके उत्कृष्ट कालकी अपेक्षासे जानना चाहिए। आनतादिकसे लेकर मिथ्यात्व आदि २२ प्रकृतियोंकी अल्पतरविभक्ति ही होती है। किन्तु यदि यहाँ स्थितिकाण्डकघात होता है तो असंख्यात

§ २९५. इंदियाणुवादेण एइंदिएसु मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक०असंखेज्जभागवड्ढी० जह० एगसमओ, उक्क० वे सत्तारस समया। अवट्ठिद० जह० एयसमओ, उक्क० अंतोमुहु०। असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखेज्जदिभागो। संखेज्जभागहाणी० संखेज्जगुणहाणी० जहण्णुक्क० एगस०। सम्मत्त०-सम्मामि० असंखेज्ज-भागहाणी० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखेज्जदिभागो। संखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० उक्कस्स० संखेज्जं दुरूवूणं। संखेज्जगुणहाणी० असंखेज्जगुणहाणी० जहण्णु० एगसमओ। एवं बादरेइंदिय-सुहुमेइंदिय-पुढवि०-बादरपुढवि०-सुहुमपुढवि०-आउ०-बादरआउ०-सुहुमआउ०-तेउ०-बादरतेउ०-सुहुमतेउ०-वाउ०-बादरवाउ०-सुहुमवाउ०-वणप्फदि०-बादरवणप्फदि०-सुहुमवणप्फदि०-णिगोद०-बादरणिगोद०-सुहुमणिगोद०-बादरवणप्फदिपत्तेयसरीरा त्ति।

§ २९६. बादरेइंदियपज्जत्ताणमेइंदियभंगो। णवरि अट्ठावीसपयडीणमसंखेज्जभाग-हाणी० जह० एगसमओ, उक्क० संखेज्जाणि वाससहस्साणि। एवं बादरपुढविपज्ज०-

भागहानिका काल अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है। अन्यथा पूरी पर्याय भर असंख्यातभागहानि होती रहती है। यही कारण है कि आनतादिकमें उक्त बाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण कहा है। किन्तु नौ अनुदिश आदिमें सम्यग्दृष्टि जीव ही होते हैं, अतः वहाँ सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानि और संख्यात-भागहानि ही सम्भव हैं जिनका काल उक्त प्रमाण प्राप्त होता है। तथा नौ अनुदिश आदिमें अन-न्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल जघन्य परीतासंख्यातसे कम एक आवलि है, क्योंकि विसंयोजनामें अन्तिम काण्डककी अन्तिम फालिके पतनके बाद जब एक आवलि स्थिति शेष रह जाती है तब जघन्य परीतासंख्यात प्रमाण स्थितिके शेष रहने तक असंख्यातभाग-हानि ही होती है और इसके बाद संख्यातभागहानि होने लगती है। शेष कथन सुगम है।

§ २९५. इन्द्रियमार्गणाके अनुवादसे एकेन्द्रियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोक-षायोंकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल मिथ्यात्वका दो समय और शेषका सत्रह समय है। अवस्थितका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। असं-ख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है। संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्या-तवें भागप्रमाण है। संख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो कम उत्कृष्ट संख्यातप्रमाण है। संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। इसी प्रकार बादर एकेन्द्रिय, सूक्ष्म एकेन्द्रिय, पृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिक, सूक्ष्म पृथिवीकायिक, जलकायिक, बादर जलकायिक, सूक्ष्म जलकायिक, अग्निकायिक, बादर अग्निकायिक, सूक्ष्म अग्निकायिक, वायुकायिक, बादर वायुकायिक, सूक्ष्म वायुकायिक, वनस्पतिकायिक, बादर वनस्पतिकायिक, सूक्ष्म वनस्पतिकायिक, निगोद, बादर निगोद, सूक्ष्म निगोद और बादर वन-स्पति प्रत्येकशरीर जीवोंके जानना चाहिये।

§ २९६. बादर एकेन्द्रिय पर्याप्तकोंके एकेन्द्रियोंके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात

बादरआउपज्ज०–बादरतेउपज्ज०-बादरवाउ०पज्ज०–बादरवणप्फदिपज्ज०-बादरवणप्फदि-पत्तेय०पज्जत्ते त्ति। बादरेइंदियअपज्जत्ताणं बादरेइंदियपज्जत्तभंगो। णवरि अट्ठावीस-पयडीणमसंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमुहु०। एवं सुहुमेइंदियपज्ज०-सुहुमेइंदियअपज्ज०-बादरपुढविअपज्ज०-सुहुमपुढविपज्ज०-सुहुमपुढविअपज्ज०-बादरआउ-अपज्ज०-सुहुमआउपज्ज०-सुहुमआउअपज्ज०-बादरतेउअपज्ज०-सुहुमतेउपज्ज०-सुहुमतेउ-अपज्ज०-बादरवाउअपज्ज०-सुहुमवाउपज्ज०–सुहुमवाउअपज्ज०–बादरवणप्फदिअपज्ज०-सुहुमवणप्फदिपज्ज०–सुहुमवणप्फदिअपज्ज०-बादरणिगोदपज्जत्त–अपज्जत्त–सुहुमणिगोद पज्जत्त–सुहुमणिगोदअपज्जत्त–बादरवणप्फदिपत्तेयसरीरअपज्जत्ते त्ति।

§ २९७. बेइंदिय-बेइंदियपज्ज०-तेइंदिय–तेइंदियपज्ज०-चउरिंदिय-चउरिंदियपज्ज० मिच्छत्त० असंखेज्जभागवड्ढी० जह० एगसमओ, उक्क० वे समया। संखेज्जभागवड्ढी० जहण्णुक्क० एगस०। असंखेज्जभागहाणी० जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमुहु०। संखेज्जाणि वाससहस्साणि किण्ण लब्भंति? ण, सण्णिट्ठिदिसंतकम्मियवियलिंदियस्स वि संखेज्जभागहाणिकंडए[1] पादिदे पुणो अंतोमुहुत्तेण णियमेण संखेज्जभागहाणि-कंडयस्स पदणुवएसादो।

हजार वर्ष है। इसी प्रकार बादर पृथिवीकायिक पर्याप्त, बादर जलकायिकपर्याप्त, बादर अग्निकायिक-पर्याप्त, बादर वायुकायिकपर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिकपर्याप्त और बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए। बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्तकोंके बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त, सूक्ष्म एकेन्द्रिय अपर्याप्त, बादर पृथिवीकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म पृथिवीकायिक पर्याप्त, सूक्ष्म पृथिवीकायिक अपर्याप्त, बादर जलकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म जलकायिक पर्याप्त, सूक्ष्म जलकायिक अपर्याप्त, बादर अग्निकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म अग्निकायिक पर्याप्त, सूक्ष्म अग्निकायिक अपर्याप्त, बादर वायुकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म वायुकायिक पर्याप्त, सूक्ष्म वायुकायिक अपर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म वनस्पति-कायिक पर्याप्त, सूक्ष्म वनस्पतिकायिक अपर्याप्त, बादर निगोद पर्याप्त, बादर निगोद अपर्याप्त, सूक्ष्म निगोद पर्याप्त, सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त और बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीरअपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए।

§ २९७. द्वीन्द्रिय, द्वीन्द्रिय पर्याप्त, त्रीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय पर्याप्त, चतुरिन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय पर्याप्त जीवोंके मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो समय है। संख्यातभागवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

**शंका**—असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल संख्यात हजार वर्ष क्यों नहीं प्राप्त होता है?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि संज्ञीकी स्थितिसत्कर्मवाले विकलेन्द्रियके भी संख्यातभाग-हानिकाण्डकका पतन होने पर पुनः अन्तर्मुहूर्तकालके द्वारा नियमसे संख्यातभागहानिकाण्डकके पतनका उपदेश पाया जाता है।

1 ता० आ० प्रत्योः असंखेज्जभागहाणिकंडए इति पाठः।

§ २९८. संखेज्जभागहाणी० संखेज्जगुणहाणी० जहण्णुक्क० एगस० । अवट्ठि० ओघं । सोलसक०-णवणोक० असंखेज्जभागवड्ढी० जह० एगस०, उक्क० सत्तारस समया । संखेज्जभागवड्ढी० जहण्णुक्क० एयस० । अवट्ठि० ओघं । असंखेज्जभागहाणि-संखेज्जभागहाणि—संखेज्जगुणहाणीणं मिच्छत्तभंगो । सम्मत्त-सम्मामि० असंखेज्जभागहाणी० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जाणि वाससहस्साणि । संखेज्जभागहाणी० जह० एयस०, उक्क० उक्कस्ससंखेज्जं दुरूवूणं । संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्जगुणहाणी० जहण्णुक्क० एयस० । एवं बेइंदियअपज्ज०-तेइंदियअपज्ज०-चउरिंदियअपज्जत्ताणं । णवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमसंखेज्जभागहाणी० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु० ।

§ २९८. संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अवस्थितका काल ओघके समान है । सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल सत्रह समय है । संख्यातभागवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अवस्थितका काल ओघके समान है । असंख्यातभागहानि, संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका भंग मिथ्यात्वके समान है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात हजार वर्ष है । संख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो कम उत्कृष्ट संख्यातप्रमाण है । तथा संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । इसी प्रकार द्वीन्द्रिय अपर्याप्त, त्रीन्द्रिय अपर्याप्त और चतुरिन्द्रिय अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है ।

**विशेषार्थ**—द्वीन्द्रियादिक उपर्युक्त मार्गणाओंका उत्कृष्ट काल संख्यात हजार वर्ष है, इसलिये इनमें मिथ्यात्व आदि २६ प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल संख्यात हजार वर्ष प्राप्त होना चाहिये था । पर यहाँ यह काल अन्तर्मुहूर्त बतलाया है । वीरसेन स्वामीने इसका एक समाधान किया है । वे लिखते हैं कि जिन विकलेन्द्रियोंके संज्ञीके योग्य स्थिति सत्कर्म है उनके संख्यातभागहानिप्रमाण काण्डकके पतनके बाद अन्तर्मुहूर्तके भीतर नियमसे संख्यातभागहानिप्रमाण काण्डकके पतनका उपदेश आगममें पाया जाता है । इससे मालूम होता है कि असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । पर इस समाधानके बाद भी एक प्रश्न खड़ा ही रहता है । कि जिन विकलेन्द्रियोंके संज्ञीके योग्य स्थितिसत्कर्म नहीं है उनके असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल संख्यात हजार वर्ष क्यों नहीं कहा । यद्यपि इसका सन्तोषकारक समाधान करना तो कठिन है फिर भी चूँकि यहाँ असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त बतलाया है और विकलेन्द्रिय जीव संख्यातभागहानिका प्रारम्भ कर सकते है ऐसा नियम है । इससे मालूम होता है कि जिन विकलेन्द्रियोंके संज्ञीके योग्य स्थितिसत्कर्म न भी हो वे भी अन्तर्मुहूर्तमें संख्यातभागहानि करते हैं, अत असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है । किन्तु इन मार्गणाओंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल संख्यात हजार वर्ष ही है । तथा इन द्वीन्द्रियादिक अपर्याप्तकोंका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है, अतः इनमें असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा । शेष कथन सुगम है ।

§ २९९. पंचिंदिय-पंचिंदियपज्जत्ताणमोघं। णवरि संखेज्जभाग-गुणवड्डीए जहण्णु० एगसमओ। वे समया णत्थि, किंतु हस्स-रदि-अरदि-सोगित्थि-पुरिस-णवुंसयवेदाणं संखेज्ज-गुणवड्डीए उक्क० वे समया। पंचिंदियअपज्ज०-तसअपज्ज० पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्त-भंगो। णवरि तसअपज्ज० मिच्छत्त-सोलसक०-भय-दुगुंछ० दोवड्डी० ओघं।

§ ३००. जोगाणुवादेण पंचमण०-पंचवचिजोगीसु मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० असंखेज्जभागवड्डि०-अवट्ठि० ओघं। संखेज्जभागवड्डि-संखेज्जगुणवड्डि० जहण्णुक्क० एगस०। असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमुहु०। संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्जगुणहाणीणमोघं। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमोघं। णवरि असंखेज्जभागहाणी० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०।

§ ३०१. कायजोगि-ओरालियकायजोगीसु मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० असंखेज्जभागवड्डि-संखेज्जभागवड्डि-संखेज्जगुणवड्डि-अवट्ठि० ओघं। णवरि ओरालियकाय-जोगीसु संखेज्जभागवड्डि-संखेज्जगुणवड्डीणं वे समया णत्थि, एगसमओ चेव। असंखेज्ज-भागहाणी० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखेज्जदिभागो। णवरि ओरालियकाय-जोगीसु वावीसवाससहस्साणि देसूणाणि। संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्ज-गुणहाणीणमणंताणु०चउक्क० अवत्तव्वस्स च ओघं। सम्मत०-सम्मामि० सव्वपदाण-

§ २९९. पचेन्द्रिय और पचेन्द्रियपर्याप्त जीवोंके ओघके समान जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। दो समय नहीं है। किन्तु हास्य, रति, अरति, शोक, स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी संख्यातगुणवृद्धिका उत्कृष्ट काल दो समय है। पंचेन्द्रिय अपर्याप्त और त्रस अपर्याप्त जीवोंके पचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि त्रस अपर्याप्तकोंके मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी दो वृद्धियोंका काल ओघके समान है।

§ ३००. योगमार्गणाके अनुवादसे पाँचों मनोयोगी और पाँचों वचनयोगियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंका असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितका काल ओघके समान है। संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। असंख्यात-भागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। संख्यातभागहानि, संख्यात-गुणहानि और असंख्यातगुणहानिका काल ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका कथन ओघके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

§ ३०१. काययोगी और औदारिककाययोगी जीवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषा-योंकी असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि और अवस्थितका काल ओघके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि औदारिककाययोगियोंमें संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिका काल दो समय नहीं है किन्तु एक समय ही है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। किन्तु इतनी विशेषता है कि औदारिककाययोगियोंमें कुछ कम बाईस हजार वर्ष है। संख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिका तथा अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अवक्तव्यका काल ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सब पदोंका

मोघं। णवरि असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखेज्जदिभागो। ओरालिय०जोगीसु बावीसवाससहस्साणि देसूणाणि। ओरालियमिस्स० छव्वीसं पयडीणं तिण्णिवड्ढि-तिण्णिहाणि-अवट्ठाणाणं पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो। णवरि इत्थि-पुरिसवेदवज्जाणं सव्वकम्माणं संखेज्जभागवड्ढीए जह० एगस०, उक्क० वे समया। सम्मत्त-सम्मामि० चदुण्हं हाणीणं पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो।

§ ३०२. वेउव्वियकाय० छव्वीसं पयडीणं तिण्णिवड्ढि-तिण्णिहाणि-अवट्ठाणाणं विदियपुढविभंगो। णवरि असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमुहु०। अणंताणु०चउक्क० असंखेज्जगुणहाणी अवत्तव्वं ओघं। सम्मत्त-सम्मामि० सव्वपदाणमोघं। णवरि असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमुहु०। वेउव्वियमिस्स० ओरालियमिस्स०भंगो। णवरि छव्वीसं पयडीणं संखेज्जभागवड्ढीए सत्तणोकसायाणं संखेज्जगुणवड्ढीए च वे समया णत्थि। सम्मत्त०-सम्मामि० चदुण्हं हाणीणमोरालियमिस्स०भंगो।

§ ३०३. कम्मइय० छव्वीसं पयडीणमसंखेज्जभागवड्ढि-अवट्ठाणाणं जह० एगस०, उक्क० वेसमया। वेवड्ढि-दोहाणीणं ज० उक्क० एगस०। असंखेज्जभागहाणी० ज० एगसमओ, उक्क० वे समया। सम्मत्त०-सम्मामि० चदुण्णं हाणीणमोघं। णवरि असं-

कथन ओघके समान है। किन्तु इतना विशेषता है कि असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। औदारिककाययोगियोंमें कुछ कम बाईस हजार वर्ष है। औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थानका भंग पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और पुरुषवेदसे रहित शेष सब कर्मोंकी संख्यातवृद्धिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो समय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार हानियोका भंग पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंके समान है।

§ ३०२. वैक्रियिककाययोगियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थानका भंग दूसरी पृथिवीके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका काल ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सब पदोंका कथन ओघके समान है। किन्तु इतना विशेषता है कि असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। वैक्रियिकमिश्रकाययोगियोंका भंग औदारिकमिश्रकाययोगियोंके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि छब्बीस प्रकृतियोंकी संख्यातभागवृद्धिका और सात नोकषायोंकी संख्यातगुणवृद्धिका काल दो समय नहीं है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार हानियोंका भंग औदारिकमिश्रकाययोगियोंके समान है।

§ ३०३. कार्मणकाययोगियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थानका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो समय है। दो वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो समय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार हानियोंका काल ओघके समान है। किन्तु इतनी

खेज्जभागहाणि-संखेज्जभागहाणीणं जह० एगसमओ, उक्क० बे समया। एवमणाहारीणं। आहार० अट्ठावीसपयडीणमसंखेज्जभागहाणी० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु०। आहारमिस्स० असंखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० अंतोमु०।

§ ३०४. वेदाणुवादेण इत्थि० मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० असंखेज्जभागवड्ढि-अवट्ठि० ओघं। संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढीणं पढमपुढविभंगो। णवरि हस्स-रदि-अरदि-सोग-इत्थि-पुरिस-णवुंसयवेदाणं संखेज्जगुणवड्ढीए उक्क० बे समया। असंखेज्जभागहाणीए ज० एगसमओ, उक्क० पणवण्णपलिदो० देसूणाणि। संखेज्जभागहाणि—संखेज्जगुणहाणि—असंखेज्जगुणहाणीणमोघं। णवरि लोभसंज० संखेज्जभागहाणीए जहण्णुक्क०

विशेषता है कि असंख्यातभागहानि और संख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो समय है। इसी प्रकार अनाहारकोंके जानना चाहिए। आहारककाययोगियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। आहारकमिश्रकाययोगियोंमें असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

**विशेषार्थ**—पाँचों मनोयोग और पाँचों वचनयोगोंका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है, अतः इनमें सब प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा। औदारिककाययोगियोंमें संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिके उत्कृष्ट काल जो दो समयोंका निषेध किया सो इसका कारण यह है कि यह उत्कृष्ट काल अपर्याप्त अवस्थामें प्राप्त होता है पर औदारिककाययोग पर्याप्त अवस्थामें होता है। एकेन्द्रियोंके एक काययोग ही होता है और उनके असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण बतला आये हैं, अतः काययोगमें भी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल उक्त प्रमाण कहा है। किन्तु औदारिककाययोगका उत्कृष्ट काल कुछ कम बाईस हजार वर्ष है, अतः इसमें सब प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल उक्त प्रमाण कहा है। औदारिकमिश्रकाययोगमें जो स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी संख्यातभागवृद्धिके उत्कृष्ट काल दो समयका निषेध किया सो इसका कारण ओघके समान यहाँ भी समझना चाहिये। अर्थात् संख्यातभागवृद्धिका दो समय काल जो दोइन्द्रिय तेइन्द्रियोंमें और तेइन्द्रिय चौइन्द्रियोंमें उत्पन्न होते हैं उनके प्राप्त होता है पर वहाँ भवके अन्तमें स्त्रीवेद और पुरुषवेदका बन्ध सम्भव नहीं, अतः वहाँ स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी संख्यातभागवृद्धिका उत्कृष्ट काल दो समय सम्भव नहीं है। वैक्रियिककाययोगका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है अतः इसमें सब प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। छब्बीस प्रकृतियोंकी संख्यातभागवृद्धिका और सात नोकषायोंकी संख्यातगुणवृद्धिका उत्कृष्ट काल दो समय औदारिकमिश्रकाययोगमें ही बनता है अतः इसका वैक्रियिकमिश्रकाययोगमें निषेध किया है।

§ ३०४. वेदमार्गणाके अनुवादसे स्त्रीवेदियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितका काल ओघके समान है। संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिका काल पहली पृथिवीके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि हास्य, रति, अरति, शोक, स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी संख्यातगुणवृद्धिका उत्कृष्ट काल दो समय है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल कुछ कम पचवन पल्य है। संख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिका काल ओघके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि लोभ संज्वलनकी संख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनन्तानुबन्धी

**एगसमओ। अणंताणु० अवत्तव्व० ओघं। सम्मत्त-सम्मामि० चत्तारिवड्ढि-तिण्णिहाणि-अवट्ठाण-अवत्तव्वाणमोघं। असंखेज्जभागहाणी० ज० एगसमओ, उक्क० पणवण्ण पलिदोवमाणि पलिदो० असंखेज्जदिभागेण सादिरेयाणि। पुरिसवेद० अट्ठावीसं पयडीणं सव्वपदाणमोघं। णवरि छव्वीसं पयडीणं संखेज्जभागवड्ढी० मिच्छत्त-सोलसक०-भय-दुगुंछाणं संखेज्जगुणवड्ढीए च जहण्णुक्क० एगस०। लोभसंजल० संखेज्जगुणहाणीए इत्थिभंगो। अवगद० मिच्छत्त०-सम्मत्त-सम्मामि० असंखेज्जभागहाणीए जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। संखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० एगस०। एवमट्ठकसायाणं। सत्तणो-कसायाणमसंखेज्जभागहाणी० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु०। संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणी० जहण्णुक्क० एगस०। एवं चदुण्हं संजलणाणं। णवरि लोभसंज० संखेज्जभागहाणी० ओघं। इत्थि-णवुंसयवेदाणमट्ठकसायभंगो।**

चतुष्कके अवक्तव्यका काल ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धि, तीन हानि, अवस्थान और अवक्तव्यका काल ओघके समान है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग अधिक पचवन पल्य है। पुरुषवेदियोंमें अट्ठाइस प्रकृतियोंके सब पदोंका काल ओघके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि छब्बीस प्रकृतियोंकी संख्यातभागवृद्धिका और मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी संख्यात-गुणवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। लोभसंज्वलनकी संख्यातगुणहानिका भंग स्त्रीवेदियोंके समान है। अपगतवेदियोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यात-भागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। संख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। इसी प्रकार आठ कषायोंका जानना चाहिए। सात नोकषायोंकी असंख्यात-भागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। इसी प्रकार चारों संज्वलनोंका जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि लोभ संज्वलनकी संख्यातभागहानिका काल ओघके समान है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका भंग आठ कषायोंके समान है।

**विशेषार्थ**—हास्यादि सात प्रकृतियोंकी संख्यातगुणवृद्धिके उत्कृष्ट काल दो समयका कारण पहले बतला आये हैं उसी प्रकार स्त्रीवेदियोंके भी समझना चाहिये। यद्यपि स्त्रीवेदीका उत्कृष्ट काल सौ पल्य पृथक्त्व है तथापि इनके २६ प्रकृतियोंकी निरन्तर असंख्यातभागहानि सम्यक्त्व दशामें ही सम्भव है और स्त्रीवेदमें सम्यक्त्वका उत्कृष्ट काल कुछ कम पचवन पल्य है, अतः यहाँ २६ प्रकृतियों-की असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल उक्त प्रमाण कहा है। लोभ संज्वलनकी संख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल दसवें गुणस्थानमें प्राप्त होता है। अन्यत्र तो एक समय ही बनता है। पर दसवेंमें स्त्रीवेद नहीं होता, अतः स्त्रीवेदमें लोभसंज्वलनकी संख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। जो स्त्रीवेदी पल्यके असंख्यातवें भाग कालसे सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानि कर रहा है वह यदि इस कालके भीतर पचवन पल्यकी आयुवाली देवियोंमें उत्पन्न हो जाय और वहाँ वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त करके जीवन भर उसके साथ रहे तो उसके भी सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानि सम्भव है, अतः इनकी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक पचवन पल्य कहा है। छब्बीस प्रकृतियोंकी संख्यात-भागवृद्धिका उत्कृष्ट काल दो समय तथा मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी संख्यात-

§ ३०५. कसायाणुवादेण चदुण्णं कसायाणमोघं। णवरि अट्ठावीसं पयडीणमसंखे०-भागहाणीए जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। कोध-माण-मायकसाईसु लोभसंजलणस्स संखे०भागहाणीए जहण्णुक्क० एगस०। अकसा० चउवीसपयडीणमसंखेज्जभागहाणीए जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। एवं जहाक्खाद०।

§ ३०६. णाणाणुवादेण मदि-सुदअण्णाणीसु छव्वीसं पयडीणं तिण्णिवड्डि-अवट्ठा-णाणमोघं। असंखेज्जभागहाणीए जह० एगसमओ, उक्क० एक्कत्तीसं सागरो० सादिरे-याणि। संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणीणं जहण्णुक्क० एगस०। सम्मत्त-सम्मामि० असंखेज्जभागहाणीए जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखेज्जदिभागो। तिण्हं हाणीण-

---

गुणवृद्धिका उत्कृष्ट काल दो समय नपुंसकवेदमें ही बनता है, अतः पुरुषवेदमें इनका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। अपगतवेदका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है, अतः इसमें दर्शनमोहनीयकी तीन प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। अपगतवेदमें दर्शनमोहनीयकी तीन प्रकृतियोंकी संख्यात-भागहानि स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिके पतनके समय होती है, अतः इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। अपगतवेदमें आठ कषायोंकी असंख्यातभागहानि और संख्यात-भागहानि होती हैं सो इनका काल पूर्वोक्त प्रमाण है। इसी प्रकार स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके सम्बन्ध में समझना चाहिये। अब रही सात नोकषाय और चार संज्वलन सो इनकी तीन हानियाँ होती हैं। सो इनके जघन्य और उत्कृष्ट कालका खुलासा सुगम है।

§ ३०५. कषायमार्गणाके अनुवादसे चारों कषायवालोंका काल ओघके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। क्रोध, मान और मायाकषायवाले जीवोंमें लोभसंज्वलनकी संख्यात-भागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। कषायरहित जीवोंमें चौबीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार यथा-ख्यातसंयत जीवोंके जानना चाहिए।

**विशेषार्थ**—चारों कषायोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है, इसलिये इनमें सब प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। स्वयं असंख्यातभागहानिका भी जघन्य काल एक समय है, इसलिये भी यहाँ असंख्यात-भागहानिका एक समय काल बन जाता है। लोभकी संख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल दसवेंमें होता है अन्यत्र तो एक ही समय प्राप्त होता है और दसवेंमें क्रोध, मान और मायाका उदय नहीं है अतः इन तीनों कषायोंमें लोभसंज्वलनकी संख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। अकषायी और यथाख्यातसंयतोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है, अतः इनमें २४ प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है।

§ ३०६. ज्ञानमार्गणाके अनुवादसे मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और अवस्थानका काल ओघके समान है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल साधिक इकतीस सागर है। संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है। तीन हानियोंका

मोघं । एवं विहंगणाणी० । णवरि छव्वीसं पयडीणमसंखेज्जभागहाणी० जह० एगसमओ, उक्क० एक्कत्तीस सागरो० देसूणाणि । संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढीणं जहण्णुक्क० एगस० ।

§ ३०७. आभिणि०-सुद० छव्वीसं पयडीणमसंखेज्जभागहाणी० जह० अंतोमु०, उक्क० छावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि अंतोमुहुत्तेण । णवरि मिच्छत्त०-अणंताणु०चउक्क०-अट्ठक० जह० आवलिया जहण्णपरित्तासंखेज्जेणूणा । एदमत्थपदमुवरि वि जहासंभवं जोजेयव्वं । अथवा एदं पि अंतोमुहुत्तमेवे त्ति सव्वत्थ णेदव्वं । संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्जगुणहाणीणमोघं । सम्मत्त-सम्मामि० तिण्हं हाणीणमोघं । सम्मत्त० असंखेज्जभागहाणीए जह० अंतोमु०, सम्मामि० आवलिया परित्तासंखेज्जेणूणा । उक्क० दोण्हं पि छावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि । एवमोहिणाण० । मणपज्जव० अट्ठावीसपय-डीणमसंखेज्जभागहाणी० जह० अंतोमु० । अथवा छव्वीसं[1] पयडीणमेयसमओ । उक्क० पुव्वकोडी देसूणा । संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्जगुणहाणीणं

काल ओघके समान है । इसी प्रकार विभंगज्ञानियोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल कुछ कम इकतीस सागर है। संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है ।

**विशेषार्थ**—नौवें ग्रैवेयकका उत्कृष्ट काल ३१ सागर है और वहाँ मिथ्यादृष्टि जीव भी होते हैं अतः कुमतिज्ञान और कुश्रुतज्ञानमें असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल साधिक इकतीस सागर कहा। यहाँ साधिकसे पिछले भवका कुछ काल लिया है। किन्तु विभङ्गज्ञान अपर्याप्त अवस्थामें नहीं होता अतः इसमें असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल कुछ कम इकतीस सागर कहा। तथा तीनों अज्ञानोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग-प्रमाण है यह स्पष्ट ही है, क्योंकि मिथ्यादृष्टिके इससे अधिक काल तक इनकी सत्ता नहीं रहती।

§ ३०७. आभिनिबोधिकज्ञानी और श्रुतज्ञानी जीवोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभाग-हानिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त अधिक छयासठ सागर है। किन्तु इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चतुष्क और आठ कषायोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल जघन्य परीतासंख्यात कम एक आवलिप्रमाण है। यह अर्थपद यथासम्भव आगे भी लगा लेना चाहिये। अथवा यह भी अन्तर्मुहूर्त ही है इस प्रकार सर्वत्र कथन करना चाहिये। संख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिका काल ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी तीन हानियोंका काल ओघके समान है। सम्यक्त्वकी असंख्यात भागहानिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है। सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल परीतासंख्यात कम एक आवलिप्रमाण है। दोनोंकी अपेक्षा उत्कृष्ट काल साधिक छयासठ सागर है। इसी प्रकार अवधिज्ञानियोंके जानना चाहिए। मनःपर्ययज्ञानियोंमें अट्ठाइस प्रकृतियोंकी असंख्यात भागहानिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है। अथवा छब्बीस प्रकृतियोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम एक पूर्वकोटि है। संख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुण-

1 ता० प्रतौ चउवीस इति पाठः ।

**जहण्णुक० एगसमओ । एवं संजदाणं । णवरि मणपज्जवणाणी० संजदेसु च णवणोक०-तिसंजलणवदिरित्तपयडीणं संखेज्जभागहाणीए ओघं । सामाइय-छेदो० एवं चेव । णवरि लोभसंजल० खेज्जभागहाणी० जहण्णुक० एगसमओ ।**

**§ ३०८. परिहार० अट्ठावीसपयडीणमसंखेज्जभागहाणी० जह० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडी देसूणा । मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि०-अणंताणु०चउक्क० तिण्हं हाणीणमोघं ।**

हानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । इसी प्रकार संयतोंके जानना । किन्तु इतनी विशेषता है कि मनःपर्ययज्ञानी और संयतोंमें नौ नोकषाय और तीन संज्वलनोंसे रहित शेष प्रकृतियोंकी संख्यातभागहानिका काल ओघके समान है । सामायिकसंयत और छेदोपस्थापनासंयत जीवोंके इसी प्रकार जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि लोभसंज्वलनकी संख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है ।

**विशेषार्थ**—आभिनिबोधिकज्ञान और श्रुतज्ञानका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल साधिक छ्यासठ सागर है इसलिये इनमें २६ प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल साधिक छ्यासठ सागर कहा है । किन्तु मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चार और आठ कषाय इनके अन्तिम काण्डककी अन्तिम फालिके पतन होने पर जब एक आवलिप्रमाण स्थिति शेष रह जाती है तब जघन्य परीतासंख्यात कम एक आवलि काल तक इनकी असंख्यातभागहानि ही होती है अतः इनकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त न कहकर उक्त प्रमाण कहना चाहिये । अन्यत्र जिन जिन मार्गणाओंमें यह काल सम्भव हो वहाँ भी इसी प्रकार कथन करना चाहिये । वैसे सामान्यरूपसे देखा जाय तो यह काल भी अन्तर्मुहूर्तमें गर्भित है इसलिये इसे अन्तर्मुहूर्त कहनेमें भी कोई आपत्ति नहीं है । यहाँ इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल तथा सम्यक्त्वकी असंख्यातभागहानिका केवल उत्कृष्ट काल घटित कर लेना चाहिये । किन्तु सम्यक्त्वकी असंख्यातभागहानिके जघन्य कालमें कुछ विशेषता है । बात यह है कि कृतकृत्यवेदकसम्यक्त्वके बाद जीवके अन्तर्मुहूर्त काल तक सम्यक्त्वकी असंख्यातभागहानि ही होती है, इसलिये इसका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त कहा है । इसी प्रकार अवधिज्ञानमें जानना चाहिये । मनःपर्ययज्ञानका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल कुछ कम पूर्वकोटिवर्षप्रमाण है, अतः इसमें सब प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल उक्त प्रमाण कहा है । यहाँ पर प्रकारान्तरसे मनःपर्ययज्ञानमें २४ प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय भी बतलाया है सो यह जिस जीवके अन्य हानिके बाद एक समय तक असंख्यातभागहानि हुई और दूसरे समयमें मर गया उसकी अपेक्षासे जानना चाहिये । इसी प्रकार संयतोंके जानना चाहिये । यहाँ पर मनःपर्ययज्ञान और संयतोंके नौ नोकषाय और तीन संज्वलनोंको छोड़कर शेष प्रकृतियोंकी संख्यातभागहानिका काल ओघके समान कहा है सो इसका इतना ही मतलब है कि इनका यहाँ जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो समय कम उत्कृष्ट संख्यातप्रमाण है, क्योंकि मनःपर्ययज्ञानी और संयतोंके दर्शनमोह और चारित्रमोहकी क्षपणा होती है । तीन संज्वलन और नौ नोकषायोंकी संख्यातभागहानिका जघन्य व उत्कृष्ट काल एक समय ही है । सामायिक और छेदोपस्थापनामें भी इसी प्रकार जानना चाहिये । किन्तु ये दोनों संयम नौवें गुणस्थान तक ही होते हैं, अतः इनमें लोभकी संख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय ही प्राप्त होता है ।

§ ३०८. परिहारविशुद्धिसंयतोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल कुछ कम पूर्वकोटि है । मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और

**बारसक०-णवणोक० संखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० एगसमओ। सुहुमसांपराय० चउवीसपयडीणमसंखेज्जभागहाणी० जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं। दंसणातिय-लोभसंजलणाणं संखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० एगस०। णवरि लोभसंज० जह० एगस०, उक्क० उक्कस्ससंखेज्जं दुरूवूणं। लोभसंज० संखेज्जगुणहाणी० जहण्णुक्क० एगस०। संजदासंजद० परिहारसंजदभंगो। असंजद० छव्वीसं पयडीणं तिण्णिवड्ढि-अवट्ठाणाणमोघं। असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० सादिरे-याणि। संखेज्जगुणहाणी० ओघं। एक्कवीसपयडीणं संखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० एगस०। मिच्छत्त०-अणंताणु० संखेज्जभागहाणि-असंखेज्जगुणहाणी० सम्मत्त०-सम्मामि० सव्वपदाणमणंताणु० अवत्तव्वस्स च ओघं। णवरि सम्म०-सम्मामि० असंखेज्जभागहाणी० उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि सादिरेयाणि।**

अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी तीन हानियोंका काल ओघके समान है। बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी संख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। सूक्ष्मसांपरायिकसंयतोंमें चौबीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तमुहूर्त है। तीन दर्शनमोहनीय और लोभसंज्वलनकी संख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। किन्तु इतनी विशेषता है कि लोभसंज्वलनकी अपेक्षा जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो कम उत्कृष्ट संख्यातप्रमाण है। तथा लोभसंज्वलनकी संख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। संयतासंयतोंका भंग परिहारविशुद्धिसंयतोंके समान है। असंयतोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और अवस्थानका काल ओघके समान है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर है। संख्यातगुणहानिका काल ओघके समान है। इक्कीस प्रकृतियोंकी संख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी संख्यातभागहानि और असंख्यातगुणहानिका काल तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सब पदोंका काल तथा अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्यस्थितिविभक्तिका काल ओघके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यात भागहानिका उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर है।

**विशेषार्थ**—परिहारविशुद्धिसंयमका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल कुछ कम एक पूर्वकोटिवर्षप्रमाण है इसलिये इसमें सब प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल अन्तमुहूर्त और उत्कृष्ट काल कुछ कम पूर्वकोटिवर्षप्रमाण कहा है। सूक्ष्मसम्परायसंयमका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तमुहूर्त है, इसलिये इसमें २४ प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल उक्त प्रमाण कहा है। सर्वार्थसिद्धिमें तेतीस सागरतक छब्बीस प्रकृतियोंकी और सम्यक्त्व व सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानि सम्भव है और यह जीव जब अन्य पर्यायमें आता है तब भी कुछ कालतक यह पाई जाती है, अतः असंयतोंके असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर कहा है। असंयतोंके चारित्रमोहनीयकी क्षपणा सम्भव नहीं, इसलिये इनके २१ प्रकृतियोंकी संख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है; क्योंकि इनमेंसे कुछ प्रकृतियोंकी संख्यातभागहानिका अधिक काल चारित्रमोहनीयकी क्षपणामें ही सम्भव है। शेष कथन सुगम है।

§ ३०९. दंसणाणुवादेण चक्खुदंसणीसु ओघं। णवरि संखेज्जभागवड्ढी० वे समया णत्थि। ओहिदंसणी० ओहिणाणिभंगो।

§ ३१०. किण्ह-णील-काउलेस्सासु छव्वीसं पयडीणं तिण्णिवड्ढि-अवट्ठाणाणमोघं। असंखेज्जभागहाणी०जह०एगस०,उक्क०तेत्तीस सत्तारस सत्त सागरो०देसूणाणि। संखेज्जभागहाणि० संखेज्जगुणहाणी० जहण्णुक्क० एगस०। णवरि अणंताणु०चउक्क० संखेज्जभागहाणि-असंखेज्जगुणहाणि-अवत्तव्वाणमोघं। सम्मत्त०सम्मामि० चत्तारिवड्ढि-अवट्ठाणाणमोघं। असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीस सत्तारस सत्त सागरो० देसूणाणि। संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्जगुणहाणि-अवत्तव्वाणि ओघं।

§ ३११. तेउ-पम्मलेस्सा० तिण्णिवड्ढि-अवट्ठाणाणं सोहम्मभंगो। अट्ठावीसं पयडीणमसंखेज्जभागहाणीए जह० एगसमओ, उक्क० तेउलेस्साए अड्ढाइज्जसागरोवमाणि पम्मलेस्साए अट्ठारस सागरो० सादिरेयाणि। मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणी० जहण्णुक्क० एगस०। णवरि मिच्छत्त० संखेज्जभागहाणीए असंखेज्जगुणहाणीए च ओघं। अणंताणु०चउक्क० संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्जगुणहाणि-अवत्तव्वाणमोघं। सम्मत्त०-सम्मामि० चत्तारिवड्ढि-तिण्णिहाणि-

§ ३०९ दर्शनमार्गणाके अनुवादसे चक्षुदर्शनवाले जीवोंमें ओघके समान जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यातभागवृद्धिका दो समय काल नहीं है। अवधिदर्शनवाले जीवोंका भंग अवधिज्ञानियोंके समान है।

**विशेषार्थ**—जो तेइन्द्रिय जीव चौइन्द्रियोंमें उत्पन्न होते हैं उनमें संख्यातभागवृद्धिका दो समय तक होना सम्भव है। पर स्वस्थानकी अपेक्षा वह एक समय तक ही होती है, इसलिये चक्षुदर्शनवाले जीवोंमें संख्यातभागवृद्धिके दो समयोंका निषेध किया है। शेष कथन सुगम है।

§ ३१० कृष्ण, नील और कापोतलेश्यावाले जीवोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और अवस्थानका काल ओघके समान है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल कुछकम तेतीस, कुछकम सत्रह और कुछकम सात सागर है। संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी संख्यातभागहानि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका काल ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धि और अवस्थानका काल ओघके समान है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल क्रमसे कुछकम तेतीस, कुछकम सत्रह और कुछ कम सात सागर है। संख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका काल ओघके समान है।

§ ३११ पीत और पद्मलेश्यावाले जीवोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और अवस्थानका भंग सौधर्म स्वर्गके समान है। अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पीतलेश्यामें ढाई सागर तथा पद्मलेश्यामें साधिक अठारह सागर है। मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। किन्तु इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वकी संख्यातभागहानि और असंख्यातगुणहानिका काल ओघके समान है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी संख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका काल ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी

अवट्ठि०-अवत्तव्वाणमोघं। सुक्कले० छव्वीसं पयडीणमसंखेज्जभागहाणी० जह० एग-समओ, उक्क० तेत्तीसं सागरो० सादिरेयाणि। तिण्णिहाणी० ओघं। सम्मत्त-सम्मामि० चत्तारिवड्डि-चत्तारिहाणि-अवत्तव्व-अवट्ठाणाणि ओघं। णवरि असंखेज्जभागहाणी० उक्क० तेत्तीसं सागरो० सादिरेयाणि।

§ ३१२. भवियाणुवादेण अभव० छव्वीसं पयडीणं तिण्णिवड्डि-दोहाणि-अवट्ठाणाणमोघं। णवरि संखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० एगस०। असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० एक्कत्तीससागरो० सादिरेयाणि।

§ ३१३. सम्मत्ताणुवादेण सम्मादि० आभिणि०भंगो। वेदग० मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि० असंखेज्जभागहाणी० जह० अंतोमु०, उक्क० छावट्ठिसागरो० देसूणाणि।

चार वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यका काल ओघके समान है। शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर है। तीन हानियोंका काल ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धि, चार हानि, अवक्तव्य और अवस्थितका काल ओघके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर है।

**विशेषार्थ**—यद्यपि कृष्ण, नील और कापोत लेश्याओंका उत्कृष्ट काल क्रमशः साधिक तेतीस सागर, साधिक सत्रह सागर और साधिक सात सागर है तथापि इनमें सम्यग्दृष्टियोंके ही २६ प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानि निरन्तर बन सकती है। अब यदि सम्यग्दर्शनकी अपेक्षासे इन लेश्याओंमें कालका विचार करते हैं तो वह क्रमसे कुछ कम तेतीस सागर, कुछ कम सत्रह सागर और कुछ कम सात सागर प्राप्त होता है, इसलिये इनमें उक्त प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका उक्त प्रमाण काल कहा है। इसी प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल जानना चाहिये। पीतलेश्याका उत्कृष्ट काल ढाई सागर और पद्मलेश्याका साधिक अठारह सागर है, इसलिये इनमें २८ प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल उक्त प्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है। शुक्ललेश्याका उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर है, इसलिये इसमें सब प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ३१२ भव्य मार्गणाके अनुवादसे अभव्योंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, दो हानि और अवस्थानका काल ओघके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल साधिक इकतीस सागर है।

**विशेषार्थ**—मिथ्यादृष्टि जीवके अधिक काल तक असंख्यातभागहानि नौवें ग्रैवेयकमें पाई जाती है। अब यदि कोई मिथ्यादृष्टि जीव नौवें ग्रैवेयकमें उत्पन्न होता है तो पूर्व पर्यायमें अन्तमें भी कुछ काल तक उसके असंख्यातभागहानि सम्भव है। यही कारण है कि अभव्योंके असंख्यात-भागहानिका उत्कृष्ट काल साधिक इकतीस सागर कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ३१३ सम्यक्त्वमार्गणाके अनुवादसे सम्यग्दृष्टियोंका भंग आभिनिबोधिकज्ञानियोंके समान है। वेदकसम्यग्दृष्टियोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल कुछ कम छयासठ सागर है। संख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि

संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्जगुणहाणी० ओघं। एवमणंताणु०चउक्कस्स। बारसक०-णवणोक० असंखेज्जभागहाणी० जह० अंतोमु०, उक्क० छावट्ठिसागरोवमाणि देसूणाणि। संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणी० जहण्णुक्क० एगस०। खइय० एक्कवीसं पयडीणमसंखेज्जभागहाणी० जह० अंतोमु०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० सादिरेयाणि। तिण्णिहाणी० ओघं। उवसमसम्माइट्ठी० अट्ठावीसं पयडीणमसंखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० अंतोमु०। संखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० एगस०। अणंताणु०-चउक्क० संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्जगुणहाणि०-संखेज्जभागहाणीणमोघं। सासण० अट्ठावीसपयडीणमसंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० छ आवलियाओ समऊणाओ। सम्मामि० अट्ठावीसपयडीणमसंखेज्जभागहाणी० ज० एगस०, उक्क० अंतोमुहुत्तं। संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणी० जहण्णुक्क० एगसमओ। मिच्छाइट्ठी० छव्वीसं पयडीणं तिण्णिवड्डि-अवट्ठाणाणमोघं। असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० एकत्तीस सागरो० सादिरेयाणि। संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणी० जहण्णुक्क० एगस०। सम्मत्त-सम्मामि० असंखेज्जभागहाणी० ज० एगसमओ, उक्क० पलिदो० असंखेज्जदिभागो। संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्जगुणहाणी० ओघं।

और असंख्यातगुणहानिका काल ओघके समान है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा जानना चाहिए। बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल कुछ कम छयासठ सागर है। संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें इक्कीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर है। तीन हानियोंका काल ओघके समान है। उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। संख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी संख्यातगुणहानि, असंख्यातगुणहानि और संख्यातभागहानिका काल ओघके समान है। सासादनसम्यग्दृष्टियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल एक समय कम छह आवली है। सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। मिथ्यादृष्टियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि और अवस्थानका काल ओघके समान है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल साधिक इकतीस सागर है। संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। संख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिका काल ओघके समान है।

**विशेषार्थ**—वेदकसम्यक्त्वका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल कुछ कम छयासठ सागर है, अतः इनमें असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल उक्त प्रमाण कहा है। क्षायिकसम्यक्त्वका काल तो सादि-अनन्त है पर संसार अवस्थाकी अपेक्षा जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर है। अतः इसमें असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल

§ ३१४. सण्णियाणु० सण्णीणमोघं। णवरि संखेज्जभागवड्ढीए संखेज्जगुणवड्ढीए च णत्थि वे समया। सत्तणोकसायाणं संखेज्जगुणवड्ढीए अत्थि वे समया। असण्णीसु छव्वीसं पयडीणमसंखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जभागवड्ढि-अवट्ठाणाणि ओघं। संखेज्जगुणवड्ढी० जहण्णुक० एगस०। संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणी० जहण्णुक० एगस०। असंखेज्ज-भागहाणी० ज० एगस०, उक० पलिदो० असंखेज्जदिभागो। सम्मत्त०-सम्मामि० असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक० पलिदो० असंखेज्जदिभागो। तिण्णिहाणी० ओघं। आहाराणुवादेण आहारीसु ओघं। णवरि संखेज्जगुणवड्ढीए वे समया णत्थि। सत्तणोकसायाणमत्थि।

## एवं कालाणुगमो समत्तो।

उक्त प्रमाण कहा है। उपशमसम्यक्त्वका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है अतः इसमें सब प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त कहा है। यहाँ अनन्तानुबन्धी-की विसंयोजना होती है इस अपेक्षासे इसमें अनन्तानुबन्धीकी सब हानियाँ बतलाई हैं। यद्यपि सासादनका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल छह आवलि है तो भी स्वस्थानकी अपेक्षा यहाँ असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल एक समय कम छह आवलि प्राप्त होता है अधिक नहीं। सम्यग्मिथ्यात्वका यद्यपि जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है तथापि असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय यहाँ प्राप्त हो सकता है, अतः यहाँ असंख्यात-भागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। मिथ्यादृष्टियोंके असंख्यात-भागहानिका उत्कृष्ट काल साधिक इकतीस सागर अभव्योंके समान घटित कर लेना चाहिये। किन्तु सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग-प्रमाण ही है। कारण स्पष्ट है।

§ ३१४ संज्ञामार्गणाके अनुवादसे संज्ञियोंके ओघके समान काल है। किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिका दो समय काल नहीं है। सात नोकषायोंकी संख्यातगुणवृद्धिका दो समय काल है। असंज्ञियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि और अवस्थानका काल ओघके समान है। संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा तीन हानियोंका काल ओघके समान है। आहारमार्गणाके अनुवादसे आहारकोंमें ओघके समान काल है। किन्तु इतना विशेषता है कि संख्यातगुणवृद्धिका दो समय काल नहीं है तथा सात नोकषायोंकी संख्यातगुणवृद्धिका दो समय काल है।

**विशेषार्थ**—संख्यातभागवृद्धिका उत्कृष्ट काल दो समय असंज्ञियोंके ही प्राप्त होता है और संख्यातगुणवृद्धिका उत्कृष्ट काल दो समय जो एकेन्द्रिय व विकलत्रय जीव संज्ञियोंमें उत्पन्न होता है उसके होता है अतः संज्ञियोंके इसका निषेध किया है। हाँ सात नोकषायोंका संख्यातगुणवृद्धिका दो समय काल संज्ञियोंके भी बन जाता है। इसका विशेष खुलासा पहलेके समान यहाँ भी कर लेना चाहिये। एकेन्द्रियोंमें असंख्यातभागहानिकाण्डकघातका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग-

* एगजीवेण अंतरं।

§ ३१५. सुगममेदं।

* मिच्छत्तस्स असंखेज्जभागवड्ढि-अवट्ठाणट्ठिदिविहत्तियंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ ३१६. सुगममेदं।

* जहण्णेण एगसमयं।

§ ३१७. तं जहा—असंखेज्जभागवड्ढिमवट्ठाणं च पुध पुध कुणमाणदोजीवेहि विदियसमए अप्पिदपदविरुद्धपदम्मि अंतरिय तदियसमए अप्पिदपदेणेव परिणदेहि एगसमयमंतरं होदि त्ति मणेणावहारिय एगसमओ त्ति भणिदं।

* उक्कस्सेण तेवट्ठिसागरोवमसदं तीहि पलिदोवमेहि सादिरेयं।

§ ३१८. कुदो ? असंखेज्जभागहाणि संखेज्जभागहाणीणमुक्कस्सकालेहि अंतरिय अप्पिदपदेण परिणदाणं तदुवलंभादो।

* संखेज्जभागवड्ढि-हाणि-संखेज्जगुणवड्ढि-हाणिट्ठिदिविहत्तियंतरं जहण्णेण एगसमओ हाणी० अंतोमुहुत्तं।

प्रमाण है, अतः असंज्ञियामें सब प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल उक्त प्रमाण कहा है। संख्यातगुणवृद्धिके दो समय केवल आहारक अवस्थामें नहीं प्राप्त होते, इसलिये इनका आहारकके निषेध किया है। तो भी जैसा कि पहले घटित करके बतला आये हैं तदनुसार सात नोकषायोंकी संख्यातगुणवृद्धिका उत्कृष्ट काल दो समय आहारकोंके भी बन जाता है।

इस प्रकार कालानुगम समाप्त हुआ।

* अब एक जीवकी अपेक्षा अन्तरानुगमका अधिकार है।

§ ३१५ यह सूत्र सुगम है।

* मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थानस्थितिविभक्तिका अन्तर काल कितना है ?

§ ३१६ यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य अन्तरकाल एक समय है।

§ ३१७ जो इसप्रकार है—असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थानको अलग-अलग करनेवाले दो जीव दूसरे समयमें विवक्षित पदोंसे विरुद्ध पदद्वारा अन्तर करके तीसरे समयमें पुनः विवक्षित पदोंमें ही परिणत हो गये तो एक समय अन्तर होता है ऐसा मनमें निश्चय करके उक्त दोनों पदोंका जघन्य अन्तर एक समय है ऐसा कहा है।

* उत्कृष्ट अन्तरकाल तीन पल्य अधिक एकसौ त्रेसठ सागर है।

§ ३१८ क्योंकि असंख्यातभागहानि और संख्यातभागहानिके उत्कृष्ट कालकी अपेक्षा अन्तर करके विवक्षित पदोंमें परिणत हुए जीवोंके उक्त अन्तर काल पाया जाता है।

* मिथ्यात्वकी संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि, संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिस्थितिविभक्तियोंमेंसे वृद्धियोंका जघन्य अन्तर एक समय और हानियोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है।

§ ३१६. तं जहा—बेइंदिओ सत्थाणे चेव संखेज्जभागवड्ढिमेगसमयं कादूण पुणो विदियसमए अवट्ठिदबंधं करिय तदियसमए तेइंदिएसुप्पज्जिय संखेज्जभागवड्ढीए कदाए लद्धमंतरं होदि। संपहि संखेज्जगुणवड्ढीए जहण्णमंतरं वुच्चदे। तं जहा—एइंदिएण दो विग्गहं कादूण सण्णीसुप्पण्णेण पढमविग्गहे संखेज्जगुणवड्ढिं करिय विदियविग्गहे अवट्ठिदं करिय तदियसमए सरीरं घेत्तूण संखेज्जगुणवड्ढीए कदाए लद्धमेगसमयमंतरं। संखेज्जभागहाणीए उच्चदे। तं जहा—पलिदोवमट्ठिदिसंतकम्मस्सुवरिमदुचरिमट्ठिदिकंडयचरिमफालियाए पदिदाए संखेज्जभागहाणी होदि। तदो असंखेज्जभागहाणीए अंतोमुहुत्तमंतरिय चरिमकंडयचरिमफालीए पदिदाए संखेज्जभागहाणीए जहण्णमंतरमंतोमुहुत्तमेत्तं होदि। संखेज्जगुणहाणीए वुच्चदे। तं जहा—दूरावकिट्टिट्ठिदिसंतकम्मस्सुवरिमदुचरिमट्ठिदिकंडयचरिमफालियाए संखेज्जगुणहाणीए आदिं कादूण पुणो अंतोमुहुत्तकालमसंखेज्जभागहाणीए अंतरिय चरिमट्ठिदिकंडयचरिमफालीए पदिदाए संखेज्जगुणहाणीए जहण्णेण अंतोमुहुत्तमंतरं होदि।

* उक्कस्सेण असंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा।

§ ३२०. कुदो? सण्णिपंचिंदिएसु दोण्हं वड्ढि-हाणीणमादिं कादूण पुणो एइंदिएसु आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तपोग्गलपरियट्टाणि भमिय तदो सण्णिपंचिंदिएसुप्पज्जिय दोवड्ढि-हाणीसु कदासु चदुण्हं पि असंखेज्जपोग्गलपरियट्टमेत्तं लद्धमंतरं होदि। एदीए

§ ३१६ जो इसप्रकार है—कोई द्वीन्द्रिय स्वस्थानमें ही एक समयतक संख्यातभागवृद्धिको करके, पुनः दूसरे समयमें अवस्थितबन्धको करके तीसरे समयमें त्रीन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ तब उसके संख्यातभागवृद्धिके करनेपर संख्यातभागवृद्धिका एक समय जघन्य अन्तर प्राप्त होता है। अब संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य अन्तर कहते हैं। जो इसप्रकार है—जो एकेन्द्रिय दो विग्रह करके संज्ञियोंमें उत्पन्न हुआ है वह प्रथम विग्रहमें संख्यातगुणवृद्धिको करके दूसरे विग्रहमें अवस्थितस्थितिविभक्तिको करके तथा तीसरे समयमें शरीरको ग्रहण करके संख्यातगुणवृद्धिको करता है तब उसके संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त होता है। अब संख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर कहते हैं। जो इस प्रकार है—पल्यप्रमाण स्थितिसत्कर्मकी उपरिम द्विचरमस्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिके पतनके समय संख्यातभागहानि होती है। तदनन्तर एक अन्तर्मुहूर्ततक असंख्यातभागहानिके द्वारा अन्तर करके अन्तिम काण्डककी अन्तिम फालिके पतन होनेपर संख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है। अब संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर कहते हैं। जो इस प्रकार है—दूरापकृष्टि स्थितिसत्कर्मकी उपरिम (अर्थात् दूरापकृष्टि स्थिति सत्कर्मसे पूर्व) द्विचरमस्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिके पतनके समय संख्यातगुणहानिको करके पुनः अन्तर्मुहूर्त काल तक असंख्यातभागहानिसे अन्तर देकर अन्तिम स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिके पतन होनेपर संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त होता है।

* उत्कृष्ट अन्तरकाल असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है।

§ ३२० क्योंकि जिन जीवोंने संज्ञी पचेन्द्रियोंमें रहकर उक्त दो वृद्धि और दो हानियोंका प्रारम्भ किया पुनः वे आवलिके असंख्यातवें भागके जितने समय हों उतने पुद्गलपरिवर्तनकाल तक एकेन्द्रियोंमें परिभ्रमण करके तदनन्तर संज्ञी पंचेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुए और वहाँ पुनः दो वृद्धि और

अंतरपरूवणाए जाणिज्जदि जहा सण्णिट्ठिदिसंतकम्मियएइंदिओ वि पलिदो० संखेज्जदि-भागमेत्तं संखेज्जपलिदोवममेत्तं वा[1] ट्ठिदिकंडयं ण गेण्हदि त्ति।

*** असंखेज्जगुणहाणिट्ठिदिविहत्तियंतरं जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं।**

§ ३२१. कुदो ? दूरावकिट्ठिट्ठिदिसंतकम्मस्स दुचरिमफालीए पदिदाए असंखेज्ज-गुणहाणीए आदिं कादूण असंखेज्जभागहाणीए सव्वजहण्णमंतोमुहुत्तमंतरिय पुणो चरिम-कंडयचरिमफालीए पदिदाए जहण्णमंतरं होदि। दूरावकिट्ठिट्ठिदीए पढमट्ठिदिकंडयचरिम-फालीए पदिदाए असंखेज्जगुणहाणीए आदिं कादूण पुणो असंखेज्जभागहाणीए सव्वुक्कस्सु-कीरणद्धमेत्ताए अंतरिय विदियट्ठिदिकंडयचरिमफालीए पदिदाए लद्धमुक्कस्समंतरं।

*** असंखेज्जभागहाणिट्ठिदिविहत्तियंतरं जहण्णेण एगसमओ।**

§ ३२२. कुदो ? असंखेज्जभागहाणिं करेंतेण एगसमयमसंखेज्जभागवड्ढिं कादूण पुणो विदियसमए असंखेज्जभागहाणीए कदाए एगसमयअंतरुवलंभादो।

दो हानियोंको किया। इसप्रकार उक्त चार वृद्धि हानियोंका असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त होता है। इस अन्तरप्ररूपणासे जाना जाता है कि संज्ञीकी स्थितिसत्कर्मवाला एकेन्द्रिय जीव भी पल्यके संख्यातवें भागप्रमाण या संख्यात पल्यप्रमाण स्थितिकाण्डकको ग्रहण नहीं करता है।

**विशेषार्थ**—एकेन्द्रियोंका उत्कृष्ट काल असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण बतलाया है और यहाँ दो वृद्धि और दो हानियोंका उत्कृष्ट अन्तर काल भी उक्त प्रमाण बतलाया है जो अन्तर काल एकेन्द्रियोंमें ही प्राप्त होता है। अब यदि एकेन्द्रिय जीव संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका प्रारम्भ करते होते तो दो हानियोंका उत्कृष्ट अन्तर काल असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण न कह कर कुछ कम कहना चाहिये था। पर ऐसा न करके यहाँ उक्त दो वृद्धि और दो हानियोंका उत्कृष्ट अन्तर काल पूरा असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण बतलाया है इससे प्रतीत होता है कि एकेन्द्रिय जीव संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका प्रारम्भ नहीं करते हैं।

*** मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानिस्थितिविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर काल अन्तर्मुहूर्त है।**

§ ३२१ क्योंकि दूरापकृष्टि स्थितिसत्कर्मकी द्विचरमफालिके पतन होते समय असंख्यात-गुणहानि होती है। अनन्तर सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त कालतक असंख्यातभागहानिके द्वारा अन्तर करके पुनः अन्तिम काण्डककी अन्तिम फालिके पतनके समय असंख्यातगुणहानि होती है। इस प्रकार असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त हुआ। दूरापकृष्टि स्थितिके प्रथम स्थिति-काण्डककी अन्तिम फालिके पतन होते समय असंख्यातगुणहानिका प्रारम्भ किया। पुनः सर्वोत्कृष्ट उत्कीरण काल तक असंख्यातभागहानिके द्वारा अन्तर करके दूसरे स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिके पतनके समय असंख्यातगुणहानि की। इस प्रकार असंख्यातगुणहानिका उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हुआ।

*** मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिस्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है।**

§ ३२२ क्योंकि असंख्यातभागहानिको करनेवाले जीवने एक समय तक असंख्यातभाग-वृद्धिको करके पुनः दूसरे समयमें असंख्यातभागहानिको किया तब असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त होता है।

१ ता० प्रतौ च इति पाठः।

* उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

§ ३२३. कुदो ? असंखेज्जभागहाणीए अच्छिदजीवेण अवट्ठिदबंधं गंतूण सव्वुक्कस्समंतोमुहुत्तद्धमच्छिदेण असंखेज्जभागहाणीए कदाए उक्कस्समंतरुवलंभादो ।

* सेसाणं कम्माणमेदेण बीजपदेण अणुमग्गिदव्वं ।

§ ३२४. एदेण देसामासियत्तमेदस्स जाणाविदं तेणेत्थ उच्चारणं भणिस्सामो । अंतराणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघे० आदेसे० । तत्थ ओघेण मिच्छत्त–बारसक०-णवणोक० असंखेज्जभागवड्ढि-अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० तेवट्ठिसागरोवमसदं तीहि पलिदोवमेहि सादिरेयं । असंखेज्जभागहाणी० जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमुहु० । दोवड्ढी० जह० एगस० । दोहाणी० जह० अंतोमुहु० । उक्क० चदुण्हं पि अणंतकालमसंखेज्जपोग्गलपरियट्टं । असंखेज्जगुणहाणी० जहण्णुक्क० अंतोमुहु० । णवरि इत्थि-पुरिसवेदाणं संखेज्जभागवड्ढिअंतरमेगसमओ ण होदि, किं तु अंतोमुहुत्तं । कुदो ? तेइंदिएसुप्पज्जमाणवेइंदियस्स इत्थि पुरिसवेदाणं बंधाभावादो । अंतोमुहुत्तंतरलहणकमो वुच्चइ । तं जहा—बेइंदिओ तेइंदिएसुप्पण्णपढमसमए कसायट्ठिदिसंतकम्मेण संखेज्जभागवड्ढीए आदिं कादूण पुणो अंतोमुहुत्तेण संकिलेसं पूरेदूण संखेज्जभागवड्ढीए ट्ठिदिबंधेण कदाए लद्धमंतोमुहुत्तमेत्तमंतरं संखेज्जभागवड्ढीए । अणंताणु०चउक्क० एवं चेव । णवरि असंखेज्ज-

* उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ३२३ क्योंकि असंख्यातभागहानिमें स्थित जो जीव अवस्थितबन्धको प्राप्त होकर और सर्वोत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त काल तक वहाँ रहकर अनन्तर असंख्यातभागहानिको करता है उसके असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त पाया जाता है ।

* शेष कर्मोंकी असंख्यातभागवृद्धि आदिका अन्तरकाल इस बीज पदके अनुसार विचारकर जानना चाहिये ।

§ ३२४ इस वचनके द्वारा इसका देशामर्षकपना जता दिया, अतः यहाँ उच्चारणाका कथन करते हैं—अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश । उनमेंसे ओघकी अपेक्षा मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थित स्थितिविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर तीन पल्य अधिक एकसौ त्रेसठ सागर है । असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है । दो वृद्धियोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय, दो हानियोंका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त और चारोंका उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है । असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है । किन्तु इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी संख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय नहीं है, किन्तु अन्तर्मुहूर्त है, क्योंकि जो द्वीन्द्रिय त्रीन्द्रियोंमें उत्पन्न होते हैं उनके स्त्रीवेद और पुरुषवेदका बन्ध नहीं होता । अब अन्तर्मुहूर्त अन्तरकी प्राप्तिका क्रम कहते हैं । जो इस प्रकार है—कषायकी स्थितिसत्कर्मवाला जो द्वीन्द्रिय जीव त्रीन्द्रियोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें संख्यातभागवृद्धिका प्रारम्भ करता है पुनः अन्तर्मुहूर्त कालमें संक्लेशको प्राप्त करके स्थितिबन्धके द्वारा संख्यातभागवृद्धिको करता है उसके संख्यातभागवृद्धिका अन्तर्मुहूर्त अन्तर प्राप्त होता है । अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा भी इसी

**भागहाणीए जह० एगस०, उक्क० वेछावट्ठिसागरो० देसूणाणि। असंखेज्जगुणहाणि-अवत्तव्वाणमंतरं जह० अंतोमु०, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। सम्मत्त सम्मामि० तिण्णिवड्ढि-तिण्णिहाणि–अवट्ठिदाणमंतरं जह० अंतोमु०। असंखेज्जभागहाणी० जह० एगसमओ। असंखेज्जगुणवड्ढि–अवत्तव्वाणमंतरं जह० पलिदो० असंखेज्जदिभागो। उक्क० सव्वेसिमुवड्ढपोग्गलपरियट्टं।**

प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एकसौ बत्तीस सागर है। असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछकम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थानका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त, असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय, असंख्यातगुणवृद्धि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तर कुछकम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है।

**विशेषार्थ**—यतिवृषभ आचार्यने अपने चूर्णिसूत्रोंमें ओघसे मिथ्यात्वकी तीन वृद्धि, चार हानि और अवस्थित स्थितिविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर काल बतलाया है। तथा वीरसेन स्वामीने अपनी टीकामें वह अन्तर काल कैसे प्राप्त होता है इसका विस्तृत विवेचन किया है। किन्तु शेष कर्मोंकी वृद्धि, हानि और अवस्थित स्थितिविभक्तियोंके अन्तरकालका यतिवृषभ आचार्यने पृथक्-पृथक् उल्लेख न करके केवल इतना ही कहा है कि 'इस बीजपदसे शेष कर्मोंकी वृद्धि आदिका अन्तरकाल जान लेना चाहिये' इस प्रकार हम देखते हैं कि यतिवृषभ आचार्यके चूर्णिसूत्रोंमें हमें मिथ्यात्वकी वृद्धि आदिके अन्तरका ही उल्लेख मिलता है शेष कर्मोंकी वृद्धि आदिके अन्तरका नहीं। तथापि इसकी पूर्ति उच्चारणामें हो जाती है। उच्चारणामें सब कर्मोंकी वृद्धि आदिके अन्तरका पृथक् पृथक् निर्देश किया है जो मूलमें निबद्ध है ही। उसमेंसे जिन कर्मोंका वृद्धि आदिका अन्तर मिथ्यात्वकी वृद्धि आदिके अन्तरमें विशेषता रखते हैं उनका यहाँ खुलासा किया जाता है—स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी संख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय न प्राप्त होकर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है। इसका वीरसेन स्वामीने जो खुलासा किया है उसका भाव यह है कि जो दोइन्द्रिय आदि जीव मर कर तीन इन्द्रिय आदि होते हैं व अपनी पर्यायके अन्तिम अन्तर्मुहूर्त कालतक स्त्रीवेद और पुरुषवेदका बन्ध नहीं करते। इसलिये ऐसा जीव लो जो दोइन्द्रिय पर्यायसे तेइन्द्रिय पर्यायमें उत्पन्न हुआ हो और जिसके स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी स्थिति कषायकी स्थितिके समान हो। अब उसने उत्पन्न होनेके पहले समयमें संख्यातभागवृद्धिरूपसे स्त्रीवेद या पुरुषवेदका बन्ध किया। पुनः अन्तर्मुहूर्त कालके बाद दूसरी बार इसी प्रकार बन्ध किया तो इस प्रकार स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी स्थितिकी संख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त हो जाता है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कका और सब कथन तो मिथ्यात्वके समान है। किन्तु असंख्यातभागहानि और असंख्यातगुणहानिके उत्कृष्ट अन्तर कालमें विशेषता है। बात यह है कि जिसने अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना की है उसके पुनः अनन्तानुबन्धीका सत्त्व सम्भव है और अनन्तानुबन्धीका सत्त्व होनेपर असंख्यातभागहानि नियमसे होती है। किन्तु इसका पुनः सत्त्व प्राप्त करनेमें सबसे अधिककाल कुछ कम एकसौ बत्तीस सागर लगता है, अतः अनन्तानुबन्धीकी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट अन्तर काल कुछ कम एकसौ बत्तीस सागर कहा है। तथा असंख्यातगुणहानि अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाके समय प्राप्त होती है। इसमें असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तरकाल तो पूर्ववत् है। किन्तु उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है, क्योंकि अर्धपुद्गलपरिवर्तनके प्रारम्भमें और अन्तमें जिसने

§ ३२५. आदेसेण णेरइएसु मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असंखेज्जभागवड्ढि-अवट्ठिद० जह० एगसमओ। दोवड्ढि-दोहाणीणं जह० अंतोमुहु०। उक्क० सव्वेसिं पि[1] तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। असंखेज्जभागहाणी० ओघं। सम्मत्त-सम्मामि० तिण्णिवड्ढि-दोहाणि-अवट्ठिदाणं जह० अंतोमुहुत्तं। असंखेज्जभागहाणी० जह० एगसमओ। असंखेज्जगुणवड्ढि-असंखेज्जगुणहाणि-अवत्तव्व० जह० पलिदो० असंखेज्जदिभागो, उक्क० सव्वेसिं पि तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। अणंताणु०चउक्क० असंखेज्जभागवड्ढि-असंखेज्ज-भागहाणि-अवट्ठिद० जह० एगस०। दो वड्ढि-तिण्णिहाणि-अवत्तव्व० जह० अंतोमु०,

अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना की है उसके उसकी असंख्यातगुणहानिका उक्त प्रमाण अन्तरकाल प्राप्त होता है। तथा अनन्तानुबन्धीकी अवक्तव्यस्थितिविभक्ति भी होती है जिसका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल असंख्यातगुणहानिके समान प्राप्त होता है। अब रही सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व ये दो प्रकृतियाँ सो इनकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। खुलासा इस प्रकार है—वृद्धि सम्यक्त्व प्राप्तिके प्रथम समयमें होती है। अब जिस वृद्धिका अन्तर प्राप्त करना हो अन्तर्मुहूर्तके अन्दर दो बार सम्यक्त्व प्राप्त कराके दोनों बार सम्यक्त्व प्राप्त होनेके प्रथम समयमें उसी वृद्धिको प्राप्त कराओ इस प्रकार तीन वृद्धियोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होजाता है। इसी प्रकार अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर प्राप्त करना चाहिये। संख्यात-भागहानि, संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानि ये तीन हानियाँ अपने योग्य स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिके पतनके समय होती हैं। किन्तु एक काण्डकके पतनके बाद दूसरे काण्डकके पतनमें अन्तर्मुहूर्त काल लगता है, अतः इनका भी जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त हो जाता है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणवृद्धि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। बात यह है कि ये दो विभक्तियाँ प्रथमोपशम सम्यक्त्वके प्राप्त होनेके प्रथम समयमें सम्भव है। किन्तु एक बार प्रथमोपशम सम्यक्त्वको प्राप्त करके पुनः दूसरी बार उसके प्राप्त करनेमें कमसे कम पल्यका असख्यातवा भाग काल लगता है, अतः इनका जघन्य अन्तर पल्यका असंख्यातवा भागप्रमाण प्राप्त होता है। यह तो हुआ सब विभक्तियोंका जघन्य अन्तर। अब यदि इन सब विभक्तियों के उत्कृष्ट अन्तरका विचार करते हैं तो वह कुछकम अर्धपुद्गलपरि-वर्तनप्रमाण प्राप्त होता है, क्योंकि जिसने सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्ता प्राप्त करके उनकी उद्वेलना कर दी है वह कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तन काल तक उनके बिना रह सकता है।

§ ३२५ आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय तथा दो वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और सभीका उत्कृष्ट अन्तर कुछकम तेतीस सागर है। असंख्यातभाग-हानिका अन्तर ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी तीन वृद्धि, दो हानि और अवस्थानका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त, असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय तथा असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण है और सभीका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय तथा दो

१ ता० प्रतौ पि इति पाठो नास्ति।

**उक्क० सव्वेसिं पि तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि । एवं सत्तसु पुढवीसु । णवरि सग-सगट्ठिदी देसूणा ।**

**§ ३२६ तिरिक्खेसु मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असंखेज्जभागवड्ढि–अवट्ठि० जह० एगसमओ, उक्क० पलिदो० असंखेज्ज०भागो । दोवड्ढि–तिण्णिहाणी० ओघं । सम्मत्त०–**

वृद्धि, तीन हानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर अन्तमुहूर्त है और सभीका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है । इसी प्रकार सातों पृथिवियोंमें जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि कुछ-कम अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए ।

**विशेषार्थ**—नरकमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय है, क्योंकि जिसने उक्त प्रकृतियोंके असंख्यातभागवृद्धि या अवस्थित पदको किया है वह दूसरे समयमें अन्य पदको करके पुनः तीसरे समयमें यदि इन पदोंको करता है तो इनका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त हो जाता है । संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है, क्योंकि संख्यातभागवृद्धि या संख्यातगुणवृद्धिके योग्य परिणामोंके एक बार होनेके बाद पुनः उनकी प्राप्ति अन्तमुहूर्तसे पहले सम्भव नहीं । संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है, क्योंकि इनके योग्य एक स्थितिकाण्डकके पतनके बाद दूसरे काण्डकके पतनमें अन्तर्मुहूर्त काल लगता है । तथा इन सब स्थितिविभक्तियोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तेतीस सागर है, क्योंकि सम्यग्दृष्टि नारकीके कुछ कम तेतीस सागर तक एक असंख्यातभागहानिका पाया जाना सम्भव है, जिससे इनका अन्तरकाल उक्त प्रमाण प्राप्त होता है । किन्तु उक्त प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त ओघके समान नरकमें भी बन जाता है, अतः इसके अन्तरको ओघके समान कहा है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सब पदोंके जघन्य अन्तरका खुलासा जिस प्रकार ओघप्ररूपणामें किया है उसी प्रकार यहाँ भी कर लेना चाहिये । केवल असंख्यातगुणहानिके जघन्य अन्तरके कालमें फरक है । बात यह है कि नरकमें इन कर्मोंकी असंख्यातगुणहानि उद्वेलनामें प्राप्त होती है । अब यदि दूसरी बार असंख्यातगुणहानि प्राप्त करना हो तो इन प्रकृतियोंकी सत्ता प्राप्त कराके पुनः उद्वेलना कराना होगी जिसमें कम से कम पल्यका असंख्यातवाँ भाग काल लगता है, अतः नरकमें असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है । तथा उत्कृष्ट अन्तर जो कुछ कम तेतीस सागर बतलाया है उसके दो कारण हैं–एक तो यह कि जिस वेदक सम्यग्दृष्टि नारकीके कुछ कम तेतीस सागर काल तक असंख्यातभागहानि ही होती रहती है उसके उतने समय तक अन्य कोई स्थितिविभक्ति नहीं होती और दूसरा यह कि नरकमें जाकर जिसने उद्वेलना कर दी है और अन्तमें पुनः उनको प्राप्त कर लिया है उसके मध्यके कालमें कोई भी स्थिति विभक्ति नहीं होती । किन्तु अपने अपने पदके अन्तरकालको लाते समय प्रारम्भमें और अन्तमें उस पदकी प्राप्ति करानी चाहिये । हमने यहाँ स्थूल रूपसे ही निर्देश किया है । तथा इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीके सब पदोंका भी जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर काल विचार कर घटित कर लेना चाहिये । सातों नरकोंमें भी इसी प्रकार समझना चाहिये, किन्तु सब प्रकृतियोंके सब पदोंका जो उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर कहा है उसके स्थानमें कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति कहनी चाहिये । यहाँ इतना निर्देश कर देना आवश्यक है कि आगे अन्य मार्गणाओंमें सब पदोंके अन्तरका खुलासा न करके जिन पदोंके अन्तरमें विशेषता होगी उन्हींका खुलासा करेंगे ।

§ ३२६ तिर्यंचोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । दो

सम्मामि०, सव्वपदाणमोघं। णवरि असंखेज्जगुणहाणी० जह० पलिदो० असंखेज्जदिभागो। उक्क० उवड्डपोग्गलपरियट्टं। अणंताणु०चउक्क० असंखेज्जभागवड्डि-अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखेज्जदिभागो। असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि। सेसपदा ओघं।

३२७. पंचिंदियतिरिक्खतियम्मि मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असंखेज्ज-भागवड्डि-अवट्ठि० जह० एगसमओ। संखेज्जभागवड्डि-संखेज्जगुणवड्डि-संखेज्जगुणहाणीणं जह० अंतोमु०, उक्क० सव्वेसिं पि पुव्वकोडिपुधत्तं। असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। संखेज्जभागहाणी० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० सादिरेयाणि।

वृद्धि और तीन हानियोंका अन्तर ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सब पदोंका अन्तर ओघके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण और उत्कृष्ट अन्तर कुछकम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। शेष पद ओघके समान है।

**विशेषार्थ**—तिर्यंचोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, अतः यहाँ उक्त प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि व अवस्थितका उत्कृष्ट अन्तरकाल उक्त प्रमाण प्राप्त होता है। यद्यपि तीन पल्यकी आयुवाले तिर्यंचमें तीन पल्य तक असंख्यातभागहानि होता है परन्तु ऐसे जीवके तिर्यंचगतिमें दुबारा असंख्यात-भागवृद्धि व अवस्थान नहीं होता, अतः यह काल न ग्रहण कर एकेन्द्रियोंकी अपेक्षा पल्यका असंख्यातवाँ भाग ही ग्रहण करना चाहिए। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। जिसका खुलासा नारकियोंके समान यहाँ भी कर लेना चाहिये। तथा उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। बात यह है कि तिर्यंच पर्यायमें निरन्तर रहनेका उत्कृष्ट काल असंख्यातपुद्गलपरिवर्तन है। किन्तु जिसने सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्ता प्राप्त कर ली है वह संसारमें अर्धपुद्गलपरिवर्तनसे अधिक काल तक नहीं रहता। अब ऐसा तिर्यंच लो जिसने प्रारम्भमें उक्त प्रकृतियोंकी उद्वेलना करते हुए असंख्यात-गुणहानि की। पुनः वह कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तन काल तक संसारमें घूमता रहा और कुछ कालके शेष रह जाने पर उसने उपशमसम्यक्त्वपूर्वक पुनः सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्ता प्राप्त की तथा मिथ्यात्व में जाकर उद्वेलना द्वारा दूसरी बार असंख्यातगुणहानि की इस प्रकार उक्त दो प्रकृतियोंकी असंख्यातगुणहानिका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण प्राप्त हो जाता है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तीन पल्यप्रमाण है सो यह तिर्यंचोंमें अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाके उत्कृष्ट कालकी अपेक्षासे कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ३२७. पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रियपर्याप्त और योनिमती इन तीन प्रकारके तिर्यंचोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय तथा संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। संख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर

एवमणंताणु०चउक्क० । णवरि असंखेज्जभागहाणी० तिरिक्खोघं । संखेज्जगुणहाणी० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० सादिरेयाणि । असंखेज्जगुणहाणि-अवत्तव्व० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदोवमाणि पुव्वकोडिपुधत्तेण सादिरेयाणि । सम्मत्त-सम्मामि० तिण्णिवड्ढि०-दोहाणी० जह० अंतोमु० । असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस० । असंखेज्जगुणवड्ढि-असंखेज्जगुणहाणि-अवत्तव्व० जह० पलिदो० असंखेज्जदिभागो । उक्क० सव्वेसिं तिण्णि पलिदो० पुव्वकोडिपुधत्तेण सादिरेयाणि । अवट्ठि० जह० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं ।

§ ३२८. पंचिंदियतिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज० छव्वीसं पयडीणमसंखेज्जभागवड्ढि-

साधिक तीन पल्य है । इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातभागहानिका अन्तर सामान्य तिर्यंचोंके समान है संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तीन पल्य है । असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी तीन वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त, असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय तथा असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है । अवस्थितका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व है ।

**विशेषार्थ**—तीन प्रकारके तिर्यंचोंका उत्कृष्ट काल पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है । अब यहाँ मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि, अवस्थित, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका उत्कृष्ट अन्तरकाल प्राप्त करना है । किन्तु उक्त तिर्यंचोंका जो उत्कृष्ट काल है वह इन पदोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल नहीं हो सकता, क्योंकि उत्तम भोगभूमिमें ये पद सम्भव नहीं हैं और संज्ञियोंमें पृथक्त्वपूर्वकोटि तक निरन्तर असंख्यातभागहानि होना भी सम्भव नहीं है, क्योंकि इतने काल वह निरन्तर सम्यग्दृष्टि नहीं रह सकते । परन्तु असंज्ञियोंमें संज्ञीकी स्थिति घातकी अपेक्षासे असंख्यातभागहानि व संख्यातभागहानि पृथक्त्वपूर्वकोटि काल तक सम्भव है और उसके बाद संज्ञियोंमें उत्पन्न होकर उक्तपद भी सम्भव हैं, अतः उत्तम भोगभूमि और संज्ञीके कालके कम कर देने पर जो पूर्वकोटिपृथक्त्व असंज्ञीका उत्कृष्ट काल शेष रहता है वह इन पदोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल प्राप्त होता है । तथा उक्त प्रकृतियोंकी संख्यातभागहानिका उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक तीन पल्य है, क्योंकि संख्यातभागहानि भोगभूमिमें भी सम्भव है, अतः उक्त प्रकृतियोंकी संख्यातभागहानिका उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक तीन पल्य कहा है । इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी संख्यातगुणहानिका उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक तीन पल्य प्राप्त होता है । तथा अनन्तानुबन्धीकी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका उत्कृष्ट अन्तरकाल र्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है जो उक्त तीन प्रकारके तिर्यंचोंके अपने अपने कालके प्रारम्भमें और अन्तमें ही अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करानेसे प्राप्त होता है । ऐसे जीव मध्यके कालमें मिथ्यादृष्टि रहते हैं । इसी प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अवस्थित पदको छोड़कर शेष सब पदोंके उत्कृष्ट अन्तरकालको अपने अपने पदका विचार करके घटित कर लेना चाहिये । किन्तु भोगभूमिमें अवस्थित पद सम्भव नहीं है, अतः उसका उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकोटिपृथक्त्व प्राप्त होता है । शेष कथन सुगम है ।

§ ३२८. पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी

**असंखेज्जभागहाणि–अवट्ठि जह० एगस०, उक्क० अंतोमुहु०। दोवड्ढि-दोहाणीणं जहण्ण-मुक्कस्सं च अंतोमुहु०। सम्मत्त-सम्मामि० असंखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० एगसमओ। तिण्णिहाणी० णत्थि अंतरं।**

**§ ३२९. मणुसतिय० मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० पंचिं०तिरिक्खभंगो। णवरि जम्हि पुव्वकोडिपुधत्तं तम्हि पुव्वकोडी देसूणा। असंखेज्जगुणहाणी० जहण्णुक्क० अंतोमु०। सम्मत्त-सम्मामि० पंचिं०तिरिक्खभंगो। णवरि असंखेज्जगुणहाणी० जह० अंतोमुहु०, उक्क० तं चेव। अणंताणु०चउक्क० पंचिं०तिरि०भंगो। णवरि जम्हि पुव्व-कोडिपुधत्तं तम्हि पुव्वकोडी देसूणा।**

असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। दो वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। तथा तीन हानियोंका अन्तर नहीं है।

**विशेषार्थ**—पचेन्द्रिय तिर्यंच लब्ध्यपर्याप्तक और मनुष्य लब्ध्यपर्याप्तक जीवोंमें २६ प्रकृतियों-का यदि अविवक्षित पद एक समयके लिये होता है तो असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थित पदका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त होता है और यदि अविवक्षित पद अन्तर्मुहूर्त तक होता है तो इनका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है। तथा शेष दो वृद्धि और दो हानियों-मेंसे प्रत्येक वृद्धि या हानि अन्तर्मुहूर्तके पहले प्राप्त नहीं होती और उक्त मार्गणाओंका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है, इसलिये इनमें उक्त पदोंका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है। अब रहीं सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व ये दो प्रकृतियाँ सो इनकी इनमें चार हानियाँ होती हैं। इनमेंसे संख्यातभागहानि आदि पदोंका तो यहाँ अन्तर सम्भव नहीं है, क्योंकि इनका यहाँ दो बार प्राप्त होना सम्भव नहीं है। हाँ जब असंख्यातभागहानि इनमेंसे किसी एक पदके द्वारा एक समयके लिये अन्तरित हो जाती है तब उसका अवश्य जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय प्राप्त होता है।

§ ३२९. सामान्य, मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यनी इन तीन प्रकारके मनुष्योंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंका भंग पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि जहाँ पूर्वकोटिपृथक्त्व कहा है वहाँ कुछ कम पूर्वकोटि कहना चाहिये। असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर वही है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भंग पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि जहाँ पूर्वकोटिपृथक्त्व कहा है वहाँ कुछ कम पूर्वकोटि जानना चाहिए।

**विशेषार्थ**—पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंके २६ प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, अवस्थित, संख्यात-भागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका उत्कृष्ट अन्तर काल पूर्वकोटि पृथक्त्वप्रमाण बतलाया है सो यहाँ तीन प्रकारके मनुष्योंके यह अन्तर कुछ कम पूर्वकोटि प्रमाण जानना चाहिये। उक्त पदोंका उत्कृष्ट अन्तर वहाँ पर ही सम्भव है जहाँ पर उतने काल तक असंख्यातभागहानि निरन्तर होती रहे। मनुष्योंमें तो सम्यक्त्व अवस्था ऐसी है जहाँ पर उक्त पदोंकी निरंतर असंख्यात-भागहानि होती रहती है और यह काल कर्मभूमिके मनुष्योंमें कुछ कम पूर्वकोटि प्रमाण है, अतः उक्त पदोंका अन्तर कुछ कम पूर्वकोटि कहा है। भोगभूमिज मनुष्योंमें असंख्यातभागवृद्धि आदि उक्त पद सम्भव नहीं हैं, अतः तीन पल्य अन्तर नहीं कहा। तिर्यंचोंमें असंज्ञी भी होते हैं जिनका उत्कृष्ट

§ ३३०. देवगदीए देवेसु मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असंखेज्जभागवड्ढि-अवट्ठि० जह० एगसमओ। संखेज्जभागवड्ढि संखेज्जगुणवड्ढि-संखेज्जगुणहाणी० जह० अंतोमु०। उक्क० सव्वेसिं पि अट्ठारस सागरो० सादिरेयाणि। असंखेज्जभागहाणी० जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमुहु०। संखेज्जभागहाणी० जह० अंतोमुहु०, उक्क० एकत्तीसं सागरो० देसूणाणि। एवमणंताणु०चउक्क०। णवरि असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०। तिण्णिहाणि-अवत्तव्वं जह० अंतोमु०। उक्क० सव्वेसिं पि एक्कत्तीससागरो०[1] देसूणाणि। सम्मत्त-सम्मामि० तिण्णिवड्ढि-दोहाणी० जह० अंतोमुहु०। असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०। असंखेज्जगुणवड्ढि-असंखेज्जगुणहाणि अवत्तव्व० जह० पलिदोव० असंखेज्जदिभागो। उक्क० सव्व० एक्कत्तीसं सागरो० देसूणाणि। अवट्ठि० जह० अंतोमुहु०, उक्क०

काल पृथक्त्वकोटिपूर्व है, अतः जो संज्ञी तिर्यंच अपने योग्य उत्कृष्ट स्थितिसत्त्वके साथ असंज्ञियोंमें उत्पन्न होकर वहाँ पर पूर्वकोटिपृथक्त्व काल तक असंख्यात व संख्यातभागहानि द्वारा उत्कृष्ट स्थिति को घटाता रहा उसके उक्त पदोंका उत्कृष्ट अन्तर पृथक्त्वपूर्वकोटि होता है। मनुष्योंमें असंज्ञी नहीं होते, अतः मनुष्योंमें पूर्वकोटिपृथक्त्व अन्तर संभव नहीं है। तथा मनुष्योंके इन प्रकृतियोंकी असंख्यातगुणहानि भी होती है सो इसके जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरका खुलासा जिस प्रकार ओघमें किया है उसी प्रकार यहाँ भी कर लेना चाहिये। यहाँ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका और सब कथन तो पंचेन्द्रियतिर्यंचोंके समान है, किन्तु असंख्यातगुणहानिके जघन्य अन्तरकालमें कुछ विशेषता है। बात यह है कि उक्त तीनों प्रकारके मनुष्य दर्शनमोहनीयकी क्षपणा भी करते हैं, अतः इनके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त हो जाता है। तथा इसका उत्कृष्ट अन्तर वही है जो तिर्यंचोंके बतलाया है। इसका खुलासा पहले किया ही है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीका भी सब कथन यहाँ पचेन्द्रियतिर्यंचोंके समान है। किन्तु विशेषता इतनी है कि पंचेन्द्रियतिर्यंचोंके जो अनन्तानुबन्धीकी असंख्यातभागवृद्धि, अवस्थित, संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिका उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकोटिपृथक्त्व बतलाया है वह यहाँ कुछ कम पूर्वकोटि होता है।

§ ३३०. देवगतिमें देवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय तथा संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तर साधिक अठारह सागर है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। संख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय तथा तीन हानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी तीन वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त, असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय तथा असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। अवस्थितका जघन्य-

1 आ० प्रतौ जह० एगस०। असंखेज्जगुणवड्ढी असंखेज्जगुणहाणी अवत्तव्वं जह० अंतोमु०। उक्क० एक्कत्तीससागरो० इति पाठः।

**अट्ठारस सागरो० सादिरेयाणि। एवं भवणादि जाव सहस्सारो त्ति। णवरि सगसगु-क्कस्सट्ठिदी वत्तव्वा।**

§ ३३१. **आणदादि जाव उवरिमगेवज्जो त्ति मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असंखेज्ज-भागहाणी० जहण्णुक० एगस०। संखेज्जभागहाणी० जह० अंतोमुहु०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा। सम्मत्त-सम्मामि० असंखेज्जभागवड्डि-संखेज्जभागहाणी० जह० अंतोमुहु०। असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०। तिण्णिवड्डि-दोहाणि-अवत्तव्व० जह० पलिदो० असंखेज्जदिभागो। उक्क० सव्वेसिं पि सगट्ठिदी देसूणा। अणंताणु०चउक्क० असंखेज्ज-भागहाणी० जह० एगस०। तिण्णिहाणि-अवत्तव्व० जह० अंतोमुहु०। उक्क० सव्वेसिं पि सगट्ठिदी देसूणा। अणुद्दिमादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असंखेज्जभागहाणी० जहण्णुक० एगस०। संखेज्जभागहाणी जहण्णुक० अंतोमुहु०। एवं सम्मामि०। सम्मत्त० एवं चेव। णवरि संखेज्जगुणहाणीए णत्थि अंतरं। अणंताणु०-चउक्क० असंखेज्जभागहाणी० जहण्णुक० एगस०। तिण्णिहाणी० जहण्णुक० अंतोमु०।**

---

अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर साधिक अठारह सागर है। इसी प्रकार भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतक जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति कहनी चाहिये।

§ ३३१. आनतकल्पसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है। संख्यात-भागहानिका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त, असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय तथा तीन वृद्धि, दो हानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय तथा तीन हानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और सभीका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। संख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा जानना चाहिए। सम्यक्त्वकी अपेक्षा भी इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यातगुणहानिका अन्तर नहीं है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है तथा तीन हानियोंका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है।

**विशेषार्थ**—देवोंमें २६ प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणहानि और अवस्थित ये पद बारहवें कल्पतक ही होते हैं, अतः इनका उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक अठारह सागर कहा है। तथा इनकी संख्यातभागहानि नौवें ग्रैवेयक तक होती है, इसलिये इसका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम ३१ सागर कहा है। यहाँ अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना भी होती है, अतः अनन्तानुबन्धीकी असंख्यातभागहानि आदि चार हानि और अवक्तव्यका उत्कृष्ट अन्तर-काल कुछ कम इकतीस सागर प्राप्त होता है। इसी प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अव-स्थितपदको छोड़कर शेष सब पदोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम इकतीस सागर घटित कर लेना

§ ३३२. इंदियाणुवादेण एइंदिएसु असंखेज्जभागवड्ढि-अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० अंतोमुहु०। एवमसंखेज्जभागहाणीए वि वत्तव्वं। संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणीणं णत्थि अंतरं; पंचिंदिएसु आढत्तट्ठिदिकंडएसु एइंदिएसु पदमाणेसु संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणीणं तत्थुवलंभादो। मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोकसायाणमेसा परूवणा। सम्मत्त-सम्मामि० असंखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० एगस०। असंखेज्जगुणहाणी० णत्थि अंतरं। संखेज्जभागहाणि संखेज्जगुणहाणीणं जहण्णुक्क० पलिदो० असंखेज्जदिभागो। कुदो? पंचिंदिएण आरद्धट्ठिदिकंडएण एइंदिएसु घादिय संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणीणमादिं[1] कादूण असंखेज्जभागहाणीए अंतरिय जहण्णदीहुव्वेल्लणकालेहि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि उव्वेल्लिय उक्कस्ससंखेज्जमेत्तणिसेगेसु सेसेसु संखेज्जभागहाणीए लद्धमंतरं। दोसु णिसेगेसु एगणिसेगे गलिदे संखेज्जगुणहाणीए लद्धमंतरं जेण तदो पलिदो० असंखेज्जदिभागमेत्तमंतरं सिद्धं। एवं बादरेइंदिय-सुहुमेइंदिय-पुढवि०-बादरपुढवि-सुहुमपुढवि०-आउ०-बादरआउ०-सुहुमआउ०-तेउ०-बादरतेउ०-सुहुमतेउ०-

चाहिये। किन्तु अवस्थित पद बारहवें स्वर्ग तक ही पाया जाता है, अतः उसका उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक अठारह सागर कहा है। शेष कथन सुगम है। भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार तक यह ओघ प्ररूपणा बन जाती है, अतः उनके कथनको सामान्य देवोंके समान समझना चाहिये। किन्तु उत्कृष्ट अन्तरकाल जहाँ साधिक अठारह सागर या कुछ कम इकतीस सागर कहा है वहाँ कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण कहना चाहिये। इसी प्रकार आगेके कल्पोंमें भी यथायोग्य वहाँकी विशेषताओंको ध्यानमें रखकर अन्तरकाल घटित कर लेना चाहिये।

§ ३३२. इन्द्रियमार्गणाके अनुवादमें एकेन्द्रियोंमें असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार असंख्यातभागहानिका अन्तर भी कहना चाहिये। संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका अन्तर नहीं है, क्योंकि जिन्होंने स्थितिकाण्डकोंका आरम्भ कर दिया है ऐसे जो पंचेन्द्रिय एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होते हैं उनके ही संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानि पाई जाती हैं। यह प्ररूपणा मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी अपेक्षा की है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। असंख्यातगुणहानिका अन्तर नहीं है। संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, क्योंकि पंचेन्द्रियके द्वारा आरम्भ किये गये स्थितिकाण्डकका एकेन्द्रियमें आकर घात किया और इस प्रकार संख्यातभागहानि तथा संख्यातगुणहानिका प्रारम्भ किया अनन्तर असंख्यातभागहानिके द्वारा अन्तर करके जघन्य और उत्कृष्ट उद्वेलनाकालके द्वारा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करते हुए जब उनके निषेक उत्कृष्ट संख्यातप्रमाण शेष रह जायँ तब पुनः संख्यातभागहानि होती है और इस प्रकार चूँकि संख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त होता है। तथा अन्तमें शेष रहे दो निषेकोंमेंसे एक निषेकके गलित होनेपर चूँकि संख्यातगुणहानिका अन्तर प्राप्त होता है, अतः दोनोंका अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है यह सिद्ध हुआ। इसी प्रकार बादर एकेन्द्रिय, सूक्ष्म एकेन्द्रिय, पृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिक, सूक्ष्म पृथिवीकायिक, जलकायिक, बादर जलकायिक, सूक्ष्म जलकायिक, अग्निकायिक, बादर अग्निकायिक, सूक्ष्म अग्निकायिक, वायुकायिक,

1 आ० प्रतौ संखेज्जभागहाणीणमादिं इति पाठः।

वाउ०–बादरवाउ०–सुहुमवाउ०–वणप्फदि–बादरवणप्फदि०–सुहुमवणप्फदि० – णिगोद-बादरणिगोद-सुहुमणिगोद-बादरवणप्फदिपत्तेयसरीरा त्ति ।

§ ३३३. बादरएइंदियपज्जत्तएसु मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० असंखेज्जभागवड्ढि-असंखेज्जभागहाणि-अवट्ठिद० जह० एगस०, उक्क० अंतोमुहु० । संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणीणं णत्थि अंतरं । सम्मत्त-सम्मामि० असंखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० एगस० । संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्जगुणहाणीणं णत्थि अंतरं; संखेज्ज-वस्ससहस्समेत्तपज्जत्तट्ठिदीदो उव्वेल्लणकालस्स बहुत्तादो । एवं बादरेइंदियअपज्ज०-सुहुमेइंदियपज्जत्तापज्जत्त–बादरपुढविअपज्ज०–सुहुमपुढविपज्जत्तापज्जत्त–बादरआउअपज्ज०-सुहुमआउपज्जत्तापज्जत्त–बादरतेउअपज्ज०–सुहुमतेउपज्जत्तापज्जत्त–बादरवाउअपज्ज०–सुहुमवाउपज्जत्तापज्जत्त-बादरवणप्फदिअपज्ज०-सुहुमवणप्फदिपज्जत्तापज्जत्त बादरणिगोद-अपज्ज०-सुहुमणिगोदपज्जत्तापज्जत्त–बादरवणप्फदिपत्तेयसरीरअपज्ज०-बादरपुढविपज्ज०-बादरआउपज्ज०–बादरतेउपज्ज०–बादरवाउपज्ज०–बादरवणप्फदिपज्ज०–बादरणिगोद–पज्ज०–बादरवणप्फदिपत्तेयसरीरपज्जत्ते त्ति । सव्वविगलिंदियाणमसंखेज्जभागवड्ढि-असंखेज्जभागहाणि-अवट्ठिदाणं जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमुहु० । संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जभागहाणीणं जहण्णुक्क० अंतोमुहु० । संखेज्जगुणहाणीए णत्थि अंतरं । छव्वीस-पयडीणमेसा परूवणा । सम्मत्त-सम्मामि० असंखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० एगस० ।

बादर वायुकायिक, सूक्ष्म वायुकायिक, वनस्पतिकायिक, बादर वनस्पतिकायिक, सूक्ष्म वनस्पतिकायिक, निगोद, बादर निगोद, सूक्ष्म निगोद और बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर जीवोंके जानना चाहिए ।

§ ३३३. बादर एकेन्द्रिय पर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका अन्तर नहीं है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है । संख्यातभाग-हानि, संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिका अन्तर नहीं है, क्योंकि पर्याप्तककी संख्यात हजार वर्षप्रमाण स्थितिसे उद्वेलनाका काल बहुत है । इसी प्रकार बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त, सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त और अपर्याप्त, बादर पृथिवीकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म पृथिवीकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, बादर जलकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म जलकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, बादर अग्निकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म अग्नि-कायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, बादर वायुकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म वायुकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म वनस्पतिकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, बादर निगोद अपर्याप्त, सूक्ष्म-निगोद पर्याप्त और अपर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर अपर्याप्त, बादर पृथिवीकायिक पर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अग्निकायिक पर्याप्त, बादर वायुकायिक पर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक पर्याप्त, बादर निगोद पर्याप्त और बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर पर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए । सब विकलेन्द्रियोंमें असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थानका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । संख्यातगुणहानिका अन्तर नहीं है । यह प्ररूपणा छब्बीस प्रकृतियोंकी अपेक्षासे की है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर

संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्जगुणहाणीणं णत्थि अंतरं ।

§ ३३४. पंचिंदिय-पंचिं०पज्जत्तएसु मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असंखेज्जभागवड्ढि-अवट्ठि० जह० एगसमओ, उक्क० तेवट्ठिसागरोवमसदं अंतोमुहुत्तब्भहियतीहि पलिदोवमेहि सादिरेयं । असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमुहु० । संखेज्जगुणवड्ढि-संखेज्जगुणहाणीणं जह० अंतोमुहु०, उक्क० तेवट्ठिसागरोवमसदं दोहि अंतोमुहुत्तेहि अब्भहियतीहि पलिदोवमेहि सादिरेयं । संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जभागहाणीणमेवं चेव । णवरि संखेज्जभागहाणीए पलिदो० असंखेज्जभागेणब्भहियतेवट्ठिसागरोवमसदं । असंखेज्जगुणहाणीए जहण्णुक्क० अंतोमुहु० । एवमणंताणु०चउक्क० । णवरि असंखेज्जभागहाणीए जह० एगस०, उक्क० बेछावट्ठिसागरो० देसूणाणि । असंखेज्जगुणहाणि अवत्तव्वाणं जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० सागरोवमसहस्सं पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियं सागरोवमसदपुधत्तं । सम्मत्त-सम्मामि० तिण्णिवड्ढि-तिण्णिहाणि०-अवट्ठि० जह० अंतोमुहु०[1] । असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस० । असंखेज्जगुणवड्ढि-अवत्तव्वं जह० पलिदो० असंखेज्जदिभागो। उक्क० सव्वेसिं पि सागरोवमसहस्सं पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियं सागरोवमसदपुधत्तं देसूणं । एवं तसकाइय-तसकाइयपज्जत्ताणं । णवरि सग-सगुक्कस्सट्ठिदी वत्तव्वा । संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढीणं जहण्णंतरस्स ओघपरूवणा।

एक समय है । संख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिका अन्तर नहीं है ।

§ ३३४. पचेन्द्रिय और पचेन्द्रियपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त और तीन पल्य अधिक एकसौ त्रेसठ सागर है । असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर दो अन्तर्मुहूर्त और तीन पल्य अधिक एकसौ त्रेसठसागर है । संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिका अन्तर इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यातभागहानिका उत्कृष्ट अन्तर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक एकसौ त्रेसठ सागर है । असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । इसी प्रकार अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अपेक्षासे जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एकसौ बत्तीस सागर है । असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर क्रमशः पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक हजार सागर और सौ सागरपृथक्त्व है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी तीन वृद्धि, तीनहानि और अवस्थितका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त, असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय तथा असंख्यातगुणवृद्धि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तर क्रमशः कुछ कम पूर्वकोटिपृथक्त्वसे अधिक एक हजार सागर और कुछ कम सौ सागरपृथक्त्व है। इसी प्रकार त्रसकायिक और त्रसकायिकपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अपनी-अपनी उत्कृष्ट स्थिति कहनी चाहिये। संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिके जघन्य अन्तरकी ओघके समान प्ररूपणा करना चाहिये । पचेन्द्रियअपर्याप्त और त्रसअपर्याप्त जीवोंके पंचेन्द्रियतिर्यंच

---

[1] ता० प्रतौ अवट्ठि० अंतोमु० इति पाठ ।

**कायव्वा। पंचिंदियअपज्ज०–तसअपज्जत्ताणं पंचिं०तिरिक्खअपज्जत्तभंगो। णवरि तस-अपज्ज० दोवड्ढी० जह० एगसमओ।**

**§ ३३५. जोगाणुवादेण पंचमण०-पंचवचि० असंखेज्जभागवड्ढि०-असंखेज्जभाग-हाणि-अवट्ठिदाणं जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमु०। संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जभागहाणि-**

अपर्याप्तकोंके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि त्रस अपर्याप्तकोंके दो वृद्धियोंका जघन्य अन्तर एक समय है।

**विशेषार्थ**—यहाँ ओघसे यद्यपि मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यात-भागवृद्धि और अवस्थित पदका उत्कृष्ट अन्तरकाल तीन पल्य अधिक एकसौ त्रेसठ सागर बतलाया है पर यह सामान्य निर्देश है। विशेषनिर्देशकी अपेक्षा तो इसमें एक अन्तर्मुहूर्त काल और मिलाना चाहिये, क्योंकि उपरिम ग्रवेयकसे च्युत होकर कोटिपूर्व आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न होनेवाले जीवके एक अन्तर्मुहूर्त कालतक असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितपद नहीं होता, इसलिये यहाँ पंचेन्द्रिय और पर्याप्तकोंके उक्त प्रकृतियोंके उक्त दो पदोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त और तीन पल्य अधिक एकसौ त्रेसठ सागर कहा है। इसी प्रकार संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुण-हानिका उत्कृष्ट अन्तर जो दो अन्तर्मुहूर्त और तीन पल्य अधिक एकसौ त्रेसठ सागर कहा है वहाँ भी तीन पल्य अधिक एकसौ त्रेसठ सागर कालके प्रारम्भ और अन्तमें प्राप्त होनेवाला अन्तरका एक-एक अन्तर्मुहूर्त काल और बढ़ा लेना चाहिये, क्योंकि भोगभूमिमें उत्पन्न होनेवाले जीवके कमसे कम एक अन्तर्मुहूर्त काल पहलेसे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानि नहीं होती और नौवें ग्रैवेयकसे च्युत हुए जीवके भी कमसे कम एक अन्तर्मुहूर्त कालतक ये पद नहीं होते। संख्यातभागहानिका उत्कृष्ट अन्तर काल जो पल्यके असंख्यातवेंभाग अधिक एकसौ त्रेसठ सागर बतलाया है सो इस अन्तरका कारण असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल जानना चाहिये जिसका विस्तारसे विवेचन काल प्ररूपणामें किया ही है। अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाके बाद पुनः उसके संयुक्त होनेमें सबसे अधिक काल कुछ कम एकसौ बत्तीस सागर लगता है, अतः यहाँ अनन्तानु-बन्धीकी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट अन्तरकाल उक्त प्रमाण बतलाया है। पंचेन्द्रिय और पंचेन्द्रिय पर्याप्तकोंका उत्कृष्ट काल क्रमशः पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक एक हजार सागर और सौ सागरपृथक्त्व है। अब यदि इन जीवोंने अपने अपने कालके प्रारम्भमें और अन्तमें अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना की और विसंयोजनाके बाद यथायोग्य उससे संयुक्त हुए तो इनके अनन्तानुबन्धीकी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका उत्कृष्ट अन्तरकाल उक्त प्रमाण प्राप्त होता है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सब पदोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल अपनी अपनी विशेषताका विचार करके इसी प्रकार घटित कर लेना चाहिये। पञ्चेन्द्रिय और पंचेन्द्रियपर्याप्तकोंके समान त्रसकायिक और त्रसकायिक पर्याप्तकोंके कथन करना चाहिये। किन्तु जहाँ जहाँ पंचेन्द्रिय और पंचेन्द्रियपर्याप्तकोंके उत्कृष्ट स्थिति कही हो वहाँ वहाँ त्रसकायिक और त्रसकायिकपर्याप्तकोंकी उत्कृष्ट स्थिति लेनी चाहिये। तथा त्रसोंमें विकलत्रय जीव भी सम्मिलित हैं, अतः इनके संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य अन्तर ओघके समान बन जाता है। त्रस अपर्याप्तकोंके दो वृद्धियोंके जघन्य अन्तर एक समय बतलानेका भी यही कारण है। शेष कथन सुगम है।

§ ३३५. योगमार्गणाके अनुवादसे पाँचों मनोयोगी और पाँचों वचनयोगी जीवोंमें असंख्यात-भागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। तथा संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि, संख्यातगुणवृद्धि संख्यातगुणहानि और

**संखेज्जगुणवड्ढि-संखेज्जगुणहाणि—असंखेज्जगुणहाणीणं णत्थि अंतरं। एसा परूवणा छव्वीसपयडीणं दट्ठव्वा। अणंताणु०चउक्क० अवत्तव्व० णत्थि अंतरं। कुदो ? अणंताणुबंधिविसंजोइदसम्माइट्ठी संजुत्तो होदूण जहण्णमिच्छत्तद्धमच्छिय पुणो सम्मत्तं घेत्तूण सव्वजहण्णेण कालेण अणंताणु० विसंजोइय, पुणो जाव संजुत्तो होदि ताव एगजोगस्स अवट्ठाणाभावादो। सम्मत्त-सम्मामि० असंखेज्जभागहाणीए जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमुहु०। चत्तारिवड्ढि०-तिण्णिहाणि०-अवट्ठि०-अवत्तव्वाणं णत्थि अंतरं।**

§ ३३६. **कायजोगि० मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असंखेज्जभागवड्ढि—अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखेज्जदिभागो। संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढीणं जह० एगस०। इत्थि-पुरिस० संखेज्जभागवड्ढीए जह० अंतोमुहु०। संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणीणं जह० अंतोमुहु०। उक्क० सव्वेसिं पि असंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा। असंखेज्जभागहाणीए जह० एगस०, उक्क० अंतोमुहु०। असंखेज्जगुणहाणीए णत्थि अंतरं। एवमणंताणु०चउक्कस्स। णवरि अवत्तव्व० णत्थि अंतरं। सम्मत्त-सम्मामि० चत्तारिवड्ढि-अवट्ठि०-अवत्तव्वाणं णत्थि अंतरं। असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमुहु०। कुदो ? चरिमफालिं पादिय असंखेज्जभागहाणीए कायजोगेण अंतरं कादूण णिस्संतकम्मिओ होदूण अणियट्टिकरणद्धाए अब्भंतरे अंतोमुहुत्तमेत्तमंतरिय कायजोगदुचरिमसमए सम्मत्तं घेत्तूण अवत्तव्वेणंतरिय चरिमसमए असंखेज्जभागहाणीए**

असंख्यातगुणहानिका अन्तर नहीं है। यह प्ररूपणा छब्बीस प्रकृतियोंकी जानना चाहिए। अनन्तानुबन्धी चतुष्कके अवक्तव्यका अन्तर नहीं है, क्योंकि अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करनेवाला सम्यग्दृष्टि जीव मिथ्यात्वमें जाकर और अनन्तानुबन्धीसे संयुक्त होकर तथा सबसे जघन्य काल तक मिथ्यात्वमें रह कर पुनः सम्यक्त्वको ग्रहण करके और सबसे जघन्य कालके द्वारा अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करके पुनः मिथ्यात्वमें जाकर जबतक अनन्तानुबन्धीसे संयुक्त होता है तबतक एक योगका अवस्थान नहीं रहता है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। चार वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यका अन्तर नहीं है।

§ ३३६. काययोगियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय तथा स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी संख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त तथा सबकी संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और सबोंका उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। तथा असंख्यातगुणहानिका अन्तर नहीं है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यका अन्तर नहीं है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका चार वृद्धि, अवस्थित और अवक्तव्यका अन्तर नहीं है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है, क्योंकि अन्तिम फालिका पतन करके और काययोगके साथ असंख्यातभागहानिका अन्तर करके पुनः निःसत्त्वकर्मवाला होकर अनिवृत्तिकरणके कालके भीतर अन्तर्मुहूर्त प्रमाण अन्तरके बाद काययोगके द्विचरमसमयमें सम्यक्त्वको ग्रहण करके और अवक्तव्य

कदाए अंतोमुहुत्तमेत्तंतरुवलंभादो। दोण्हं हाणीणं जह० अंतोमुहु०, उक्क० पलिदो० असंखेज्जदिभागो। असंखेज्जगुणहाणीए णत्थि अंतरं।

§ ३३७. ओरालियकाय० मिच्छत्त–सोलसक०–णवणोक० असंखेज्जभागवड्ढि-अवट्ठि०-असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमुहु०। दोण्णिवड्ढि-तिण्णि-हाणीणं णत्थि अंतरं। अणंताणु०चउक्क० अवत्तव्व० णत्थि अंतरं। सम्मत्त-सम्मामि० चत्तारिवड्ढि०-अवट्ठि०-अवत्तव्वाणं णत्थि अंतरं। असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमुहु०। तिण्हं हाणीणं णत्थि अंतरं। ओरालियमिस्स० छव्वीसं पयडीणमसंखेज्जभागवड्ढि-असंखेज्जभागहाणि-अवट्ठिदाणं जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। दोवड्ढि-दोहाणीणं जहण्णुक्क० अंतोमुहु०। णवरि इत्थि-पुरिसवेदवज्जाणं संखेज्जभागवड्ढी० जह० एयस०। हस्स-रदि-अरदि-सोग-इत्थि-पुरिस-णवुंसयवेद० संखेज्जगुणवड्ढीए जहण्णमंतरमेगसमओ। सम्मत्त-सम्मामि० असंखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० एगसमओ। संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणी० जहण्णुक्क० अंतोमुहु०। अथवा णत्थि अंतरं। असंखेज्जगुणहाणी० णत्थि अंतरं।

§ ३३८. वेउव्वियकाय० छव्वीसं पयडीणमसंखेज्जभागवड्ढि-अवट्ठिद असंखेज्जभागहाणीणं जह० एगस०, उक्क० अंतोमुहुत्तं। दोवड्ढि-दोहाणीणं अणंताणुचउक्क० असंखेज्जगुणहाणीए अवत्तव्वं णत्थि अंतरं। सम्मत्त-सम्मामि० चत्तारिवड्ढि-अवट्ठि०-अवत्तव्वाणं णत्थि

स्थितिविभक्तिका अन्तर करके अन्तिम समयमें असंख्यातभागहानिके करनेपर असंख्यातभागहानिका अन्तर्मुहूर्तप्रमाण उत्कृष्ट अन्तर पाया जाता है। दो हानियोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। असंख्यातगुणहानिका अन्तर नहीं है।

§ ३३७. औदारिककाययोगी जीवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि, अवस्थित और असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। दो वृद्धि और तीन हानियोंका अन्तर नहीं है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अवक्तव्यका अन्तर नहीं है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धि, अवस्थित और अवक्तव्यका अन्तर नहीं है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। तथा तीन हानियोंका अन्तर नहीं है। औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। दो वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। किन्तु इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और पुरुषवेदके विना शेष प्रकृतियोंकी संख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है। हास्य, रति, अरति, शोक, स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अथवा अन्तर नहीं है। असंख्यातगुणहानिका अन्तर नहीं है।

§ ३३८. वैक्रियिककाययोगियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, अवस्थित और असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। दो वृद्धि और दो हानियोंका तथा अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका अन्तर नहीं है।

**अंतरं। असंखेज्जभागहाणी० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। तिण्हं हाणीणं णत्थि अंतरं। वेउव्वि०मिस्स० ओरालियमिस्स०भंगो। णवरि छव्वीसं पयडीणं संखेज्जभागवड्ढीए सत्तणोक० संखेज्जगुणवड्ढीए च जहण्णमंतरमेगसमओ णत्थि। किंतु अंतोमुहुत्तं। कम्मइय० अट्ठावीसं पयडि०सव्वपदाणं णत्थि अंतरं। एवमणाहारीणं। आहार०-आहारमिस्स० सव्वासिं पयडीणं असंखेज्जभागहाणीए णत्थि अंतरं। एवमकसा०-जहाक्खाद०-सासण०दिट्ठि त्ति।**

सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धि, अवस्थित और अवक्तव्यका अन्तर नहीं है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अंतर अन्तर्मुहूर्त है। तीन हानियोंका अन्तर नहीं है। वैक्रियिकमिश्रकाययोगियोंका भंग औदारिकमिश्रकाययोगियोंके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि छब्बीस प्रकृतियोंकी संख्यातभागवृद्धिका तथा सात नोकषायोंकी संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय नहीं है किन्तु अन्तर्मुहूर्त है। कार्मणकाययोगियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंके सब पदोंका अन्तर नहीं है। इसी प्रकार अनाहारकोंके जानना चाहिए। आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगियोंमें सब प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका अन्तर नहीं है। इसी प्रकार अकषायी, यथाख्यातसंयत और सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिए।

**विशेषार्थ**—चारों मनोयोग और चारों वचनयोगोंमें २६ प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानि, असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थित पदोंका अन्तरकाल तो बन जाता है, क्योंकि ये पद कमसे कम एक समयके अन्तरसे भी होते हैं, इसलिये यहाँ इनका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त कहा। किन्तु शेष पदोंका अन्तरकाल नहीं बनता, क्योंकि उक्त मनोयोगोंके कालसे शेष पदोंके अन्तरकालका प्रमाण अधिक है। यहाँ अनन्तानुबन्धीकी अवक्तव्यवृद्धिका अन्तरकाल क्यों नहीं बनता इसका कारण मूलमें बतलाया ही है। उक्त योगवालोंमेंसे कोई एक योगवाला जीव सम्यक्त्व या सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानि कर रहा है। अब दूसरे समयमें सम्यक्त्वको प्राप्त करके उसने अन्य पदों द्वारा असंख्यातभागहानिको अन्तरित कर दिया और तीसरे समयमें वह पुनः असंख्यातभागहानिको प्राप्त हो गया तो असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त होता है। तथा कोई एक ऐसा जीव है जो उक्त योगोंमेंसे विवक्षित योगके कालके भीतर सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करता है तथा अन्तर्मुहूर्तमें ही सम्यक्त्वको प्राप्त करके पुनः इनकी सत्ताको प्राप्त होकर दूसरे समयमें असंख्यातभागहानि करने लगता है तो उसके असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है। यहाँ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके शेष पदोंका अन्तरकाल नहीं बनता, क्योंकि उक्त योगोंके कालसे शेष पदोंका जघन्य अन्तरकाल भी बड़ा है। असंख्यातभागहानिकाण्डकघातका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, अतएव काययोगमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थित पदका उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा। काययोग का उत्कृष्ट काल असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन है, इसलिये इसमें उक्त प्रकृतियोंकी संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका उत्कृष्ट अन्तरकाल उक्त प्रमाण बन जाता है। कोई एक काययोगी जीव है जो सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना कर रहा है। प्रारम्भमें और अन्तमें उसने इनकी संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानि की तो इनका उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है। यहाँ प्रारम्भमें स्थितिकाण्डकघातसे संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानि प्राप्त करना चाहिये। और अन्तमें जब जघन्य परीतासंख्यात प्रमाण स्थिति शेष रह जाती है तब संख्यातभागहानि होती है। तथा

§ ३३६. **वेदाणुवादेण इत्थिवेदेसु मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० असंखेज्जभागवड्ढि-असंखेज्जभागहाणि-अवट्ठि० ज० एगसमओ। संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुण-हाणीणं जह० अंतोमु०, उक्क० सव्वेसिं पि पणवण्णपलिदोवमाणि देसूणाणि। णवरि अणंताणु०चउक्कवज्जाणमसंखेज्जभागहाणी० अंतोमुहुत्तं। संखेज्जगुणवड्ढीए संखेज्जभाग-वड्ढिभंगो। णवरि सत्तणोकसायाणं संखेज्जगुणवड्ढीए जहण्णंतरमेगसमओ। असंखेज्ज-गुणहाणीए जहण्णुक्क० अंतोमु०। अणंताणु०चउक्क० असंखेज्जगुणहाणि-अवत्तव्व० ज०**

दो निषेकोंके शेष रह जानेपर संख्यातगुणहानि होती है। औदारिकमिश्रकाययोगमें २६ प्रकृतियोंमेंसे स्त्रीवेद और पुरुषवेदके बिना जो शेष प्रकृतियोंकी संख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय बतलाया है वह, जो लब्ध्यपर्याप्तक दो इन्द्रिय स्वस्थानमें संख्यातभागवृद्धि करता है और दूसरे समयमें अवस्थितविभक्तिको करके तीसरे समयमें औदारिकमिश्रयोगके साथ तेइन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर संख्यातभागवृद्धिको करता है, उसके प्राप्त होता है। इसी प्रकार लब्ध्यपर्याप्तक तेइन्द्रियको चौइन्द्रियमें उत्पन्न कराके भी संख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त किया जा सकता है। तथा हास्य, रति, अरति, शोक, स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसक-वेदकी संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य अन्तर जो एक समय बतलाया है वह इस प्रकार प्राप्त होता है—जिसके सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी सत्त्वस्थिति एकेंद्रियके योग्य है ऐसा कोई एक एकेन्द्रिय जीव संज्ञियोंमें उत्पन्न हुआ। इसके अभी हास्यादिकमेंसे विवक्षित प्रकृतिका बन्ध नहीं हो रहा है। अब शरीरग्रहण करनेके कुछ काल बाद औदारिकमिश्रकाययोगके रहते हुए उसने जिसका अन्तरकाल प्राप्त करना हो उसकी पहले समयमें बन्ध द्वारा संख्यातगुणवृद्धि की, दूसरे समयमें अवस्थितविभक्ति की और तीसरे समयमें संक्लेशक्षयसे संख्यातगुणवृद्धि की तो इस प्रकार उक्त प्रकृतियोंमें संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त हो जाता है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर काल अन्तर्मुहूर्त बतलाया है। वह इस प्रकार है—अन्तरकाल जो अन्तर्मुहूर्त बतलाया है वह स्थितिकाण्डक घातकी अपेक्षासे बतलाया है। पर औदारिकमिश्रकाययोगमें इस प्रकारकी स्थिति अधिकतर प्राप्त नहीं होती, अतः इनका निषेध किया। औदारिकमिश्रकाययोगमें जो दोइन्द्रिय तीन इन्द्रियोंमें और तीन इन्द्रिय चार इन्द्रियोंमें उत्पन्न होते हैं उनके संख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त होता है। तथा जो एकेन्द्रिय या विकलेन्द्रिय संज्ञियोंमें उत्पन्न होते हैं उनके सात नोकषायोंकी संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त होता है पर वैक्रियिकमिश्रकाययोगियोंमें इसप्रकार जीवोंका उत्पाद नहीं होता, अतः यहाँ उक्त पदोंका जघन्य अन्तर एक समय नहीं कहा। शेष कथन सुगम है।

§ ३३९. वेदमार्गणाके अनुवादसे स्त्रीवेदियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय तथा संख्यात-भागवृद्धि, संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तर कुछकम पचवन पल्य है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्कके बिना शेष प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। तथा संख्यातगुणवृद्धिका भंग संख्यातभागवृद्धिके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सात नोकषायोंकी संख्यात-गुणवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्त-र्मुहूर्त है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कको असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त

अंतोमु०, उक्क० पलिदोवमसदपुधत्तं । सम्मत्त-सम्मामि० तिण्णिवड्ढि-अवट्ठाणाणं जह० अंतोमु० । असंखेज्जभागहाणी० जह० एगसमओ । असंखेज्जगुणवड्ढि-अवत्तव्वाणं जह० पलिदो० असंखेज्जदिभागो। असंखेज्जगुणहाणीए जह० अंतोमु०, उक्क० सव्वेसिं पि पलिदोवमसदपुधत्तं देसूणं । संखेज्जभागहाणि–संखेज्जगुणहाणीणं जह० अंतोमु०, उक्क० पलिदोवमसदपुधत्तं देसूणं। कुदो ? पुरिसवेदो णवुंसयवेदो वा सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि उव्वेल्लमाणो अच्छिदो इत्थिवेदेसु उप्पण्णविदियसमए संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणीओ काऊण तदियसमए णिस्संतत्तणेण संखेज्जगुणहाणीए च अंतरिय पलिदोवमसदपुधत्तं संतेण विणा अच्छिदूण अवसाणे सम्मत्तं घेत्तूण संखेज्जभागहाणि–संखेज्जगुणहाणीसु कयासु पलिदोवमसदपुधत्तंतरस्सुवलंभादो ।

§ ३४०. पुरिसवेदेसु मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असंखेज्जभागवड्ढि-अवट्ठि० जह० एगसमओ, उक्क० तेवड्ढिसागरोवमसदं तीहि पलिदोवमेहि सादिरेयं । असंखेज्ज-

और उत्कृष्ट अन्तर सौ पल्यपृथक्त्व प्रमाण है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी तीन वृद्धि और अवस्थानका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त, असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय, असंख्यातगुणवृद्धि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तर कुछकम सौ पल्यपृथक्त्व है । संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछकम सौ पल्यपृथक्त्व है, क्योंकि एक पुरुषवेदी या नपुंसकवेदी जीव सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वलना कर रहा है, पुनः उसने स्त्रीवेदियोंमें उत्पन्न होनेके दूसरे समयमें संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिको करके तीसरे समयमें उक्त कर्मोंको निःसत्त्व करके संख्यातगुणहानिका अन्तर किया । पुनः सौ पल्यपृथक्त्वतक सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सत्त्वके बिना रहकर अन्तमें उसके सम्यक्त्वको ग्रहण करके संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिके करनेपर सौ पल्यपृथक्त्व प्रमाण उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त होता है ।

**विशेषार्थ**—स्त्रीवेदमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल कुछ कम पचवन पल्य बतला आये हैं अतः यहां उक्त प्रकृतियोंकी असंख्यात भागवृद्धि, अवस्थित, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पचवन पल्य कहा । यहां अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करके उसके अभावका भी उत्कृष्ट काल कुछ कम पचवन पल्य प्राप्त होता है, अतः अनन्तानुबन्धीकी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट अन्तर काल भी उक्त प्रमाण कहा । तथा स्त्रीवेदका उत्कृष्ट काल सौ पल्यपृथक्त्व है । अब यदि किसी जीवने प्रारम्भमें और अन्तमें अनन्तानुबन्धीका विसंयोजना की और तदनन्तर वह अन्तर्मुहूर्त कालके भीतर मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ तो अनन्तानुबन्धीकी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका उत्कृष्ट अन्तर काल सौ पल्यपृथक्त्वप्रमाण प्राप्त होता है । इसी प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सब पदोंका यथासम्भव उत्कृष्ट अन्तरकाल घटित करना चाहिये । इसी प्रकार पुरुषवेदमें भी सब प्रकृतियोंके यथासम्भव सब पदोंके अन्तरकालका विचार कर लेना चाहिये । आगेकी मार्गणाओंमें भी इसी प्रकार काल आदिको विचार कर अन्तरकाल घटित कर लेना चाहिए ।

§ ३४०. पुरुषवेदियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितका जघन्य अंतर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर तीन पल्य अधिक एकसौ त्रेसठ सागर

भागहाणि० जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमु० । दोवड्ढि-दोहाणीणं जह० अंतोमु० । णवरि सत्तणोकसायाणं संखेज्जगुणवड्ढीए जहण्णंतरमेगसमओ, उक्क० सव्वेसिं पि तेवट्ठि-सागरोवमसदं तीहि पलिदोवमेहि सादिरेयं । णवरि संखेज्जभागहाणीए तेवट्ठिसागरो-वमसदं पलिदो० असंखे०भागेण सादिरेयं । असंखेगुणहाणी० जहण्णुक्क० अंतोमु० । एव-मणंताणु० । णवरि असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० वेछावट्ठिसागरो० देसूणाणि । असंखेज्जगुणहाणि-अवत्तव्व० जह० अंतोमु०, उक्क० सागरोवमसदपुधत्तं देसूणं । सम्मत्त-सम्मामि० तिण्णिवड्ढि-तिण्णिहाणि-अवट्ठि० ज० अंतोमु० । असंखेज्ज-भागहाणी० जह० एयस० । असंखेज्जगुणवड्ढि-अवत्तव्व० ज० पलिदो० असंखेज्जदिभागो । उक्क० सव्वेसिं पि सागरोवमसदपुधत्तं देसूणं ।

§ ३४१. णवुंसयवेदेसु मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक०असंखेज्जभागवड्ढि-अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि । असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । दोवड्ढि-दोहाणी० ज० एगस० अंतोमु० । णवरि इत्थि-पुरिस० संखेज्जभागवड्ढी० अंतोमु० । उक्क० सव्वेसिं पि अणंतकालमसंखेज्जपोग्गलपरियट्टं । असंखेज्जगुणहाणी० जहण्णुक्क० अंतोमु० । एवमणंताणु०चउक्क० । णवरि असंखेज्ज-भागहाणी० ज० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि । असंखेज्जगुणहाणि—अव-

है । असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । दो वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । किन्तु इतनी विशेषता है कि सात नोकषायोंकी संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है । तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तर तीन पल्य अधिक एकसौ त्रेसठ सागर है । किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यातभागहानिका उत्कृष्ट अन्तर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक एकसौ त्रेसठ सागर है । असंख्यातगुणहानि का जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षासे जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एकसौ बत्तीस सागर है । असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम सौ सागरपृथक्त्व है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त, असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय तथा असंख्यातगुणवृद्धि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम सौ सागर पृथक्त्व है ।

§ ३४१. नपुंसकवेदियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है । असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । दो वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय और अन्तर्मुहूर्त है । किन्तु इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी संख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है । असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षासे जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है । असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और

त्तव्व० ज० अंतोमु०, उक्क० अद्धपोग्गलपरियट्टं देसूणं। सम्मत्त-सम्मामि० तिण्णिवड्डि-तिण्णिहाणि-अवट्ठि० ज० अंतोमु०। असंखेज्जभागहाणी० ज० एगस०। असंखेज्ज-गुणवड्डि-अवत्तव्व० ज० पलिदो० असंखेज्जदिभागो। उक्क० सव्वेसिमुवड्ढपोग्गलपरियट्टं।

§ ३४२. अवगद० चउवीसपयडीणमसंखेज्जभागहाणीए जहण्णुक्क० एगस०। दंसणतिय–अट्ठकसाय–इत्थि-णवुंसयवेदाणं संखेज्जभागहाणीए जहण्णुक्क० अंतोमुहु०। सेसाणं पयडीणमसंखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणीणं जहण्णुक्क० अंतोमुहुत्तं।

§ ३४३. कसायाणुवादेण कोधकसाईसु मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० असंखेज्ज-भागवड्डि असंखेज्जभागहाणि-अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। संखेज्जभागवड्डि-संखेज्जगुणवड्डी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमुहु०। णवरि इत्थि-पुरिस० संखेज्जभाग-वड्डीए जहण्णंतरं अंतोमुहु०। संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्जगुणहाणीणं जहण्णुक्क० अंतोमुहुत्तं। एगकसायुदयकालो दोवड्डि-तिण्णिहाणीणमंतरादो बहुओ त्ति कुदो णव्वदे? कोधकसायोदएण खवगसेढिं चढाविय तदुदयकालब्भंतरे संखेज्जसहस्स-ट्ठिदिकंडयपरूवयक्खवणसुत्तादो। अणंताणु० अवत्तव्व० णत्थि अंतरं। सम्मत्त-सम्मामि० चत्तारिवड्डि-अवट्ठि०-अवत्तव्व० णत्थि अंतरं। असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमुहु०। संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्जगुणहाणी० जहण्णुक्क०

उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितका जघन्य अन्तर अन्तमुहूर्त, असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय तथा असंख्यातगुणवृद्धि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है।

§ ३४२. अपगतवेदियोंमें चौबीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। तीन दर्शनमोहनीय, आठ कषाय, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी संख्यातभाग-हानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। शेष प्रकृतियोंका संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है।

§ ३४३. कषायमार्गणाके अनुवादसे क्रोधकषायवाले जीवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। किन्तु इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी संख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। तथा संख्यातभागहानि, संख्यात-गुणहानि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है।

**शंका**—एक कषायका उदयकाल दो वृद्धि और तीन हानियोंके अन्तरसे अधिक है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

**समाधान**—क्रोधकषायके उदयसे क्षपकश्रेणी पर चढ़ाकर उसके उदयकालके भीतर संख्यात हजार स्थितिकाण्डकोंकी क्षपणाके प्ररूपण करनेवाले सूत्रसे जाना जाता है।

अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अवक्तव्यका अन्तर नहीं है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धि, अवस्थित और अवक्तव्यका अन्तर नहीं है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। संख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि और असंख्यात-

अंतोमुहु० । एवं माण-माया-लोभाणं पि वत्तव्वं ।

३४४. णाणाणुवादेण मदिअण्णाणि-सुदअण्णा० मिच्छत्त०-सोलसक०-णवणोक० असंखेज्जभागवड्ढि-अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० एक्कत्तीससागरो० सादिरेयाणि । संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढी० जह० एगस० । णवरि इत्थि-पुरिस० संखेज्जभागवड्ढी० जह० अंतोमु० । संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणी० ज० अंतोमु०, उक्क० सव्वेसिं पि असंखेज्जपोग्गलपरियट्टा । असंखेज्जभागहाणी० जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमु० । सम्मत्त-सम्मामि० असंखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० एगस० । संखेज्जभागहाणि०-संखेज्जगुणहाणी० जह० अंतोमु०, उक्क० दोण्हं पि पलिदो० असंखेज्जदिभागो । असंखेज्ज-गुणहाणी० णत्थि अंतरं । [एवं मिच्छादिट्ठीणं ।] विहंगणाणी० मिच्छत्त-सोलसक०-णव-णोक० असंखेज्जभागवड्ढि-असंखेज्जभागहाणि–अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढि–दोहाणीणं जहण्णुक्क० अंतोमु० । सम्मत्त-सम्मामि० असंखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० एगस० । संखेज्जभागहाणि संखेज्जगुणहाणी० ज० अंतोमु०, उक्क० पलिदो० असंखेज्जदिभागो । असंखेज्जगुणहाणी० णत्थि अंतरं ।

§ ३४५. आभिणि०-सुद०-ओहि० मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असंखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० एगस० । संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणी० जह० अंतोमु०, उक्क०

गुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार मान, माया और लोभ कषायवाले जीवोंके भी जानना चाहिए।

§ ३४४. ज्ञानमार्गणाके अनुवादसे मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक इकतीस सागर है। संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है। किन्तु इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी संख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तर असंख्यातपुद्गलपरिवर्तन है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यात-भागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और दोनोंका उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। असंख्यातगुणहानिका अन्तर नहीं है। इसी प्रकार मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिये। विभंगज्ञानियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि और दो हानियोंका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। असंख्यातगुणहानिका अन्तर नहीं है।

§ ३४५. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। संख्यात-

**छावट्ठिसागरो० देसूणाणि। णवरि बारसक०-णवणोक० संखेज्जभागहाणीए णवणउदि-सागरो० सादिरेयाणि। असंखेज्जगुणहाणीए जहण्णुक्क० अंतोमु०। एवमणंताणु०-चउक्क०। णवरि संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणीणं मिच्छत्तभंगो। सम्मत्त-सम्मामि० असंखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० एगस०। संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणी० जह० अंतोमु०, उक्क० छावट्ठिसागरो० देसूणाणि। असंखेज्जगुणहाणी० जहण्णुक्क० अंतोमु०। एवमोहिदंसण-सम्मादिट्ठीणं।**

§ ३४६. **मणपज्ज० मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असंखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० एगस०। संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणी० ज० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडी देसूणा। णवरि एदासिं पयडीणं संखेज्जगुणहाणीए उक्क० अंतोमुहुत्तं। असंखेज्जगुणहाणीए संखेज्जगुणहाणिभंगो। अणंताणु०चउक्क० असंखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० एगस०। संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्जगुणहाणीणं जहण्णुक्क० अंतोमु०। सम्मत्त-सम्मामि० मिच्छत्तभंगो।**

§ ३४७. **संजमाणुवादेण संजद-सामाइय-छेदो०संजदाणं मणपज्जवभंगो। णवरि अणंताणु०चउक्क० संखेज्जभागहाणीए उक्कस्संतरं पुव्वकोडी देसूणा। कुदो? पढमसम्मत्तेण संजमं पडिवज्जंतो मुहुत्तब्भंतरे एयंताणुवड्ढीए सव्वकम्माणं संखेज्जभागहाणिं**

भागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम छ्यासठ सागर है। किन्तु इतनी विशेषता है कि बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी संख्यातभागहानिका साधिक निन्यानवे सागर है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अपेक्षा जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका भंग मिथ्यात्वके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यात-भागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम छ्यासठ सागर है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार अवधिदर्शनवाले और सम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिए।

§ ३४६. मनःपर्ययज्ञानियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यात-भागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इन प्रकृतियोंकी संख्यातगुणहानिका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातगुणहानिका भंग संख्यातगुणहानिके समान है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। संख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुण-हानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग मिथ्यात्वके समान है।

§ ३४७. संयम मार्गणाके अनुवादसे संयत, सामायिकसंयत और छेदोपस्थापनासंयत जीवोंका भंग मनःपर्ययज्ञानियोंके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी संख्यातभागहानिका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है, क्योंकि प्रथमोपशम सम्यक्त्वके साथ संयमको प्राप्त होनेवाले जीवके एक मुहूर्तकालके भीतर एकान्तानुवृद्धिके द्वारा सब कर्मोंकी संख्यात-

**कादूण पुणो अंतोमुहुत्तावसेसे आउए अणंताणु० विसंजोएंतस्स सव्वकम्माणं संखेज्ज-भागहाणीए उवलंभादो। णेदं मणपज्जवणाणी लब्भदि; उवसमसम्मत्तद्धाए उवसमसेढि-वज्जाए मणपज्जवणाणाणुप्पत्तीदो।**

**§ ३४८. परिहारसुद्धि० मिच्छत्त–सम्मत्त–सम्मामि०–अणंताणु०चउक्काणं मणपज्ज० भंगो। बारसक०-णवणोक० एवं चेव। णवरि संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्ज-गुणहाणीओ णत्थि। सुहुमसांपराय० वीसं पयडीणमसंखेज्जभागहाणी० णत्थि अंतरं। दंसणतिय-लोभसंजल० असंखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० एगस०। संखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० अंतोमु०। लोभसंजल० संखेज्जगुणहाणी० एवं चेव। संजदासंजद० संजद-भंगो। णवरि बारसक० णवणोक० संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्जगुणहाणीओ णत्थि।**

**§ ३४९. असंजद० मिच्छत्त०–बारसक०–णवणोक० असंखेज्जभागवड्ढि–अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढि-दोहाणीणमोघं। मिच्छत्त० असंखे० गुणहाणी० जहण्णुक्क० अंतोमु०। संखेज्जगुणहाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। अणंताणु०चउक्क० मिच्छत्तभंगो। णवरि असंखेज्ज-भागहाणी० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। अवत्तव्वमोघं। सम्मत्त०-सम्मामि० ओघभंगो।**

भागहानि करके पुनः आयुके अन्तर्मुहूर्त शेष रहने पर अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करते हुये सब कर्मोंकी संख्यातभागहानि पाई जाती है। किन्तु इस अन्तरको मनःपर्ययज्ञानी नहीं प्राप्त करता है, क्योंकि उपशमश्रेणीको छोड़कर उपशमसम्यक्त्वके कालमें मनःपर्ययज्ञानकी उत्पत्ति नहीं होती है।

§ ३४८. परिहारविशुद्धिसंयतोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग मनःपर्ययज्ञानियोंके समान है। बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अपेक्षा इसी प्रकार जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि यहां संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानि नहीं है। सूक्ष्मसांपरायिकसंयतोंमें बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका अन्तर नहीं है। तीन दर्शनमोहनीय और लोभसंज्वलनकी असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। संख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। लोभसंज्वलनकी संख्यात-गुणहानिका अन्तर इसी प्रकार है। संयतासंयतोंका भंग संयतोंके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी संख्यातगुणहानि और असंख्यात-गुणहानि नहीं है।

§ ३४९. असंयतोंमें मिथ्यात्व, बारहकषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। संख्यात-भागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि और दो हानियोंका अन्तर ओघके समान है। मिथ्यात्वकी असंख्यात-गुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भंग मिथ्यात्वके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। अवक्तव्यका अन्तर ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मि-थ्यात्वका भंग ओघके समान है।

§ ३५०. दंसणाणुवादेण चक्खु० तसपज्जत्तभंगो। णवरि संखेज्जभागवड्ढीए जह० एगसमओ णत्थि। अचक्खुदंसणीणमोघं। लेस्साणुवादेण किण्ह-णील-काउ० असंखेज्ज-भागवड्ढि-अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीस-सत्तारस सत्तसागरो० देसूणाणि। असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। दोवड्ढि-दोहाणीणं जहण्णमोघं, उक्क० तेत्तीस-सत्तारस-सत्तसागरो० देसूणाणि। एसा परूवणा मिच्छत्त-बारसक०-णवणोकसायाणं। एवमणंताणु०चउक्क०। णवरि असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीस-सत्तारस-सत्तसागरो० देसूणाणि। असंखेज्जगुणहाणि-अवत्तव्व० जह० अंतोमु०, उक्क० तेत्तीस-सत्तारस-सत्तसागरो० देसूणाणि। सम्मत्त-सम्मामि० तिण्णिवड्ढि-दोहाणि-अवट्ठि० जह० अंतोमु०। असंखेज्जगुणवड्ढि—असंखेज्जगुणहाणि—अवत्तव्वाणं जह० पलिदो० असंखेज्जदिभागो। असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० सव्वेसिं पि सगट्ठिदी देसूणा।

§ ३५१. तेउ—पम्मलेस्सा० मिच्छत्त०—बारसक०—णवणोक० असंखेज्जभागवड्ढि-अवट्ठि० जह० एगस०। दोवड्ढि-दोहाणी० जह० अंतोमु०, उक्क० सव्वेसिं पि वे-अट्ठारस सागरोवमाणि सादिरयाणि। असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०।

§ ३५०. दर्शनमार्गणाके अनुवादसे चक्षुदर्शनवाले जीवोंका भंग त्रसपर्याप्तकोंके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय नहीं है। अचक्षुदर्शनवाले जीवोंके ओघके समान जानना चाहिए। लेश्यामार्गणाके अनुवादसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यावाले जीवोंमें असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर क्रमसे कुछ कम तेतीस, कुछ कम सत्रह और कुछ कम सातसागर है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। दो वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य अन्तर ओघके समान है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस, कुछ कम सत्रह और कुछ कम सातसागर है। यह प्ररूपणा मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायों की अपेक्षासे की है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अपेक्षा जानना। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर क्रमसे कुछ कम तेतीस, कुछ कम सत्रह और कुछ कम सातसागर है। असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर क्रमसे कुछ कम तेतीस, कुछ कम सत्रह और कुछ कम सातसागर है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी तीन वृद्धि, दो हानि और अवस्थितका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवेंभागप्रमाण तथा असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और सभीका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है।

§ ३५१. पीत और पद्मलेश्यावाले जीवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय दो वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो सागर और साधिक अठारह सागर है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। मिथ्यात्वकी

मिच्छत्त० असंखेज्जगुणहाणी० जहण्णुक्क० अंतोमु० । अणंताणु०चउक्क० सव्वपदाणं मिच्छत्तभंगो । णवरि असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस० । असंखेज्जगुणहाणि-अवत्तव्व० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्हं पि बे-अट्ठारससागरो०[1] सादिरेयाणि । सम्मत्त० सम्मामि० तिण्णिवड्डि-अवट्ठि०-तिण्णिहाणी० जह० अंतोमु० । असंखेज्ज-गुणवड्डि-अवत्तव्व० जह० पलिदो० असंखेज्जदिभागो । असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस० । उक्क० सव्वेसिं पि बे-अट्ठारससागरो० सादिरेयाणि ।

§ ३५२. सुक्कले० मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असंखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० एगस० । संखेज्जभागहाणी० जह० अंतोमु०, उक्क० एक्कत्तीसं सागरोवमाणि देसूणाणि । संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्जगुणहाणी० जहण्णुक्क० अंतोमु० । अणंताणु०चउक्क० असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस० । तिण्णिहाणि०-अवत्तव्व० जह० अंतोमु०, उक्क० सव्वेसिमेक्कत्तीससागरो० देसूणाणि । सम्मत्त-सम्मामि० तिण्णिवड्डि-तिण्णि-हाणी० जह० अंतोमु० । असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस० । असंखेज्जगुणवड्डि-अवत्तव्व० जह० पलिदो० असंखेज्जदिभागो । उक्क० सव्वेसिं पि एक्कत्तीससागरो० देसूणाणि । णवरि तिण्णं हाणीणं सादिरेयाणि । अवट्ठि० णत्थि अंतरं ।

§ ३५३. भवियाणु० भवसि० ओघभंगो । अभवसि० छव्वीसं पयडीणमसंखेज्ज-

असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कके सब पदोंका भंग मिथ्यात्वके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त तथा तीनोंका उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो और साधिक अठारह सागर है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी तीन वृद्धि, अवस्थित और तीन हानियोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातगुणवृद्धि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण और असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है। तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो और साधिक अठारह सागर है।

§ ३५२. शुक्ललेश्यावाले जीवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यात भागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। संख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त तथा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय, तीन हानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी तीन वृद्धि और तीन हानियोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त, असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय असंख्यातगुणवृद्धि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण और सभीका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। किन्तु इतनी विशेषता है कि तीन हानियोंका साधिक इकतीस सागर उत्कृष्ट अन्तर है। अवस्थितका अन्तर नहीं है।

§ ३५३. भव्यमार्गणाके अनुवादसे भव्योंमें ओघके समान भंग है। अभव्य जीवोंमें छब्बीस

1 ता० प्रतौ बे सत्त अट्ठारससागरो० इति पाठः ।

भागवड्ढि-अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० एक्कत्तीस सागरो० सादिरेयाणि। असंखेज्ज-भागहाणी० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु०। दोवड्ढीणं ज० एगसमओ। इत्थि-पुरिम० संखेज्जभागवड्ढीए ज० अंतोमु०। दोण्हं हाणीणं ज० अंतोमु०। उक्क० चदुण्हं पि असंखेज्जपोग्गलपरियट्टा।

§ ३५४. सम्मत्ताणु० वेदगसम्मा० मिच्छत्त०-सम्मत्त०-सम्मामि०-अणंताणु०-चउक्क० असंखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० एगस०। संखेज्जभागहाणी० ज० अंतोमु०, उक्क० छावट्ठिसागरो० देसूणाणि। एवं संखेज्जगुणहाणीए वत्तव्वं। असंखेज्जगुण-हाणीए जहण्णुक्क० अंतोमु०। बारसक०-णवणोक० असंखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० एगस०। संखेज्जभागहाणी० जह० अंतोमु०, उक्क० छावट्ठिसागरो० देसूणाणि। संखेज्जगुणहाणी० जहण्णुक्क० अंतोमु०। खइयसम्माइट्ठी० एक्कवीसपयडीणमसंखेज्ज-भागहाणी० जहण्णुक्क० एगस०। संखेज्जभागहाणी० जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० तेत्तीसं सागरो० सादिरेयाणि। संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्जगुणहाणीणं जहण्णुक्क० अंतोमु०। उवसमसम्माइट्ठी० अट्ठावीसं पयडीणमसंखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० एगस०। संखेज्जभागहाणी० अणंताणु०४ संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्जगुणहाणी० जहण्णुक्क० अंतोमु०। सम्मामि० अट्ठावीसपयडीणमसंखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० एगस०। संखेज्जभागहाणि०-संखेज्जगुणहाणी० जहण्णुक्क० अंतोमु०।

प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक इकतीस सागर है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। दो वृद्धियोंका जघन्य अन्तर एक समय तथा स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी संख्यात-भागवृद्धिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। दो हानियोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। तथा चारोंका उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन है।

§ ३५४. सम्यक्त्वमार्गणाके अनुवादसे वेदकसम्यग्दृष्टियोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। संख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम छयासठ सागर है। इसी प्रकार संख्यातगुणहानिका अन्तर कहना चाहिये। असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। संख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम छयासठ सागर है। संख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें इक्कीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। संख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। संख्यातभागहानिका तथा अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी संख्यातगुणहानि और असंख्यात गुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। संख्यातभागहानि और संख्यात गुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है।

§ ३५५. सण्णियाणु० सण्णीसु मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असंखेज्जभागवड्ढि-अवट्ठि० जह० एगस०। संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढी० जह० अंतोमु०। णवरि इत्थि-पुरिस० णवुंस०-हस्स-रदि-अरदि-सोग० संखेज्जगुणवड्ढीए जह० एगस०। संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणीणं जह० अंतोमु०, उक्क० सव्वेसिं तेवट्ठिसागरोवमसदं तीहि पलिदोवमेहि सादिरेयं। णवरि संखेज्जभागहाणीए पलिदो० असंखेज्जदिभागेण सादिरेयं। असंखेज्जगुणहाणीए जहण्णुक्क० अंतोमु०। असंखेज्जभागहाणीए जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमु०। एवमणंताणु०चउक्क०। णवरि असंखेज्जभागहाणी० उक्क० बेछावट्ठि सागरो० देसूणाणि। असंखेज्जगुणहाणि अवत्तव्व० ज० अंतोमु०, उक्क० सागरोवमसदपुधत्तं देसूणं। सम्मत्त-सम्मामि० तिण्णिवड्ढि-तिण्णिहाणि-अवट्ठिदाणं ज० अंतोमु०। असंखेज्जभागहाणी० ज० एगस०। असंखेज्जगुणवड्ढि-अवत्तव्वाणं जह० पलिदो० असंखेज्जदिभागो। उक्क० सव्वेसिं पि सागरोवमसदपुधत्तं देसूणं।

§ ३५६. असण्णि० मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० असंखेज्जभागवड्ढि-अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखेज्जदिभागो। संखेज्जभागवड्ढी० ज० एगस०। इत्थि-पुरिस० अंतोमु०। संखेज्जभागहाणी० ज० अंतोमुहुत्तं। उक्क० दोण्हं पि अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा। संखेज्जगुणवड्ढी० ज० खुद्दाभवग्गहणं समयूणं, उक्क०

§ ३५५. संज्ञीमार्गणाके अनुवादसे संज्ञियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय तथा संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। किन्तु इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेद, हास्य, रति, अरति, और शोककी संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है। संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तर तीन पल्य अधिक एकसौ त्रेसठ सागर है। किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यातभागहानिका उत्कृष्ट अन्तर पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक एकसौ त्रेसठ सागर है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्कका अपेक्षा जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट अन्तर कुछकम एकसौ बत्तीस सागर है। असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछकम सौ सागर पृथक्त्व है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त, असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय तथा असंख्यातगुणवृद्धि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवेंभागप्रमाण है। तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तर कुछकम सौ सागर पृथक्त्व है।

§ ३५६. असंज्ञियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्यका असंख्यातवां भाग है। संख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है। पर स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी संख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। संख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है तथा दोनोंका उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकाल है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य अन्तर

अणंतकालमसंखेज्जा पो०परियट्टा । संखेज्जगुणहाणीए णत्थि अंतरं । असंखेज्जभागहाणी० ज० एगस०, उ० अंतोमु० । सम्मत्त०-सम्मामि० असंखेज्जभागहाणीए जहण्णुक्क० एगस० । संखेज्जभागहाणी० जह० अंतोमु०, उक्क० पलिदो० असंखेज्जदिभागो । संखेज्जगुणहाणी० जहण्णुक्क० पलिदो० असंखेज्जदिभागो । असंखेज्जगुणहाणी० णत्थि अंतरं ।

§ ३५७. आहाराणु० आहारीसु मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असंखेज्जभागवड्ढि-अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० तेवट्ठिसागरोवमसदं तीहि पलिदोवमेहि सादिरेयं । संखेज्जगुणवड्ढि-संखेज्जगुणहाणि-संखेज्जभागहाणी० ज० अंतोमुहुत्तं । संखेज्जभागवड्ढी० ज० एगस० । इत्थि-पुरिस० अंतोमु०, उक्क० सव्वेसिमंगुलस्स असंखेज्जदिभागो । असंखेज्जभागहाणी० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु० । असंखेज्जगुणहाणी० जहण्णुक्क० अंतोमु० । एवमणंताणु०चउक्क० । णवरि असंखेज्जभागहाणी० ज० एगस०, उक्क० बेछावट्ठिसागरो० देसूणाणि । असंखेज्जगुणहाणि अवत्तव्व० ज० अंतोमु०, उक्क० अंगुलस्स असंखेज्जदिभागो । सम्मत्त०-सम्मामि० तिण्णिवड्ढि-तिण्णिहाणि-अवट्ठि० जह० अंतोमु० । असंखेज्जभागहाणी० जह० एगस० । असंखेज्जगुणवड्ढि अवत्तव्व० जह० पलिदो० असंखेज्जदिभागो । उक्क० सव्वेसिमंगुलस्स असंखेज्जदिभागो ।

एवमंतराणुगमो समत्तो ।

एक समय कम क्षुल्लक भवग्रहण है तथा उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकाल है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। संख्यातगुणहानिका अन्तर नहीं है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। संख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। संख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। असंख्यातगुणहानिका अन्तर नहीं है।

§ ३५७. आहारकमार्गणाके अनुवादसे आहारकोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर तीन पल्य अधिक एकसौ त्रेसठसागर है। संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणहानि और संख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त, संख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है पर स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी संख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एकसौ बत्तीस सागर है। असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त, असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और असंख्यातगुणवृद्धि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा सभीका उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

इस प्रकार अन्तरानुगम समाप्त हुआ।

§ ३५८. णाणाजीवेहि भंगविचयाणुगमेण दुविहो णिद्देसो–ओघेण आदेसेण। ओघेण छब्बीसं पयडीणमसंखेज्जभागवड्ढि-हाणि-अवट्ठिदाणि णियमा अत्थि। कुदो? अणंतेसु एइंदिएसु उवलब्भमाणत्तादो। सेसपदा भयणिज्जा। कुदो? तसेसु संभवादो। भंगा वत्तव्वा। सम्मत्त-सम्मामि० असंखेज्जभागहाणी णियमा अत्थि। सेसपदा भयणिज्जा। भंगा वत्तव्वा। एवं तिरिक्ख-कायजोगि-ओरालियकायजोगि-णवुंसयवेद-चत्तारिकसाय-मदि-सुदअण्णाणि–असंजद०–अचक्खुदंस०–किण्ह–णील-काउ०–भवसि०-मिच्छादिट्ठि-आहारि त्ति।

§ ३५९. आदेसेण णेरइएसु छब्बीसं पयडीणं असंखेज्जभागहाणी अवट्ठिदं णियमा अत्थि। सेसपदा भयणिज्जा। सम्मत्त०-सम्मामि० ओघं। एवं सव्वणिरय-सव्वपंचिंदिय-

§ ३५८. नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचयानुगमसे विचार करने पर निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेंसे ओघकी अपेक्षा छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थित नियमसे है, क्योंकि ये पद अनन्त एकेन्द्रियोंमें पाये जाते हैं। शेष पद भजनीय हैं, क्योंकि शेष पद त्रसोंमें संभव हैं। भंग कहने चाहिये। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानि नियमसे है। शेष पद भजनीय हैं। भंग कहने चाहिये। इसी प्रकार सामान्य तिर्यंच, काययोगी, औदारिककाययोगी, नपुंसकवेदवाले, क्रोधादि चारों कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचक्षुदर्शनवाले, कृष्णलेश्यावाले, नीललेश्यावाले, कापोतलेश्यावाले, भव्य, मिथ्यादृष्टि और आहारक जीवोंके जानना चाहिए।

**विशेषार्थ**—मोहनीयकी २८ प्रकृतियां हैं। इनमेंसे २२ प्रकृतियोंके आठ पद हैं जिनमें तीन ध्रुव और पांच भजनीय हैं। मूलमें ध्रुवपद गिनाये ही हैं। इससे भजनीय पदोंका ज्ञान अपने आप हो जाता है। पांच भजनीय पदोंके एक जीव और नाना जीवोंकी अपेक्षा कुल भंग २४२ होते हैं। इनमें एक ध्रुव भंगके मिला देनेपर २२ मेंसे प्रत्येक प्रकृतिके कुल भंग २४३ होते हैं। अनन्तानुबन्धी चतुष्कके नौ पद हैं। इनमें तीन ध्रुव और छह भजनीय हैं। छह भजनीय पदोंके एक जीव और नाना जीवोंकी अपेक्षा कुल भंग ७२८ होते हैं। इनमें एक ध्रुव भंगके मिला देनेपर अनन्तानुबन्धी चतुष्कमेंसे प्रत्येक प्रकृतिके कुल भंग ७२९ होते हैं। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके कुल दस पद हैं। इनमें एक ध्रुव और नौ भजनीय हैं। नौ भजनीय पदोंके एक जीव और नाना जीवोंकी अपेक्षा कुल भंग १९६८२ होते हैं और इनमें एक ध्रुव भंगके मिला देनेपर सब भंग १९६८३ होते हैं। तिर्यञ्च आदि और जितनी मार्गणाएं गिनाई हैं उनमें भी इसी प्रकार समझ लेना चाहिये। इसका यह मतलब है कि इन मार्गणाओंमें २६ प्रकृतियोंके तीन ध्रुव पद हैं और शेष भजनीय पद हैं। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका एक ध्रुव पद है और शेष भजनीय। अब किस मार्गणामें किस प्रकृतिके कुल कितने पद हैं इसका विचार करके अलग अलग भंग ले आना चाहिये। भंग लानेका तरीका यह है कि जहां जितने भजनीय पद हों उतनी जगह तीन रख कर परस्पर गुणा करनेसे कुल भंग आते हैं। इनमेंसे एक कम कर देने पर भजनीय पदोंके भंग होते हैं। और भजनीय पदोंके भंगोंमें एक मिला देनेपर कुल भंग होते हैं।

§ ३५९. आदेशसे नारकियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानि और अवस्थितपद नियमसे है। शेष पद भजनीय हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है।

**तिरिक्ख-मणुस-मणुसपज्ज०-मणुसिणी-देव-भवणादि जाव सहस्सार०-पंचिंदिय-पंचिं०पज्ज०-तस-तसपज्ज-०पंचमण०-पंचवचि०-वेउव्वियकाय०-इत्थि-पुरिस०-विहंग-णाणि०-चक्खुदंस०-तेउ-पम्म०-सण्णि त्ति। मणुसअपज्ज० सव्वपयडीणं सव्वपदाणि भयणिज्जाणि।**

**§ ३६०. आणदादि जाव उवरिमगेवज्ज० मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असंखेज्ज-भागहाणी णियमा अत्थि। संखेज्जभागहाणी भयणिज्जा। सिया एदे च संखेज्ज-भागहाणिविहत्तियो च। सिया एदे च संखेज्जभागहाणिविहत्तिया च। धुवपदेण सह तिण्णि भंगा। सम्मत्त०-सम्मामि०-अणंताणु०चउक्काणमसंखेज्जभागहाणी णियमा अत्थि। सेसपदा भयणिज्जा। अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति मिच्छत्त-बारसक० णवणोक० आणदभंगो। सम्मामि० मिच्छत्तभंगो। सम्मत्त-अणंताणु०चउक्क० असंखेज्ज-भागहाणी णियमा अत्थि। सेसपदा भयणिज्जा।**

इसी प्रकार सब नारकी सब पंचेन्द्रिय तिर्यंच, सामान्य मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी, सामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार स्वर्गतकके देव, पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रियपर्याप्त, त्रस, त्रसपर्याप्त, पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी, वैक्रियिककाययोगी, स्त्रीवेदवाले, पुरुषवेदवाले, विभंगज्ञानवाले, चक्षुदर्शनवाले, पीतलेश्यावाले, पद्मलेश्यावाले और संज्ञी जीवोंके जानना चाहिए। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंके सब पद भजनीय हैं।

**विशेषार्थ**—नारकियोंमें २२ प्रकृतियोंके सात पद हैं। जिनमें दो ध्रुव और पाँच भजनीय हैं। कुल भंग २४३ होते हैं। अनन्तानुबन्धीचतुष्कके नौ पद हैं। जिनमें दो ध्रुव और सात भजनीय हैं। कुल भंग २१८७ होते हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके दस पद हैं। जिनमें एक ध्रुव और नौ भजनीय हैं। कुलभंग १९६८३ होते हैं। मूलमें सब नारकी आदि और जितनी मार्गणाएं गिनाई हैं उनमें भी इसी प्रकार जानना चाहिये। इसका यह मतलब है कि इन मार्गणाओंमें २६ प्रकृतियोंके दो पद ध्रुव हैं और शेष भजनीय हैं। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका एक पद ध्रुव और शेष भजनीय है। तदनुसार जिस मार्गणामें जिस प्रकृतिके जितने पद हों उनका विचार करके भंग ले आने चाहिये। लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्योंके २६ प्रकृतियोंके सात पद हैं पर ये सब भजनीय हैं, अतः इनके कुल भंग २१८६ होते हैं। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके चार पद हैं। ये भी सब भजनीय हैं, अतः इनके कुल भंग ८० होते हैं।

§ ३६०. आनतकल्पसे लेकर उपरिम ग्रैवेयकतकके देवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागहानि नियमसे है। संख्यातभागहानि भजनीय है। कदाचित असंख्यात-भागहानिवाले जीव होते हैं और संख्यातभागहानि स्थितिविभक्तिवाला एक जीव होता है। कदाचित असंख्यातभागहानिवाले जीव होते हैं और संख्यातभागहानि स्थितिविभक्तिवाले नाना जीव होते हैं। इनमें ध्रुवपदके मिला देनेपर तीन भंग होते हैं। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागहानि नियमसे है, शेष पद भजनीय हैं। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंका भंग आनतकल्पके समान है। सम्यग्मिथ्यात्वका भंग मिथ्यात्वके समान है। सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागहानि नियमसे है, शेष पद भजनीय हैं।

**विशेषार्थ**—आनतसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके जीवोंके २२ प्रकृतियोंके तीन भंग तो

§ ३६१ इंदियाणुवादेण एइंदिएसु छब्बीसं पयडीणं असंखेज्जभागवड्ढि हाणि-अवट्ठिद० णियमा अत्थि। संखेज्जभागहाणि[1]-संखेज्जगुणहाणी भयणिज्जा, तसेहि आढत्तट्ठिदिकंडयाणमेइंदिएसु पदमाणाणं तसरासिपडिभागत्तादो। सम्मत्त-सम्मामि० असंखेज्जभागहाणी णियमा अत्थि। सेसतिण्णिहाणीओ भयणिज्जाओ। एवं बादरेइंदिय-बादरेइंदियपज्जत्तापज्जत्त-सुहुमेइंदिय-सुहुमेइंदियपज्जत्तापज्जत्त-पुढवि० - बादरपुढवि० - बादरपुढवि०पज्जत्तापज्जत्त-सुहुमपुढवि-सुहुमपुढविपज्जत्तापज्जत्त-आउ-बादरआउ० - बादरआउपज्जत्तापज्जत्त-सुहुमआउ०-सुहुमआउपज्जत्तापज्जत्त-तेउ०-बादरतेउ०-बादरतेउपज्जत्तापज्जत्त-सुहुमतेउ०-सुहुमतेउपज्जत्तापज्जत्त-वाउ०-बादरवाउ०-बादरवाउपज्जत्तापज्जत्त-सुहुमवाउ०-सुहुमवाउपज्जत्तापज्जत्त-वणप्फदि०-बादरवणप्फदि०-बादरवणप्फदिपज्जत्तापज्जत्त-सुहुमवणप्फदि०-सुहुमवणप्फदिपज्जत्तापज्जत्त-णिगोद - बादरणिगोद - बादरणिगोदपज्जत्तापज्जत्त-सुहुमणिगोद-सुहुमणिगोदपज्जत्तापज्जत्त-बादरवणप्फदिपत्तेय०-बादरवणप्फदिपत्तेयसरीरपज्जत्तापज्जत्ता त्ति। णवरि चत्तारिकाय-बादरपज्जत्त-बादर-

मूलमें बतलाये ही है। अब रहीं शेष छह प्रकृतियाँ इनमेंसे अनन्तानुबन्धी चतुष्कके पाँच पद होते हैं। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके नौ पद होते हैं। इन दोनों स्थानोंमें एक ध्रुव और शेष भजनीय पद हैं। भंग क्रमसे ८१ और ६५६१ होते हैं। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंके २२ प्रकृतियोंके तीन भंग हैं जो आनतादिकके समान हैं। शेष रहीं पाँच प्रकृतियाँ सो इनमेंसे अनन्तानुबन्धी चतुष्कके चार पद और सम्यक्त्वके तीन पद होते हैं। इनमेंसे एक ध्रुवपद और शेष भजनीय पद हैं। भंग क्रमशः २७ और ९ होते हैं।

§ ३६१ इन्द्रियमार्गणाके अनुवादसे एकेन्द्रियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थित पद नियमसे हैं तथा संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानि भजनीय हैं, क्योंकि जो त्रसपर्यायमें स्थितिकाण्डकघातका आरम्भ करके एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुए हैं उनका प्रमाण त्रसराशिके प्रतिभागसे रहता है। अतः उक्त दो पदोंको एकेन्द्रियोंमें भजनीय कहा है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानि नियमसे है, शेष तीन हानियाँ भजनीय हैं। इसी प्रकार बादर एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त और अपर्याप्त, सूक्ष्म एकेन्द्रिय, सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त और अपर्याप्त, पृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, सूक्ष्म पृथिवीकायिक, सूक्ष्म पृथिवीकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, जलकायिक, बादर जलकायिक, बादर जलकायिकपर्याप्त और अपर्याप्त, सूक्ष्मजलकायिक, सूक्ष्म जलकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, अग्निकायिक, बादर अग्निकायिक, बादर अग्निकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, सूक्ष्म अग्निकायिक, सूक्ष्म अग्निकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, वायुकायिक, बादर वायुकायिक, बादर वायुकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, सूक्ष्म वायुकायिक, सूक्ष्म वायुकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, वनस्पतिकायिक, बादर वनस्पतिकायिक, बादर वनस्पतिकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, सूक्ष्म वनस्पतिकायिक, सूक्ष्म वनस्पतिकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, निगोद, बादर निगोद, बादर निगोदपर्याप्त और अपर्याप्त, सूक्ष्मनिगोद, सूक्ष्म निगोद पर्याप्त और अपर्याप्त, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर, बादरवनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंके जानना।

१ ता. प्रतौ अत्थि। असंखेज्जभागहाणी इति पाठः।

वणप्फदिपत्तेयपज्ज० असंखेज्जभागवड्ढी० भयणिज्जा।

§ ३६२. बीइंदिय० असंखेज्जभागहाणी अवट्ठाणं णियमा अत्थि। असंखेज्जभागवड्ढी संखेज्जभागवड्ढी संखेज्जभागहाणी संखेज्जगुणहाणी भयणिज्जा। एवं सव्वविगलिंदियाणं। पंचिं०अपज्ज०-तसअपज्ज० पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो।

§ ३६३. जोगाणुवादेण ओरालि०मिस्स० छव्वीसपयडीणं असंखेज्जभागवड्ढि हाणी अवट्ठाणं णियमा अत्थि। संखेज्जभागवड्ढि-हाणी संखेज्जगुणवड्ढि-हाणी भयणिज्जा। सम्मत्त०-सम्मामि० असंखेज्जभागहाणी णियमा अत्थि। सेसपदा भयणिज्जा। वेउव्वियमिस्स० सव्वपयडीणं सव्वपदाणि भयणिज्जाणि। एवमाहार०-आहारमिस्स०-अवगद०-अकसा० सुहुमसांपराय०-जहाक्खाद०-उवसमसम्मत्त-सासण०-सम्मामिच्छादिट्ठि त्ति। णवरि जत्थ जत्तियाणि पदाणि णादव्वाणि। कम्मइय० ओरा-

किन्तु इतनी विशेषता है कि चार स्थावरकाय बादर पर्याप्त और बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त जीवोंके असंख्यातभागवृद्धि भजनीय है।

§ ३६२. द्वीन्द्रियोंमें असंख्यातभागहानि और अवस्थान नियमसे है। असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानि भजनीय है। इसी प्रकार सब विकलेन्द्रिय जीवोंके जानना चाहिए। पंचेन्द्रिय अपर्याप्त और त्रस अपर्याप्त जीवोंमें पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंके समान भंग है।

**विशेषार्थ**—एकेन्द्रियोंमें २६ प्रकृतियोंके पाँच पद होते हैं। इनमेंसे तीन ध्रुव और दो भजनीय हैं। कुल भंग नौ होते हैं। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके चार पद होते हैं। जिनमें एक ध्रुव और तीन भजनीय पद हैं। कुल भंग २७ होते हैं। यह व्यवस्था एकेन्द्रियोंके अवान्तर भेदोंमें और पाँचों स्थावरकायोंमें भी बन जाती है। किन्तु इसका एक अपवाद है। बात यह है कि चारों स्थावरकाय पर्याप्तक और बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्तक इन पाँचोंमें २६ प्रकृतियोंका असंख्यातभागवृद्धि पद भी भजनीय है। इस प्रकार यहाँ भजनीय पद तीन हो जाते हैं, अतः कुल २७ भंग प्राप्त होते हैं। विकलेन्द्रियोंमें २६ प्रकृतियोंके छह पद होते हैं। जिनमें दो ध्रुव और चार भजनीय हैं। कुल भंग ८१ होते हैं। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका कथन एकेन्द्रियोंके समान है। अतः एकेन्द्रियोंके इन दो प्रकृतियोंकी अपेक्षा जो २७ भंग पहले बतलाये हैं वे ही यहाँ भी समझना चाहिये।

§ ३६३. योग मार्गणाके अनुवादसे औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थान नियमसे है। संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि, संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानि भजनीय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानि नियमसे है। शेष पद भजनीय हैं। वैक्रियिकमिश्रकाययोगियोंमें सब प्रकृतियोंके सब पद भजनीय हैं। इसी प्रकार आहारककाययोगी, आहारकमिश्रकाययोगी, अपगतवेदी, अकषायी, सूक्ष्मसांपरायिकसंयत, यथाख्यातसंयत, उपशमसम्यग्दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि जहाँ जितने पद हों उनके अनुसार जानना। कार्मणकाययोगियोंका भंग औदारिकमिश्रकाययोगियोंके समान है। किन्तु इतनी

**लियमिस्सभंगो। णवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त० सव्वपदा भयणिज्जा। एवमणाहारि०।**

**§ ३६४. णाणाणुवादेण आभिणि० सव्वपयडीणमसंखेज्जभागहाणी णियमा अत्थि। सेससव्वपदा भयणिज्जा। एवं सुद०-ओहि०-मणपज्ज०-संजद०-सामाइय-छेदो०-परिहार०-संजदासंजद०-ओहिदंस०-सुक्कले०-सम्मादिट्ठि०-वेदग०-खइय०दिट्ठि त्ति। असण्णि० छब्बीसं पयडीणमसंखेज्जभागवड्ढि-हाणी अवट्ठाणं णियमा अत्थि संखेज्जभागवड्ढि-हाणी संखेज्जगुणवड्ढि-हाणी भयणिज्जा। सम्मत्त-सम्मामि० असंखेज्जभागहाणी णियमा अत्थि। तिण्णिहाणी भयणिज्जा। एवमभवसिद्धिय०। णवरि सम्मत्त-सम्मामि० णत्थि। एवं णाणाजीवेहि भंगविचयाणुगमो समत्तो।**

विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सब पद भजनीय हैं। इसी प्रकार अनाहारकोंके जानना चाहिए।

**विशेषार्थ**—औदारिकमिश्रकाययोगमें २६ प्रकृतियोंके सात पद होते हैं। जिनमें तीन ध्रुव और चार भजनीय हैं। कुल भंग ८१ होते हैं। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके चार पद होते हैं। जिनमें एक ध्रुव और तीन भजनीय हैं। कुल भंग २७ होते हैं। वैक्रियिकमिश्रकाययोग यह सान्तर मार्गणा है, इसलिये इसमें सब पद भजनीय हैं। यहां २६ प्रकृतियोंके सात पद होते हैं, अतः इनके कुल भंग २१८६ होते हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके चार पद होते हैं, अतः इनके कुल भंग ८० होते हैं। 'वैक्रियिकमिश्रकाययोगके समान आहारककाययोग आदि मार्गणाओंमें भी कथन करना चाहिये।' इसका यह अभिप्राय है कि इन मार्गणाओंमेंसे जिसमें जितने पद हैं वे सब भजनीय हैं। यहां भंग भी तदनुसार जानना चाहिये। कार्मणकाययोगमें २६ प्रकृतियोंके सात पद हैं। जिनमें तीन ध्रुव और चार भजनीय हैं। कुल भंग ८१ होते हैं। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके चार पद हैं जो सब भजनीय हैं। कुल भंग ८० होते हैं। संसारमें कार्मणकाययोग और अनाहारकअवस्थाका सहचर सम्बन्ध है, अतः अनाहारकोंका कथन कार्मणकाययोगके समान है।

§ ३६४. ज्ञानमार्गणाके अनुवादसे आभिनिबोधिकज्ञानियोंमें सब प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानि नियमसे है। शेष सब पद भजनीय हैं। इसी प्रकार श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत, संयतासंयत, अवधिदर्शनी, शुक्ललेश्यावाले, सम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि और क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। असंज्ञियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थान नियमसे हैं। संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि, संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानि भजनीय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानि नियमसे है। तीन हानियां भजनीय हैं। इसीप्रकार अभव्योंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके सम्यक्त्व सम्यग्मिथ्यात्व नहीं है।

**विशेषार्थ**—आभिबोधिकज्ञानमें सब प्रकृतियोंके चार पद होते हैं जिनमें एक ध्रुव और तीन भजनीय हैं। कुल भंग २७ होते हैं। इसी प्रकार श्रुतज्ञान आदि मार्गणाओंमें भी जानना चाहिये। किन्तु पद विशेषोंको जानकर कथन करना चाहिये। असंज्ञियोंके २६ प्रकृतियोंके सात पद हैं। जिनमें तीन ध्रुव और चार भजनीय हैं। कुल भंग ८१ होते हैं। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके चार पद हैं जिनमें एक ध्रुव और तीन भजनीय हैं। कुल भंग २७ होते हैं। अभव्योंके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्ता नहीं है। शेष २६ प्रकृतियोंका कथन असंज्ञियोंके समान है।

इस प्रकार नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचयानुगम समाप्त हुआ।

§ ३६५. भागाभागाणुगमेण दुविहो णिद्देसो–ओघेण आदेसेण। ओघेण छब्बीसं पयडीणमसंखेज्जभागवड्ढिविहत्तिया सव्वजीवाणं केवडिओ भागो? असंखेज्जदिभागो। अवट्ठि० संखेज्जदिभागो। असंखेज्जभागहाणि० संखेज्जा भागा। सेसपदविह० अणंतिमभागो। सम्मत्त०-सम्मामि० असंखेज्जभागहाणि० सव्वजी० केव० भागो? असंखेज्जा भागा। सेसपदवि० असंखेज्जदिभागो। एवं तिरिक्ख एइंदिय-बादरेइंदिय०-बादरेइंदियपज्जत्तापज्जत्त सुहुमेइंदिय-सुहुमेइंदियपज्जत्तापज्जत्त-वणप्फदि०-बादरवणप्फदि-सुहुमवणप्फदिपज्जत्तापज्जत्त–णिगोद–बादरणिगोद–सुहुमणिगोदपज्जत्तापज्जत्त–कायजोगि०–ओरालि० ओरालि०मिस्स०–कम्मइय० णवुंस०–चत्तारिकसाय०–मदि–सुदअण्णाणि०–असंजद०–अचक्खु०-किण्ह–णील-काउ०-भवसि०-अभवसि०-मिच्छादि०-असण्णि–आहारि–अणाहारि त्ति। णवरि अभव० सम्मत्त०-सम्मामि० णत्थि।

§ ३६६. आदेसेण णेरइय० छब्बीसं पयडीणमसंखेज्जभागहाणिवि० संखेज्जा भागा। अवट्ठिदवि० संखेज्जदिभागो। सेसपदवि० असंखेज्जदिभागो। सम्मत्त-सम्मामि० ओघं। एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिं०तिरिक्ख-मणुस-मणुसअपज्ज०-देव-भवणादि जाव सहस्सार–सव्वविगलिंदिय–पंचिंदिय – पंचिं०पज्ज०–पंचिं०अपज्ज०–सव्वचत्तारिकाय-बादरवणप्फदिपत्तेयसरीरपज्जत्तापज्जत्त–तस-तसपज्ज०-तसअपज्ज०-पंचमण०-पंचवचि०-

§ ३६५. भागाभागानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेंसे ओघकी अपेक्षा २६ प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि स्थितिविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग हैं। असंख्यातवें भाग हैं। अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यातवें भाग हैं। असंख्यातभागहानि स्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यातबहुभाग हैं। तथा शेष पद स्थितिविभक्तिवाले जीव अनन्तवें भाग हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा असंख्यात भागहानि स्थितिविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भाग हैं? असंख्यात बहुभाग हैं। शेष पद स्थितिविभक्ति वाले जीव असंख्यातवें भाग हैं। इसी प्रकार तिर्यंच, एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त और अपर्याप्त, सूक्ष्म एकेन्द्रिय, सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त और अपर्याप्त, वनस्पतिकायिक, बादर वनस्पतिकायिक, सूक्ष्मवनस्पतिकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, निगोद, बादरनिगोद, बादर निगोद पर्याप्त और अपर्याप्त, सूक्ष्म निगोद, सूक्ष्म निगोद पर्याप्त और अपर्याप्त, काययोगी, औदारिककाययोगी, औदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, नपुंसकवेदवाले, क्रोधादि चारों कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचक्षुदर्शनी, कृष्णलेश्यावाले, नीललेश्यावाले, कापोत लेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी, आहारक और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अभव्योंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व नहीं है।

§ ३६६. आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी अपेक्षा असंख्यातभागहानि स्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यात बहुभाग हैं। अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यातवें भाग हैं। शेष पद स्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यातवें भाग हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका कथन ओघके समान है। इसी प्रकार सब नारकी सब पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार स्वर्गतकके देव, सब विकलेन्द्रिय पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त, सब चार स्थावरकाय, बादरवनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त और अपर्याप्त, त्रस, त्रस पर्याप्त, त्रस अपर्याप्त, पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी, वैक्रियिक-

वेउव्विय० –वेउव्वियमिस्स० –इत्थि० –पुरिस० –विहंग०– चक्खु०– तेउ०–पम्म०– सण्णि त्ति।

§ ३६७. मणुसपज्ज०-मणुसिणी०-सव्वट्ठ०देव० अट्ठावीसं पयडी० असंखेज्जभागहाणिवि० संखेज्जा भागा। सेसपदवि० संखेज्जदिभागो। एवमवगद०-मणपज्ज०-संजद०–सामाइय–छेदो०-परिहार०-सुहुमसांपरायसंजदे त्ति। आणदादि जाव अवराइद त्ति अट्ठावीसं पयडी० असंखेज्जभागहाणि० केव०? असंखेज्जा भागा। सेसपदवि० असंखेज्जदिभागो। एवमाभिणि०-सुद०-ओहि०-संजदासंजद०-ओहिदंस०-सुक्कले०-सम्मादि०-वेदग०-उवसम०-खइय०-सम्मामिच्छादिट्ठि त्ति। आहार-आहारमिस्स० णत्थि भागाभागं। एवमकसा० जहाक्खाद०–सासणसम्मादिट्ठि त्ति।

एवं भागाभागाणुगमो समत्तो।

§ ३६८. परिमाणाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघे० आदेसे०। ओघेण छव्वीसं पयडीणमसंखेज्जभागवड्ढि-हाणि-अवट्ठिदवि० केत्ति०? अणंता। सेसपद०वि० असंखेज्जा। णवरि मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असंखेज्जगुणहाणिवि० संखेज्जा। सम्मत्त-सम्मामि० सव्वपदवि० असंखेज्जा। एवं कायजोगीसु ओरालि०-णवुंसयवेद० चत्तारिक०-अचक्खुदंस०-भवसि०-आहारि त्ति।

काययोगी, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी, स्त्रीवेदवाले, पुरुषवेदवाले, विभंगज्ञानवाले, चक्षुदर्शनवाले, पीतलेश्यावाले, पद्मलेश्यावाले और संज्ञी जीवोंके जानना चाहिए।

§ ३६७. मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी अपेक्षा असंख्यातभागहानि स्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यात बहुभाग हैं। तथा शेष पद स्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यातवें भाग हैं। इसी प्रकार अपगतवेदवाले, मनःपर्ययज्ञानवाले, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत और सूक्ष्मसांपरायिकसंयत जीवोंके जानना चाहिए। आनतकल्पसे लेकर अपराजित तकके देवोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी अपेक्षा असंख्यातभागहानि स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं? असंख्यात बहुभाग हैं। तथा शेष पद स्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यातवें भाग हैं। इसी प्रकार आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, संयतासंयत, अवधिदर्शनवाले, शुक्ललेश्यावाले, सम्यग्दृष्टि, वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंके जानना चाहिए। आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगियोंमें भागाभाग नहीं है। इसी प्रकार अकषायी, यथाख्यातसंयत और सासादनसम्यग्दृष्टियोंके जानना चाहिए।

इस प्रकार भागाभागानुगम समाप्त हुआ।

§ ३६८. परिमाणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघनिर्देश और आदेशनिर्देश। उनमेंसे ओघकी अपेक्षा छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं? अनन्त हैं। तथा शेष पद स्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यात हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातगुणहानि स्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यात हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सब पद स्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यात हैं। इसी प्रकार काययोगी, औदारिककाययोगी, नपुंसकवेदवाले, क्रोधादि चारों कषायवाले, अचक्षुदर्शनवाले भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिए।

३६९. आदेसेण णेरइएसु अट्ठावीसं पयडीणं सव्वपदवि० असंखेज्जा। एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुसअपज्ज०-देव०-भवणादि जाव णवगेवज्ज०-सव्वविगलिंदिय-पंचि०अपज्ज-सव्वचत्तारिकाय-बादरवणप्फदिपत्तेय०सरीरपज्जत्तापज्जत्त-तसअपज्ज०-वेउव्विय०-वेउ०मिस्स०-विहंगणाणि त्ति।

§ ३७०. तिरिक्खेसु सव्वपयडीणं सव्वपदवि० ओघं। एवं सव्वएइंदिय-सव्ववणप्फदि०-सव्वणिगोद०-ओरालि०मिस्स-कम्मइय-मदि-सुदअण्णाण-असंजद०-किण्ह-णील-काउ०-मिच्छादि०-असण्णि-अणाहारि त्ति।

§ ३७१. मणुस्सेसु छव्वीसं पयडीणं सव्वपदवि० असंखेज्जा। णवरि असंखे०-गुणहाणि० अणंताणु०चउक्क० अवत्तव्व०विहत्तिया च संखेज्जा। सम्मत्त-सम्मामि० चत्तारिवड्ढि-अवट्ठिद-अवत्तव्ववि० संखेज्जा। चत्तारिहाणि० केत्तिया? असंखेज्जा। मणुसपज्ज०-मणुसिणी०-सव्वट्ठ०देवाणं अट्ठावीसपयडीणं सव्वपदा संखेज्जा। अणुद्दिसादि जाव अवराइदं ति अट्ठावीसपयडीणं सव्वपदा असंखेज्जा। णवरि सम्मत्त० संखे० गुणहाणिवि० संखेज्जा।

§ ३७२. पंचिंदिय-पंचि०पज्ज० अट्ठावीसं पयडीणं सव्वपदवि० के०? असंखेज्जा। णवरि बावीसं पयडीणमसंखेज्जगुणहाणिवि० संखेज्जा। एवं तस-तसपज्ज०-पंचमण०-

§ ३६९. आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी सब पद स्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यात हैं। इसी प्रकार सब नारकी सब पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देव, सब विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त, सब पृथिवी आदि चार स्थावरकाय, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त और अपर्याप्त, त्रस अपर्याप्त, वैक्रियिककाययोगी, वैक्रियिकमिश्रकाययोगी और विभंगज्ञानी जीवोंके जानना चाहिए।

§ ३७०. तिर्यंचोंमें सब प्रकृतियोंका सब पद स्थितिविभक्तिवाले जीव ओघके समान हैं। इसी प्रकार सब एकेन्द्रिय, सब वनस्पतिकायिक, सब निगोद, औदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, कृष्णलेश्यावाले, नीललेश्यावाले, कापोतलेश्यावाले, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए।

§ ३७१. मनुष्योंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी सब पद स्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यात हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणहानि स्थितिविभक्तिवाले और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अवक्तव्यस्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यात हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धि, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यात हैं। चार हानि स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। मनुष्यपर्याप्त, मनुष्यनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी सब पद स्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यात हैं। अनुदिशसे लेकर अपराजिततकके देवोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी सब पद स्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यात हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वकी संख्यातगुणहानि स्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यात हैं।

§ ३७२. पंचेन्द्रिय और पंचेन्द्रिय पर्याप्तकोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी सब पद स्थितिविभक्तिवाले जीव कितने हैं? असंख्यात हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि बाईस प्रकृतियोंकी असंख्यात

**पंचवचि०-इत्थि-पुरिस०-चक्खु०-सण्णि त्ति। आहार०-आहारमिस्स० सगसव्वपयडी० असंखेज्जभागहाणिवि० संखेज्जा। एवमकसा० जहाक्खादसंजदे त्ति। अवगद० सग-सव्वपयडी० सव्वपदवि० संखेज्जा। एवं मणपज्जव०-संजद०-सामाइय-छेदो०-परिहार०-सुहुमसांपरायसंजदे त्ति।**

**§ ३७३. आभिणि०-सुद०-ओहि० अट्ठावीसं पयडी० सव्वपदवि० असंखेज्जा। णवरि चउवीसं पयडीणं असंखेज्जगुणहाणिवि० संखेज्जा। एवमोहिदंस०-सम्मादिट्ठि त्ति। संजदासंजद० अट्ठावीसं पयडीणं सव्वपदवि० असंखेज्जा। णवरि दंसणतिय० संखेज्जगुणहाणि० असंखेज्जगुणहाणिवि० संखेज्जा। एवं वेदग०। णवरि सव्वपय० संखेज्जगुणहाणि० असंखेज्जा। सुक्के० सव्वपयडीणं सव्वपदवि० असंखेज्जा। णवरि बावीसं पयडीणमसंखेज्जगुणहाणिवि० संखेज्जा। तेउ-पम्म० अट्ठावीसं पयडीणं सव्वपदवि० असंखेज्जा। णवरि मिच्छत्त० असंखेज्जगुणहाणिवि० संखेज्जा। खइय० एक्क-वीसपय० असंखेज्जभागहा० असंखेज्जा। सेसपदवि० संखेज्जा। उवसमसम्मादिट्ठि०-सासण०-सम्मामि० सगपदवि० असंखेज्जा। अभव० छब्बीसं पयडीणमोघभंगो। णवरि असंखेज्जगुणहाणी णत्थि। एवं परिमाणाणुगमो समत्तो।**

गुणहानि स्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यात हैं। इसी प्रकार त्रस, त्रस पर्याप्त, पाँचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी, स्त्रीवेदवाले, पुरुषवेदवाले, चक्षुदर्शनवाले और संज्ञी जीवोंके जानना चाहिए। आहा-रककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंमें अपनी सब प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानि स्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यात हैं। इसी प्रकार अकषायी और यथाख्यातसंयत जीवोंके जानना चाहिए। अपगतवेदियोंमें अपनी सब प्रकृतियोंकी सब पदस्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यात हैं। इसी प्रकार मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत और सूक्ष्मसांपरायिकसंयत जीवोंके जानना चाहिए।

§ ३७३. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी सब पदस्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यात हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि चौबीस प्रकृतियोंकी असंख्यातगुणहानि स्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यात हैं। इसी प्रकार अवधिदर्शनवाले और सम्यग्दृष्टियोंके जानना चाहिए। संयतासंयतोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी सब पदस्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यात हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि तीन दर्शनमोहनीयकी संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानि स्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यात हैं। इसी प्रकार वेदकसम्यग्दृष्टियोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि सब पदोंकी संख्यातगुणहानिस्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यात हैं। शुक्ललेश्यावालोंमें सब प्रकृतियोंकी सब पदस्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यात हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि बाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातगुणहानि स्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यात हैं। पीत और पद्मलेश्यावालोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंके सब पदस्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यात हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानि स्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यात हैं। क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें इक्कीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिस्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यात हैं। तथा शेष पद स्थिति विभक्तिवाले जीव संख्यात हैं। उपशमसम्यग्दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंमें अपने पदस्थितिविभक्तिवाले जीव असंख्यात हैं। अभव्योंमें छब्बीस प्रकृतियोंका भंग ओघके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणहानि नहीं है। इस प्रकार परिमाणानुगम समाप्त हुआ।

§ ३७४. खेत्ताणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघे० आदेसे० । ओघेण छव्वीसं पयडीणमसंखेज्जभागवड्ढि-हाणि-अवट्ठिदाणि के० खेत्ते ? सव्वलोगे । सेसपदवि० लोग० असंखेज्जदिभागे । सम्मत्त०-सम्मामि० सव्वपदवि० लोग० असंखेज्जदिभागे । एवं तिरिक्ख-सव्वेइंदिय पुढवि०-बादरपुढवि०-बादरपुढविअपज्ज०-आउ० बादरआउ०-बादरआउअपज्ज०-तेउ०-बादरतेउ०-बादरतेउअपज्ज०-वाउ०-बादरवाउ०-बादरवाउअपज्ज०-सव्ववणप्फदि०-सव्वणिगोद-कायजोगि-ओरालिय-ओरालियमिस्स-कम्मइय०-णवुंस०-चत्तारिकसाय-मदि-सुदअण्णाण०-असंजद०-अचक्खु०-किण्ह-णील-काउ०-भवसिद्धि०-अभवसि०-मिच्छादि०-असण्णि०-आहारि-अणाहारि त्ति । णवरि अभव० सम्म०-सम्मामि० णत्थि । सेस-मग्गणासु अट्ठावीसं पयडीणं सव्वपदवि० लोगस्स असंखेज्जभागे । णवरि छव्वीसं पय० असंखेज्जभागवड्ढि-हाणि-अवट्ठिदवि० बादरवाउकाइयपज्जत्ता लोगस्स संखेज्जदिभागे ।

एवं खेत्ताणुगमो समत्तो ।

§ ३७४. क्षेत्रानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है ओघ और आदेश। ओघकी अपेक्षा छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका क्षेत्र कितना है ? सब लोक है । तथा शेष पदस्थितिविभक्तियोंका क्षेत्र लोकका असंख्यातवां भाग है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सब पदस्थितिविभक्तियोंका क्षेत्र लोकका असंख्यातवाँ भाग है । इसी प्रकार तिर्यंच, सब एकेन्द्रिय, पृथिवीकायिक, बादरपृथिवीकायिक, बादरपृथिवीकायिक अपर्याप्त, जलकायिक, बादरजलकायिक, बादरजलकायिक अपर्याप्त, अग्निकायिक, बादर अग्निकायिक, बादरअग्निकायिक अपर्याप्त, वायुकायिक, बादरवायुकायिक, बादरवायुकायिक अपर्याप्त, सब वनस्पति, सब निगोद, काययोगी, औदारिककाययोगी, औदारिकमिश्रकाययोगी, कार्मणकाययोगी, नपुंसकवेदवाले, क्रोधादि चारों कषायवाले, मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी, असंयत, अचक्षुदर्शनवाले, कृष्णलेश्यावाले, नीललेश्यावाले, कापोतलेश्यावाले, भव्य, अभव्य, मिथ्यादृष्टि, असंज्ञी, आहारक और अनाहारक जीवोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अभव्योंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व नहीं हैं। शेष मार्गणाओंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंके सब पदस्थितिविभक्तिवाले जीवोंका क्षेत्र लोकका असंख्यातवाँ भाग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितस्थितिविभक्तिवाले बादरवायुकायिक पर्याप्त जीवोंका क्षेत्र लोकका संख्यातवाँ भाग है।

**विशेषार्थ**—ओघसे छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितपदवाले जीवोंका प्रमाण अनन्त है और वे सब लोकमें पाये जाते हैं, क्योंकि इन पदोंको एकेन्द्रियादिक सब जीव प्राप्त होते हैं अतः इनका क्षेत्र सब लोक कहा। किन्तु शेष पदवाले जीव स्वल्प हैं अतः उनका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्तावाले जीव भी थोड़े होते हैं अतः इनका सब पदोंकी अपेक्षा लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र कहा। तिर्यंच आदि और जितनी मार्गणाओंका सब लोक क्षेत्र है उनमें यह ओघ प्ररूपणा बन जाती है अतः उनके कथनको ओघके समान कहा। किन्तु जिनमार्गणाओंका क्षेत्र सब लोक नहीं है किन्तु लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है उनमें सब पदोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा। हाँ वायुकायिक पर्याप्त जीवोंका क्षेत्र लोकके संख्यातवें भागप्रमाण है। और इनमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितपदवाले जीव बहुतायतसे पाये जाते हैं इसलिये पर्याप्त वायुकायिकोंमें इन पदवालोंका क्षेत्र लोकके संख्यातवें भागप्रमाण कहा। इस प्रकार क्षेत्रानुगम समाप्त हुआ।

§ ३७५. **पोसणाणु० दुविहो णिद्देसो—ओघे० आदे० । ओघेण छब्बीसं पयडीणं असंखेज्जभागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० केव० खेत्तं पो० ? सव्वलोगो । दोवड्ढि०-दोहाणिवि० केव० पो० ? लोग० असंखेज्जदिभागो अट्ठचो० देसूणा सव्वलोगो वा । असंखेज्जगुणहाणिवि० खेत्तभंगो । णवरि अणंताणु०चउक्क० असंखे०गुणहाणि अवत्तव्व० अट्ठचोद्द० देसूणा । इत्थि पुरिस० दोवड्ढि० लोग० असंखेज्जदिभागो अट्ठ-बारहचोद्दसभागा वा देसूणा । एइंदिएसु विगलिंदियपंचिंदिएसु कदोववादेसु संखे०गुणवड्ढिविहत्तियाणं विगलिंदियसंतादो संखेज्जभागहीणट्ठिदिसंतकम्मियएइंदिएसु विगलिंदिएसुप्पण्णेसु संखे०भागवड्ढिविहत्तियाणं च सव्वलोगो किण्ण लब्भदे ? ण, एत्थ उववादपदविवक्खाभावादो । सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं चत्तारिवड्ढि-अवट्ठिद-अवत्तव्व० के० खे० पो० ? लो० असंखे०भागो अट्ठचोद्द० देसूणा । चत्तारिहाणि० के० खे० पो० ? लो० असं०भागो अट्ठचोद्द० देसूणा सव्वलोगो वा । एवं कायजोगि०-ओरालिय०-णवुंस०-चत्तारिक०-असंजद०-अचक्खु०-भवसि०-आहारि त्ति । णवरि ओरालियकायजोगीसु छव्वीसं पयडीणं दोवड्ढि-दोहाणीणं लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा । अणंताणु०चउक्क०**

§ ३७५. स्पर्शनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघसे और आदेशसे। ओघकी अपेक्षा छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? सब लोकका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानि स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग क्षेत्रका स्पर्शन किया है। तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग क्षेत्रका और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असंख्यातगुणहानिस्थितिविभक्तिवालोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिका स्पर्शन त्रस नालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग है। तथा स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी दो वृद्धियोंका स्पर्शन लोकका असंख्यातवां भाग और त्रस नालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और बारह भाग है।

**शंका**—एकेन्द्रियोंके विकलेन्द्रिय और पंचेन्द्रियोंमें उत्पन्न होने पर संख्यातगुणवृद्धिस्थितिविभक्तिवालोंका और विकलेन्द्रियोंके सत्त्वसे संख्यातभागहानि स्थितिसत्कर्मवाले एकेन्द्रियोंके विकलेन्द्रियोंमें उत्पन्न होने पर संख्यातभागवृद्धिस्थितिविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्शन सब लोक क्यों नहीं प्राप्त होता है ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि यहां उपपादपदकी विवक्षा नहीं है।

सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धि, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग और त्रस नालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग क्षेत्रका स्पर्शन किया है। चार हानि स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग, त्रस नालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार काययोगी, औदारिककाययोगी, नपुंसकवेदवाले, क्रोधादि चारों कषायवाले, असंयत, अचक्षुदर्शनी, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि औदारिककाययोगियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी दो वृद्धि और दो हानियोंका स्पर्शन लोकका असंख्यातवां भाग और सब लोक है। तथा अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानि

**असंखे०गुणहाणि-अवत्तव्वाणं इत्थि-पुरिस० दोवड्ढीणं च लोग० असंखे०भागो। सम्मत्त-सम्मामि० चत्तारिवड्ढि-अवट्ठि०अवत्तव्व० लोग० असं०भागो। चत्तारिहाणि० लो० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। ओरालियम्मि० वुत्तविसेसा चेव णवुंसयवेदे। णवरि इत्थि पुरिस० दोवड्ढीणं लोगस्स असंखे०भागो छचोद्दसभागा वा देसूणा। असंजदेसु एक्कवीसपयडीणमसंखे०गुणहाणी णत्थि। एत्तिओ चेव विसेसो।**

और अवक्तव्यका तथा स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी दो वृद्धियोंका स्पर्शन लोकका असंख्यातवाँ भाग है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धि, अवस्थित और अवक्तव्यका स्पर्शन लोकका असंख्यातवाँ भाग है। तथा चार हानियोंका स्पर्शन लोकका असंख्यातवाँ भाग और सब लोक है। औदारिककाययोगमें जो विशेषता कही है वह नपुंसकवेदमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी दो वृद्धियोंका स्पर्शन लोकका असंख्यातवाँ भाग और त्रस नालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भाग है। असंयतोंमें इक्कीस प्रकृतियोंकी असंख्यातगुणहानि नहीं है। बस इतनी विशेषता है।

**विशेषार्थ** - छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थित पद एकेन्द्रिय आदि सभी जीवोंके सम्भव है, इसलिए इनका सर्वलोकप्रमाण स्पर्शन कहा है। संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानि स्वस्थानकी अपेक्षा द्वीन्द्रिय आदिकके तथा संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानि स्वस्थानकी अपेक्षा संज्ञी पञ्चेन्द्रियके सम्भव है और इनका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है, इसलिए इस अपेक्षासे यह उक्त माप कहा है। तथा संज्ञी पञ्चेन्द्रियके स्वस्थान विहार आदिके समय भी ये वृद्धियाँ और हानियाँ सम्भव हैं, इसलिए इस अपेक्षासे यह स्पर्शन कुछ कम आठ बटे चौदह राजु प्रमाण कहा है। तथा जो एकेन्द्रिय आदि द्वीन्द्रिय आदिकमें उत्पन्न होते हैं उनके परस्थानकी अपेक्षा ये वृद्धियाँ और हानियाँ सम्भव हैं और ऐसे जीवोंका स्पर्शन सर्वलोकप्रमाण है, इसलिए इस अपेक्षासे इनका सर्वलोकप्रमाण स्पर्शन कहा है। इन प्रकृतियोंकी असंख्यातगुणहानिका स्पर्शन क्षेत्रके समान है यह स्पष्ट ही है। मात्र यहाँ उक्त प्रकृतियोंमेंसे कुछ प्रकृतियोंके सम्बन्धमें कुछ विशेषता है। यथा—अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यपद देवोंके भी विहारादिके समय सम्भव है, इसलिए इनके इन दो पदोंकी अपेक्षा स्पर्शन कुछ कम आठ बटे चौदह राजुप्रमाण कहा है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धि जिन जीवोंके होती है उनका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण होनेसे यह उक्त प्रमाण कहा है। देवोंके विहारादि पदकी अपेक्षा यह कुछ कम आठ बटे चौदह राजुप्रमाण होनेसे उक्त प्रमाण कहा है। तथा नीचे छह और ऊपर छह इस प्रकार कुछ कम बारह बटे चौदह राजु प्रमाण प्राप्त होनेसे यह उक्त प्रमाण कहा है। यहाँ उपपादपदकी विवक्षा होने पर इन वृद्धियोंका सब लोकप्रमाण स्पर्शन बन सकता है पर उसकी विवक्षा नहीं होनेसे नहीं कहा है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धियाँ, अवस्थित और अवक्तव्यपद जो मिथ्यादृष्टि सम्यग्दृष्टि होते हैं उनके सम्भव हैं और इस अपेक्षासे वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन कुछ कम आठ बटे चौदह राजुप्रमाण प्राप्त होनेसे यह उक्त प्रमाण कहा है। तथा इनकी चार हानियाँ सबके सम्भव हैं, इसलिए इनका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण, विहारादिकी अपेक्षा कुछ कम आठ बटे चौदह राजुप्रमाण और मारणान्तिक व उपपादपदकी अपेक्षा सर्वलोकप्रमाण कहा है। यहाँ मूलमें काययोगी आदि अन्य जितनी मार्गणाएं गिनाई हैं उनमें यह ओघप्ररूपणा अविकल बन जाती है, इसलिए उनके कथनको ओघके समान कहा है। मात्र औदारिककाययोग नारकियों और देवोंके

**§ ३७६. आदेसेण णेरइएसु छब्बीसं पयडीणं तिण्णिवड्ढि-तिण्णिहाणि-अवट्ठिद० के० ? लो असंखे०भागो छचोद्द० देसूणा। सम्मत्त-सम्मामि० चत्तारिहाणि० लोग० असंखे०भागो छचोद्दस० देसूणा। चत्तारिवड्ढि-अवट्ठि०-अवत्तव्व० अणंताणु०चउक्क० असंखे०गुणहाणि-अवत्तव्व० के० ? लोग० असंखे०भागो। विदियादि जाव सत्तमि त्ति एवं चेव। णवरि अप्पणो रज्जू[1] णायव्वा। पढमपु०वि० खेत्तभंगो।**

नहीं होता, इसलिए इसमें छब्बीस प्रकृतियोंकी दो वृद्धियों और दो हानियोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सब लोकप्रमाण कहा है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यपदका तथा स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी दो वृद्धियोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धियाँ, अवस्थित और अवक्तव्यपदका स्पर्शन भी लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। तथा चार हानियोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सब लोक प्रमाण कहा है। यहाँ औदारिककाययोगमें जो विशेषता कही है वह नपुंसकवेदमें अविकल बन जाती है। यद्यपि नपुंसकवेद नारकियोंके होता है पर उससे उक्त विशेषतामें कोई अन्तर नहीं पड़ता है। हाँ स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी दो वृद्धियोंके स्पर्शनमें अन्तर आ जाता है, क्योंकि जो नारकी तिर्यञ्चों और मनुष्योंमें मारणान्तिक समुद्घात करते हैं उनके भी स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी दो वृद्धियाँ सम्भव है, अतः नपुंसकोंमें इन दो वेदोंकी दो वृद्धियोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और कुछ कम छह बटे चौदह राजुप्रमाण कहा है। इक्कीस प्रकृतियोंकी असंख्यातगुणहानि चारित्रमोहकी क्षपणाके समय होती है, इसलिए यहाँ अशंयतोंमें इसका निषेध किया है।

§ ३७६. आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार हानिस्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। चार वृद्धि, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने तथा अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवीतक इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अपने अपने राजु जानना चाहिए। तथा पहली पृथिवीमें स्पर्शन क्षेत्रके समान है।

**विशेषार्थ** – सामान्यसे नारकियोंके स्पर्शनको ध्यानमें रखकर यहाँ छब्बीस प्रकृतियोंकी तीन वृद्धियों, तीन हानियों और अवस्थितपदका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और कुछ कम छह बटे चौदह राजुप्रमाण कहा है। इसी प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार हानियोंका उक्त स्पर्शन घटित कर लेना चाहिए। पर इनकी चार वृद्धियों, अवस्थित और अवक्तव्यपद तथा अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यपद मारणान्तिक समुद्घात और उपपादपदके समय सम्भव न होनेसे यह स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। द्वितीयादि पृथिवियोंमें यह स्पर्शन इसी प्रकार घटित कर लेना चाहिए। मात्र कुछ कम छह बटे चौदह राजुप्रमाण स्पर्शनके स्थानमें अपना अपना स्पर्शन कहना चाहिए। पहली पृथिवीमें स्पर्शन क्षेत्रके समान है यह स्पष्ट ही है।

[1] ता. प्रतौ अप्पणा रज्जू इति पाठः।

§ ३७७. तिरिक्खेसु छब्बीसं पयडीणं असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० ओघं। दोवड्ढि-दोहाणि० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। णवरि अणंताणु०चउक्क० असंखे०गुणहाणि-अवत्तव्व० इत्थि-पुरिस० दोवड्ढि० लोग० असंखे०भागो। सम्मत्त-सम्मामि० चत्तारिहाणि० लो० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। सेसपदाणं खेत्तभंगो। पंचि०तिरिक्खतियम्मि छब्बीसं पयडीणं सव्वपदाणं लो० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। णवरि अणंताणु०चउक्क० असंखे०गुणहाणि-अवत्तव्व० इत्थि-पुरिस० तिण्णि वड्ढि-अवट्ठि[1] लो० असंखे०भागो। सम्मत्त-सम्मामि० तिरिक्खोघं। पंचि०तिरि० अपज्ज०—मणुसअपज्ज० अट्ठावीसं पयडीणं सव्वपदवि० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। णवरि इत्थि-पुरिस० तिण्णिवड्ढि—अवट्ठि० लो० असंखे०भागो। एवं पंचि०अपज्ज०—तसअपज्जत्ताणं। मणुसतियम्मि छब्बीसं पयडीणं सव्वपदवि० पंचिंदियतिरिक्खभंगो। णवरि असंखे०गुणहाणि० लोग० असंखे०भागो। सम्मत्त-सम्मामि० पंचि०तिरिक्खभंगो।

§ ३७७. तिर्यंचोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि असंख्यातभागहानि और अवस्थितका भंग ओघके समान है। दो वृद्धि और दो हानि स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने तथा स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी दो वृद्धि स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार हानिस्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग क्षेत्रका और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंका भंग क्षेत्रके समान है। तीन प्रकारके पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंमें छब्बीस प्रकृतियोंके सब पदोंका स्पर्शन लोकका असंख्यातवां भाग और सब लोक है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका स्पर्शन तथा स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी तीन वृद्धि और अवस्थितका स्पर्शन लोकका असंख्यातवाँ भाग है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा स्पर्शन सामान्य तिर्यंचोंके समान है। पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंके सब पद स्थितिविभक्तिवालोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सब लोकका स्पर्शन किया है। किन्तु इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी तीन वृद्धि और अवस्थितस्थितिविभक्तिका स्पर्शन लोकका असंख्यातवाँ भाग है। इसी प्रकार पंचेन्द्रिय अपर्याप्त और त्रस अपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए। तीन प्रकारके मनुष्योंमें छब्बीस प्रकृतियोंके सब पदोंका भंग पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणहानिका स्पर्शन लोकका असंख्यातवां भाग है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंके समान है।

**विशेषार्थ**—तिर्यञ्चोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितपद सब एकेन्द्रियादि जीवोंके सम्भव होनेसे इनका स्पर्शन ओघके समान सब लोकप्रमाण कहा है। इन प्रकृतियोंकी दो वृद्धियाँ और दो हानियाँ ऐसे जीवोंके ही सम्भव हैं जिनका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन सब लोकप्रमाण होता है, अतः यह उक्तप्रमाण कहा है। मात्र अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यपदका तथा

1 आ. प्रतौ० तिण्णिवड्ढि-तिण्णिहाणि अवट्ठि० इति पाठः।

§ ३७८ देवेसु मिच्छत्त-बारसक०-सत्तणोक० सव्वपदवि० लो० असंखे०भागो अट्ठ-णवचोद्द० देसूणा। अणंताणु०चउक्क० असंखे०गुणहाणि-अवत्तव्व० इत्थि-पुरिस० तिण्णिवड्ढि-अवट्ठि० सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं चत्तारिवड्ढि-अवट्ठि०-अवत्त० लो० असंखे०भागो अट्ठचोद्द० देसूणा। सेसपदवि० अट्ठ-णवचोद्द० देसूणा। एवं भवणादि जाव सहस्सार त्ति। णवरि सगपोसणं वत्तव्वं। आणदादि जाव अच्चुद त्ति अट्ठावीसं पयडीणं सव्वपदवि० लोग० असंखे०भागो छचोद्दस० देसूणा। उवरि खेत्तभंगो।

स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी दो वृद्धियोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार हानियाँ उन सब जीवोंके सम्भव है जो इन प्रकृतियोंकी सत्ताके साथ एकेन्द्रियादिमें उत्पन्न होते है। यतः इनका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन सब लोकप्रमाण है, अतः यह स्पर्शन उक्त प्रमाण कहा है। यहाँ इन दो प्रकृतियोंके शेष पदोंकी अपेक्षा स्पर्शन क्षेत्रके समान है यह स्पष्ट ही है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें छब्बीस प्रकृतियोंके सम्भव सब पदोंका स्वामित्व ओघके समान होनेसे उनकी अपेक्षा स्पर्शन लोकके असंख्यातवे भागप्रमाण और सब लोकप्रमाण कहा है। मात्र अनन्तानुबन्धीचतुष्क, स्त्रीवेद और पुरुषवेद इसके अपवाद है, इसलिए इन प्रकृतियोंके जिन पदोंके स्पर्शनमें विशेषता है उसे अलगसे स्पष्ट किया है। इनमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सब पदोंका स्पर्शन सामान्य तिर्यञ्चोंके समान प्राप्त होनेसे वह उनके समान कहा है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी तीन वृद्धि और अवस्थितपदके स्पर्शनमें ही विशेषता है। शेष स्पर्शन इन दोनों मार्गणाओंके स्पर्शनके समान ही है। इसी प्रकार पंचेन्द्रिय अपर्याप्त और त्रस अपर्याप्त जीवोंमें जानना चाहिए। एकेन्द्रिय आदिमें मारणान्तिक समुद्घात करनेवाले इन जीवोंके या जो एकेन्द्रिय आदि जीव मर कर इनमें उत्पन्न होते है उनके स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी तीन वृद्धियाँ और अवस्थित पद नहीं होते, इसलिए इनमें इन प्रकृतियोंके उक्त पदोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवे भागप्रमाण कहा है। मनुष्यत्रिकमें और सब स्पर्शन तो पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान बन जाता है। मात्र इनमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी भी असंख्यातगुणहानि सम्भव है, इसलिए इनमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातगुणहानिका स्पर्शन लोकके असंख्यातवे भागप्रमाण कहा है।

§ ३७८. देवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और सात नोकषायोंके सब पद स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम नौ भाग क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका, स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी तीन वृद्धि और अवस्थितका तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धि, अवस्थित और अवक्तव्यका स्पर्शन लोकका असंख्यातवाँ भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग है। तथा शेष पदोंका स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम नौ भाग है। इसी प्रकार भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्प तक जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि अपना अपना स्पर्शन कहना चाहिए। आनत कल्पसे लेकर अच्युत कल्प तकके देवोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंके सब पद स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसके ऊपर स्पर्शनका भंग क्षेत्रके समान है।

**विशेषार्थ**—देवोंमे अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यपद, स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी तीन वृद्धियाँ और अवस्थितपद तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी

**§ ३७९ इंदियाणु० सव्वेइंदियाणं छव्वीसं पयडीणमसंखे० भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० के० खेत्तं पोसिदं ? सव्वलोगो । दोहाणि० लोगस्स असंखे०भागो सव्वलोगो वा । सम्मत्त-सम्मामि० चत्तारिहाणि० लो० असंखे०भागो सव्वलोगो वा । एवं पुढवि०-बादरपुढवि बादरपुढविअपज्ज०-सुहुमपुढवि०-सुहुमपुढविपज्जत्तापज्जत्त-आउ०-बादरआउ०-बादरआउअपज्ज०-सुहुमआउ०-सुहुमआउपज्जत्तापज्जत्त-तेउ०-बादरतेउ०-बादरतेउअपज्ज०-सुहुमतेउ०-सुहुमतेउपज्जत्तापज्जत्त-वाउ-बादरवाउ० बादरवाउअपज्ज० सुहुमवाउ०-सुहुमवाउपज्जत्तापज्जत्त-सव्ववणप्फदि सव्वणिगोदा त्ति ।**

**§ ३८० सव्वविगलिंदियाणं छव्वीसं पयडीणमसंखे०भागवड्ढि-हाणि-संखे०भाग-**

चार वृद्धियाँ, अवस्थित और अवक्तव्य पद यथासम्भव मारणान्तिक समुद्घातके समय और एकेन्द्रियोंमें मारणान्तिक समुद्घातके समय नहीं होते, अतः इनकी अपेक्षा स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और कुछ कम आठ बटे चौदह राजुप्रमाण कहा है । तथा शेष स्पर्शन सामान्य देवोंके स्पर्शनके समान कहा है। भवनवासी आदिमें सामान्य देवोंके समान स्पर्शन घटित हो जाता है, इसलिए वह उनके समान कहा है। मात्र जिसका जो स्पर्शन हो वह लेना चाहिए। आगे आनतादिकमें उनके स्पर्शनको ध्यानमें रखकर स्पर्शन कहा है, क्योंकि वहाँ जिन प्रकृतियोंके जो पद सम्भव है उनका उक्त प्रमाण स्पर्शन प्राप्त होनेमें कोई बाधा नहीं आती ।

§ ३७९ इन्द्रियमार्गणाके अनुवादसे सब एकेन्द्रियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितस्थितिविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? सब लोकका स्पर्शन किया है । दो हानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सब लोकका स्पर्शन किया है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार हानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सब लोकका स्पर्शन किया है । इसी प्रकार पृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म पृथिवीकायिक, सूक्ष्म पृथिवीकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, जलकायिक, बादर जलकायिक,बादर जलकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म जलकायिक, सूक्ष्म जलकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, अग्निकायिक, बादर अग्निकायिक, बादर अग्निकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म अग्निकायिक, सूक्ष्म अग्निकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, वायुकायिक,बादर वायुकायिक,बादर वायुकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म वायुकायिक, सूक्ष्म वायुकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, सब वनस्पतिकायिक और सब निगोद जीवोंके जानना चाहिए ।

**विशेषार्थ**—एकेन्द्रियोंमें सबके छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थित पद सम्भव हैं, इसलिए इनकी अपेक्षा सब लोक प्रमाण स्पर्शन कहा है । दो हानियाँ ऐसे एकेन्द्रियोंके ही सम्भव हैं जो संज्ञी पञ्चेन्द्रियोंमें इन हानियोंके योग्य स्थितिकाण्डकोंको प्रारम्भ कर और मरकर एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होते हैं । यतः ऐसे जीवोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन सब लोकप्रमाण है, अतः इन पदोंकी अपेक्षा उक्त प्रमाण स्पर्शन कहा है । इसी प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार हानियोंकी अपेक्षा स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सब लोकप्रमाण घटित कर लेना चाहिए । यहाँ पृथिवीकायिक आदि अन्य जितनी मार्गणाएं गिनाई हैं उनमें यह व्यवस्था बन जाती है, अतः उनकी प्ररूपणा एकेन्द्रियोंके समान कही है ।

§ ३८० सब विकलेन्द्रियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि,

**वड्डि-हाणि संखे०गुणहाणि-अवट्ठि० लोग असंखे०भागो सव्वलोगो वा। णवरि इत्थि-पुरिस० दोवड्डि-अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो। सम्मत्त-सम्मामि० चदुण्णं हाणीण-मोघं।**

**§ ३८१. पंचिंदिय-पंचिं०पज्ज० मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० सव्वपदवि० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दसभागा वा देसूणा सव्वलोगो वा। असंखे०गुणहाणि० खेत्तभंगो। णवरि अणंताणु० असंखे०गुणहाणि-अवत्तव्व० अट्ठचोद्दस० देसूणा। इत्थि-पुरिस० तिण्णिवड्डि-अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-बारहचोद्द० देसूणा। सम्मत्त-सम्मामि० चत्तारिवड्डि-अवट्ठि०-अवत्तव्व० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस० देसूणा। चत्तारि-हाणि० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्द० देसूणा सव्वलोगो वा। एवं तस-तसपज्ज०-पंचमण०-पंचवचि०-चक्खुदंस०-सण्णि त्ति।**

संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि और अवस्थित स्थितिविभक्तिवालोंने लोकके असंख्यातवे भाग और सब लोकका स्पर्शन किया है। किन्तु इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी दो वृद्धि और अवस्थितका स्पर्शन लोकका असंख्यातवां भाग है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार हानियोंका स्पर्शन ओघके समान है।

**विशेषार्थ**—विकलेन्द्रियोंका जो स्पर्शन है वह इनमें छब्बीस प्रकृतियोंकी दो वृद्धि, तीन हानि और अवस्थान पदमें भी सम्भव है, इसलिए यह उक्त प्रमाण कहा है। मात्र स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी दो वृद्धि और अवस्थान पदके समय नपुंसकवेदियोंमें मारणान्तिक समुद्धात सम्भव नहीं है तथा विकलत्रयोंमें उपपादपद भी सम्भव नहीं है, इसलिए इनकी अपेक्षा स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। इनमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके चार पदोंकी अपेक्षा स्पर्शन ओघके समान है यह स्पष्ट ही है।

§ ३८१ पंचेन्द्रिय और पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके सब पदस्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग और सब लोक प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। तथा असंख्यातगुणहानिका भंग क्षेत्रके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यात गुणहानि और अवक्तव्यका स्पर्शन त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण है। तथा स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी तीन वृद्धि और अवस्थितका स्पर्शन लोकका असंख्यातवां भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम बारह भाग है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धि, अवस्थित और अवक्तव्यस्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग क्षेत्रका स्पर्शन किया है। तथा चार हानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग, त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार त्रस, त्रसपर्याप्त, पांचों मनोयोगी, पाँचों वचनयोगी, चक्षुदर्शनवाले और संज्ञी जीवोंके जानना चाहिए।

**विशेषार्थ**—पंचेन्द्रियद्विकका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण, कुछकम आठबटे चौदह राजुप्रमाण और सब लोक प्रमाण है। वह यहां छब्बीस प्रकृतियोंके सब पदोंका सम्भव होनेसे उक्त प्रमाण कहा है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कके सिवा इन प्रकृतियोंकी असंख्यातगुणहानि क्षपणाके समय होती है इसलिए इस अपेक्षा स्पर्शन क्षेत्रके समान कहा है यह स्पष्ट ही है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यपद विहारादिके समय भी सम्भव हैं,

**§ ३८२. बादरपुढविपज्ज० अट्ठावीसं पयडीणं सगपदवि० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। णवरि इत्थि-पुरिस० असंखे०भागवड्ढि-अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो। एवं बादरआउ०-तेउ०-वाउ०-बादरवणप्फदिपत्तेयपज्जत्ताणं। णवरि बादरवाउ०पज्ज० लोग० संखे०भागो[1] सव्वलोगो वा। इत्थि-पुरिस० असंखे०भागवड्ढि-अवट्ठिदविह० लोग० संखे०भागो[2]।**

इसलिए इनकी अपेक्षा स्पर्शन कुछकम आठबटे चौदह राजुप्रमाण कहा है। स्त्रीवेद और पुरुषवेद की तीन वृद्धियाँ और अवस्थितपद स्वस्थानके समय, विहारादिके समय तथा देवों और नारकियोंके तिर्यञ्चों और मनुष्योंमें मारणान्तिक समुद्घातके समय भी सम्भव है, इसलिए इन प्रकृतियोंके उक्त पदोंकी अपेक्षा स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण, कुछ कम आठ बटे चौदह राजुप्रमाण और कुछ कम बारह बटे चौदह राजुप्रमाण कहा है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार-वृद्धियाँ, अवस्थित और अवक्तव्यपद स्वस्थानमें और विहारादिके समय ही सम्भव है, इसलिए इन दो प्रकृतियोंके उक्त पदोंकी अपेक्षा स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और कुछ कम आठ बटे चौदह राजुप्रमाण कहा है। इन दो प्रकृतियोंकी चार हानियोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण, कुछ कम आठ बटे चौदह राजुप्रमाण और सब लोकप्रमाण है यह स्पष्ट ही है, क्योंकि ये चारों हानियाँ उद्वेलनामें भी सम्भव होनेसे उक्तप्रमाण स्पर्शन बन जाता है। यहाँ त्रस आदि अन्य जितनी मार्गणाएँ गिनाई हैं उनमें यह व्यवस्था बन जाती है, इसलिए उनके कथनको पंचेन्द्रियद्विकके समान कहा है।

§ ३८२ बादर पृथिवीकायिक पर्याप्तकोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंके सब पद स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। किन्तु इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितका स्पर्शन लोकका असंख्यातवाँ भाग है। इसी प्रकार बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अग्निकायिक पर्याप्त, बादर वायुकायिक पर्याप्त और बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर पर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि बादर वायुकायिक पर्याप्त जीवोंने लोकका संख्यातवाँ भाग और सब लोकका स्पर्शन किया है तथा स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितस्थितिविभक्तिवालोंने लोकके संख्यातवें भाग क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

**विशेषार्थ**—बादर पृथिवीकायिक पर्याप्त जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सब लोकप्रमाण है। अतः यहाँ अट्ठाईस प्रकृतियोंके जो पद सम्भव हैं उनका यह स्पर्शन बन जाता है, इसलिए वह उक्तप्रमाण कहा है। मात्र स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितपद इसके अपवाद हैं। बात यह है कि जो उक्त जीव नपुंसकोंमें मारणान्तिक समुद्घात करते हैं उनके ये पद नहीं होते, इसलिए इन दो प्रकृतियोंके उक्त दो पदोंकी अपेक्षा स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। यहाँ अन्य जितनी मार्गणाएँ गिनाई हैं उनमें यह व्यवस्था बन जाती है इसलिए उनमें बादर पृथिवीकायिक पर्याप्त जीवोंके समान स्पर्शन कहा है। मात्र बादर वायुकायिक पर्याप्त जीवोंका स्पर्शन लोकके संख्यातवें भागप्रमाण और सब लोकप्रमाण होनेसे इनमें सब प्रकृतियोंके सम्भव पदोंकी अपेक्षा यह स्पर्शन जानना चाहिए। किन्तु स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितपदकी अपेक्षा यह स्पर्शन लोकके संख्यातवें भागप्रमाण ही जानना चाहिए। कारण स्पष्ट ही है।

१ ता० प्रतौ असंखे०भागो इति पाठः। २ ता० प्रतौ असंखे०भागो इति पाठः।

**§ ३८३. ओरालियमिस्स० छब्बीसं पयडीणं असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० के० ? सव्वलोगो। दोवड्ढि-दोहाणि० केव० ? लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। इत्थि-पुरिस० दोवड्ढि० लो० असंखे०भागो। सम्मत्त-सम्मामि० चदुण्हं हाणीणमोघं।**

**§ ३८४. वेउव्विय० छब्बीसं पयडीणं असंखे०भागवड्ढि-हाणि०-दोवड्ढि-दोहाणि-अवट्ठि० लो० असंखेज्जदिभागो अट्ठ-तेरहचोद्द० भागा वा देसूणा। णवरि इत्थि-पुरिस० तिण्णिवड्ढि-अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-बारहचोद्द० देसूणा। अणंताणु०चउक्क० असंखे०गुणहाणि०-अवत्तव्व० सम्मत्त-सम्मामि० चत्तारिवड्ढि-अवट्ठि० अवत्तव्वं च अट्ठचोद्दस० देसूणा। सम्मत्त-सम्मामि० सेसपदाणं लोग० असं०भागो अट्ठ-तेरह० देसूणा। वेउव्वियमिस्स० अट्ठावीसं पयडीणं सव्वपदवि० लोग० असंखे०भागो।**

§ ३८३ औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थितस्थितिविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? सब लोकका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पर स्त्रीवेद और पुरुषवेद की दो वृद्धियोंका स्पर्शन लोकका असंख्यातवां भाग है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार हानियोंका स्पर्शन ओघके समान है।

**विशेषार्थ**—औदारिकमिश्रयोगी जीव सब लोकमें पाये जाते हैं, इसलिए इनमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितपदका स्पर्शन सब लोकप्रमाण कहा है। इनमें दो वृद्धि और दो हानियोंका वर्तमान स्पर्शन तो लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण ही है, परन्तु अतीत स्पर्शन सब लोकप्रमाण बन जाता है, इसलिए यह लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सब लोकप्रमाण कहा है। मात्र स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी दो वृद्धियाँ न तो एकेन्द्रियोंमें सम्भव है और न नपुंसकोंमें मारणान्तिक समुद्घात करनेवालोंमें सम्भव है, अन्यत्र यथायोग्य होती है, अतः इन दो प्रकृतियोंके उक्त पदोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ ३८४. वैक्रियिककाययोगियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि, दो वृद्धि, दो हानि और अवस्थितस्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रस नालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम तेरह भाग क्षेत्रका स्पर्शन किया है। किन्तु इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी तीन वृद्धि और अवस्थितका स्पर्शन लोकका असंख्यातवाँ भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम बारह भाग है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धि, अवस्थित और अवक्तव्यका स्पर्शन त्रस नालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग है तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके शेष पदोंका स्पर्शन लोकका असंख्यातवाँ भाग और त्रस नालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम तेरह भाग है। वैक्रियिकमिश्रकाययोगियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंके सब पद स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

**विशेषार्थ**—वैक्रियिककाययोगियोंमें स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी तीन वृद्धियाँ और अवस्थितपद स्वस्थानमें, विहारादिके समय तथा नारकियों और देवोंके तिर्यञ्चों और मनुष्योंमें मारणान्तिक

§ ३८५. कम्मइय० छब्बीसं पयडीणमसंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० केव० ? सव्वलोगो । दोवड्ढि-दोहाणि० केव० ? लो० असंखे०भागो सव्वलोगो वा । णवरि इत्थि-पुरिस० दोवड्ढि० लोग०असंखे०भागो बारहचोद्दस० देसूणा । सम्मत्त-सम्मामि० ओघं । णवरि पदविसेसो णायव्वो । एवमणाहारीणं ।

§ ३८६. आहार-आहारमिस्स० सव्वपयडीणं सव्वपदवि० लोग० असंखे०भागो । एवमवगद०-अकसा०-मणपज्ज०-संजद०-सामाइय-छेदो०-परिहार०सुहुमसांप०-जहाक्खाद-संजदे त्ति ।

समुद्घातके समय सम्भव होनेसे इन प्रकृतियोंके उक्त पदोंकी अपेक्षा स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण, कुछ कम आठ बटे चौदह राजुप्रमाण और कुछ कम बारह बटे चौदह राजुप्रमाण कहा है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यपद तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धियाँ, अवस्थित और अवक्तव्यपद मारणान्तिक समुद्घात आदिके समय सम्भव नहीं हैं, इसलिए इनका स्पर्शन कुछ कम आठ बटे चौदह राजुप्रमाण कहा है। सब प्रकृतियोंके शेष पदोंका स्पर्शन वैक्रियिककाययोगके समान ही है। वैक्रियिकमिश्रकाययोगका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए इसमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंका स्पर्शन उक्त प्रमाण कहा है।

§ ३८५ कार्मणकाययोगियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्श किया है? सब लोक क्षेत्रका स्पर्श किया है। दो वृद्धि और दो हानिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्श किया है? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सब लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है। किन्तु इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी दो वृद्धियोंका स्पर्श लोकका असंख्यातवाँ भागप्रमाण और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम बारह भागप्रमाण है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका स्पर्श ओघके समान है। किन्तु पद विशेष जानना चाहिये। इसी प्रकार अनाहारकोंके जानना चाहिए।

**विशेषार्थ**—कार्मणकाययोगका स्पर्शन सब लोकप्रमाण है, इसलिए इसमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थित पदका स्पर्शन उक्तप्रमाण कहा है। इन प्रकृतियोंकी दो वृद्धि और दो हानिमेंसे यथासम्भव द्वीन्द्रियादिक जीवोंके वृद्धियाँ और काण्डकघातके साथ संज्ञियोंके एकेन्द्रियादिकमें उत्पन्न होनेपर हानियाँ होती हैं। ऐसे जीवोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन सब लोकप्रमाण होने से यह उक्तप्रमाण कहा है। मात्र स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी दो वृद्धियाँ जो स्त्रीवेदी और पुरुषवेदियोंमें उत्पन्न होते हैं उन्हींके यथासम्भव होती है, अतः इनका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और कुछ कम बारह बटे चौदह राजुप्रमाण कहा है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ ३८६ आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगियोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदस्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है। इसी प्रकार अपगतवेदी, अकषायी, मनःपर्ययज्ञानी, संयत, सामायिकसंयत, छेदोपस्थापनासंयत, परिहारविशुद्धिसंयत, सूक्ष्मसांपरायिकसंयत और यथाख्यातसंयत जीवोंके जानना चाहिए।

§ ३८७. इत्थिवेद० छब्बीसं पयडीणमसंखे०भागवड्डि-हाणि० [ संखेज्जभागवड्डि-हाणि- ] संखे०गुणवड्डि-हाणि-अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्द० देसूणा सव्वलोगो वा । णवरि इत्थि-पुरिस० तिण्णिवड्डि-अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-चोद्द०भागा वा देसूणा । सव्वकम्माणमसंखे०गुणहाणि० लो० असंखे०भागो। अणंताणु०-चउक्क० असंखे०गुणहाणि-अवत्तव्व० लो० असंखे०भागो अट्ठचोद्द० देसूणा । सम्मत्त-सम्मामि० चत्तारिवड्डि-अवट्ठि०-अवत्तव्व० केव० ? लो० असंखे०भागो अट्ठचोद्द० देसूणा । चत्तारिहाणि० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्द० सव्वलोगो वा । पुरिसवेदे इत्थिवेदभंगो ।

**विशेषार्थ**—आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए इनमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंका स्पर्शन उक्तप्रमाण कहा है। यहाँ अपगतवेदी आदि अन्य जितनी मार्गणाएं गिनाई है उनमें इसीप्रकार स्पर्शन घटित होता है, इसलिए उनके कथनको आहारककाययोगीद्विकके समान जाननेकी सूचना की है।

§ ३८७ स्त्रीवेदियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि, संख्यात-भागवृद्धि, संख्यातभागहानि, संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणहानि और अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग, त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग और सब लोक क्षेत्रका स्पर्श किया है। किन्तु इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी तीन वृद्धि और अवस्थितका स्पर्श लोकका असंख्यातवाँ भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग है। तथा सब कर्मोंकी असंख्यातगुणहानिका स्पर्श लोकका असंख्यातवाँ भाग और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यपदका स्पर्श लोकका असंख्यातवाँ भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार-वृद्धि, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्श किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनाली के चौदह भेदोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है। चार हानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण, त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण और सब लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है। पुरुषवेदियोंमें स्त्रीवेदियोंके समान भंग है।

**विशेषार्थ**—स्त्रीवेदियोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन कुछ कम आठ बटे चौदह राजुप्रमाण और सब लोकप्रमाण है। इन सब स्पर्शनोंके समय छब्बीस प्रकृतियोंकी तीन वृद्धियाँ, तीन हानियाँ और अवस्थितपद सम्भव हैं, इसलिए यह स्पर्शन उक्तप्रमाण कहा है। मात्र स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी तीन वृद्धियाँ और अवस्थित पदका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन कुछ कम आठ बटे चौदह राजुप्रमाण है। यहाँ उपपाद पदकी विवक्षा नहीं होनेसे अन्य स्पर्शन नहीं कहा है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कके सिवा पूर्वोक्त बाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातगुणहानि उनकी क्षपणाके समय होती है, इसलिए इसकी अपेक्षा स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। तथा अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यात-गुणहानि और अवक्तव्य पद की अपेक्षा वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है, क्योंकि चारों गतिके संज्ञी पञ्चेन्द्रिय सम्यग्दृष्टि जीव इसकी विसंयोजना करते हैं और ऐसे

§ ३८८. मदि-सुदअण्णाणी० छब्बीसं पयडीणमसंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० केव० पो० ? सव्वलोगो। दोवड्ढि-दोहाणि० केव० पो० ? लो० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस० सव्वलोगो वा। णवरि इत्थि-पुरिस० दोवड्ढि० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-बारहचोद्द० देसूणा। सम्मत्त-सम्मामि० चत्तारिहाणि० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस० सव्वलोगो वा।

§ ३८९. विहंगणाणी० छब्बीसं पयडीणं तिण्णिवड्ढि-तिण्णिहाणि-अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्द० सव्वलोगो वा। णवरि इत्थि-पुरिस० तिण्णिवड्ढि-अवट्ठि०

जीवोंने अतीत कालमें कुछ कम आठ बटे चौदह राजुप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है, इसलिए यह उक्त प्रमाण कहा है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धि, अवस्थित और अवक्तव्य पद सम्यग्दृष्टि होते समय होते है, अतः इनकी अपेक्षा वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन कुछ कम आठ बटे चौदह राजुप्रमाण कहा है। तथा इन दोनों प्रकृतियोंकी चार हानियाँ एकेन्द्रियादि सबके सम्भव हैं, इसलिए इनकी अपेक्षा स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग-प्रमाण, कुछ कम आठ बटे चौदह राजुप्रमाण और सब लोकप्रमाण कहा है। पुरुषवेदियोंमें स्त्रीवेदियोंके समान स्पर्शन बन जाता है, अतः उनका भङ्ग स्त्रीवेदियोंके समान जाननेकी सूचना की है।

§ ३८८ मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्श किया है ? सब लोक क्षेत्रका स्पर्श कियहै। दो वृद्धि और दो हानिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्श किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग, त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग और सब लोक क्षेत्रका स्पर्श किया है। किन्तु इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी दो वृद्धिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम बारह भाग क्षेत्रका स्पर्श किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार हानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग, त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग और सब लोक क्षेत्रका स्पर्श किया है।

**विशेषार्थ**— मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंका सब लोकप्रमाण स्पर्शन होनेसे इनमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितपदकी अपेक्षा स्पर्शन सब लोकप्रमाण कहा है। तथा इनकी दो वृद्धियों और दो हानियोंका प्रारम्भ क्रमसे द्वीन्द्रियादि और संज्ञी पञ्चेन्द्रिय करते हैं और ऐसे जीवोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण, विहारादिकी अपेक्षा कुछ कम आठ बटे चौदह राजुप्रमाण और मारणान्तिक व उपपाद पदकी अपेक्षा सब लोक प्रमाण होनेसे यह स्पर्शन उक्त प्रमाण कहा है। दो हानियाँ एकेन्द्रियों में भी सम्भव हैं, इसलिए भी सब लोक प्रमाण स्पर्शन बन जाता है। नारकियोंके तिर्यञ्चों और मनुष्यों में मारणान्तिक समुद्घात और उपपादपदके समय तथा देवोंके स्वस्थान विहारादिके समय स्त्रीवेद और पुरुषवेदका बन्ध सम्भव है और इनका यह सम्मिलित स्पर्शन कुछ कम बारहबटे चौदह राजु प्रमाण है, अतः स्त्रीवेद और पुरुषवेदका दो वृद्धियोंका स्पर्शन कुछ कम बारह बटे चौदह राजुप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है, क्योंकि उसका पहले अनेक बार स्पष्टीकरण कर आये हैं।

§ ३८९. विभंगज्ञानियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितस्थिति-विभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ

लोग० असंखे०भागो अट्ठ-बारहचोद्दस० देसूणा। सम्मत्त-सम्मामि० चत्तारिहाणि० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्द० सव्वलोगो वा।

§ ३९० आभिणि०सुद०-ओहि० छव्वीसं पयडीणं असंखे०भागहाणि-संखे०भागहाणि-संखे०गुणहाणि० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्द० देसूणा। असंखे०गुणहा० लोग० असंखे०भागो। णवरि अणंताणु०चउक्क० असंखे०गुणहाणि० अट्ठचोद्दसभागा देसूणा। सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहाणि-संखे०भागहाणि-संखे०गुणहाणि० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्द० देसूणा। असंखे०गुणहाणि० लोग० असंखे०भागो। एवमोहिदंस०-सुक्कले०-सम्मादिट्ठि त्ति। णवरि सुक्कले० छचोद्दस० देसूणा। सम्मत्त-सम्मामि० अवट्ठिद० खेत्तभंगो। चत्तारिवड्ढि-अवत्तव्व० अणंताणु०चउक्क० अवत्तव्व० लोग० असंखे०भागो छचोद्दसभागा वा देसूणा।

---

भाग और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। किन्तु इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी तीन वृद्धि और अवस्थितविभक्तिवालोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम बारह भाग क्षेत्रका स्पर्श किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार हानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग, त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग और सब लोक क्षेत्रका स्पर्श किया है।

**विशेषार्थ**—विभङ्गज्ञानी जीव वर्तमानमें सब लोकमें नहीं पाये जाते, क्योंकि संज्ञी पञ्चेन्द्रियोंमें ही कुछके यह ज्ञान होता है, इसलिए इनमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितपदकी अपेक्षा वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन कुछ कम आठबटे चौदह राजु और सब लोकप्रमाण कहा है। शेष सब विचार मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंके समान कर लेना चाहिए। मात्र यहाँ सब लोकप्रमाण स्पर्शन मारणान्तिक समुद्घातके समय कहना चाहिए।

§ ३९०. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमे छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानि, संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग क्षेत्रका स्पर्श किया है। असंख्यातगुणहानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग क्षेत्रका स्पर्श किया है। किन्तु विशेषता यह है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानिवालोंका स्पर्श त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानि, संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेसे कुछ कम आठ भाग क्षेत्रका स्पर्श किया है। असंख्यातगुणहानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार अवधिदर्शनवाले, शुक्ललेश्यावाले और सम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि शुक्ललेश्यावालोंने त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भाग क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अवस्थितस्थितिविभक्तिका भंग क्षेत्रके समान है। चार वृद्धि और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवालोंने तथा अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवालोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

§ ३९१. संजदासंजद० अट्ठावीसं पयडीणमसंखे०भागहाणिवि० लोग० असं०-भागो छचोद्दस० देसूणा। संखे०भागहाणि० लोग० असंखे०भागो। मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि०-अणंताणु०चउक्क० संखे०गुणहाणि-असंखे०गुणहाणि० लोग० असंखे०भागो।

§ ३९२ किण्ण-णील-काउ० छव्वीसं पयडीणमसंखे०भागवड्ढि-हाणि०-अवट्ठि०के० ? सव्वलोगो। दोवड्ढि-दोहाणिवि० केव० ? लो० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। अणंताणु० चउक्क० असंखे०गुणहाणि-अवत्तव्व० लो० असंखे०भागो। इत्थि-पुरिस० दोवड्ढि० लोग० असंखे०भागो वे-चत्तारि-छचोद्दसभागा वा देसूणा। सम्मत्त-सम्मामि० चत्तारि-

**विशेषार्थ**—आभिनिबोधिकज्ञानी आदि तीन ज्ञानियोंमें अनन्तानुबन्धीचतुष्कके सिवा सब प्रकृतियोंकी असंख्यातगुणहानि क्षपणाके समय होती है, इसलिए इसकी अपेक्षा लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण स्पर्शन कहा है। शेष सब स्पर्शन इन मार्गणाओंके स्पर्शनके समान घटित होनेसे वह उक्तप्रमाण कहा है। यहाँ अवधिदर्शनी, शुक्ललेश्यावाले और सम्यग्दृष्टि ये तीन मार्गणाएँ गिनाई हैं उनमें यह प्ररूपणा अविकल घटित हो जाती है, इसलिए उनके कथनको आभिनिबोधिकज्ञानी आदिके समान कहा है। मात्र शुक्ललेश्याका अतीत स्पर्शन कुछ कम छह बटे चौदह राजु प्रमाण होनेसे इसमें कुछ कम आठ बटे चौदह राजुप्रमाण स्पर्शनके स्थानमें यह स्पर्शन जानना चाहिए। साथ ही शुक्ललेश्यामें अनन्तानुबन्धीचतुष्क, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके जो अतिरिक्त पद होते हैं जो कि पूर्वोक्त मार्गणाओंमें सम्भव नहीं उनका मूलमें कहे अनुसार स्पर्शन अलगसे घटित कर लेना चाहिए। कोई वक्तव्य न होनेसे यहाँ हमने उसका अलगसे स्पष्टीकरण नहीं किया है।

§ ३९१. संयतासंयतोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम छह भाग क्षेत्रका स्पर्शन किया है। संख्यातभागहानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी संख्यातगुणहानि और असंख्यात-गुणहानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

**विशेषार्थ**—संयतासंयतोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन कुछ कम छह बटे चौदह राजुप्रमाण है। अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिकी अपेक्षा यह स्पर्शन बन जाता है, अतः यह उक्तप्रमाण कहा है। पर इन प्रकृतियोंकी यथासम्भव शेष हानियोंकी अपेक्षा लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण ही स्पर्शन प्राप्त होता है, अतः यह उक्त-प्रमाण कहा है। कारण स्पष्ट है।

§ ३९२. कृष्ण, नील और कापोत लेश्यावालोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थित स्थितिविभक्तिवालोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? सब लोकका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानि स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनन्तानुबन्धी-चतुष्ककी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी दो वृद्धिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग

**वड्डि-अवट्ठि०-अवत्तव्व० लोग० असंखे०भागो । चत्तारिहाणि० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा ।**

**§ ३९३. तेउ० छब्बीसं पयडीणमसंखे०भागवड्ढि-हाणि-संखे०भागवड्ढि-हाणि-संखेज्जगुणवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-णवचोद्दस० देसूणा । णवरि इत्थि-पुरिस० तिण्णिवड्ढि-अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दसभागा वा देसूणा । अणंताणु०चउक्क० असंखे०गुणहाणि-अवत्तव्व० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस० देसूणा । मिच्छत्त० असंखे०गुणहाणिवि० लोगस्स असंखे०भागो । सम्मत्त-सम्मामि०**

तथा त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे क्रमसे कुछ कम दो, कुछ कम चार और कुछ कम छह भाग क्षेत्रका स्पर्शन किया है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धि, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग क्षेत्रका स्पर्शन किया है । तथा चार हानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है ।

**विशेषार्थ**—कृष्णादि तीन लेश्याओंका वर्तमान स्पर्शन सर्वलोकप्रमाण है । यहाँ छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितपदकी अपेक्षा यह स्पर्शन बन जाता है, अतः यह उक्त प्रमाण कहा है । मात्र इन प्रकृतियोंकी दो वृद्धियों और दो हानियोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण होकर भी अतीत स्पर्शन सब लोकप्रमाण है, इसलिए यह उक्त प्रमाण कहा है । अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यपद संज्ञी पञ्चेन्द्रियोंके ही होते हैं और ये पद मारणान्तिक समुद्घात आदिके समय नहीं होते, अतः इनकी अपेक्षा लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण स्पर्शन कहा है । स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी दो वृद्धियाँ द्वीन्द्रियादिकके ही होती हैं जिनका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है तथा स्त्रीवेदी और पुरुषवेदियोंमें कृष्णादि लेश्यावालोंका मारणान्तिक समुद्घात द्वारा स्पर्शन कुछ कम छह बटे चौदह राजु, कुछ कम चार बटे चौदह राजु और कुछ कम दो बटे चौदह राजुप्रमाण है, अतः यह स्पर्शन उक्तप्रमाण कहा है । इन लेश्याओंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धियाँ, अवस्थित और अवक्तव्यपद सम्यक्त्वके समय होते हैं और ऐसे जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है, अतः यह उक्तप्रमाण कहा है । तथा इनकी चारों हानियाँ किसीके भी सम्भव है, इसलिए इनकी अपेक्षा स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सब लोकप्रमाण कहा है ।

§ ३९३ पीतलेश्यावालोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि, संख्यातगुणवृद्धि, संख्यातगुणहानि और अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम नौ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है । किन्तु इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और पुरुषवेद की तीन वृद्धि और अवस्थित स्थितिविभक्तिवालोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है । अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवालोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है । मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानि स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग क्षेत्रका स्पर्श किया है ।

चत्तारिवड्ढि-अवट्ठि०-अवत्तव्व० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस देसू० । चत्तारि हाणि० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-णवचोद्दस० देसू० । एवं पम्म० । णवरि णवचोद्दसभागा णत्थि।

§ ३६४. अभवसिद्धि० छव्वीसं पयडीणं असंखे०भागवड्ढि-हाणि०-अवट्ठि० सव्वलोगो। दोवड्ढि-दोहाणि० केव० ? लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस० सव्वलोगो वा । इत्थि-पुरस० दोवड्ढि० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-बारह०चोद्दसभागा वा देसूणा ।

सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धि, अवस्थित और अवक्तव्य स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है। तथा चार हानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम नौ भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है। इसी प्रकार पद्मलेश्यावाले जीवोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम नौ भागप्रमाण स्पर्श नहीं है।

**विशेषार्थ**—पीतलेश्याका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण, विहारादिकी अपेक्षा कुछ कम आठ बटे चौदह राजुप्रमाण और मारणान्तिक समुद्घातकी अपेक्षा कुछ कम नौ बटे चौदह राजुप्रमाण है। यहाँ छब्बीस प्रकृतियोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितपदकी अपेक्षा यह स्पर्शन बन जाता है, अतः यह उक्तप्रमाण कहा है। मात्र स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी तीन वृद्धि और अवस्थितपदकी अपेक्षा कुछ कम नौ बटे चौदह राजुप्रमाण स्पर्शन नहीं बनता, क्योंकि एकेन्द्रियोंमें मारणान्तिक समुद्घात करनेवाले इन जीवोंके इन दो प्रकृतियोंका बन्ध न होनेसे वहाँ इनकी तीन वृद्धियाँ और अवस्थान सम्भव नहीं, इसलिए इन दो प्रकृतियोंके उक्त पदोंकी अपेक्षा स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और कुछ कम आठ बटे चौदह राजुप्रमाण कहा है। इसीप्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यपदकी अपेक्षा स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और कुछ कम आठ बटे चौदह राजुप्रमाण घटित कर लेना चाहिए। मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानि क्षपणाके समय ही होती है, इसलिए यहाँ इसकी अपेक्षा स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धि, अवस्थित और अवक्तव्यपदकी अपेक्षा स्पर्शन जो मूलमें कहा है उसका स्पष्टीकरण अनन्तानुबन्धीकी असंख्यातगुणहानिके स्पर्शनके समान कर लेना चाहिए, क्योंकि दोनोंका स्पर्शन एक समान है। इन दो प्रकृतियोंकी चार हानियाँ एकेन्द्रियोंमें मारणान्तिक समुद्घातके समय भी होती हैं, इसलिए इनकी अपेक्षा स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण, कुछ कम आठ बटे चौदह राजुप्रमाण और सब लोकप्रमाण कहा है। पद्मलेश्यामें कुछ कम नौ बटे चौदह राजुप्रमाण स्पर्शन नहीं है, क्योंकि वे एकेन्द्रियोंमें मारणान्तिक समुद्घात नहीं करते। शेष सब कथन पीतलेश्याके समान है।

§ ३९४. अभव्योंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने सब लोकका स्पर्श किया है। दो वृद्धि और दो हानिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्श किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनाली के चौदह भागोंमें से कुछ कम आठ भागप्रमाण और सर्वलोक क्षेत्रका स्पर्श किया है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी दो वृद्धिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनाली के चौदह भागोंमेंसे कुछ कम

**§ ३९५. वेदगसम्मादिट्ठीसु अट्ठावीसपयडीणमसंखे०भागहाणि-संखे०भागहाणि-संखे०गुणहाणि० लोग० असंखे०भागो अट्ठ चोद्द० देसूणा। मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०गुणहाणि० लोग० असंखे०भागो। अणंताणु०चउक्क० असंखे०गुणहाणि० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस० देसूणा।**

**§ ३९६. खइयसम्माइट्ठी० एक्कवीसपयडीणमसंखेज्जभागहाणि० लोग० असंखे०-भागो अट्ठचोद्द० देसूणा। संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्जगुणहाणि० लोग० असंखेज्जदिभागो।**

आठ और कुछ कम बारह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है।

**विशेषार्थ**—अभव्योंका वर्तमान स्पर्शन सर्व लोक है, अतः इनमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितपदकी अपेक्षा स्पर्शन सर्व लोकप्रमाण कहा है। इनकी दो वृद्धि और दो हानिवाले जीवोंने वर्तमानमें लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण, विहारादिकी अपेक्षा कुछ कम आठ बटे चौदह राजुप्रमाण और अन्य प्रकारसे सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है, इसलिए यह स्पर्शन उक्त प्रमाण कहा है।

§ ३९५ वेदकसम्यग्दृष्टियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानि, संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानि स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है। मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानिवालोंने लोकके असंख्यातवें भाग क्षेत्रका स्पर्श किया है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानिवालोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्श किया है।

**विशेषार्थ**—वेदकसम्यग्दृष्टियोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और विहारादिकी अपेक्षा कुछ कम आठ बटे चौदह राजुप्रमाण स्पर्शन है। इनमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी तीन हानियोंकी अपेक्षा और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानिकी अपेक्षा यह स्पर्शन बन जाता है, अतः यह उक्त प्रमाण कहा है। पर इनमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्त्वकी असंख्यातगुणहानि क्षपणाके समय होती है, अतः इसकी अपेक्षा स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है।

§ ३९६ क्षायिकसम्यग्दृष्टियों में इक्कीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानि स्थितिविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। संख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

**विशेषार्थ**—क्षायिकसम्यक्त्वका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और विहारादिकी अपेक्षा कुछ कम आठ बटे चौदह राजुप्रमाण है। इनमें इक्कीस प्रकृतियोंकी असंख्यात-भागहानिकी अपेक्षा यह स्पर्शन बन जाता है, अतः वह उक्त प्रमाण कहा है। इनमें इन प्रकृतियों की शेष हानियाँ क्षपणाके समय होती हैं, अतः उनकी अपेक्षा लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण स्पर्शन कहा है।

§ ३९७. उवसमसम्मा० अट्ठावीसं पयडीणमसंखेज्जभागहाणि-संखेज्जभागहाणि० अणंताणु०चउक्क० संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्जगुणहाणि० लोग० असंखेज्जदिभागो अट्ठ-चोद्दस० देसूणा। सम्मामि० अट्ठावीसं पयडीणमसंखेज्जभागहाणि-संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणि० लोग० असंखेज्जदिभागो अट्ठचोद्द० देसूणा।

§ ३९८. सासणसम्माइट्ठी० अट्ठावीसं पयडीणमसंखेज्जभागहाणि० लोग० असंखेज्जदिभागो अट्ठ-बारहचोद्द० देसूणा।

§ ३९९. मिच्छाइट्ठी० छब्बीसं पयडीणमसंखेज्जभागवड्ढि-हाणि०-अवट्ठि० सव्वलोगो। [1]दोवड्ढि-दोहाणि० केव० ? लोग० असंखेज्जदिभागो अट्ठचोद्दस० देसूणा सव्वलोगो वा। णवरि इत्थि-पुरिस० दोवड्ढि० लोग० असंखेज्जदिभागो अट्ठ-बारहचोद्द०

§ ३९७. उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानि और संख्यात-भागहानिवाले जीवोंने तथा अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानि, संख्यात-भागहानि और संख्यातगुणहानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

**विशेषार्थ**—उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और विहारादिकी अपेक्षा कुछ कम आठ बटे चौदह राजुप्रमाण है। इनमें अट्ठाईस प्रकृतियोंके यथा-सम्भव पदोंकी अपेक्षा यह स्पर्शन बन जाता है, अतः वह उक्त प्रमाण कहा है। इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंमें स्पर्शन घटित कर लेना चाहिए।

§ ३९८. सासादनसम्यग्दृष्टियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम बारह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

**विशेषार्थ**—सासादनसम्यक्त्वमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी एक असंख्यातभागहानि होती है और वह सासादनसम्यग्दृष्टियोंकी सब अवस्थाओंमें सम्भव है, अतः यहाँ इस पदकी अपेक्षा लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण, कुछ कम आठ बटे चौदह राजुप्रमाण और कुछ कम बारह बटे चौदह राजुप्रमाण स्पर्शन कहा है।

§ ३९९. मिथ्यादृष्टियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थित स्थितिविभक्तिवालोंने सब लोकका स्पर्शन किया है। दो वृद्धि और दो हानिवालोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग, त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग और सब लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। किन्तु इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी दो वृद्धिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ और कुछ कम बारह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मि-

1 ता.आ.प्रत्योः सव्वलोग, वा। दोवड्ढि इति पाठः।

**देसूणा। सम्मत्त-सम्मामि० चत्तारिहाणि० लोग० असंखेज्जदिभागो अट्ठचोद्द० देसूणा सव्वलोगो वा।**

§ ४००. **असण्णि० छब्बीसं पयडीणमसंखेज्जभागवड्ढि-हाणि०-अवट्ठि० केव० ? सव्वलोगो। दोहाणि[1]-संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढि० लोग० असंखेज्जदिभागो सव्वलोगो वा। णवरि इत्थि-पुरिस० दोवड्ढि० लोग० असंखेज्जदिभागो। सम्मत्त-सम्मामि० चत्तारिहाणि० लोग० असंखेज्जदिभागो सव्वलोगो वा।**

**एवं पोसणाणुगमो समत्तो।**

थ्यात्वकी चार हानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवे भाग, त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

**विशेषार्थ**—मिथ्यादृष्टियोंका वर्तमान स्पर्शन सर्व लोकप्रमाण है। इनमें छब्बीस प्रकृतियों-की असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितपदके समय यह स्पर्शन सम्भव होनेसे यह उक्त प्रमाण कहा है। किन्तु इन प्रकृतियोंकी दो वृद्धि और दो हानियोंकी अपेक्षा वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवे भागप्रमाण, विहारादिकी अपेक्षा कुछ कम आठ बटे चौदह राजुप्रमाण और अन्य अपेक्षासे सर्व लोकप्रमाण प्राप्त होनेसे वह उक्त प्रमाण कहा है। इसी प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार हानियोंकी अपेक्षा स्पर्शन घटित कर लेना चाहिए। मात्र स्त्रीवेद और पुरुपवेदकी दो वृद्धियोंकी अपेक्षा स्पर्शन लोकके असंख्यातवे भागप्रमाण, कुछ कम आठ बटे चौदह राजुप्रमाण और कुछ कम बारह बटे चौदह राजुप्रमाण जानना चाहिए। स्पष्टीकरण पहले कर आये हैं।

§ ४००. असंज्ञियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थित स्थितिविभक्तिवालोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? सब लोकका स्पर्शन किया है। दो हानि, संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवे भाग और सब लोकका स्पर्शन किया है। किन्तु इतनी विशेपता है कि स्त्रीवेद और पुरुपवेदकी दो वृद्धिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग क्षेत्रका स्पर्शन किया है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार हानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सब लोकका स्पर्शन किया है।

**विशेषार्थ**—असंज्ञियोंका वर्तमान स्पर्शन सर्व लोकप्रमाण है। इनमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थित पदके समय यह स्पर्शन सम्भव है, अतः वह उक्तप्रमाण कहा है। किन्तु इनकी दो हानि और दो वृद्धियोंकी अपेक्षा वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन सब लोकप्रमाण प्राप्त होनेसे वह उक्तप्रमाण कहा है। इसी प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार हानियोंकी अपेक्षा वह स्पर्शन घटित कर लेना चाहिए। इनमें स्त्रीवेद और पुरुपवेदकी दो हानियोंकी अपेक्षा स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है यह स्पष्ट ही है।

इस प्रकार स्पर्शनानुगम समाप्त हुआ।

१ आ. प्रतौ सव्वलोगो। दोवड्ढी दोहाणी इति पाठः।

**§ ४०१ कालाणुगमेण दुविहो णिद्देसो–ओघे० आदेसे०। ओघेण छब्बीसं पयडीणमसंखे०भागवड्ढि–असंखे०भागहाणि–अवट्ठि० केवचिरं कालादो होंति ? सव्वद्धा। कुदो ? एइंदियरासिस्स आणंतियादो। दोवड्ढि–दोहाणि० अणंताणु०चउक्क० असंखे०गुणहाणि–अवत्तव्वं च ज० एगसमओ, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। सेसकम्माणमसंखे०गुणहाणि० ज० एगसमओ, उक्क० संखे० समया। सम्मत्त–सम्मामिच्छत्ताणमसंखे०भागहाणि० सव्वद्धा। सेसपदवि० ज० एकस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। एवं कायजोगि–ओरालि०–णवुंस०–चत्तारिक०–अचक्खु०–भवसि०–आहारि त्ति।**

**§ ४०२. आदेसेण णेरइएसु छब्बीसं पयडीणमसंखे०भागहाणि–अवट्ठि० सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमसंखे०भागहाणि० च सव्वद्धा। सेसपदवि० जह० एगसमओ, उक्क०**

§ ४०१. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघसे और आदेशसे। ओघकी अपेक्षा छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितस्थितिविभक्तिका कितना काल है ? सब काल है क्योंकि एकेन्द्रिय जीवराशि अनन्त है। दो वृद्धि, दो हानि और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण है। शेष कर्मोंकी असंख्यातगुणहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका काल सर्वदा है। तथा शेष पदविभक्तियोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार काययोगी, औदारिककाययोगी, नपुंसक वेदवाले, क्रोधादि चारों कषायवाले, अचक्षुदर्शनवाले, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिए।

**विशेषार्थ**—ओघसे छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितपदका काल सर्वदा क्यों कहा है इसका स्पष्टीकरण स्वयं वीरसेनाचार्यने किया है। इनकी दो वृद्धि और दो हानि तथा अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य काल एक समय है, क्यों एक समयके लिए ये होकर द्वितीय समयमें न हों यह सम्भव है। उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है, क्योंकि निरन्तर नाना जीव इन वृद्धियों और हानियोंको यदि प्राप्त हों तो इतने काल तक ही प्राप्त हो सकते है। शेष कर्मोंको असंख्यातगुणहानि क्षपणाके समय प्राप्त होती है, अतः इसका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्ता सदा है और उसकी सदा असंख्यातभागहानि होती रहती है इसलिए उसका काल सर्वदा कहा है। तथा इसके शेष पद कमसे कम एक समय तक और अधिकसे अधिक आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक होते है, अतः उनका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। काययोगी आदि मार्गणाओंमें यह काल बन जाता है।

§ ४०२. आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानि और अवस्थितका काल तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका काल सर्वदा है। तथा शेष पद विभक्तियोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलीके असंख्यातवें

**आवलि० असंखे०भागो। एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख०-देव-भवणादि जाव सहस्सार०-पंचिंदियअपज्ज०-तसअपज्ज०-वेउव्विय०जोगि त्ति। तिरिक्खेसु ओघं। णवरि मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असंखे०गुणहाणी णत्थि।**

**§ ४०३. मणुस्सेसु छब्बीसं पयडीणं पंचिंदियतिरिक्खभंगो। णवरि असंखे० गुणहाणी० अणंताणु०चउक्क० अवत्तव्व० जह० एगसमओ, उक्क० संखेज्जा समया। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं चत्तारिवड्ढि-अवट्ठि० अवत्तव्वं च ज० एगसमओ, उक्क० संखे० समया। चत्तारिहाणिवि० ओघं। एवं मणुसपज्जत्त-मणुसिणीणं। णवरि जम्हि आवलियाए असंखे०भागो तम्हि संखे० समया। किंतु मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि०-तेरसक० संखे०भागहाणि० ज० एगसमओ, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। मणुसअपज्ज० छब्बीसं पयडीणमसंखे०भागहाणि-अवट्ठि० सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० ज० एगसमओ, उक्क०पलिदो० असंखे०भागो। सेसपदवि० जह० एगसमओ, उक्क० आवलि० असंखे०भागो।**

**§ ४०४. आणदादि जाव णवगेवज्ज० अट्ठावीसं पयडीणमसंखे०भागहाणि० सव्वद्धा। सेसपदवि० ज० एयसमओ, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। अणुद्दिसादि जाव अवराइद त्ति एसो चेव भंगो। णवरि सम्मत्त० संखे०गुणहाणि० जह० एगस०, उक्क०**

भागप्रमाण है। इसी प्रकार सब नारकी सब पंचेन्द्रिय तिर्यंच, सामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देव, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त, त्रस अपर्याप्त और वैक्रियिककाययोगी जीवोंके जानना चाहिए। तिर्यंचोंमें सब पदोंका काल ओघके समान है। किन्तु इतनी विशेपता है कि इनमें मिथ्यात्व, बारह कपाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातगुणहानि नहीं है।

§ ४०३. मनुष्योंमें छब्बीस प्रकृतियोंका भंग पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंके समान है। किन्तु इतनी विशेपता है कि इनमें असंख्यातगुणहानिका और अनंतानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धि, अवस्थित और अवक्तव्यका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। तथा चार हानिस्थितिविभक्तियोंका काल ओघके समान है। इसी प्रकार मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेपता है कि जहाँ आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण काल कहा है वहाँ संख्यात समय काल कहना चाहिए। किन्तु मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और तेरह कपायोंकी संख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानि और अवस्थितका तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा शेप पद स्थितिविभक्तियोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ४०४. आनतकल्पसे लेकर नौग्रैवेयक तकके देवोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका काल सर्वदा है। तथा शेप पदस्थितिविभक्तियोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अनुदिशसे लेकर अपराजित तकके देवोंमें यही भंग है।

**संखेज्जा समया। एवं सव्वट्ठे। णवरि संखेज्जा समया। सम्मत्त-अणंताणु०४ संखे०भाग-हाणिवि० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो।**

**§ ४०५. इंदियाणुवादेण सव्वएइंदियाणमसंखे०भागवड्ढि०-हाणि-अवट्ठि० छब्बीसं पयडीणं सव्वद्धा। संखे०भागहाणि-संखे०गुणहाणीणं जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०-भागो। सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहाणिवि० सव्वद्धा। सेसपदवि० ज० एगसमओ, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। एवं पुढवि०-बादरपुढवि०-बादरपुढवि-अपज्ज०-सुहुमपुढवि-सुहुमपुढविपज्जत्तापज्जत्त-आउ०-बादर-आउ०-बादरआउअपज्ज०-सुहुमआउ०-सुहुमआउपज्जत्तापज्जत्त-तेउ०-बादरतेउ०-बादरतेउअपज्ज०-सुहुमतेउ०-सुहुमतेउपज्जत्तापज्जत्त-वाउ०- बादरवाउ०- बादरवाउअपज्ज०- सुहुमवाउ०-सुहुमवाउ-पज्जत्तापज्जत्त-सव्ववणप्फदि०-सव्वणिगोदा त्ति। बादरपुढविआदिपज्जत्ताणमेवं चेव। णवरि छब्बीसं पयडीणमसंखे०भागवड्ढि० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो।**

**§ ४०६. सव्वविगलिंदिएसु छब्बीसं पयडीणमसंखे०भागहाणि-अवट्ठि० सव्वद्धा। असंखे० भागवड्ढि-संखे०भागवड्ढि-संखे०भागहाणि-संखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क०**

किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वकी संख्यातगुणहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। इसी प्रकार सर्वार्थसिद्धिमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है यहां संख्यात समय काल है। तथा सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्कको संख्यातभागहानि स्थितिविभक्तिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ४०५. इन्द्रिय मार्गणाके अनुवादसे सब एकेन्द्रियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यात-भागवृद्धि असंख्यातभागहानि और अवस्थितका काल सर्वदा है। संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानि स्थितिविभक्तिका काल सर्वदा है। तथा शेष पदस्थितिविभक्तियोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार पृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म पृथिवीकायिक, सूक्ष्म पृथिवीकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, जलकायिक, बादर जलकायिक, बादर जलकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म जलकायिक, सूक्ष्म जलकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, अग्निकायिक, बादर अग्निकायिक, बादर अग्निकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म अग्निकायिक, सूक्ष्म अग्निकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, वायुकायिक, बादर वायुकायिक, बादर वायुकायिक अपर्याप्त, सूक्ष्म वायुकायिक, सूक्ष्म वायुकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, सब वनस्पति और सब निगोद जीवोंके जानना चाहिए। बादर पृथिवी आदि पर्याप्त जीवोंके इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अवलिके असंख्यातवें भाग प्रमाण है।

§ ४०६. सब विकलेन्द्रियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानि और अवस्थितका काल सर्वदा है। असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि और संख्यात गुणहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

आवलि० असंखे०भागो। सम्मत्त-सम्मामि०असंखे०भागहाणि० सव्वद्धा। सेसहाणि० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो।

§ ४०७. पंचिंदिय-पंचिं०पज्ज० छब्बीसं पयडीणमसंखेज्जभागहाणि-अवट्ठि० सव्वद्धा। तिण्णिवड्ढि-दोहाणि० ज एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। असंखे० गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया। अणंताणु०चउक्क० असंखे०गुणहाणि-अवत्तव्व० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। सम्मत्त-सम्मामि० असंखे० भागहाणि० सव्वद्धा चत्तारिवड्ढि-तिण्णिहाणि-अवट्ठि०-अवत्तव्व० ज० एयस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। एवं तस-तसपज्ज०-पंचमण०-पंचवचि०-इत्थि०-पुरिस०-चक्खु०-सण्णि त्ति।

§ ४०८. ओरालियमिस्स० छब्बीसंपयडीणं असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० सव्वद्धा। दोवड्ढि-दोहाणि० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० सव्वद्धा। तिण्णिहाणि० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो।

§ ४०९. वेउव्वियमिस्स० छब्बीसं पयडीणमसंखे०भागहाणि-अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। तिण्णिवड्ढि-दोहाणि० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० जह० एगस०, उक्क०

सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका काल सर्वदा है। तथा शेष हानियोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ४०७. पंचेन्द्रिय और पंचेन्द्रियपर्याप्तकोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानि और अवस्थितका काल सर्वदा है। तीन वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका काल सर्वदा है। चार वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार त्रस, त्रसपर्याप्त, पांचों मनोयोगी, पांचों वचनयोगी, स्त्रीवेदवाले, पुरुषवेदवाले, चक्षुदर्शनी और संज्ञी जीवोंके जानना चाहिए।

§ ४०८. औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यात भागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थितका काल सर्वदा है। दो वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका काल सर्वदा है। तथा तीन हानियोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ४०९. वैक्रियिकमिश्रकाययोगियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानि और अवस्थितका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। तीन वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट

पलिदो० असंखे०भागो। तिण्णिहाणि० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो।

§ ४१०. कम्मइय० छव्वीसं पयडीणमसंखे०भागवड्ढि–हाणि–अवट्ठि० सव्वद्धा। दोवड्ढि–दोहाणि० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। सम्मत्त–सम्मामि० चत्तारिहाणि० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। एवमणाहारीणं।

§ ४११. आहार० अट्ठावीसं पयडीणमसंखे०भागहाणि० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु०। आहारमि० अट्ठावीसं पयडीणमसंखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० अंतोमु०।

§ ४१२. अवगदवेद० चउवीसं पयडीणमसंखे०भागहाणि० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। संखे०भागहाणि–संखे०गुणहाणि० जह० एगस०, उक्क० संखेजा समया। णवरि दंसणतिय–अट्ठक०–इत्थि०–णवुंस० संखेज्जगुणहाणी णत्थि। लोभसंजल० संखे०भागहाणि० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। अकसा० चउवीसं पयडीणमसंखे०भागहाणि० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। एवं जहाक्खाद०।

§ ४१३. मदि०–सुद० असंखे०भागवड्ढि–हाणि–अवट्ठिदं च छव्वीसं पयडीणं सव्वद्धा। दोवड्ढि–दोहाणि० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। सम्मत्त–सम्मामि० असंखे०भागहाणि० सव्वद्धा। सेसहाणि० जह० एगस०, उक्क० आवलि०

काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा तीन हानियोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ४१० कार्मणकाययोगियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका काल सर्वदा है। तथा दो वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार हानियोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार अनाहारकोंके जानना चाहिए।

§ ४११ आहारककाययोगियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। आहारकमिश्रकाययोगियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानि का जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

§ ४१२ अपगतवेदियोंमें चौबीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। किन्तु इतनी विशेषता है कि तीन दर्शनमोहनीय, आठ कषाय, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी संख्यातगुणहानि नहीं है। लोभसंज्वलनकी संख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अकषायी जीवोंमें चौबीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार यथाख्यातसंयत जीवों के जानना चाहिए।

§ ४१३ मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका काल सर्वदा है। दो वृद्धि और दो हानियों का जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका काल सर्वदा है। तथा शेष हानियोंका जघन्य काल

असंखे०भागो । विहंगणाणी० छब्बीसं पयडीणमसंखे०भागहाणि-अवट्ठि० सव्वद्धा। तिण्णिवड्ढि-दोहाणि० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० सव्वद्धा। सेसहाणि० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असं०भागो।

§ ४१४. आभिणि०-सुद०-ओहि० अट्ठावीसं पयडीणमसंखे०भागहाणि० सव्वद्धा। संखे०भागहाणि-संखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असं०भागो। अणंताणु०चउक्क० असंखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। सेसकम्माणमसंखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया। एवमोहिदंस०-सम्मादिट्ठि त्ति। मणपज्जव० अट्ठावीसं पयडीणं असंखेज्जभागहाणि० सव्वद्धा। संखे० भागहाणि-संखेज्जगुणहाणि-असंखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० संखे० समया। णवरि मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि०-तेरसकसायाणं संखे०भागहाणि० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। एवं संजद०-सामाइय-छेदो०संजदे त्ति। णवरि सामाइय-छेदो० लोभसंजल० संखे०भागहा० जह० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया।

§ ४१५. परिहार० अट्ठावीसं पयडीणमसंखे०भागहाणि० सव्वद्धा। संखे०भागहाणि० जह० एगस०, उक्क० संखे० समया। णवरि मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि०-अणंताणु०-

एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। विभंगज्ञानियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानि और अवस्थितका काल सर्वदा है। तीन वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका काल सर्वदा है। तथा शेष हानियोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ४१४. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका काल सर्वदा है। संख्यातभागहानि, और संख्यातगुणहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। शेष कर्मोंकी असंख्यातगुणहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। इसी प्रकार अवधिदर्शनवाले और सम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिए। मनःपर्ययज्ञानियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका काल सर्वदा है। संख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। किन्तु इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और तेरह कषायोंकी संख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार संयत, सामायिकसंयत और छेदोपस्थापनासंयत जीवोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि सामायिकसंयत और छेदोपस्थापनासंयत जीवोंमें लोभ संज्वलनकी संख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है।

§ ४१५. परिहारविशुद्धिसंयतोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका काल सर्वदा है। संख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। किन्तु

चउक्क० संखे०भागहाणि० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि०-अणंताणु०चउक्क० संखे०गुणहाणि-असंखे०गुणहाणि० ज० एगस० उक्क० संखे० समया।

§ ४१६. सुहुमसांपराय० चउवीसंपयडीणमसंखे०भागहाणि० ज० एगसमओ, उक्क० अंतोमु०। दंसणतिय० संखे०भागहाणि० जह० एयस०, उक्क० संखे० समया। लोभसंजल० संखे०भागहा०-संखे०गुणहाणि० जह० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया। णवरि संखे०भागहाणीए उक्क० आवलि० असंखे०भागो।

§ ४१७. संजदासंजद० अट्ठावीसंपयडीणमसंखे०भागहाणिवि० सव्वद्धा। संखे०भागहाणिवि० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि० संखे०गुणहाणि–असंखे०गुणहाणि० जह० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया। अणंताणु०चउक्क० संखे०गुणहाणि–असंखे०गुणहाणि० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो।

§ ४१८. असंजद० छब्बीसंपयडीणमसंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठिद० सव्वद्धा। दोवड्ढि-दोहाणि० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। अणंताणु०चउक्क० असंखे०गुणहाणि-अवत्तव्व० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। मिच्छत्त० असंखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया। सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०-

इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी संख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी संख्यात गुणहानि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है।

§ ४१६. सूक्ष्मसांपरायिक संयतोंमें चौबीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य-काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। तीन दर्शनमोहनीयकी संख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। लोभसंज्वलनकी संख्यातभाग-हानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ४१७. संयतासंयतोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका काल सर्वदा है। संख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी संख्यात-गुणहानि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ४१८ असंयतोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका काल सर्वदा है। दो वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है।

भागहाणि० सव्वद्धा। तिण्णिहाणि-चत्तारिवड्डि-अवट्टि०-अवत्तव्व० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो।

§ ४१९. किण्ह-णील-काउ० छव्वीसं पयडीणमसंखे०भागवड्डि-हाणि-अवट्ठि० सव्वद्धा। दोवड्डि-दोहाणि० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। अणंताणु०-चउक्क० असंखे०गुणहाणि-अवत्तव्व० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। सम्मत्त-सम्मामि० सव्वपदवि० ओघं।

§ ४२०. तेउ-पम्म० छव्वीसंपयडीणमसंखे०भागहाणि-अवट्ठि० सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमसंखे०भागहाणि० च सव्वद्धा। तिण्णिवड्डि-दोहाणि० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। अणंताणु०चउक्क० असंखे०गुणहाणि-अवत्तव्व० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। मिच्छत्त० असंखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया। सम्मत्त-सम्मामि० चत्तारिवड्डि-तिण्णिहाणि-अवट्ठि०-अवत्तव्व० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो।

§ ४२१. सुक्क० अट्ठावीसं पयडीणमसंखे०भागहाणिवि० सव्वद्धा। संखे०भागहाणि-संखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। असंखे०गुणहाणि० जह० एगस०, उक्क० संखे० समया। णवरि अणंताणु०चउक्क० असंखे०गुणहाणि-

सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका काल सर्वदा है। तीन हानि, चार वृद्धि, अवस्थित और अवक्तव्यका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ४१९. कृष्ण, नील और कापोतलेश्यावालोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका काल सर्वदा है। दो वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सब पदवालोंका काल ओघके समान है।

§ ४२०. पीत और पद्मलेश्यावाले जीवोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानि और अवस्थितका काल तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिकाका ल सर्वदा है। तीन वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धि, तीन हानि, अवस्थित और अवक्तव्यका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ४२१. शुक्ललेश्यावालोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका काल सर्वदा है। संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानि

अवत्तव्व० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। सम्मत्त-सम्मामि० चत्तारि-वड्ढि-दोहाणि-अवट्ठि०-अवत्तव्व० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो।

§ ४२२. अभवसि० छव्वीसंपयडीणमसंखे०भागवड्ढि-हाणि०-अवट्ठि० सव्वद्धा। दोवड्ढि-हाणि० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो।

§ ४२३. वेदग० अट्ठावीसपयडीणमसंखे०भागहाणि० सव्वद्धा। संखे०भाग-हाणि-संखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० संखे० समया। अणंताणु०-चउक्क० असंखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो।

§ ४२४. खइय० एक्कवीसंपयडीणमसंखे०भागहाणि० सव्वद्धा। संखे०भाग-हाणि-संखे०गुणहाणि-असंखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० संखे० समया। णवरि अट्ठकसाय-लोभसंजलणाणं संखेज्जभागहाणि० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो।

§ ४२५. उवसम० असंखेज्जभागहाणि० अट्ठावीसंपयडीणं जह० अंतोमु०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। संखे०भागहाणि० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। अणंताणु०चउक्क० संखे०गुणहाणि-असंखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो।

और अवक्तव्यका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार वृद्धि, दो हानि, अवस्थित और अवक्तव्यका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ४२२. अभव्योंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका काल सर्वदा है। दो वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ४२३ वेदकसम्यग्दृष्टियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका काल सर्वदा है। संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यात गुणहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी असं यातगुणहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ४२४. क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें इक्कीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका काल सर्वदा है। संख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। किन्तु इतनी विशेषता है कि आठ कषाय और लोभ संज्वलनकी संख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ४२५. उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। संख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके

४२६. सासण० अट्ठावीसंपयडीणमसंखे०भागहाणि० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। सम्मामि० अट्ठावीसंपयडीणं असंखे०भागहा० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असं०भागो। संखे०भागहाणि–संखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। मिच्छाइट्ठी० छव्वीसंपय० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० सव्वद्धा। दोवड्ढि-दोहाणि० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असं०भागो। सम्मत्त-सम्मामि० एइंदियभंगो। असण्णि० मिच्छाइट्ठिभंगो।

एवं कालाणुगमो समत्तो।

§ ४२७. अंतराणुगमेण दुविहो णिद्देसो–ओघे० आदेसे०। ओघेण मिच्छत्त०-बारसक०-णवणोक० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णत्थि अंतरं। दोवड्ढि-दोहाणि० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु०। असंखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० छम्मासा। एवमणंताणु०चउक्क०। णवरि असंखे०गुणहाणि-अवत्तव्व जह० एगस०, उक्क० चउवीस-महोत्तरे सादिरेगे। सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं। चत्तारि-वड्ढि-तिण्णिहाणि-अवत्तव्व० ज० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे। अवट्ठिद० जह० एगस०, उक्क० अंगुलस्स असंखे०भागो। एवमचक्खु०-भवसि०-आहारि त्ति।

असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ४२६. सासादनसम्यग्दृष्टियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। मिथ्यादृष्टियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका काल सर्वदा है। दो वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग एकेन्द्रियोंके समान है। असंज्ञियोंका भंग मिथ्यादृष्टियोंके समान है।

इस प्रकार कालानुगम समाप्त हुआ

§ ४२७. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है–ओघसे और आदेशसे। ओघकी अपेक्षा मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका अन्तर नहीं है। दो वृद्धि और दो हानियों का जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन रात है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यात भागहानिका अन्तर नहीं है। चार वृद्धि, तीन हानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन रात है। अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार अचक्षुदर्शनवाले, भव्य और आहारक जीवोंके जानना चाहिए।

§ ४२८. आदेसेण णेरइएसु मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असंखे०भागहाणि-अवट्ठि० णत्थि अंतरं । सेसपदवि० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु० । एवमणंताणु०-चउक्क० । णवरि असंखे०गुणहाणि-अवत्तव्व० ज० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे । सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० णत्थि० अंतरं । चत्तारिवड्ढि-तिण्णि हाणि-अवत्तव्व० जह० एगसमओ, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे । अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० अंगुल० असंखे०भागो । एवं सव्वणेरइय-पंचिं०तिरिक्खतिय०-देव-भवणादि जाव सहस्सार त्ति ।

§ ४२९. तिरिक्खेसु अट्ठावीसंपयडीणं सव्वपदवि० ओघं । पंचिं०तिरि० अपज्ज० अट्ठावीसंपयडीणं जाणि पदाणि अत्थि तेसिं पदाणं णेरइयभंगो । एवं पंचिंदियअपज्ज०-तसअपज्जत्ताणं ।

§ ४३०. मणुसतिण्णि० मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असंखे०भागहाणि-अवट्ठि० णत्थि अंतरं । सेसपदवि० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु० । असंखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० छम्मासा । णवरि मणुसिणीसु वासपुधत्तं । अणंताणु०चउक्क० सम्मत्त०-सम्मामिच्छत्ताणं णिरओघं । मणुसअपज्ज० अट्ठावीसंपयडीणं सव्वपदवि० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो ।

§ ४२८. आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागहानि और अवस्थितका अन्तर नहीं है । शेष पदविभक्तियोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षासे जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन-रात है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका अन्तर नहीं है । चार वृद्धि, तीन हानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन-रात है । अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसी प्रकार सब नारकी, तीन प्रकारके पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च, सामान्य देव, भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंके जानना चाहिए ।

§ ४२९. तिर्यंचोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी सब पदस्थितिविभक्तियोंका अन्तर ओघके समान है । पंचेन्द्रिय तिर्यंच अपर्याप्तकोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंके जो पद हैं उन पदोंका भंग नारकियोंके समान है । इसी प्रकार पंचेन्द्रिय अपर्याप्त और त्रसअपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए ।

§ ४३०. तीन प्रकारके मनुष्योंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यात भागहानि और अवस्थितका अन्तर नहीं है । शेष पदविभक्तियोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है । किन्तु इतनी विशेषता है कि मनुष्यनियोंमें वर्षपृथक्त्व अन्तर है । अनन्तानुबन्धीचतुष्क, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा सामान्य नारकियोंके समान जानना चाहिए । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी सब पदविभक्तियोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

§ ४३१. आणदादि जाव णवगेवज्ज० छब्बीसंपयडीणमसंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं। संखे०भागहाणि० जह० एगसमओ, उक्क० सत्त रादिंदियाणि सादिरेयाणि। संखे०भागहाणीए सादिरेयसत्तरादिंदियाणि अंतरमिदि जं भणिदं तण्ण घडदे, आणदादिसु किरियाविरहिदस्स ट्ठिदिखंडयघादाभावादो। ण चाणंताणुबंधिविसंजोयणाए सम्मत्तगहणकिरियाए च सत्तरादिंदियमेत्तमंतरमत्थि, तत्थ चउवीस-[1] अहोरत्तमेत्तअंतरपरूवणादो त्ति? ण एस दोसो, सुक्कलेस्सियमिच्छाइट्ठीसु विसोहिमावूरिय ट्ठिदिकंडयघादं कुणमाणेसु संखे०भागहाणीए सत्तरादिंदियमेत्तंतरुवलंभादो। संखेज्जगुणहाणिमाणदादिदेवा किण्ण कुणंति? ण, तारिसविसिट्ठविसोहीए तत्थाभावादो। तं पि कुदो णव्वदे? एदम्हादो चेव उच्चारणुवदेसादो। अणंताणु०चउक्क० संखे०गुणहाणि-असंखे०गुणहाणि-अवत्तव्व० जह० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ताणि सादिरेयाणि। सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं। चत्तारिवड्ढि-तिण्णिहाणि-अवत्तव्व० जह एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ताणि सादिरेयाणि। अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति अट्ठावीसपय० असंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं।

§ ४३१. आनत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी असंख्यात भागहानिका अन्तर नहीं है। संख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक सात रात-दिन है।

**शंका**—संख्यातभागहानिका जो साधिक सात दिनरात अन्तर कहा है वह नहीं बनता है, क्योंकि आनत आदिकमें क्रियारहित जीवके स्थितिकाण्डकघात नहीं होता है। यदि कहा जाय कि अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना और सम्यक्त्वके ग्रहण करने रूप क्रियामें सात दिनरात अन्तर होता है सो भी बात नहीं है, क्योंकि इस विषयमें चौबीस दिनरात प्रमाण अन्तर कहा है।

**समाधान**—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि विशुद्धिको पूरा कर स्थितिकाण्डकघात करनेवाले शुक्ललेश्यावाले मिथ्यादृष्टियोंमें संख्यातभागहानिका सात दिनरात अन्तर पाया जाता है।

**शंका**—आनत आदि कल्पोंके देव संख्यातगुणहानिको क्यों नहीं करते हैं?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि उस प्रकारकी विशिष्ट विशुद्धि वहाँ पर नहीं है।

**शंका**—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

**समाधान**—उच्चारणाके इसी उपदेशसे जाना जाता है।

अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी संख्यातगुणहानि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन रात है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका अन्तर नहीं है। चार वृद्धि, तीन हानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है।

अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका

1. ता० प्रतौ -मत्थि चउवीस इति पाठः।

**संखे०भागहाणि० सम्मत्तस्स संखे०गुणहाणि० अणंताणु०चउक० संखे०गुणहाणि-असंखे०गुणहाणीणमंतरं जह० एगस०, उक्क० वासपुधत्तं। सव्वट्ठसिद्धिम्मि पलिदो० संखे०भागो।**

§ ४३२. *इंदियाणुवादेण* **एइंदिएसु मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० असंखे०-भागवड्डि-हाणि-अवट्ठि० णत्थि अंतरं। संखेज्जभागहाणि-संखेज्जगुणहाणि० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं। संखे०भागहा०-संखे०गुणहा०-असंखे०गुणहाणीणं ज० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ताणि सादिरेयाणि। एइंदियाणमसंखे०भागवड्डि-हाणि-अवट्ठाणाणि तिण्णि चेव होंति। तत्थ कथं संखे०भागहाणि-संखे०गुणहाणीणं संभवो? किं च उव्वेल्लणकंडयाणमायामो सुट्ठु[1] महंतो वि पलिदो० असंखे०भागमेत्तो चेव। तं कुदो णव्वदे? उव्वेल्लणकालस्स पलिदो० असंखे०भागपमाणत्तण्णहाणुववत्तीदो। एवं संते कधं संखे०भागहाणि-संखे०-गुणहाणीणं संभवो त्ति? ण, सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तेसु उव्वेल्लिदेसु उदयावलियब्भंतरे पविसिय संखेज्जट्ठिदिसेसेसु तासिं दोण्हं हाणीणमेइंदिएसु उवलंभादो। अट्ठावीससंत-कम्मिएसु जीवेसु सण्णिपंचिंदिएसु सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि उव्वेल्लमाणेसु विसोहि-**

---

अन्तर नहीं है। संख्यातभागहानिका, सम्यक्त्वकी संख्यातगुणहानिका तथा अनन्तानुबन्धी-चतुष्ककी संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है। सर्वार्थसिद्धिमें पल्यके संख्यातवें भागप्रमाण अन्तर है।

§ ४३२ इन्द्रियमार्गणाके अनुवादसे एकेन्द्रियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका अन्तर नहीं है। संख्यात-भागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका अन्तर नहीं है। संख्यातभाग-हानि, संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है।

**शंका**—एकेन्द्रियोंके असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थित ये तीनों ही पद होते हैं, अतः वहाँ संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानि कैसे संभव हैं? दूसरे उद्वेलनाकाण्डकका आयाम बहुत ही बड़ा हुआ तो पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण ही होता है। यदि कहा जाय कि यह किस प्रमाणसे जाना जाता है तो इस प्रतिशंकाका उत्तर यह है कि एकेन्द्रियोंमें उद्वेलनाकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण अन्यथा बन नहीं सकता है इससे जाना जाता है कि उद्वेलनाकाण्डकका आयाम पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है और ऐसा रहते हुए संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानि कैसे बन सकती हैं?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करते समय उनके उदयावलिके भीतर प्रवेश करके संख्यात स्थितियोंके शेष रहने पर उक्त दोनों हानियाँ एकेन्द्रियोंमें पाई जाती हैं। तथा अट्ठाईस प्रकृतिसत्कर्मवाले जो संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव सम्यक्त्व और

१. ता० प्रतौ –मायामे सुट्ठु इति पाठः।

मावूरिय सगसगट्ठिदीणं संखे०भागं संखेज्जे भागे च ट्ठिदिकंडयसरूवेण घेत्तूण एइंदिए-सुववण्णेसु सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं दोण्हं हाणीणमुवलंभादो च। जदि एत्थ दो हाणीओ लब्भंति तो[1] सेसकम्माणं व अंतोमुहुत्त[2]मेत्तमंतरं किण्ण उच्चदे ? ण, सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तट्ठिदिसंतकम्मियाणं जीवाणं गहिदट्ठिदिकंडयाणमेइंदिएसु उववज्जमाणाणं बहुआणमभावादो। तं कुदो णव्वदे ? ओघम्मि सम्मत्त-सम्मामि० संखे०भागहाणि-संखे०गुणहाणीणं चउवीसमहोरत्तमेत्तंतरपरूवण[3]ण्णहाणुववत्तीदो। एवं सव्वएइंदिय-पुढवि-बादरपुढवि०-बादरपुढविपज्जत्तापज्जत्त-सुहुमपुढवि०-सुहुमपुढविपज्जत्तापज्जत्त-आउ०-बादरआउ०-बादरआउपज्जत्तापज्जत्त-सुहुमआउ०-सुहुमआउपज्जत्तापज्जत-तेउ०-बादर-तेउ०-बादरतेउपज्जत्तापज्जत्त-सुहुमतेउ०-सुहुमतेउपज्जत्तापज्जत्त-वाउ०-बादरवाउ०-बादर-वाउपज्जत्तापज्जत्त-सुहुमवाउ०-सुहुमवाउपज्जत्तापज्जत्त-सव्ववणप्फदि-सव्वणिगोदा त्ति। णवरि बादरपुढविपज्ज०-बादरआउपज्ज०-बादरतेउपज्ज०-बादरवाउपज्ज०-बादरवणप्फदि-

सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करते हुए विशुद्धिको पूरा करके अपनी अपनी स्थितिके संख्यातवें भाग और संख्यात बहुभागको स्थितिकाण्डकरूपसे ग्रहण करके एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुए हैं उनके एके-न्द्रिय पर्यायमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उक्त दोनों हानियाँ पाई जाती हैं।

**शंका**—यदि यहाँ दो हानियाँ पाई जाती हैं तो शेष कर्मोंके समान अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अन्तर क्यों नहीं कहा ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वस्थितिसत्कर्मवाले संज्ञी जीव स्थितिकाण्डकोंको ग्रहण करके एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होते हुए बहुत नहीं पाये जाते हैं।

**शंका**—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

**समाधान**—ओघमें जो सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका चौबीस दिनरात प्रमाण अन्तर कहा है वह अन्यथा बन नहीं सकता, इससे जाना जाता है कि स्थितिकाण्डकोंका घात करते हुए संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव एकेन्द्रियोंमें बहुत नहीं उत्पन्न होते हैं।

इसी प्रकार सब एकेन्द्रिय, पृथिवीकायिक, बादरपृथिवीकायिक, बादर पृथिवीकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, सूक्ष्म पृथिवीकायिक, सूक्ष्म पृथिवीकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, जलकायिक, बादर जलकायिक, बादर जलकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, सूक्ष्म जलकायिक, सूक्ष्म जलकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, अग्निकायिक, बादर अग्निकायिक, बादर अग्निकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, सूक्ष्म अग्निकायिक, सूक्ष्म अग्निकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, वायुकायिक, बादर वायुकायिक, बादर वायुकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, सूक्ष्म वायुकायिक, सूक्ष्म वायुकायिक पर्याप्त और अपर्याप्त, सब वनस्पतिकायिक और सब निगोद जीवोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि बादर पृथिवीकायिकपर्याप्त, बादर जलकायिक पर्याप्त, बादर अग्निकायिक पर्याप्त, बादर वायुकायिक पर्याप्त और बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर पर्याप्त जीवोंकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य

१. ता० प्रतौ दो हाणीओ लब्भदि तो इति पाठः। २. ता० प्रतौ व ( च ) अंतोमुहुत्त- इति पाठः। ३. ता० प्रतौ चउवीसरत्तंतरमेत्तपरूवणा- इति पाठः।

पत्तेयसरीरपज्जत्ताणमसंखेज्जभागवड्ढि० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० ।

§ ४३३. विगलिंदिएसु मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० असंखे०भागहाणि-अवट्ठि० णत्थि अंतरं । असंखे०भागवड्ढि-संखे०भागवड्ढि-संखे०भागहाणि-संखे०गुणहाणीणं जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं । तिण्हं हाणीणं जह० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे ।

§ ४३४. पंचिंदिय-पंचिं०पज्ज० मिच्छत्त०-बारसक०-णवणोक० असंखे०भागहाणि-अवट्ठि० णत्थि अंतरं । तिण्णिवड्ढि० दोण्हं हाणीणं जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । असंखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० छम्मासा । एवमणंताणु०चउक्क० । णवरि असंखे०गुणहाणि-अवत्तव्व० जह० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे । सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं । चत्तारिवड्ढि-तिण्णिहाणि-अवत्तव्व० जह० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे । अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० अंगुलस्स असंखे०भागो । एवं तस-तसपज्जत्ताणं ।

§ ४३५. जोगाणुवादेण पंचमण०-पंचवचि० मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असंखे०भागहाणि-अवट्ठि० णत्थि अंतरं । असंखेज्जभागवड्ढि-संखे०भागवड्ढि-संखे०-भागहाणि-संखे०गुणवड्ढि-संखे०गुणहाणि० ज० एगसमओ, उक्क० अंतोमु० । असंखे०-

---

अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ४३३. विकलेन्द्रियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागहानि और अवस्थितका अन्तर नहीं है । असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका अन्तर नहीं है । तीन हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है ।

§ ४३४. पंचेन्द्रिय और पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागहानि और अवस्थितका अन्तर नहीं है । तीन वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है । इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन रात है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका अन्तर नहीं है । चार वृद्धि, तीन हानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है । अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसीप्रकार त्रस और त्रसपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिए ।

§ ४३५. योगमार्गणाके अनुवादसे पांचों मनोयोगी और पांचों वचनयोगी जीवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागहानि और अवस्थितका अन्तर नहीं है । असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि, संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । असंख्यात-

गुणहाणि० जह० एगस०, उक्क० छम्मासा। एवमणंताणु०चउक्क०। णवरि असंखे०-गुणहाणि-अवत्तव्व० जह० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे। सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं। चत्तारिवड्ढि-तिण्णिहाणि-अवत्तव्व० ज० एगसमओ, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे। अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० अंगुल० असं०भागो। एवं कायजोगि-ओरालियकायजोगीणं। णवरि असंखे०भाग-वड्ढीए णत्थि अंतरं।

§ ४३६. ओरालियमिस्स० मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णत्थि अंतरं। संखे०भागवड्ढि-हाणि-संखे०गुणवड्ढि-हाणि० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु०। सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं। तिण्णिहाणि० जह० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे।

§ ४३७. वेउव्विय० मिच्छत्त०-बारसक०-णवणोक० असंखे०भागहाणि-अवट्ठि० णत्थि अंतरं। सेसपदवि० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। एवमणंताणु०चउक्क०। णवरि असंखे०गुणहाणि-अवत्तव्व० ज० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे। सम्मत्त०-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं। चत्तारिवड्ढि-तिण्णिहाणि-अवत्तव्वं जह० एगसमओ, उक्क० चउवीसमहोरत्ते [1]सादिरेगे। अवट्ठि० जह०

गुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है। इसीप्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका अन्तर नहीं है। चार वृद्धि, तीन हानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है। अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार काययोगी और औदारिककाययोगी जीवोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातभागवृद्धिका अन्तर नहीं है।

§ ४३६. औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका अन्तर नहीं है। संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि, संख्यातगुणवृद्धि, और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका अन्तर नहीं है। तीन हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है।

§ ४३७. वैक्रियिककाययोगियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यात-भागहानि और अवस्थितका अन्तर नहीं है। शेष पदविभक्तियोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यात-भागहानिका अन्तर नहीं है। चार वृद्धि, तीन हानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर एक

[1] आ. तम्रो एगसमओ चउवींसमहोरत्ते इति पाठः।

एगस०, उक्क० अंगुल० असंखे०भागो।

§ ४३८. वेउव्वियमिस्स० मिच्छत्त०-सोलसक०-णवणोक० तिण्णिवड्ढि-तिण्णिहाणि-अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० बारस मुहुत्ता। सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० ज० एगस०, उक्क० बारस मुहुत्ता। तिण्णिहाणि० ज० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे।

§ ४३९. कम्मइय० मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णत्थि अंतरं। संखे०भागवड्ढि-हाणि-संखेज्जगुणवड्ढि-हाणि० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु०। संखे०भागहाणि-संखे०गुणहाणि-असंखे०गुणहाणि० जह० एगसमओ, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे। एवमणाहारीणं पि वत्तव्वं।

§ ४४०. आहार०-आहारमिस्स० अट्ठावीसं पयडीणमसंखे०भागहाणि० जह० एगस०, उक्क० वासपुधत्तं। एवमकसा०-जहाक्खाद०। णवरि चउवीसं पयडीणं ति वत्तव्वं।

§ ४४१. वेदाणु० इत्थि० मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असंखे०भागहाणि-अवट्ठि० णत्थि अंतरं। तिण्णिवड्ढि-दोहाणि० ज० एगसमओ, उक्क० अंतोमु०।

---

समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है। अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ४३८. वैक्रियिकमिश्रकाययोगियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर बारह मुहूर्त है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर बारह मुहूर्त है। तीन हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है।

§ ४३९. कार्मणकाययोगियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका अन्तर नहीं है। संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिका तथा संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। संख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है। इसीप्रकार अनाहारकोंकी अपेक्षा कहना चाहिए।

§ ४४०. आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है। इसी प्रकार अकषायी और यथाख्यातसंयतोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनके चौबीस प्रकृतियोंकी अपेक्षा अन्तर कहना चाहिए।

§ ४४१. वेदमार्गणाके अनुवादसे स्त्रीवेदियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागहानि और अवस्थितका अन्तर नहीं है। तीन वृद्धि औरदो

**असंखे०गुणहाणि० जह० एगस०, उक्क० वासपुधत्तं। एवमणंताणु०चउक्क०। णवरि असंखे०गुणहाणि-अवत्तव्व० ओघं। सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं। चत्तारिवड्ढि-तिण्णिहाणि-अवत्तव्व० ज० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे। अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० अंगुलस्स असंखे०भागो। एवं णवुंस०। णवरि असंखे०भागवड्ढीए वि णत्थि अंतरं।**

§ ४४२. **पुरिस० मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असंखे०भागहाणि-अवट्ठि० णत्थि अंतरं। तिण्णिवड्ढि-दोहाणि० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु०। असंखे०गुणहा० जह० एगस०, उक्क० वासं सादिरेयं। णवरि मिच्छत्त० छम्मासा। एवमणंताणु०चउक्क०। णवरि असंखे०गुणहाणि-अवत्तव्व० ज० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे। सम्मत्त-सम्मामि० ओघभंगो।**

§ ४४३. **अवगद० मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-अट्ठकसाय-इत्थि-णवुंस० असंखे०भागहाणि-संखे०भागहाणि० ज० एगस०, उक्क० वासपुधत्तं। सत्तणोकसाय-चदुसंजलणाणमसंखे०भागहाणि-संखे०भागहाणि-संखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० छम्मासा। णवरि सत्तणोकसायाणं वासपुधत्तं।**

§ ४४४. **कसायाणु० कोधक० मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असंखे०भागवड्ढि-**

हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है। इसीप्रकार अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अपेक्षा जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका अन्तर ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका अन्तर नहीं है। चार वृद्धि, तीन हानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है। अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार नपुंसकवेदीकी अपेक्षासे जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातभागवृद्धिका भी अन्तर नहीं है।

§ ४४२. पुरुषवेदियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागहानि और अवस्थितका अन्तर नहीं है। तीन वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक एक वर्ष है। किन्तु इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वका उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्कका अपेक्षा जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग ओघके समान है।

§ ४४३. अपगतवेदियोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, आठ कषाय, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातभागहानि और संख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है। सात नोकषाय और चार संज्वलनोंकी असंख्यातभागहानि, संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सात नोकषायोंकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है।

§ ४४४. कषायमार्गणाके अनुवादसे क्रोधकषायवालोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और

हाणि-अवट्ठि० णत्थि अंतरं। दोवड्ढि-दोहाणि० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु०। असंखे०गुणहाणि० ज० एगसमओ, उक्क० वासं सादिरेयं। णवरि मिच्छत्त० छम्मासा। एवमणंताणु०चउक्क०। णवरि असंखे०गुणहाणि-अवत्तव्व० जह० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे। सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं। चत्तारिवड्ढि-तिण्णिहाणि-अवत्तव्व० ज० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे। अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० अंगुल० असंखेज्ज०भागो। एवं माण-माया-लोभाणं। णवरि लोभक० असंखे०गुणहाणीए छम्मासा।

§ ४४५. णाणाणुवादेण मदि०-सुद० मिच्छत्त०-सोलसक०-णवणोक० असंखे०-भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णत्थि अंतरं। दोवड्ढि-दोहाणि० ज० एगसमओ, उक्क० अंतोमु०। सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं। तिण्णिहाणि० ज० एगस०, उक्क० चउवीस अहोरत्ते सादिरेगे। विहंगणाणी० मिच्छत्त०सोलसक०-णव-णोक० असंखे०भागहाणि-अवट्ठि० णत्थि अंतरं। सेसपदवि० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं। तिण्णिहाणि० ज० एगसमओ, उक्क० चउवीस अहोरत्ते सादिरेगे।

§ ४४६. आभिणि०-सुद०-ओहि० छब्बीसं पयडीणमसंखे०भागहाणि० णत्थि

नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका अन्तर नहीं है। दो वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक एक वर्ष है। किन्तु इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका असंख्यातभागहानिका अन्तर नहीं है। चार वृद्धि, तीन हानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन-रात है। अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यातवें-भागप्रमाण है। इसी प्रकार मान, माया और लोभ कषायवालोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि लोभकषायकी असंख्यातगुणहानिका उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है।

§ ४४५. ज्ञानमार्गणाके अनुवादसे मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका अन्तर नहीं है। दो वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका अन्तर नहीं है। तीन हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है। विभंगज्ञानियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागहानि और अवस्थितका अन्तर नहीं है। शेष पद विभक्तियोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका अन्तर नहीं है। तीन हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है।

§ ४४६. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी

अंतरं। संखे०भागहाणि-संखे०गुणहाणि० जह० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे। असंखे०गुणहाणि० जह० एगस०, उक्क० छम्मासा। णवरि अणंताणु०-चउक्क० असंखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० चउवीस अहोरत्ते सादिरेगे। सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं। संखे०भागहाणि-संखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे। असंखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० छम्मासा। एवमोहिदंसण-सम्माइट्ठि त्ति।

§ ४४७. मणपज्जवणाणी० अट्ठावीसं पयडीणमसंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं। संखे०भागहाणि० ज० एगसमओ, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे। संखे०गुण-हाणि-असंखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० वासपुधत्तं। णवरि अणंताणु०चउक्क० संखे०गुणहाणि-असंखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे। णवरि दंसणतियस्स छम्मासा। एवं संजद-समाइय-छेदो०संजदे त्ति। णवरि चउवीसं पयडीणं संखे०गुणहाणि०-असंखे०गुणहाणि० उक्क० छम्मासा।

§ ४४८. परिहार० अट्ठावीसं पयडीणमसंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं। संखे० भागहाणि० ज० एगस०, उक्क० चउवीस अहोरत्ते सादिरेगे। अणंताणु०चउक्क० संखे०-गुणहाणि-असंखे०गुणहाणि० जह० एगस०, उक्क० चउवीस अहोरत्ते सादिरेगे।

---

असंख्यातभागहानिका अन्तर नहीं है। संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धी-चतुष्ककी असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका अन्तर नहीं है। संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है। इसी प्रकार अवधिदर्शनवाले और सम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिए।

§ ४४७. मनःपर्ययज्ञानियोंमे अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका अन्तर नहीं है। संख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है। संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है। किन्तु इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है। किन्तु इतनी विशेषता है कि तीन दर्शन-मोहनीयकी अपेक्षा छह महीना उत्कृष्ट अन्तर है। इसी प्रकार संयत, सामायिकसंयत और छेदोपस्थापनासंयत जीवोंके जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि चौबीस प्रकृतियोंकी संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिका उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है।

§ ४४८. परिहारविशुद्धिसंयतोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका अन्तर नहीं है। संख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य

मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि० संखे०गुणहाणि-असंखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० छम्मासा।

§ ४४९. सुहुमसांपराइय० तेवीसं पयडीणमसंखे०भागहाणि० दंसणतियस्स संखे०भागहाणि० ज० एगस०, उक्क० वासपुधत्तं। लोभसंजल० असंखे०भागहाणि-संखे०भागहाणि-संखे०गुणहाणि० जह० एगस०, उक्क० छम्मासा।

§ ४५०. संजदासंजद० मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं। संखे०भागहाणि० ज० एगस०, उक्क० चउवीस-महोरत्ते सादिरेगे। मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि० संखे०गुणहाणि-असंखे०गुणहाणि० जह० एगस०, उक्क० छम्मासा। अणंताणु०चउक्क० कसायभंगो। णवरि संखे०-गुणहाणि-असंखे०गुणहाणि० जह० एगसमओ, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे।

§ ४५१. असंजद० मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णत्थि अंतरं। दोवड्ढि-दोहाणि० जह० एगस०, उक्क० अंतोमुहुत्तं। मिच्छत्त० असंखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० छम्मासा। एवमणंताणु०चउक्क०। णवरि असंखे०गुणहाणि-अवत्तव० जह० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे। सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं। चत्तारिवड्ढि-तिण्णिहाणि-अवत्तव्व०

अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है। मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है।

§ ४४९. सूक्ष्मसांपरायिक संयतोंमें तेईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानि और तीन दर्शनमोहनीयकी संख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है। लोभसंज्वलनकी असंख्यातभागहानि, संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है।

§ ४५०. संयतसंयतामें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागहानिका अन्तर नहीं है। संख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है। मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भंग कषायके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है।

§ ४५१. असंयतोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका अन्तर नहीं है। दो वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षासे जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका अन्तर नहीं है। चार वृद्धि, तीन हानि और अवक्तव्यका

ज० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० अंगुल० असंखे०भागो।

§ ४५२. दंसणाणुवादेण चक्खुदंसणीणं पंचिंदियभंगो। लेस्साणुवादेण किण्ह०-णील-काउ० मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णत्थि अंतरं। दोवड्ढि-दोहाणि० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु०। एवमणंताणु०चउक्क०। णवरि असंखे०गुणहाणि-अवत्तव्व० ज० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे। सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं। चत्तारिवड्ढि-तिण्णिहाणि-अवत्तव्व० ज० एगस०, उक्क० चउवीस अहोरत्ते सादिरेगे। अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० अंगुलस्स असंखे०भागो।

§ ४५३. तेउ०-पम्म०मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असंखे०भागहाणि-अवट्ठि० णत्थि अंतरं। तिण्णिवड्ढि-दोहाणि० ज० एगस०, उक्क० अंतोमुहुत्तं। मिच्छत्त० असंखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० छम्मासा। एवमणंताणु०चउक्क०। णवरि असंखे०गुणहाणि-अवत्तव्व० ज० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे। सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं। चत्तारिवड्ढि-तिण्णिहाणि-अवत्तव्व० ज० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे। अवट्ठि० ज० एग०, उक्क० अंगुलस्स

जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है। अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ४५२. दर्शनमार्गणाके अनुवादसे चक्षुदर्शनवालोंका भंग पचेन्द्रियोंके समान है। लेश्यामार्गणाके अनुवादसे कृष्ण, नील और कापोत लेश्यावालोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका अन्तर नहीं है। दो वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका अन्तर नहीं है। चार वृद्धि, तीन हानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है। अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ४५३. पीत और पद्मलेश्यावाले जीवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागहानि और अवस्थितका अन्तर नहीं है। तीन वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा जानना चाहिए। किन्तु असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका अन्तर नहीं है। चार वृद्धि, तीन हानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है। अवस्थितका जघन्य अन्तर एक सयय और

असंखे० भागो ।

§ ४५४. सुक्क०ले० मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० असंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं । संखे०भागहाणि-संखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु० । असंखे०-गुणहाणि० जह० एगस०, उक्क० छम्मासा । एवमणंताणु०चउक्क० । णवरि असंखे०-गुणहाणि०-अवत्तव्व० जह० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे । सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं । चत्तारिवड्ढि-तिण्णिहाणि-अवत्तव्व० ज० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे । अवट्ठिद० ओघभंगो ।

§ ४५५. भवियाणुवादेण अभवसिद्धिय० मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० असंखे०-भागवड्ढि-हाणि०[अवट्ठि] णत्थि अंतरं । दोवड्ढि-दोहाणि० ज० एगस०, उ० अंतोमु० ।

§ ४५६. सम्मत्ताणुवादेण वेदग० मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि०-सोलसक०-णवणोक० असंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं । संखे०भागहाणि-संखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे । मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०-गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० छम्मासा । अणंताणु०चउक्क० असंखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे ।

§ ४५७. खइय० एक्कवीसपयडीणमसंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं । संखे०-भागहाणि-संखे०गुणहाणि-असंखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० छम्मासा । उवसम०

उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

§ ४५४ शुक्लेश्यावालोंमें मिथ्यात्व, बारह कपाय, और नौ नोकपायोंकी असंख्यातभाग-हानिका अन्तर नहीं है । संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है । इसीप्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा जानना चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका अन्तर नहीं है । चार वृद्धि, तीन हानि और अवक्तव्यका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन रात है । तथा अवस्थितका अन्तर ओघके समान है ।

§ ४५५. भव्यमार्गणाके अनुवादसे अभव्योंमें मिथ्यात्व, सोलह कपाय और नौ नोकपायोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका अन्तर नहीं है । दो वृद्धि और दो हानियोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ४५६. सम्यक्त्वमार्गणाके अनुवादसे वेदकसम्यग्दृष्टियोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कपाय और नौ नोककपायोंकी असंख्यातभागहानिका अन्तर नहीं है । संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है । मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है । अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है ।

§ ४५७. क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें इक्कीस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका अन्तर नहीं है । संख्यातभागहानि, संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक

अट्ठावीसं पयडीणमसंखे०भागहाणि-संखे०भागहाणि० अणंताणु०चउक्क० संखे०गुण-हाणि-असंखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे। सासण० अट्ठावीसं पयडीणमसंखेज्जभागहाणि० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। सम्मामि० असंखे०भागहाणि-संखे०भागहाणि-संखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असं०भागो। मिच्छाइट्ठी० मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० तिण्णिवड्डि-तिण्णि-हाणि-अवट्ठिदाणमोघं। सम्मत्त-सम्मामि० चदुण्हं हाणीणमोघं।

§ ४५८. सण्णियाणु० सण्णि० चक्खुदंसणिभंगो। असण्णि० मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० असंखे०भागवड्डि-हाणि-अवट्ठि० णत्थि अंतरं। संखे०भागवड्डि-हाणि-संखे०गुणवड्डि-हाणि० ओघं। सम्मत्त-सम्मामि० चदुण्हं हाणीणमोघं।

एवमंतराणुगमो समत्तो

§ ४५९. भावो-सव्वत्थ ओदइओ भावो। एवं जाव०।

❀ अप्पाबहुअं

§ ४६०. सुगममेदं, अहियारसंभालणफलत्तादो।

❀ **मिच्छत्तस्स सव्वत्थोवा असंखेज्जगुणहाणिकम्मंसिया।**

समय और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है। उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानि और संख्यातभागहानिका तथा अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी संख्यातगुणहानि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात है। सासादनसम्यग्दृष्टियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंमें असंख्यातभागहानि, संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। मिथ्यादृष्टियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थित का अन्तर ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार हानियोंका अन्तर ओघके समान है।

§ ४५८. संज्ञी मार्गणाके अनुवादसे संज्ञियोंमें चक्षुदर्शनवालोंके समान भंग है। असंज्ञियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका अन्तर नहीं है। संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि, संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिका अन्तर ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी चार हानियोंका अन्तर ओघके समान है।

इसप्रकार अन्तरानुगम समाप्त हुआ।

§ ४५९. भाव सर्वत्र औदयिक है। इस प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इस प्रकार भावानुगम समाप्त हुआ।

❀ **अब अल्पबहुत्वानुगमका अधिकार है।**

§ ४६०. यह सूत्र सुगम है, क्योंकि इसका फल केवल अधिकारकी सम्हाल करना है।

❀ **मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं।**

§ ४६१. कुदो ? दंसणमोहक्खवगाणं संखेज्जत्तादो । णेमो हेदू असिद्धो, मणुसपज्जत्तरासिं मोत्तूण अणत्थ तक्खवणाभावादो । ण च मणुसपज्जत्तरासी सव्वो वि दंसणमोहणीयं खवेदि, अट्ठुत्तरछस्सदमेत्तजीवाणं चेव तक्खवणुवलंभादो । ण च ते सव्वे एगसमयमसंखे०गुणहाणिं करेंति, अट्ठुत्तरसयजीवाणं चेव एगसमए असंखे०-गुणहाणिं कुणंताणमुवलंभादो । अणियट्टिकरणद्धाए संखे०सहस्समेत्ताणि असंखे०गुण-हाणिट्ठिदिकंडयाणि । तेसु कंडएसु एगसमयम्मि[1] वट्टमाणणाणाजीवे घेत्तूण असंखे०-गुणहाणिट्ठिदिविहत्तिया जीवा सव्वत्थोवा त्ति भणिदा ।

*** संखेज्जगुणहाणिकम्मंसिया असंखेज्जगुणा ।**

§ ४६२. कुदो ?, सण्णिपज्जत्तापज्जत्ताणं जगपदरस्स असंखे०भागमेत्ताण-मसंखे०भागत्तादो । तेसिं को पडिभागो ? अंतोमुहुत्तं । छस्समयाहियअसंखे०[2]भागहाणि-अवट्ठिदाणमद्धाओ त्ति वुत्तं होदि ।

*** संखेज्जभागहाणिकम्मंसिया संखेज्जगुणा ।**

§ ४६३. कुदो ? तिव्वविसोहिए परिणदजीवेहिंतो मज्झिमविसोहीए परिणद-जीवाणं संखेज्जगुणत्तादो । का विसोही णाम ? ट्ठिदिखंडयघादहेदुजीवपरिणामा विसोही णाम । तासिं किं पमाणं ? असंखे०लोगमेत्ताओ जहण्णविसोहिप्पहुडि

§ ४६१. क्योंकि दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवाले जीव संख्यात हैं । यह हेतु असिद्ध नहीं है, क्योंकि मनुष्य पर्याप्तराशिको छोड़कर अन्यत्र मिथ्यात्वका क्षय नहीं होता है । उसमें भी सभी मनुष्यपर्याप्तराशि दर्शनमोहनीयका क्षय नहीं करती है, क्योंकि छह सौ आठ जीव ही उसका क्षय करते हुए पाये जाते हैं । उसमें भी वे सब जीव एक समयमें असंख्यातगुण-हानि नहीं करते हैं, क्योंकि एक समयमें अधिकसे अधिक एक सौ आठ जीव ही असंख्यात-गुणहानि करते हुए पाये जाते हैं । अनिवृत्तिकरणके कालमें संख्यात हजार असंख्यातगुणहानि स्थितिकाण्डक होते हैं । उन काण्डकोंमें एक समयमें विद्यमान नाना जीवोंकी अपेक्षा असंख्यात-गुणहानि स्थितिविभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं यह उक्त सूत्रका अभिप्राय है ।

*** संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं ।**

§ ४६२. क्योंकि ये जीव जगप्रतरके असंख्यातवें भागप्रमाण संज्ञी पर्याप्त और अपर्याप्तकों के असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । यह प्रमाण लानेके लिए प्रतिभाग क्या है ? अन्तर्मुहूर्तकाल प्रतिभाग है । असंख्यातभागहानि और अवस्थितके कालमें छह समय मिला देने पर यह काल होता है यह इसका तात्पर्य है ।

*** संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं ।**

§ ४६३. क्योंकि तीव्र विशुद्धिसे परिणत हुए जीवोंकी अपेक्षा मध्यम विशुद्धिसे परिणत हुए जीव संख्यातगुणे होते हैं ।

**शंका**—विशुद्धि किसे कहते हैं ?

**समाधान**—स्थितिकाण्डकके घातके कारणभूत जीवोंके परिणामोंको विशुद्धि कहते हैं ।

**शंका**—इन विशुद्धियोंका प्रमाण कितना है ?

1. ता०प्रतौ तेसिमुदएसु एगसमयम्मि इति पाठः । २. आ०प्रतौ छमासाहियअसंखे० इति पाठः ।

समयाविरोहेण छवड्ढिमुवगयाओ[1] कज्जभेदेण चउब्भेदसमुवगयाओ। काणि ताणि चत्तारि कज्जाइं? अधट्ठिदिगलणा असंखे०भागहाणीए ट्ठिदिखंडयघादो संखे०भागहाणीए ट्ठिदिखंडयघादो संखेज्जगुणहाणीए ट्ठिदिखंडयघादो चेदि। तत्थ एगभवम्मि संखेज्जगुणहाणिहेदुपरिणामेसु परिणमणवारा एगजीवस्स थोवा। संखे०भागहाणिहेदुविसोहिट्ठाणेसु परिणमणवारा संखे०गुणा, संखेज्जगुणहाणिहेदुविसोहिट्ठाणेहिंतो संखे०भागहाणिहेदुविसोहिट्ठाणाणं संखे०गुणत्तादो थोवजत्तेण पाविज्जमाणत्तादो वा। असंखे०भागहाणीए ट्ठिदिखंडयघादणवारा संखे०गुणा। कारणं पुव्वं व वत्तव्वं। अधट्ठिदिगालणवारा असंखे०गुणा, सगट्ठिदिसंतादो हेट्ठिमट्ठिदिबंधहेदुपरिणामाणमसंखे०गुणत्तादो। तेण संखेज्जगुणहाणिविहत्तिएहिंतो संखेज्जभागहाणिविहत्तिया संखे०गुणा त्ति सिद्धं। संखे०गुणहाणिं सण्णिपंचिंदिया चेव कुणंति। संखेज्जभागहाणिं पुण सण्णिपंचिंदिया असण्णिपंचिंदिया चउरिंदिय-तीइंदिय-बीइंदिया च कुणंति। तेण संखेज्जगुणहाणिविहत्तिएहिंतो संखेज्जभागहाणिविहत्तिएहिं असंखेज्जगुणेहि होदव्वमिदि? ण, पंचिंदिएहिंतो तसरासीए असंखेज्जगुणत्ताभावादो। सण्णिपंचिंदियाणं संखेज्जगुणहाणिविहत्ति-

**समाधान**—इनका प्रमाण असंख्यात लोक है। जो जघन्य विशुद्धिसे लेकर यथाशास्त्र छह वृद्धियोंको प्राप्त होती हुई कार्यभेदसे चार प्रकारकी हैं।

**शंका**—ये चार कार्य कौनसे है?

**समाधान**—अधःस्थितिगलना, असंख्यातभागहानिके द्वारा स्थितिकाण्डकघात, संख्यातभागहानिके द्वारा स्थितिकाण्डकघात और संख्यातगुणहानिके द्वारा स्थितिकाण्डकघात ये चार कार्य हैं।

इनमें एक भवमें एक जीवके संख्यातगुणहानिके कारणभूत परिणामोंमें परिणमन करनेके वार सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यातभागहानिके कारणभूत विशुद्धिस्थानोंमें परिणमन करनेके बार संख्यातगुणे है, क्योंकि संख्यातगुणहानिके कारणभूत विशुद्धिस्थानोंसे संख्यातभागहानिके कारणभूत विशुद्धिस्थान सख्यातगुणे होते है। अथवा संख्यातभागहानिके कारणभूत विशुद्धिस्थान अल्प यत्नसे प्राप्त होते है, इसलिये संख्यातगुणहानिके कारणभूत विशुद्धिस्थानोंसे ये संख्यातगुणे होते है। इनसे असंख्यातभागहानिके द्वारा होनेवाले स्थितिकाण्डकघातके बार संख्यातगुणे है। यहाँ भी कारण पहलेके समान कहना चाहिये। इनसे अधःस्थितिगलनाके बार असंख्यातगुणे है, क्योंकि अपने स्थितिसत्त्वसे अधस्तन स्थितिबन्धके कारणभूत परिणाम असंख्यातगुणे होते हैं। इसलिये संख्यातगुणहानिविभक्तिवाले जीवोंसे संख्यातभागहानिविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे होते हैं यह सिद्ध हुआ।

**शंका**—संख्यातगुणहानिको संज्ञी पञ्चेन्द्रिय ही करते है। परन्तु सख्यातभागहानिको संज्ञी पंचेन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय, चौइन्द्री, तीन्द्रिय और दोइन्द्रिय जीव करते हैं, अतः संख्यातगुणहानिविभक्तिवाले जीवोंसे संख्यातभागहानिविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे होने चाहिये?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि पंचेन्द्रिय जीवोंसे त्रसजीवराशि असंख्यातगुणी नहीं है।

संज्ञी पंचेन्द्रियोंमें संख्यातगुणहानिस्थितिविभक्तिवाले जीवोंसे वहीं पर संख्यातभाग-

१ ता०प्रतौ छवड्ढिमुवगयादो ओ इति पाठः।

एहिंतो तत्थेव संखेज्जभागहाणिविहत्तिया संखे०गुणा। असण्णिपंचिंदिएसु संखे०भागहाणिविहत्तिया संखे०गुणा। सण्णिपंचिंदिएहिंतो असंखे०गुणेसु असण्णिपंचिंदिएसु सत्थाणे संखे०गुणहाणिविवज्जिएसु संखे०भागहाणिविहत्तिएहि असंखे०गुणेहि होदव्वं। ण च सण्णीहिंतो असण्णीणमसंखेज्जगुणत्तमसिद्धं। सव्वत्थोवा सण्णिणवुंसयवेदगब्भोवक्कंतिया। सण्णिपुरिसवेदगब्भोवक्कंतिया संखेज्जगुणा। सण्णिइत्थिवेदगब्भोवक्कंतिया संखे०गुणा। सण्णिणवुंसयवेदसम्मुच्छिमपज्जत्ता संखे०गुणा। सण्णिणवुंसयवेदसम्मुच्छिमअपज्जत्ता असंखे०गुणा। सण्णिइत्थि-पुरिसवेदगब्भोवक्कंतिया असंखे०वस्साउआ दो वि तुल्ला असंखे०गुणा। असण्णिणवुंसयवेदगब्भोवक्कंतिया संखे०गुणा। असण्णिपुरिसवेदगब्भोवक्कंतिया संखे०गुणा। असण्णिइत्थिवेदगब्भोवक्कंतिया संखे०गुणा। असण्णिणवुंसयवेदसम्मुच्छिमपज्जत्ता संखे०गुणा। असण्णिणवुंसयवेदसम्मुच्छिमअपज्जत्ता असंखेज्जगुणा त्ति एदम्हादो खुद्दाबंधसुत्तादो असंखे०गुणत्तसिद्धीए? ण एस दोसो, जदि वि सण्णिपंचिंदिएहिंतो असण्णिपंचिंदिया असंखे०गुणा होंति तो वि संखेज्जभागहाणिविहत्तिया संखेज्जगुणा चेव, तिव्वविसोहीए जीवाणं तत्थ बहुआणमभावादो। बहुआ णत्थि त्ति कुदो णव्वदे? संखे०गुणहाणि-

हानिस्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे असंज्ञी पंचेन्द्रियोंमें संख्यातभागहानिस्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं।

**शंका**—चूंकि संज्ञी पंचेन्द्रियोंसे असंख्यातगुणे असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीव स्वस्थानमें संख्यातगुणहानिसे रहित हैं अतः उनमें संख्यातभागहानिस्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यातभागहानिस्थितिविभक्तिवाले संज्ञी जीवोंसे असंख्यातगुणे होने चाहिये? यदि कहा जाय कि संज्ञियोंसे असंज्ञी असंख्यातगुणे हैं यह बात असिद्ध है सो भी बात नहीं है, क्योंकि गर्भसे उत्पन्न हुए नपुंसकवेदी संज्ञी जीव सबसे थोड़े हैं। गर्भसे उत्पन्न हुए पुरुषवेदी संज्ञी जीव संख्यातगुणे हैं। गर्भसे उत्पन्न हुए स्त्रीवेदी संज्ञी जीव संख्यातगुणे हैं। नपुंसकवेदी संज्ञी सम्मूर्छन पर्याप्त जीव संख्यातगुणे हैं। नपुंसकवेदी संमूर्छन अपर्याप्त संज्ञी जीव असंख्यातगुणे हैं। गर्भसे उत्पन्न हुए स्त्रीवेदी और पुरुषवेदी असंख्यातवर्षकी आयुवाले दोनों ही समान होते हुए असंख्यातगुणे हैं। गर्भसे उत्पन्न हुए नपुंसकवेदी असंज्ञी जीव संख्यातगुणे हैं। गर्भसे उत्पन्न हुए पुरुषवेदी असंज्ञी जीव संख्यातगुणे हैं। गर्भसे उत्पन्न हुए स्त्रीवेदी असंज्ञी जीव संख्यातगुणे हैं। असंज्ञी नपुंसकवेदवाले संम्मूर्छन पर्याप्त जीव संख्यातगुणे हैं। असंज्ञी नपुंसकवेदवाले संमूर्छन अपर्याप्त जीव असंख्यातगुणे हैं। इस प्रकार खुद्दाबन्धके इस सूत्रसे संज्ञियोंसे असंज्ञी जीव असंख्यातगुणे है यह बात सिद्ध हो जाती है?

**समाधान**—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि यद्यपि संज्ञी पंचेन्द्रियोंसे असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीव असंख्यातगुणे होते हैं तो भी संख्यातभागहानिविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे ही होते होते हैं। क्योंकि वहाँ पर बहुत जीवोंके तीव्र विशुद्धि नहीं पाई जाती है।

**शंका**—वे बहुत नहीं हैं यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

**समाधान**—संख्यातगुणहानिविभक्तिवालोंसे संख्यातभागहानिविभक्तिवाले जीव

विहत्तिएहिंतो संखे०भागहाणिविहत्तिया संखेज्जगुणा त्ति चुण्णसुत्तादो णव्वदे। चउरिंदिएसु संखे०भागहाणिवि० विसेसाहिया। तीइंदिएसु संखे०भागहाणिवि० विसे०। बीइंदिएसु संखे०भागहाणि० वि०, विसेसाहियकमेण रासीणमवट्ठाणादो। तदो संखे०-गुणहाणिविहत्तिएहिंतो संखे०भागहाणिविहत्तियाणं सिद्धं संखेज्जगुणत्तं।

*** संखेज्जगुणवड्ढिकम्मंसिया असंखेज्जगुणा।**

§ ४६४. एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे। तं जहा—संखेज्जगुणवड्ढी सण्णिपंचिंदिएसु चेव होदि ण अण्णत्थ, संखेज्जगुणवड्ढिकारणपरिणामाणमण्णत्थाभावादो। तं पि कुदो? साभावियादो। ते च तत्थतण संखे०गुणवड्ढिविहत्तिया जीवा संखे०गुणहाणि-विहत्तिएहि सरिसा। तं कुदो णव्वदे? विदियादिपुढवीसु सोहम्मादिकप्पेसु च संखेज्ज-गुणवड्ढि-संखे०गुणहाणिकम्मंसिया दो वि सरिसा त्ति उच्चारणवयणादो णव्वदे। एवं संते संखे०गुणहाणिविहत्तिए पेक्खिदूण संखे०गुण-संखे०भागहाणिविहत्तिएहिंतो संखेज्जगुणवड्ढिविहत्तियाणमसंखे०गुणत्तं ण घडदि त्ति ण पच्चवट्ठेयं, एइंदिएहिंतो

संख्यातगुणे हैं इस चूर्णिसूत्रसे जाना जाता है।

चतुरिन्द्रियोंमें संख्यातभागहानिविभक्तिवाले जीव विशेष अधिक हैं। तेइन्द्रियोंमें संख्यातभागहानिविभक्तिवाले जीव विशेष अधिक हैं। दोइन्द्रियोंमें संख्यातभागहानिविभक्ति-वाले जीव विशेष अधिक हैं, क्योंकि ये राशियां उत्तरोत्तर विशेष अधिक क्रमसे अवस्थित हैं। अतः संख्यातगुणहानिस्थितिविभक्तिवालोंसे संख्यातभागहानिस्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं यह बात सिद्ध हुई।

*** संख्यातगुणवृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं।**

§ ४६४. अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं। जो इस प्रकार है—संख्यातगुणवृद्धि संज्ञी पंचेन्द्रियोंमें ही होती है अन्यत्र नहीं होती, क्योंकि अन्यत्र संख्यातगुणवृद्धिके कारणभूत परिणाम नहीं पाये जाते।

**शंका**—ऐसा क्यों होता है?

**समाधान**—स्वभाव से होता है।

और वे संख्यातगुणवृद्धिस्थितिविभक्तिवाले जीव वहांके संख्यातगुणहानिस्थिति-विभक्तिवाले जीवोंके समान होते हैं।

**शंका**—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

**समाधान**—दूसरी आदि पृथिवियोंमें और सौधर्मादि कल्पोंमें संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानि कर्मवाले दोनों प्रकारके जीव समान हैं, इस प्रकारके उच्चारणावचनसे जाना जाता है।

**शंका**—ऐसा रहते हुए संख्यातगुणहानिविभक्तिवाले जीवोंको देखते हुए संख्यात-गुणहानि और संख्यातभागहानिविभक्तिवाले जीवोंसे संख्यातगुणवृद्धिविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं यह बात नहीं बनती है?

**समाधान**—ऐसा निश्चय नहीं करना चाहिए, क्योंकि जो एकेन्द्रियोंमेंसे विकलेन्द्रिय

**विगलिंदिय-सण्णि-असण्णिपंचिंदियपज्जत्तापज्जत्तेसुप्पज्जमाणाणं विगलिंदिएहिंतो सण्णि-असण्णिपंचिंदियपज्जत्तापज्जत्तएसुप्पज्जमाणाणं च संखेज्जगुणवड्ढिं कुणंताणं संखेज्ज-भागहाणिविहत्तिएहिंतो असंखे०गुणाणमुवलंभादो। तेसिमुप्पज्जमाणाणं संखेज्जभाग-हाणिविहत्तिएहिंतो असंखेज्जगुणत्तं कुदो णव्वदे? एदम्हादो चेव जइवसहाइरियमुह-कमलविणिग्गयचुण्णिसुत्तादो। सुत्तमण्णहा किण्ण होदि? ण, राग-दोस-मोहाभावेण पमाणत्तमुवगयजइवसहवयणस्स असच्चत्तविरोहादो। जुत्तीदो वा णव्वदे। तं जहा—बीइंदियादितसरासिमेकट्टं करिय तिण्हं वड्ढीणं तिण्हं हाणीणमवट्ठाणस्स य अद्धा-समासेण भागे हिदे संखे०भागहाणिविहत्तिया होंति, एगसमयसंचयत्तादो। संखे०गुण-हाणिविहत्तिया वि एगसमयसंचिदा चेव होदूण संखे०भागहाणिविहत्तिएहिंतो संखेज्ज-गुणहीणा जादा, सण्णिपंचिंदिएसु चेव संखे०गुणहाणीए संभवादो। तत्थ वि संखे०भाग-हाणिं संखेज्जवारं कादूण पुणो एगवारं सव्वसण्णिपंचिंदियजीवाणं संखे०गुणहाणिं कुणमाणाणमुवलंभादो च। संखेज्जभागहाणिविहत्तिया पुण तत्तो संखे०गुणा होंति, सव्वतसरासीसु संभवादो संखेज्जभागहाणिपाओग्गपरिणामेसु बहुवारं परिणदभावुव-लंभादो च। संपहि तसरासिमावलियाए असंखे०भागेण सगुवक्कमणकालेण खंडिदे**

और संज्ञी व असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंमें उत्पन्न होते हैं और जो विकले न्द्रियोंमेंसे संज्ञी और असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त और अपर्याप्तकोंमें उत्पन्न होते हैं जो कि संख्यातगुणवृद्धिको करते हैं वे संख्यातभागहानिविभक्तिवालोंसे असंख्यातगुणे पाये जाते हैं।

**शंका**—ये उत्पन्न होनेवाले जीव संख्यातभागहानिविभक्तिवाले जीवोंसे असंख्यात-गुणे होते हैं, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

**समाधान**—यतिवृषभ आचार्यके मुखकमलसे निकले हुए इसी चूर्णिसूत्रसे जाना जाता है।

**शंका**—सूत्र अन्यथा क्यों नहीं होता है?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि राग, द्वेष और मोहसे रहित होनेके कारण यतिवृषभ आचार्य प्रमाणभूत हैं, अतः उनके वचनको असत्य माननेमें विरोध आता है।

अथवा, संख्यातभागहानिविभक्तिवालोंसे संख्यातगुणवृद्धिविभक्तिवाले जीव असंख्यात-गुणे हैं यह बात युक्तिसे जानी जाती है। जो इस प्रकार है—द्वीन्द्रियादिक त्रसराशिको एकत्र करके उसमें तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थानके कालोंके जोड़का भाग देने पर संख्यातभागहानिविभक्तिवाले जीव होते हैं, क्योंकि इनका संचय एक समयमें होता है। संख्यातगुणहानिविभक्तिवाले जीव भी एक समयद्वारा ही संचित होते हैं, फिर भी वे संख्यात-भागहानिविभक्तिवालोंसे संख्यातगुणे हीन होते हैं, क्योंकि संख्यातगुणहानि संज्ञी पंचेन्द्रियोंमें ही संभव है। और वहांपर भी सब संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव संख्यातभागहानिको संख्यात बार करके पुनः एक बार संख्यातगुणहानिको करते हैं। संख्यातभागहानिविभक्तिवाले जीव तो इससे संख्यातगुणे होते हैं, क्योंकि सब त्रस राशियोंमें संख्यातभागहानि संभव है और संख्यातभागहानिके योग्य परिणाम बहुतबार होते हुए पाये जाते हैं। अब त्रसराशिको आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण अपने उपक्रमणकालके द्वारा खण्डित करनेपर संख्यातगुणवृद्धि

संखे०गुणवड्डिविहत्तिया असंखे०गुणा होंति । को गुणगारो ? संखेज्जभागहाणिविहत्तियाणमंतोमुहुत्तभागहारे संखेज्जगुणवड्डिविहत्तियाणं भागहारेण आवलियाए असंखे०भागेण भागे हिदे जं लद्धं सो गुणगारो । तसट्ठिदिं समाणिय एइंदिएसु उप्पज्जमाणतसकाइया तसरासिस्स असंखे०भागमेत्ता । तेसिं भागहारो पलिदो० असंखे०भागो । तं जहा—अंतोमुहुत्तकालब्भंतरे जदि आवलियाए असंखे०भागमेत्तो उवक्कमणकालो लब्भदि तो तसट्ठिदीए किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए पलिदोवमस्स असंखे०भागमेत्तो उवक्कमणकालो लब्भदि । पुणो एत्तियमेत्तउवक्कमणकालम्हि जदि तसरासिस्स संचओ लब्भदि तो एगसमयम्मि किं लभामो त्ति तसोवक्कमणकालेण तसरासिम्हि ओवट्टिदे एइंदिएहिंतो तसकाइएसु उप्पज्जमाणरासी होदि, आयस्स वयाणुसारित्तादो । हेदू णायमसिद्धो, तसरासीए णिम्मूलक्खयाभावेण तस्स सिद्धीदो । एदे संखेज्जगुणवड्डिविहत्तिया संखे०गुणहाणिविहत्तिएहिंतो असंखेज्जगुणहीणा, तब्भागहारं पेक्खिय असंखेज्जगुणभागहारत्तादो । तेण संखे०भागहाणिविहत्तिएहिंतो संखेज्जगुणवड्डिविहत्तियाणमसंखे०गुणत्तं ण घडदि त्ति ? ण, एवं संते विगलिंदियरासीणं पंचिंदियअपज्जत्तरासीए पंचिंदियसंखेज्जवस्साउअपज्जत्तरासीए

विभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे होते हैं ।

**शंका**—गुणकार क्या है ?

**समाधान**—संख्यातभागहानिविभक्तिवालोंके अन्तर्मुहूर्तप्रमाण भागहारमें संख्यातगुणवृद्धिविभक्तिवालोंके आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण भागहारका भाग देनेपर जो लब्ध आवे वह गुणकार है ।

त्रसोंकी स्थितिको समाप्त करके एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होनेवाले त्रसकायिक जीव त्रसराशिके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं और उनका भागहार पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । जो इस प्रकार है—अन्तर्मुहूर्त कालके भीतर यदि आवलिके असंख्यातवें भाग प्रमाण उपक्रमण काल प्राप्त होता है तो सब त्रसस्थितिकालमें कितना उपक्रमणकाल प्राप्त होगा । इस प्रकार फलगुणित इच्छाराशिको प्रमाण राशिसे भाजित करने पर पल्य का असंख्यातवां भाग उपक्रमणकाल प्राप्त होता है । पुनः इतने उपक्रमण कालमें यदि त्रस राशिका संचय प्राप्त होता है तो एक समय में कितना प्राप्त होगा, इस प्रकार त्रसराशिके उपक्रमण कालसे त्रसराशिके भाजित करने पर एकेन्द्रियोंमेंसे त्रसकायिकोंमें उत्पन्न होनेवाली राशि प्राप्त होती है, क्योंकि आय व्ययके अनुसार होती है । यह हेतु असिद्ध नहीं है, क्योंकि त्रसराशिका समूल नाश नहीं होता । अतः उसकी सिद्धि हो जाती है ।

**शंका**—ये संख्यातगुणवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणहानिविभक्तवाले जीवोंसे असंख्यात गुणे हीन होते हैं, क्योंकि संख्यातगुणवृद्धिवालोंके भागहारको देखते हुए संख्यातगुणहानि विभक्तिवालोंका भागहार असंख्यातगुणा बड़ा है । अतः संख्यातभागहानिविभक्तिवालोंसे संख्यातगुणवृद्धिविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे होते हैं यह बात नहीं बनती है ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि ऐसा मानने पर विकलेन्द्रिय जीवराशि, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त जीवराशि और पचेन्द्रिय संख्यात वर्ष आयुवाली पर्याप्त जीवराशिका प्रमाण जगप्रतरमें पल्यके

च जगपदरं पलिदो०असंखे०भागमेत्तपदरंगुलेहि खंडिदएगखंडपमाणत्तप्पसंगादो। तम्हा तप्पाओग्गसंखेज्जावलियमेत्तकालब्भंतरुवक्कमणकालसंचिदेण तसरासिणा होदव्वं, अण्णहा तेसिं पदरंगुलस्स असंखे०भागेण संखे०भागेण संखेज्जपदरंगुलेहि य खंडिद-जगपदरपमाणत्ताविरोहादो। तसवियलिंदिय-पंचिंदियट्ठिदीओ समाणेंतजीवाणं पउर-मसंभवादो च, आयाणुसारी वओ त्ति कट्टु तसकाइएहिंतो एइंदिएसु आगच्छंता जग-पदरमावलियाए असंखे०भागमेत्तपदरंगुलेहि खंडिदेयखंडमेत्ता होंति। पुणो एइंदिएहिंतो तत्तियमेत्ता चेव तसेसुप्पज्जंति तेण संखेज्जभागहाणिविहत्तिएहिंतो संखे०गुणवड्ढिविहत्तियाणमसंखेज्जगुणत्तं[1] घडदि त्ति घेत्तव्वं।

❀ संखेज्जभागवड्ढिकम्मंसिया संखेज्जगुणा।

§ ४६५ सत्थाणे संखे०भागहाणिविहत्तिएहिंतो संखे०भागवड्ढिविहत्तिया सरिसा। कुदो ? संखेज्जभागहाणिणिमित्तविसोहीहिंतो संखे०भागवड्ढिणिमित्तसंकिलेसाणं सरिसत्तादो। एवं संते संखेज्जभागहाणिविहत्तिएहिंतो असंखे०गुण-संखे०गुणवड्ढि-विहत्तीए पेक्खिदूण कथं संखेज्जभागवड्ढिविहत्तियाणं संखे०गुणत्तं घडदे ? ण एस दोसो, संकिलेसेण विणा जादिविसेसेण वड्ढिदसंखेज्जभागवड्ढिविहत्तीए पेक्खिदूण संखेज्ज-

असंख्यातवें भागप्रमाण प्रतरांगुलोंका भाग देनेपर जो भाग आवे उतना प्राप्त होता है। इसलिए तत्प्रायोग्य संख्यात आवलिकालनिष्पन्न उपक्रमण कालके द्वारा संचित त्रसराशि होनी चाहिए। अन्यथा उनका प्रमाण जगप्रतरमें प्रतरांगुलके असंख्यातवें भाग, प्रतरांगुलके संख्यातवें भाग और संख्यात प्रतरांगुलका भाग देने पर जितना प्राप्त हो उतना होनेमें विरोध आता है। और त्रस, विकलेन्द्रिय और पंचेन्द्रियोंकी स्थितिको समाप्त करनेवाले प्रचुर जीवोंका पाया जाना संभव नहीं है। अतः आयके अनुसार व्यय होता है ऐसा समझ कर त्रसकायिकोंमेंसे एकेन्द्रियोंमें आनेवाले जीवोंका प्रमाण जगप्रतरमें आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण प्रतरांगुलोंका भाग देने पर जो एक भाग प्राप्त होगा उतना होता है। पुनः एकेन्द्रियोंमेंसे उतने ही जीव त्रसोंमें उत्पन्न होते हैं, अतः संख्यातभागहानिस्थितिविभक्तिवालोंसे संख्यातगुणवृद्धिस्थितिविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे बन जाते हैं, ऐसा ग्रहण करना चाहिए।

❀ संख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं।

§ ५६५. स्वस्थानमें संख्यातभागहानिविभक्तिवालोंके संख्यातभागवृद्धिविभक्तिवाले जीव समान हैं, क्योंकि संख्यातभागहानिकी निमित्तभूत विशुद्धिसे संख्यातभागवृद्धिके निमित्तभूत संक्लेश परिणाम समान हैं।

**शंका**—ऐसा रहते हुए संख्यातभागहानिविभक्तिवालोंसे असंख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिविभक्तिवाले जीवोंको देखते हुए संख्यातभागहानिविभक्तिवाले जीवोंसे संख्यातभागवृद्धिविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे कैसे बन सकते हैं।

**समाधान**—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि संक्लेशके बिना जातिविशेषसे वृद्धिको प्राप्त हुए संख्यातभागवृद्धिविभक्तिवाले जीवोंको देखते हुए उनके संख्यातगुणे होने में कोई विरोध

१. ता० प्रतौ विहत्तियाण संखेज्जगुणत्तं, आ० प्रतौ विहत्तिएण संखेज्जगुणत्तं इति पाठः।

गुणत्तं 'पडि विरोहाभावादो। एवं पि संखेज्जभागवड्ढिविहत्तिएहिंतो संखे०गुणवड्ढि-विहत्तिया संखे०गुणा। कुदो ? एगजादीदो विणिग्गयजीवाणं जादिवसेण संचिदजीवपडि-भागेण विहंजिदूण गमणुवलंभादो। तंजहा–बीइंदिएहिंतो विणिग्गंतूण सण्णिपंचिंदिएसु उपज्जमाणा सव्वत्थोवा। असण्णिपंचिंदिएसु उप्पज्जमाणा असंखेज्जगुणा। चउरिंदिएसु उप्पज्जमाणा विसेसाहिया। तीइंदिएसु उप्पज्जमाणा विसे०। एइंदिएसु उप्पज्जमाणा असंखेज्जगुणा। एवं तीइंदिय-चउरिंदिय-असण्णिपंचिंदिय-सण्णिपंचिंदिय-एइंदियाणं च वत्तव्वं। तत्थ बीइंदियाणं तीइंदिए उप्पण्णाणं संखे०भागवड्ढी चेव, पणुवीस-सागरोवमट्ठिदीए सह तीइंदिएसु उप्पण्णाणं पि अपज्जत्तकाले पंचाससागरोवममेत्तट्ठिदि-बंधाभावादो। ण च जहण्णट्ठिदीए सह तीइंदिएसुप्पण्णबीइंदियाणं पि संखेज्जगुणवड्ढी अत्थि, पलिदोवमस्स संखे०भागेणूणपणुवीससागरोवमेहिंतो तीइंदिएसु वड्ढिदपणुवीस-सागरोवमाणं पलिदो०संखेभागेणूणाणं देसूणत्तुवलंभादो। तम्हा तीइंदिएसुप्पण्णबीइंदियाणं संखे०भागवड्ढी चेव। चउरिंदिएसु असण्णिपंचिंदिएसु सण्णिपंचिंदिएसु च उप्पण्णबीइंदियाणं संखे०गुणवड्ढी चेव। तीइंदियाणं चउरिंदिएसुप्पण्णाणं संखे०भागवड्ढी असण्णिपंचिंदिएसु सण्णिपंचिंदिएसु च उप्पण्णाणं संखे०गुणवड्ढी। असण्णिपंचिंदियाणं सण्णीसुप्पण्णाणं

नहीं आता है।

**शंका**—ऐसा रहते हुए भी संख्यातभागवृद्धिविभक्तिवालोंसे संख्यातगुणवृद्धिविभक्ति-वाले जीव संख्यातगुणे होते है, क्योंकि जातिवशसे संचित जीवराशिरूप प्रतिभागसे विभक्त करनेपर जितना प्रमाण आवे उतने जीव एक जाति में निकलकर दूसरी जातिमें जाते हुए पाये जाते है। खुलासा इस प्रकार है—द्वीन्द्रियोंमेंसे निकलकर संज्ञी पंचेन्द्रियोंमे उत्पन्न होने-वाले जीव सबसे थोड़े है। असंज्ञी पंचेन्द्रियोंमे उत्पन्न होनेवाले जीव असंख्यातगुणे है। चौइन्द्रियोंमे उत्पन्न होनेवाले जीव विशेष अधिक है। तीनइन्द्रियोंमे उत्पन्न होनेवाले जीव विशेष अधिक है। एकेन्द्रियोंमे उत्पन्न होनेवाले जीव असंख्यातगुणे है। इसी प्रकार तीनइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय, संज्ञी पंचेन्द्रिय और एकेन्द्रिय जीवोंका कथन करना चाहिये। उनमें जो द्वीन्द्रिय जीव तीनइन्द्रियोंमे उत्पन्न होते है उनके संख्यातभागवृद्धि ही पाई जाती है, क्योंकि पच्चीस सागर स्थितिके साथ तीनइन्द्रियोंमे उत्पन्न होनेवाले जीवोंके भी अपर्याप्तकालमें पचास सागर स्थितिबन्ध नहीं होता। और जो द्वीन्द्रिय जीव जघन्य स्थितिके साथ तीन इन्द्रियोंमें उत्पन्न होते है उनके भी संख्यातगुणवृद्धि नहीं होती है, क्योंकि पल्यके संख्यातवें भागकम पच्चीस सागरसे तीन इन्द्रियोंमे बढ़ाई गई पल्यके संख्यातवें भागकम पच्चीस सागर स्थिति संख्यातगुणी न होकर कुछ कम संख्यातगुणी होती है। इसलिये जो द्वीन्द्रिय त्रीन्द्रियोंमे उत्पन्न होते है उनके संख्यातभागवृद्धि ही होती है। तथा जो द्वीन्द्रियजीव चौइन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय और संज्ञी पंचेन्द्रियोंमे उत्पन्न होते है उनके संख्यातगुणवृद्धि ही होती है। तथा जो तीनइन्द्रिय जीव चौइन्द्रियोंमे उत्पन्न होते है उनके संख्यातभागवृद्धि और जो असंज्ञी पंचेन्द्रिय और संज्ञी पञ्चेन्द्रियोंमे उत्पन्न होते हैं उनके संख्यातगुणवृद्धि होती है। तथा जो असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीव संज्ञी पञ्चेन्द्रियोंमे उत्पन्न होते है उनके संख्यातगुणवृद्धि होती है। इस प्रकार

१. ता० प्रतौ पेक्खिदूण [ कधं ] संखेजगुणत्तं इति पाठः।

संखे०गुणवड्ढी होदि। एवं होदि त्ति कादूण संखे०भागवड्ढिविहत्तिएहिंतो संखे०गुणवड्ढिविहत्तिया संखे०गुणा त्ति ? ण एस दोसो, बीइंदिय-तीइंदिय-चउरिंदिय-पंचिंदिएहिंतो णिप्पिडिदूण तसकाइएसु संचरंतजीवे पेक्खिदूण एइंदिएसु पविट्ठजीवाणमसंखे०गुणत्तादो। ण च एइंदिएहिंतो आगंतूण णिप्पिदिदपडिभागेण सग-सगजादीसु उप्पज्जमाणजीवाणं मज्झे संखेज्जभागवड्ढिविहत्तिएहिंतो संखे०गुणवड्ढिविहत्तियाणं बहुत्तमत्थि, संखे०भागवड्ढिविसयट्ठिदीहि सह णिप्पिदमाणएइंदिए पेक्खिदूण संखे०गुणवड्ढिविसयट्ठिदीहि सह णिप्पिदमाणएइंदियाणं संखेज्जगुणहीणत्तादो। बीइंदियाणं संखे०भागवड्ढिविसओ देसूणपणुवीससागरोवमाणमद्धमेत्तट्ठिदीओ। ताओ चेव एगसागरोवमेण ऊणाओ संखे०गुणवड्ढिविसओ। तीइंदियाणं संखे०भागवड्ढिविसओ देसूणपंचाससागरोवमाणमद्धमेत्तट्ठिदीओ। ताओ चेव एगसागरोवमेणूणाओ तेसिं संखे०गुणवड्ढिविसओ। चउरिंदियाणं संखेज्जभागवड्ढिविसओ। देसूणसागरोवमसदस्स अद्धमेत्तट्ठिदीओ। ताओ चेव एगसागरोवमेणूणाओ तेसिं संखेज्जगुणवड्ढिविसओ। असण्णिपंचिंदियाणं संखेज्जभागवड्ढिविसओ देसूणसागरोवमसहस्सस्स अद्धमेत्तट्ठिदीओ। ताओ चेव एगसागरोवमेणूणाओ तेसिं संखे०गुणवड्ढिविसओ। सण्णिपंचिंदियाणं संखेज्जभागवड्ढिविसओ अंतोकोडाकोडिसागरोवमाणमद्धमेत्तट्ठिदीओ। ताओ चेव एगसागरोवमेणूणाओ तेसिं संखेज्ज[1]गुणवड्ढिविसओ। एवं वुत्तकमेण

वृद्धियाँ होती हैं ऐसा समझकर संख्यातभागवृद्धिवाले जीवोंसे संख्यातगुणवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणे होने चाहिये ?

**समाधान**—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पंचेन्द्रियोंमेंसे निकलकर त्रसकायिकोंमें संचार करनेवाले जीवोंको देखते हुए एकेन्द्रियोंमें प्रवेश करनेवाले जीव असंख्यातगुणे होते हैं। और एकेन्द्रियोंमेंसे आकर प्राप्त हुए प्रतिभागके अनुसार अपनी-अपनी जातियोंमें उत्पन्न होनेवाले जीवोंमें संख्यातभागवृद्धिविभक्तिवालोंसे संख्यातगुणवृद्धिविभक्तिवाले जीव बहुत नहीं हैं, क्योंकि संख्यातभागवृद्धिकी विषयभूत स्थितियोंके साथ निकलनेवाले एकेन्द्रियोंको देखते हुए संख्यातगुणवृद्धि की विषयभूत स्थितियोंके साथ निकलनेवाले एकेन्द्रिय जीव संख्यातगुणे हीन होते हैं।

**शंका**—द्वीन्द्रियोंके संख्यातभागवृद्धि का विषयभूत कुछ कम पच्चीस सागरकी आधी स्थितियां हैं उनके वे ही एक सागर कम संख्यातगुणवृद्धिका विषय हैं। तीन इन्द्रियोंके संख्यातभागवृद्धिका विषय कुछ कम पचास सागर की आधी स्थितियां हैं। वे ही एक सागर कम होकर उनके संख्यातगुणवृद्धिका विषय होती हैं। चौइन्द्रियोंके संख्यातभागवृद्धिका विषय कुछ कम सौ सागरकी आधी स्थितियाँ हैं। वे ही एक सागर कम होकर उनके संख्यातगुणवृद्धिका विषय है। असंज्ञी पंचेन्द्रियोंके संख्यातभागवृद्धिका विषय कुछ कम एक हजार सागरकी आधी स्थितियां हैं। वे ही एक सागर कम होकर उनके संख्यातगुणवृद्धिका विषय हैं। संज्ञी पंचेन्द्रियोंके संख्यातभागवृद्धिका विषय अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरकी आधी स्थितियाँ हैं।

1. आ० प्रतौ -णूणाओ संखेज्ज- इति पाठः।

संखेज्जगुणवड्ढिविसयादो संखे०भागवड्ढिविसए विसेसाहिए संते कथं संखेज्जगुणवड्ढि-विहत्तिएहिंतो संखे०भागवड्ढिविहत्तियाणं संखेज्जगुणत्तं घडदे ? ण च जादिं पडि विणिग्गयजीवपडिभागेण पवेसो णत्थि त्ति वोत्तुं जुत्तं, बीइंदियादिरासीणं विसेसाहियत्तं फिट्टिदूण अण्णावत्थावत्तीदो[1] ? एसो वि ण दोसो, जदि वि संखेज्जगुणवड्ढिविसयादो संखेज्जभागवड्ढिविसओ विसेसाहिओ चेव तो वि संखेज्जगुणवड्ढिविहत्तिएहिंतो संखेज्जभागवड्ढिविहत्तिया संखेज्जगुणा, संखेज्जभागवड्ढिविसयं पविस्समाणजीवेहिंतो संखेज्जगुणवड्ढिविसयं पविस्समाणजीवाणं संखेज्जगुणहीणत्तादो। संखेज्जभागवड्ढिविसयादो चेव बहुआ जीवा पल्लट्टिदूण सगसगजादिं पविसंति त्ति कुदो णव्वदे ? एदम्हादो चेव जइवसहमुहविणिग्गयअप्पाबहुअसुत्तादो । असंखे०पोग्गलपरियट्टसंचिदा बि-ति-चदु-पंचिंदियजीवा एइंदिएसु पादेक्कमणंता अत्थि संखे०गुणवड्ढिपाओग्गा । संखेज्जभाग-वड्ढिपाओग्गा पुण असंखेज्जा चेव, पलिदो० असंखे०भागमेत्तकालेण संचिदत्तादो । तेण संखेज्जभागवड्ढिविहत्तिएहिंतो संखेज्जगुणवड्ढिविहत्तिएहि असंखेज्जगुणेहि होदव्वमिदि ? ण, आयाणुसारिवयस्स णायत्तादो । ण विवरीयकप्पणा जुज्जदे, अव्ववत्थावत्तीदो ।

वे ही एक सागर कम होकर उनके संख्यातगुणवृद्धिकी विषय है । इस प्रकार उक्त क्रमसे संख्यात-गुणवृद्धिके विषयसे संख्यातभागवृद्धिका विषय विशेष अधिक रहते हुए संख्यातगुणवृद्धिविभक्ति-वालोंसे संख्यातभागवृद्धिविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे कैसे बन सकते हैं ? और जातिकी अपेक्षा निकलनेवाले जीवोंके प्रतिभागके अनुसार प्रवेश नहीं है ऐसा कहना युक्त नहीं है, क्योंकि ऐसा मानने पर द्वीन्द्रियादिक राशियोंकी विशेष अधिकता नष्ट होकर अन्य अवस्था प्राप्त होती है ?

**समाधान**—यह भी दोष नहीं है, क्योंकि यद्यपि संख्यातगुणवृद्धिके विषयसे संख्यातभागवृद्धिका विषय विशेष अधिक ही है तो भी संख्यातगुणवृद्धिविभक्तिवालोंसे संख्यातभागवृद्धिविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे होते हैं, क्योंकि संख्यातभागवृद्धिके विषयमें प्रवेश करनेवाले जीवोंसे संख्यातगुणवृद्धिके विषयमें प्रवेश करनेवाले जीव संख्यात गुणे हीन होते हैं ।

**शंका**—संख्यातभागवृद्धिके विषयसे ही लौटकर बहुत जीव अपनी अपनी जातिमें प्रवेश करते हैं यह बात किस प्रमाणसे जानी जाती है ?

**समाधान**—यतिवृषभ आचार्यके मुखसे निकले हुए इसी अल्पबहुत्व सूत्रसे जानी जाती है ।

**शंका**—असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनोंके द्वारा संचित हुए द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पंचेन्द्रिय जीव एकेन्द्रियोंमें प्रत्येक अनन्त हैं जो कि संख्यातगुणवृद्धिके योग्य है । पर संख्यातभागवृद्धिके योग्य असंख्यात ही जीव है, क्योंकि ये पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके द्वारा संचित हुए हैं । अतः संख्यातभागवृद्धिवालोंसे संख्यातगुणवृद्धिविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे होने चाहिये ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि आयके अनुसार व्यय होता है ऐसा न्याय है । और

१. ता०प्रतौ अणवत्थावत्तीदो इति पाठः ।

§ ५६६. बेइंदियाणं तेइंदिएसु उप्पण्णाणं संखेज्जभागवड्ढी ण होदि किंतु संखेज्ज-गुणवड्ढी चेव होदि, एइंदियसंजुत्तं बंधमाणाणं चेव बीइंदियाणं पणुवीससागरोवम-मेत्तुक्कस्सट्ठिदिबंधदंसणादो। तं कुदो णव्वदे ? संकिलेसप्पाबहुअवयणादो। तं जहा—सव्वत्थोवो[1] सण्णिपंचिंदियपज्जत्तणामकम्मसंजुत्तो बंधसंकिलेसो। असण्णिपंचिंदिय-पज्जत्तणामकम्मसंजुत्तो बंधसंकिलेसो अणंतगुणो। चउरिंदियपज्जत्तणामकम्मसंजुत्तो बंधसंकिलेसो अणंतगुणो। तेइंदियपज्जत्तणामकम्मसंजुत्तो बंधसंकिलेसो अणंतगुणो। बेइंदियपज्जत्तणामकम्मसंजुत्तो बंधसंकिलेसो अणंतगुणो। बादरेइंदियपज्जत्तणामकम्म-संजुत्तो बंधसंकिलेसो अणंतगुणो। सुहुमेइंदियपज्जत्तणामकम्मसंजुत्तबंधस्स संकिलेसो अणंतगुणो। सण्णिपंचिंदियअपज्जत्तणामकम्मसंजुत्तबंधस्स संकिलेसो अणंतगुणो। असण्णिपंचिंदियअपज्जत्तणामकम्मसंजुत्तबंधस्स[2] संकिलेसो अणंतगुणो। चउरिंदिय-अपज्जत्तणामकम्मसंजुत्तबंधस्स संकिलेसो अणंतगुणो। तेइंदियअपज्जत्तणामकम्मसंजुत्त-बंधस्स संकिलेसो अणंतगुणो। बेइंदियअपज्जत्तणामकम्मसंजुत्तबंधस्स संकिलेसो अणंत-गुणो। बादरेइंदियअपज्जत्तणामकम्मसंजुत्तबंधस्स संकिलेसो अणंतगुणो। सुहुमेइंदिय-अपज्जत्तणामकम्मसंजुत्तबंधस्स संकिलेसो अणंतगुणो त्ति। तेण कारणेण बेइंदिय-पज्जत्तयस्स बेइंदियपज्जत्तसंजुत्तं बंधमाणस्स सगउक्कस्सट्ठिदिबंधादो पलिदो०

विपरीत कल्पना युक्त नहीं है, क्योंकि विपरीत कल्पना करने पर अव्यवस्था प्राप्त होती है।

§ ५६६. दोइन्द्रिय जीव तीन इन्द्रिय जीवोंमें उत्पन्न होते हैं उनके संख्यातभागवृद्धि नहीं होती। किन्तु संख्यातगुणवृद्धि ही होती है, क्योंकि एकेन्द्रिय नामकर्मका बंध करनेवाले द्वीन्द्रिय जीवोंके ही पच्चीस सागर प्रमाण उत्कृष्ट स्थिति का बन्ध देखा जाता है। यदि कहा जाय कि यह किस प्रमाणसे जाना जाता है तो उसका उत्तर यह है कि यह संक्लेश विषयक अल्पबहुत्वसे जाना जाता है। जो इसप्रकार है—संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त नामकर्म संयुक्त बन्धका कारण संक्लेश सबसे थोड़ा है। असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त नामकर्मसंयुक्त बन्धका कारण संक्लेश अनन्तगुणा है। चौइन्द्रिय पर्याप्त नामकर्मसंयुक्त बन्धका कारण संक्लेश अनन्तगुणा है। तीनइन्द्रिय पर्याप्त नामकर्मसंयुक्त बन्धका कारण संक्लेश अनन्तगुणा है। दोइन्द्रिय पर्याप्त नामकर्मसंयुक्त बन्धका कारण संक्लेश अनन्तगुणा है। बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त नामकर्मसंयुक्त बन्धका कारण संक्लेश अनन्तगुणा है। सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त नामकर्मसंयुक्त बन्धका कारण संक्लेश अनन्तगुणा है। संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त नामकर्मसंयुक्त बन्धका कारण संक्लेश अनन्तगुणा है। असंज्ञीपंचेन्द्रिय अपर्याप्त नामकर्मसंयुक्त बन्धका कारण संक्लेश अनन्तगुणा है। चौइन्द्रिय अपर्याप्त नामकर्म संयुक्त बन्धका कारण संक्लेश अनन्तगुणा है। तीन इन्द्रिय अपर्याप्त नामकर्मसंयुक्त बन्धका कारण संक्लेश अनन्तगुणा है। दोइन्द्रिय अपर्याप्त नामकर्मसंयुक्त बन्धका कारण संक्लेश अनन्तगुणा है। बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त नामकर्मसंयुक्त बन्धका कारण संक्लेश अनन्तगुणा है। सूक्ष्म एकेन्द्रिय अपर्याप्त नामकर्मसंयुक्त बन्धका कारण संक्लेश अनन्तगुणा है। इसलिए दोइन्द्रिय पर्याप्तसंयुक्त बन्ध करनेवाले दोइन्द्रिय पर्याप्त जीवकी स्थिति अपने उत्कृष्ट

१. आ०प्रतौ सव्वत्थोवा इति पाठः। २. ता०प्रतौ असण्णिपंचिदियणामकम्मसंजुत्तबंधस्स इति पाठः।

असंखे०भागेण संखेज्जदिभागेण वा ऊणो। बेइंदियपज्जत्तस्स तेइंदियपज्जत्तसंजुत्तं बंधमाणस्स वि सगउक्कस्सट्ठिदिबंधादो पलिदो० असंखे०भागेण संखे०भागेण वा ऊणो। एवं तेइंदियपज्जत्तस्स वि चउरिंदियपज्जत्तसंजुत्तं बंधमाणस्स ऊणत्तं वत्तव्वं। संपहि एदेहि बेहि वियप्पेहि बेइंदियउक्कस्सट्ठिदिमूणं काऊण पुणो तेइंदिएसुप्पण्णपढमसमए संखे०गुणवड्ढी चेव होदि, पलिदो० असंखे०भागेण संखे०भागेण वा ऊणबेइंदियपणुवीससागरोवमट्ठिदिबंधादो पलिदो० असंखे०भागेण संखे०भागेण वा ऊणतेइंदियपण्णारससागरोवमट्ठिदिबंधस्स दुगुणत्तुवलंभादो त्ति के वि आइरिया भणंति, तण्ण घडदे। तं जहा—ण ताव बेइंदियाणं तेइंदिएसुप्पण्णपढमसमए पलिदो० असंखे०भागेणूणो[1] पण्णारससागरोवममेत्तट्ठिदिबंधो होदि, पज्जत्तुक्कस्सट्ठिदिबंधादो अपज्जत्तुक्कस्सट्ठिदिबंधस्स असंखे०भागहीणत्तसमाणत्तविरोहादो सण्णिपंचिंदियअपज्जत्ताणं सण्णिपंचिंदियपज्जत्ताणमुक्कस्सट्ठिदिबंधादो संखे०गुणहीणसगुक्कस्सट्ठिदिबंधस्स उवलंभादो च। बेइंदियवीचारट्ठाणेहिंतो दुगुणवीचारट्ठाणेहि ऊणपण्णारससागरोवममेत्तट्ठिदिबंधो वि ण तत्थ होदि जेण दुगुणत्तं होज्ज, सगसगपज्जत्ताणमुक्कस्सवीचारट्ठाणाणं संखेज्जेहि भागेहि ऊणस्स अपज्जत्तुक्कस्सट्ठिदिबंधस्सुवलंभादो। कथमेदं णव्वदे? सण्णिपंचिंदिएसु तहोवलंभादो वेयणाए वीचारट्ठाणाणमप्पाबहुगादो च। तदो बीइंदियाणं

स्थितिबन्धसे पल्यका असंख्यातवाँ भाग या संख्यातवां भाग कम होती है। तीनइन्द्रिय पर्याप्तसंयुक्त बन्ध करनेवाले दोइन्द्रिय पर्याप्त जीवकी भी अपने उत्कृष्ट स्थितिबन्धसे पल्यके असंख्यातवें भाग या संख्यातवें भाग कम स्थिति होती है। इसी प्रकार चौइन्द्रियपर्याप्तसंयुक्त बन्ध करनेवाले तीन इन्द्रिय पर्याप्त जीवकी भी ऊन स्थिति कहनी चाहिये। इस प्रकार इन दो विकल्पोंसे दोइन्द्रियोंकी उत्कृष्ट स्थितिको कम करके पुनः तीनइन्द्रिय जीवोंमें उत्पन्न होनेके पहले समयमें संख्यातगुणवृद्धि ही होती है, क्योंकि दोइन्द्रियोंके पल्यके असंख्यातवें भाग या संख्यातवें भाग कम पच्चीस सागर स्थितिबन्धसे तेइन्द्रियोंके पल्यके असंख्यातवें या संख्यातवें भाग कम पचास सागर स्थितिबन्ध दूना पाया जाता है ऐसा कितने ही आचार्य कहते हैं। पर उनका ऐसा कहना घटित नहीं होता। जिसका विवरण इस प्रकार है—दोइन्द्रियोंके तीन इन्द्रियोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें पल्यका असंख्यातवां भाग कम पचास सागरप्रमाण स्थितिबन्ध नहीं होता, क्योंकि पर्याप्तके उत्कृष्ट स्थितिबन्धसे अपर्याप्तका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध असंख्यातवाँ भाग कम या समान होता है इसमें विरोध है। तथा संज्ञी पंचेन्द्रियपर्याप्तकोंके उत्कृष्ट स्थितिबन्धसे संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्तकोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध संख्यातगुणा हीन पाया जाता है। तथा दोइन्द्रियोंके वीचारस्थानोंसे दुगुने वीचारस्थान कम पचास सागरप्रमाण स्थितिबन्ध भी वहाँ नहीं होता जिससे दूनी स्थिति होवे, क्योंकि अपने अपने पर्याप्तकोंके उत्कृष्ट वीचारस्थानोंके संख्यातबहुभाग कम अपर्याप्तकोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध पाया जाता है।

**शंका**—यह किस प्रमाण से जाना जाता है?

**समाधान**—क्योंकि संज्ञी पंचेन्द्रियोंमें उस प्रकार पाया जाता है। तथा वेदनाअनुयोगद्वारमें आये हुए वीचारस्थानोंके अल्पबहुत्वसे जाना जाता है।

१. आ० प्रतौ असंखे० भागेण णा इति पाठः।

तीइंदिएसु उप्पण्णाणं पढमसमए संखे०भागवड्ढी चेव ण संखे०गुणवड्ढि त्ति सिद्धं। किं च बेइंदियपज्जत्तो सुहुमेइंदियपज्जत्तसंजुत्तं बंधमाणो बेइंदियउक्कस्सट्ठिदिं बंधिदूण पडिहग्गो होदूण तेइंदियसंजुत्तमंतोमुहुत्तं बंधिय पुणो कालं कादूण तेइंदिएसुप्पण्णपढमसमए वि संखे०भागवड्ढी होदि त्ति संखे०गुणवड्ढी चेव होदि त्ति एयंतग्गाहमोसारिय णियमेण संखेज्जभागवड्ढी चेव होदि त्ति घेत्तव्वं।

❀ **असंखेज्जभागवड्ढिकम्मंसिया अणंतगुणा।**

§ ५६७. कुदो ? तसरासीए असंखे०भागमेत्त-संखेज्जभागवड्ढिविहत्तीए पेक्खिदूण सव्वजीवरासीए असंखे०भागमेत्तअसंखे०भागवड्ढिविहत्तियाणमणंतगुणत्तं पडि विरोहाभावादो। असंखे०भागवड्ढिविहत्तिया सव्वजीवरासीए असंखे०भागो त्ति कुदो णव्वदे ? दुसमयसंचिदत्तादो।

❀ **अवट्ठिदकम्मंसिया असंखेज्जगुणा।**

§ ५६८. कुदो अंतोमुहुत्तसंचिदत्तादो। एइंदियरासीए संखेज्जदिभागत्तादो वा। संखे०भागत्तं कुदो णव्वदे ? एइंदियाणं वड्ढि-हाणि-अवट्ठिदद्धाणं समासं कादूण अंतोमुहुत्तमेत्तअवट्ठिदद्धाए ओवट्टिय लद्धसंखे०रूवेहि सव्वजीवरासिम्हि ओवट्टिदाए अवट्ठिद-

अतः जो दोइन्द्रिय तीनइन्द्रियोंमें उत्पन्न होते हैं उनके प्रथम समयमें संख्यातभागवृद्धि ही होती है संख्यातगुणवृद्धि नहीं होती यह सिद्ध हुआ। दूसरे जो दोइन्द्रिय पर्याप्त जीव सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्तसंयुक्त बन्ध करता हुआ दोइन्द्रियोंकी उत्कृष्ट स्थितिको बांधकर और प्रतिभग्न होकर अन्तर्मुहूर्त तक तीनइन्द्रियसंयुक्त बन्ध करके पुनः मरकर तेइन्द्रियोंमें उत्पन्न होता है उनके उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें भी संख्यातभागवृद्धि होती है। अतः संख्यातगुणवृद्धि ही होती है ऐसे एकान्त आग्रहको छोड़कर नियमसे संख्यातभागवृद्धि होती है ऐसा ग्रहण करना चाहिये।

❀ **असंख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव अनन्तगुणे हैं।**

§ ५६७. क्योंकि त्रसराशिके असंख्यातवें भागप्रमाण संख्यातभागवृद्धिविभक्तिवाले जीवोंको देखते हुए सब जीवराशिके असंख्यातवें भागप्रमाण असंख्यातभागवृद्धिवाले जीवोंके अनन्तगुणे होनेमें कोई विरोध नहीं आता है।

**शंका**—असंख्यातभागवृद्धिविभक्तिवाले जीव सब जीवराशिके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

**समाधान**—दो समय द्वारा संचित होनेसे जाना जाता है।

❀ **अवस्थितकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं।**

§ ५६८. क्योंकि इनका संचयकाल अन्तर्मुहूर्त है। या ये एकेन्द्रियजीवराशिके संख्यातवें भागप्रमाण हैं।

**शंका**—ये एकेन्द्रियराशिके संख्यातवें भाग हैं यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

**समाधान**—एकेन्द्रियोंके वृद्धि, हानि और अवस्थितकालोंका जोड़ करके और उसमें अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अवस्थितकालका भाग देकर जो संख्यात अङ्क लब्ध आवे उनका सब जीव-

विहत्तियाणं पमाणुप्पत्तीदो ।

❀ **असंखेज्जभागहाणिकम्मंसिया संखेज्जगुणा ।**

§ ५६९. कुदो ? ट्ठिदिसंतसमाणबंधगद्धादो ट्ठिदिसंतादो हेट्ठिमट्ठिदिबंधगद्धाए संखेज्जगुणत्तादो । तं कुदो णव्वदे ? एदम्हादो चेव अप्पाबहुगादो ।

❀ **एवं बारसकसाय-णवणोकसायाणं ।**

§ ५७० जहा मिच्छत्तस्स वड्ढि-हाणि-अवट्ठाणाणमप्पाबहुअपरूवणा कदा तहा बारसकसाय-णवणोकसायाणं कायव्वा । णवरि विगलिंदिएसुप्पज्जमाणएइंदियाणं चरिमअंतोमुहुत्तकालम्मि इत्थि-पुरिसवेदाणं णत्थि बंधो, णवुंसयवेदो चेव बज्झदि, विगलिंदिएसु णवुंसयवेदवदिरित्तवेदाणमुदयाभावादो । तेणेइंदियाणं विगलिंदिएसुप्पण्णपढमसमए संखे०गुणवड्ढी इत्थि-पुरिसवेदाणं होदि । विगलिंदिएसुप्पण्णपढमसमए बज्झमाणित्थिवेद-पुरिसवेदट्ठिदिबंधादो संखेज्जभागहीणट्ठिदिसंतेणुप्पण्णाणं संखे०भागवड्ढी वि होदि । विगलिंदियाणं पुण विगलिंदिएसुप्पण्णाणमित्थि-पुरिसवेदाणं संखे०भागवड्ढी चेव, संखे०गुणवड्ढी णत्थि । कारणं जाणिदूण वत्तव्वं । एइंदियट्ठिदिसंतकम्मेण एइंदिएहिंतो आगंतूण विगलिंदिएसुप्पज्जिय अंतोमुहुत्तकालं णवुंसयवेदं चेव

राशिमें भाग देने पर अवस्थितविभक्तिवालोंका प्रमाण प्राप्त होता है ।

❀ **असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं ।**

§ ५६९. क्योंकि स्थितिसत्त्वके समान बन्धकालसे स्थितिसत्त्वके नीचेकी स्थितिबन्धका काल संख्यातगुणा पाया जाता है ।

**शंका**—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

**समाधान**—इसी अल्पबहुत्वसूत्रसे जाना जाता है ।

❀ **इसी प्रकार बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अपेक्षा प्ररूपणा करनी चाहिये ।**

§ ५७०. जिस प्रकार मिथ्यात्वकी वृद्धि, हानि और अवस्थितके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा की उसी प्रकार बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अपेक्षा करनी चाहिए । किन्तु इतनी विशेषता है कि विकलेन्द्रियोंमें उत्पन्न होनेवाले एकेन्द्रियोंके अन्तिम अन्तर्मुहूर्तकालमें स्त्रीवेद और पुरुषवेदका बन्ध नहीं होता एक नपुंसकवेदका ही बन्ध होता है, क्योंकि विकलेन्द्रियोंमें नपुंसकवेदके अतिरिक्त वेदका उदय नहीं पाया जाता । इसलिये जो एकेन्द्रिय विकलेन्द्रियोंमें उत्पन्न होते हैं उनके प्रथम समयमें स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी संख्यातगुणवृद्धि होती है । तथा विकलेन्द्रियोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें बंधनेवाले स्त्रीवेद और पुरुषवेदके स्थितिबन्धसे संख्यातभागहीन स्थितिसत्त्वके साथ उत्पन्न होनेवाले जीवोंके संख्यातभागवृद्धि भी होती है । परन्तु जो विकलेन्द्रिय जीव विकलेन्द्रियोंमें उत्पन्न होते हैं उनके स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी संख्यातभागवृद्धि ही होती है । संख्यातगुणवृद्धि नहीं होती । कारणका जानकर कथन करना चाहिये ।

**शंका**—जो जीव एकेन्द्रियके स्थितिसत्कर्मके साथ एकेन्द्रियोंमें से आकर और विकलेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर अन्तर्मुहूर्त काल तक नपुंसकवेदका ही बन्ध करता है उसके प्रतिभग्न

बंधिय पडिहग्गपढमसमए वि इत्थि-पुरिसवेदाणं संखेज्जगुणवड्ढी सत्थाणे किण्ण वुच्चदे ? ण, एइंदियट्ठिदिमंतं पेक्खिदूण जादसंखे०गुणवड्ढीए सत्थाणवड्ढित्तविरोहादो।

❀ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वत्थोवा असंखेज्जगुणहाणिकम्मंसिया।

५७१. कुदो ? चरिमुव्वेल्लणकंडयचरिमफालिं घादिय समऊणुदयावलियाए पवेसिदट्ठिदि[1] संतकम्माणमसंखे०गुणहाणिदंसणादो। चरिमुव्वेल्लणकंडयस्स चरिमफाली वि एगवियप्पा ण होदि किंतु असंखेज्जवियप्पा। तं जहा—सव्वजहण्णुव्वेल्लणकंडयम्मि एगो चरिमफालिवियप्पो। समयुत्तरउव्वेल्लणकंडयम्मि विदिओ चरिमफालिवियप्पो। एवं विसमयुत्तरादिकमेण णेदव्वं जाव उक्कस्सफालि त्ति। उव्वेल्लणकंडयजहण्णफालीदो उक्कस्सफाली असंखे०गुणा। असंखे०गुणत्तं कुदो णव्वदे ? सुत्ताविरुद्धाइरियवयणादो। एदाओ चरिमफालीओ पलिदो० असंखे०भागमेत्ताओ पादिय ट्ठिदसव्वजीवे घेत्तूण असंखे०गुणहाणिविहत्तिया सव्वत्थोवा त्ति भणिदं। एक्कम्हि समए फालिट्ठाणमेत्ता असंखे०गुणहाणिकम्मंसिया किं लब्भंति आहो ण लब्भंति त्ति वुत्ते णत्थि एत्थ अम्हाण विसिट्ठोवएसो किंतु एक्केक्कम्हि फालिट्ठाणे एक्को वा दो वा उक्कस्सेण असंखेज्जा वा जीवा

होनेके प्रथम समयमें भी स्वस्थानमें स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी संख्यातगुणवृद्धि क्यों नहीं कही ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि यहाँ एकेन्द्रियोंके स्थितिसत्त्वको देखते हुए जो संख्यात गुणवृद्धि हुई उसे स्वस्थानवृद्धि माननेमें विरोध आता है।

❀ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं।

§ ५७१. क्योंकि अन्तिम उद्वेलनाकाण्डककी अन्तिम फालिका घात करके जिन्होंने एक समयकम उदयावलिमें स्थितिसत्कर्मोंका प्रवेश कराया है उनके असंख्यातगुणहानि देखी जाती है। अन्तिम उद्वेलनाकाण्डककी अन्तिम फालि भी एक प्रकारकी नहीं होती किन्तु असंख्यात प्रकारकी होती है। खुलासा इस प्रकार है—सबसे जघन्य उद्वेलनाकाण्डकमें अन्तिम फालिका एक विकल्प होता है। एक समय अधिक उद्वेलनाकाण्डकमें अन्तिम फालिका दूसरा विकल्प होता है। इसी प्रकार दो समय अधिक आदि क्रमसे उत्कृष्ट फाली तक ले जाना चाहिये। उद्वेलनाकाण्डककी जघन्य फालिसे उत्कृष्ट फालि असंख्यातगुणी है।

**शंका**—असंख्यातगुणी है यह किस प्रमाणसे जाना है ?

**समाधान**—सूत्रके अविरुद्ध आचार्यवचनसे जाना जाता है।

पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण इन अन्तिम फालियोंको गिरा कर स्थित हुए सब जीवोंकी अपेक्षा असंख्यातगुणहानिविभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं ऐसा कहा। एक समयमें जितने फालिस्थान हैं उतने असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव क्या प्राप्त होते हैं या नहीं प्राप्त होते है ऐसा पूछने पर आचार्य वीरसेन कहते हैं कि इस विषयमें हमें विशिष्ट उपदेश प्राप्त नहीं हैं। किन्तु एक एक फालिस्थानमें एक या दो और उत्कृष्ट रूपसे असंख्यात जीव होते हैं

१. ता०आ० प्रत्योः पवेसिदट्ठिदि इति पाठः।

होंति त्ति अम्हाण णिच्छयो, सव्वत्थ आवलियाए असंखे०भागमेत्तगुणगारपरूवणादो।

❀ **अवट्ठिदकम्मंसिया असंखेज्जगुणा।**

५७२. कुदो, सम्मत्तट्ठिदिसंतं पेक्खिदूण समयुत्तरमिच्छत्तट्ठिदिसंतकम्मिय-मिच्छाइट्ठिणा वेदगसम्मत्ते गहिदे सम्मत्तस्स अवट्ठिदट्ठिदिसंतकम्मसमुप्पत्तीदो। चरिमफालिट्ठाणमेत्तवियप्पेसु ट्ठिदअसंखेज्जगुणहाणिकम्मंसिएहिंतो कथमेग-वियप्पट्ठिदअवट्ठिदकम्मंसियाणमसंखे०गुणत्तं? ण एस दोसो, फालिट्ठाणेहिंतो अवट्ठिदवियप्पाणमसंखे०गुणत्तुवलंभादो। तं जहा—वेदगपाओग्गमिच्छाइट्ठिणा सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि उव्वेल्लमाणेण विसोहीए मिच्छत्तस्स सव्वुक्कस्सकंडयघादं करेंतेण मिच्छत्तेण सह सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं ट्ठिदिखंडयघादं कादूण तिण्हं कम्माणं ट्ठिदिसंतकम्मे सरिसत्तमुवगए वेदगसम्मत्ते पडिवण्णे पढमो अवट्ठिदवियप्पो। पुव्वट्ठिदि-संतादो समयुत्तरसम्मत्तट्ठिदिसंतकम्मेण कालदो मिच्छत्तट्ठिदिसमाणेण णिसेगे पडुच्च मिच्छत्तणिसेगेहिंतो रूवूणेण काकतालीयणाएण ट्ठिदिखंडयघादसमुप्पण्णेण सह वेदग-सम्मत्ते गहिदे विदियो अवट्ठिदवियप्पो। एदम्हादो समयुत्तरसम्मत्तट्ठिदिसंतकम्मेण कालदो मिच्छत्तट्ठिदिसमाणेण णिसेगेहिंतो रूवूणेण खल्लविल्लसंजोगो व ट्ठिदिखंडयघाद-समुप्पण्णेण वेदगसम्मत्ते गहिदे तदिओ अवट्ठिदवियप्पो। एवं णेदव्वं जाव अंतो-

ऐसा हमारा निश्चय है, क्योंकि सर्वत्र आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण गुणकार कहा है।

❀ **अवस्थितकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं।**

§ ५७२. क्योंकि सम्यक्त्वके स्थितिसत्त्वको देखते हुए एक समय अधिक मिथ्यात्वकी स्थितिसत्कर्मवाले मिथ्यादृष्टि जीवके द्वारा वेदकसम्यक्त्वके ग्रहण करने पर सम्यक्त्वके अवस्थित-स्थितिसत्कर्मकी उत्पत्ति होती है।

**शंका**—अन्तिम फालिस्थानप्रमाण विकल्पोंमें स्थित असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीवोंसे एक विकल्पमें स्थित अवस्थितकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे कैसे हो सकते हैं?

**समाधान**—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि फालिस्थानोंसे अवस्थित विकल्प असंख्यात-गुणे पाये जाते हैं। खुलासा इस प्रकार है—सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करनेवाला और विशुद्धिके बलसे मिथ्यात्वके सबसे उत्कृष्ट काण्डकघातको करनेवाला कोई वेदक सम्यक्त्वके योग्य मिथ्यादृष्टि जीव मिथ्यात्वके साथ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके स्थिति-काण्डकघातको करके जब तीन कर्मोंके स्थितिसत्कर्मको समान करके वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त होता है तब उसके पहला अवस्थित विकल्प होता है। पूर्व स्थितिसत्त्वसे जिसके सम्यक्त्वका स्थितिसत्कर्म एक समय अधिक है, कालकी अपेक्षा जिसके सम्यक्त्वकी स्थिति मिथ्यात्वकी स्थितिके समान है और निषेकोंकी अपेक्षा जिसके सम्यक्त्वके निषेक मिथ्यात्वके निषेकोंसे एक कम हैं उसके काकतालीय न्यायानुसार स्थितिकाण्डकघातके साथ वेदकसम्यक्त्वके ग्रहण करने पर दूसरा अवस्थितविकल्प होता है। सम्यक्त्वके इस स्थितिसत्त्वसे जिसके सम्यक्त्वका स्थितिसत्कर्म एक समय अधिक है, कालकी अपेक्षा जिसके सम्यक्त्वकी स्थिति मिथ्यात्वके समान है और निषेकोंकी अपेक्षा जिसके सम्यक्त्वके निषेक मिथ्यात्वके निषेकोंसे एक कम हैं

मुहुत्तूणसत्तरिसागरोवमकोडाकोडिमेत्तसम्मत्तट्ठिदि त्ति। जेणेवमवट्ठिदस्स संखेज्ज-सागरोवममेत्तवियप्पा पलिदोवमस्स असंखे०भागमेत्तअसंखेज्जगुणहाणिवियप्पेहिंतो असंखेज्जगुणा तेण तत्थ ट्ठिदअवट्ठिदकम्मंसिया वि जीवा तत्तो असंखेज्जगुणा त्ति सिद्धं। जदि वि संखेज्जसागरोवममेत्ता अवट्ठिदकम्मंसियट्ठिदिवियप्पा लब्भंति तो वि ण तेसु सव्वेसु ट्ठिदिवियप्पेसु वट्टमाणद्धाए अवट्ठिदविहत्तिया जीवा संभवंति, तेसिं पलिदो० असंखे०भागमेत्तपमाणत्तादो। तदो असंखेज्जगुणहाणिविहत्तियं व अवट्ठिदविहत्तिया जीवा वट्टमाणद्धाए पलिदो० असंखे०भागमेत्तट्ठिदीसु चेव संभवंति त्ति अवट्ठिदविहत्तियाणमसंखेज्जगुणहाणिविहत्तिएहिंतो असंखे०गुणत्तं ण णव्वदि त्ति? ण एस दोसो, पलिदो० असंखे०भागत्तणेण जदि वि दोहि वि विहत्तिएहि वट्टमाणद्धाए पडिग्गहिदट्ठिदीणं सरिसत्तमत्थि तो वि विसेसे अवलंबिज्ज-माणे ण तेसिं पडिगहिदं ट्ठिदिवियप्पाणं सरिसत्तं, थोवविसए बहुविसए च अवट्ठिदजीवाणं सरिसत्तविरोहादो। अथवा मिच्छत्तट्ठिदीए समाणसम्मत्तट्ठिदि-संतकम्मिया मिच्छादिट्ठिणो बहुवारं होंति, विसोहीए मिच्छत्तट्ठिदिकंडए पदमाणे सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तट्ठिदीणं पि मिच्छत्तट्ठिदिकंडयस्स अंतोपविट्ठाणं घादुवलंभादो। ण चेसो उवलंभो असिद्धो, अक्खवणाए मिच्छत्तट्ठिदिसंतादो सम्मत्त-

उसके खल्वाटके बेलके संयोगके समान स्थितिकाण्डकघातके साथ वेदकसम्यक्त्वके ग्रहण करने पर तीसरा अवस्थितविकल्प होता है। इस प्रकार अन्तर्मुहूर्तकम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण स्थितिके प्राप्त होने तक ले जाना चाहिये। चूंकि अवस्थितके इस प्रकार संख्यात सागरप्रमाण विकल्प असंख्यातगुणहानिके पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण विकल्पोंसे असंख्यातगुणे होते हैं, इसलिये वहां स्थित अवस्थितकर्मवाले जीव भी असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीवोंसे असंख्यातगुणे होते हैं यह सिद्ध हुआ।

**शंका**—यद्यपि अवस्थितकर्मवालोंके संख्यात सागरप्रमाण स्थितिविकल्प प्राप्त होते हैं तो भी वर्तमान समयमें उन सब स्थितिविकल्पोंमें अवस्थित स्थिति-विभक्तिवाले जीव संभव नहीं हैं, क्योंकि वेदकसम्यग्दृष्टि जीव पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण होते हैं। अतः वर्तमान समयमें असंख्यातगुणहानिविभक्तिवालोंके समान अवस्थितविभक्तिवाले जीव पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितियोंमें ही संभव है, अतः अवस्थितविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणहानिविभक्तिवालोंसे असंख्यातगुणे होते हैं यह बात नहीं जानी जाती है?

**समाधान**—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि पल्यके असंख्यातवें भागसामान्यकी अपेक्षा यद्यपि दोनों ही विभक्तिवाले जीवोंके वर्तमानकालमें ग्रहण की गई स्थितियोंकी समानता है तो भी विशेषकी अवलम्बन करनेपर उन ग्रहण की गई स्थितिविकल्पोंकी समानता नहीं है, क्योंकि स्तोक विषय और बहुत विषयमें अवस्थित जीवोंको समान माननेमें विरोध आता है। अथवा, मिथ्यात्वकी स्थितिके समान सम्यक्त्वकी स्थितिसत्कर्मवाले मिथ्यादृष्टि जीव बहुत बार होते हैं, क्योंकि विशुद्धिके बलसे मिथ्यात्वके स्थितिकाण्डकके पतन होनेपर मिथ्यात्वके स्थितिकाण्डकके अन्तःप्रविष्ट सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी स्थितियोंका भी घात पाया जाता है। और इसप्रकारकी उपलब्धि असिद्ध भी नहीं है, क्योंकि ऐसा नहीं मानने पर क्षपणासे रहित अवस्थामें मिथ्यात्वके स्थितिसत्त्वसे सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका स्थितिसत्त्व

**सम्मामिच्छत्ताणं ट्ठिदिसंतस्स बहुप्पसंगादो। ण च एवं, सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तेसु मिच्छादिट्ठिगुणट्ठाणे मिच्छत्तस्सुवरि समट्ठिदीए संकममाणेसु वि सरिसत्तविरोहादो। तदो मिच्छादिट्ठिम्मि मिच्छत्तट्ठिदिकंडए णिवदमाणे णियमा सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं पि ट्ठिदिकंडयमणियदायामं पददि। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं ट्ठिदिकंडए णिवदमाणे मिच्छत्तट्ठिदिकंडयघादो भयणिज्जो त्ति घेत्तव्वं। तेण मिच्छत्तुक्कस्सट्ठिदिसंतकम्मिय-मिच्छादिट्ठिणा वेदगसम्मत्ते पडिवण्णे दंसणतियस्स सरिसं ट्ठिदिसंतकम्मं होदि। पुणो ट्ठिदिखंडयघादेण विणा तप्पाओग्गसम्मत्तद्धं गमिय मिच्छत्तं गंतूण ट्ठिदिकंडयघादेण विणा अंतोमुहुत्तकालमच्छमाणो जदि सम्मत्तं पडिवज्जदि तो सम्मत्तस्स अवट्ठिदकम्मंसियो चेव होदि, सम्मत्तणिसेगेहिंतो मिच्छत्तणिसेगाणं रूवाहियत्तुवलंभादो। विसोहीए मिच्छत्तट्ठिदिं घादेदूण वेदगसम्मत्तं पडिवज्जमाणो वि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमवट्ठिदकम्मंसिओ चेव होदि, मिच्छत्ते घादिज्जमाणे घादिदसम्मत्त-सम्मामिच्छत्तट्ठिदित्तादो। एवं सव्वत्थ सम्मत्तं पडिवज्जमाणस्स अवट्ठिद-कम्मंसियत्तं परूवेदव्वं जा उव्वेल्लणाए ण पारंभो होदि। उव्वेल्लणाएण पारंभे संते वि जाव पढमुव्वेल्लणकंडयं ण पददि ताव तत्थ वेदगसम्मत्तं पडिवज्जमाणो वि अवट्ठिदकम्मंसिओ चेव होदि, वड्ढीए कारणाभावादो। उव्वेल्लणकंडए पुण पदिदे अवट्ठिदकम्मंसियत्तस्स ण पाओग्गो, तत्थ वेदगसम्मत्तं पडिवज्जमाणस्स असंखेज्जभाग-वड्ढिदंसणादो। पुणो अंतोमुहुत्तकालेण मिच्छत्तस्स भुजगारबंधं कादूण विसोहिमुवणमिय**

बहुत प्राप्त होता है। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि ऐसा माननेपर मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके मिथ्यात्वमें समान स्थितिरूपसे संक्रमण होनेपर भी समानतामें विरोध आता है। इसलिए मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें मिथ्यात्वके स्थितिकाण्डकोंके पतन होनेपर सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अनियत आयामवाले स्थितिकाण्डकोंका पतन नियमसे होता है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके स्थितिकाण्डकके पतन होनेपर मिथ्यात्वका स्थितिकाण्डक-घात भजनीय है, ऐसा ग्रहण करना चाहिए। अतः मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्मवाले मिथ्यादृष्टि जीवके द्वारा वेदकसम्यक्त्वके ग्रहण करनेपर तीन दर्शनमोहनीयका स्थितिसत्कर्म समान होता है। पुनः स्थितिकाण्डकघातके बिना तत्प्रायोग्य सम्यक्त्वके कालको गमाकर और मिथ्यात्वमें जाकर स्थितिकाण्डकघातके बिना अन्तर्मुहूर्तकालतक रहकर यदि सम्यक्त्वको प्राप्त होता है तो वह सम्यक्त्वका अवस्थितकर्मवाला ही होता है, क्योंकि यहाँपर सम्यक्त्वके निषेकोंसे मिथ्यात्वके निषेक एक अधिक पाये जाते हैं। तथा विशुद्धिके बलसे मिथ्यात्वकी स्थितिका घात करके वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाला जीव भी सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अवस्थितकर्मवाला ही होता है, क्योंकि मिथ्यात्वका घात करने पर सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी स्थितिका घात होता ही है। इसप्रकार सर्वत्र उद्वेलनाके प्रारम्भ होनेतक सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीवके अवस्थितकर्मपनेका कथन करना चाहिये। उद्वेलनाके प्रारम्भ होनेपर भी जब तक प्रथम उद्वेलनाकाण्डकका पतन नहीं होता है तबतक वहाँ वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाला जीव भी अवस्थितकर्मवाला ही होता है, क्योंकि यहाँ वृद्धिका कोई कारण नहीं है। परन्तु उद्वेलनाकाण्डकके पतन हो जानेपर जीव अवस्थितकर्मपनेके योग्य नहीं रहता है, क्योंकि वहाँ वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीवके असंख्यातभागवृद्धि

सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तेहि सह मिच्छत्तस्स ट्ठिदिघादं कादूण वेदगसम्मत्तं पडिवज्जमाणो अवट्ठिदकम्मंसिओ होदि। एवं णेदव्वं जाव अण्णगमुव्वेल्लणकंडयं ण पददि त्ति। पुणो तम्मि पदिदे असंखे०भागवड्ढीए विसओ होदि जाव अंतोमुहुत्तकालं। पुणो वि मिच्छत्तस्स भुजगारं कादूण विसोहिमुवणमिय तिसु हाणीसु अण्णदरहाणीए ट्ठिदिकंडयघादे कदे अवट्ठिदपाओग्गो होदि। एवं णेदव्वं जाव धुवट्ठिदि त्ति। अंतोमुहुत्तेणावस्सं ट्ठिदिखंडयघादो होदि त्ति कुदो णव्वदे? एगजीवंतरसुत्तादो। एवमेगो जीवो अंतोमुहुत्तमंतोमुहुत्तमंतरिय णियमेण अवट्ठिदपाओग्गो होदि जाव अंतोमुहुत्तकालं। एवं सव्वअट्ठावीससंतकम्मियमिच्छाइट्ठीणं वत्तव्वं। असंखेज्जगुणहाणीए पुण पलिदोवमस्स असंखे०भागमेत्तं कालं गंतूण एगवारं चेव पाओग्गो होदि। एवं जेणेगो जीवो बहुवारमवट्ठिदकम्मंसियपाओग्गो होदि जेण च बहुआ तप्पाओग्गजीवा तेण असंखे०गुणहाणिकम्मंसिएहिंतो अवट्ठिदकम्मंसिया असंखेज्जगुणा।

* **असंखेज्जभागवड्ढिकम्मंसिया असंखेज्जगुणा।**

§ ५७३. कुदो? अवट्ठिदविहत्तिपाओग्गएगेगट्ठिदीए उवरि पलिदो०असंखे०भागमेत्तट्ठिदीणमसंखे०भागवड्ढिपाओग्गाणमुवलंभादो। कत्थ वि पलिदोवमस्स असंखे०भागमेत्ताणुवलंभादो वा। तं जहा—अवट्ठिदस्स एगं ट्ठिदिसंतकम्ममस्सिदूण एगो चेव

देखा जाता है। पुनः अन्तर्मुहूर्त कालके द्वारा मिथ्यात्वका भुजगारबन्ध करके और विशुद्धिको प्राप्त होकर सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके साथ मिथ्यात्वका स्थितिघात करके वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाला जीव अवस्थितकर्मवाला होता है। इसप्रकार एक दूसरे उद्वेलनाकाण्डकके पतन होने तक कथन करना चाहिये। पुनः उसका पतन होनेपर अन्तर्मुहूर्त कालतक असंख्यातभागवृद्धिका विषय होता है। पुनरपि मिथ्यात्वका भुजगारबन्ध करके और विशुद्धिको प्राप्त होकर तीन हानियोंमेंसे किसी एक हानिके द्वारा स्थितिकाण्डकघातके करनेपर अवस्थितविभक्तिके योग्य होता है। इसप्रकार ध्रुवस्थितिके प्राप्त होनेतक कथन करना चाहिये।

**शंका**—अन्तर्मुहूर्तकालके द्वारा स्थितिघात अवश्य होता है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

**समाधान**—एक जीवके अन्तरका प्रतिपादन करनेवाले सूत्रसे जाना जाता है।

इस प्रकार एक जीव अन्तर्मुहूर्त अन्तर्मुहूर्त कालका अन्तर देकर अन्तर्मुहूर्तकाल तक नियमसे अवस्थितस्थिति विभक्तिके योग्य होता है। इसी प्रकार अट्ठाईस सत्कर्मवाले सभी मिथ्यादृष्टि जीवोंके कहना चाहिये। परन्तु असंख्यातगुणहानिके योग्य तो पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके जाने पर एक बार होता है। इस प्रकार चूंकि एक जीव बहुत बार अवस्थितकर्मके योग्य होता है और चूंकि तत्प्रायोग्य जीव बहुत हैं, अतः असंख्यातगुणहानिकर्मवालोंसे अवस्थितकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं।

* **असंख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं।**

§ ५७३. क्योंकि अवस्थितस्थितिविभक्तिके योग्य एक एक स्थितिके ऊपर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितियां असंख्यात भागवृद्धिके योग्य पाई जाती हैं। अथवा कहीं पर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण नहीं भी पाई जाती हैं। खुलासा इसप्रकार है—अवस्थितके

वियप्पो लब्भदि। सम्मत्तधुवट्ठिदीए उवरिं समयुत्तरमिच्छत्तट्ठिदिसंतकम्मिएण वेदगसम्मत्ते गहिदे सम्मत्तस्स अवट्ठिदविहत्तिदंसणादो। पुणो एदं धुवट्ठिदिमस्सिदूण अण्णो अवट्ठिदवियप्पो ण लब्भदि। पुव्वट्ठिदीदो समयुत्तरं मिच्छत्तट्ठिदिं बंधिदूण सम्मत्ते गहिदे पढमो असंखेज्जभागवड्ढिवियप्पो होदि। दुसमयुत्तरं बंधिदूण सम्मत्ते गहिदे विदिओ असंखेभागवड्ढिवियप्पो। तिसमयुत्तरं बंधिदूण सम्मत्ते गहिदे तदिओ असंखे०भागवड्ढिवियप्पो। एवं चदुसमयुत्तरादिकमेण असंखे०भागवड्ढिवियप्पा वत्तव्वा जाव णिरुद्धट्ठिदिं जहण्णपरित्तासंखेज्जेण खंडिदे तत्थ एगखंडमेत्ता ट्ठिदि-वियप्पा वड्ढिदा त्ति। एवं पढमअवट्ठिदविहत्तिपाओग्गट्ठिदिमस्सिदूण असंखे० भागवड्ढिपाओग्गट्ठिदीणं परूवणा कदा। एवं संखेज्जसागरोवममेत्तअवट्ठिदपाओग्ग-ट्ठिदीओ अस्सिदूण पुध पुध असंखे०भागवड्ढिपाओग्गट्ठिदीणं परूवणा कायव्वा। जम्हा अवट्ठिदविहत्तिविसयादो असंखे०भागवड्ढिविसओ असंखे०गुणो तम्हा अवट्ठिदविहत्तिएहिंतो असंखे०भागवड्ढिविहत्तिया असंखेज्जगुणा।

**※ असंखेज्जगुणवड्ढिकम्मंसिया असंखेज्जगुणा।**

§ ५७४. कुदो पलिदो०असंखे०भागमेत्तकालसंचिदत्तादो। तं जहा—मिच्छत्त-धुवट्ठिदिसंतकम्मे जहण्णपरित्तासंखेज्जेण भागे हिदे तत्थ भागलद्धट्ठिदिसंतकम्ममादिं कादूण समऊणादिकमेण हेट्ठा ओदारेदव्वं जाव सव्वजहण्णायामचरिमुव्वेल्लण-

एक स्थितिसत्कर्मका आश्रय लेकर एक स्थितिविकल्प प्राप्त होता है, क्योंकि सम्यक्त्वकी ध्रुवस्थितिके ऊपर एक समय अधिक मिथ्यात्वकी स्थितिसत्कर्मवाले जीवके वेदकसम्यक्त्वके ग्रहण करने पर सम्यक्त्वकी अवस्थितविभक्ति देखी जाती है। पुन: इस ध्रुवस्थितिका आश्रय लेकर अन्य अवस्थितविकल्प नहीं प्राप्त होता है। तथा पूर्वस्थितिसे एक समय अधिक मिथ्यात्वकी स्थितिको बांध कर सम्यक्त्वके ग्रहण करने पर असंख्यातभागवृद्धिका पहला विकल्प होता है। दो समय अधिक बांधकर सम्यक्त्वके ग्रहण करने पर असंख्यातभागवृद्धिका दूसरा विकल्प होता है। तीन समय अधिक बांधकर सम्यक्त्वके ग्रहण करने पर असंख्यात-भागवृद्धिका तीसरा विकल्प होता है। इसप्रकार विवक्षित स्थितिको जघन्य परितासंख्यातसे खण्डित करने पर जो एक खण्डप्रमाण स्थितिविकल्प आते है उतने विकल्पोंकी वृद्धि होने तक चार समय अधिक आदिके क्रमसे असंख्यातभागवृद्धिके विकल्प कहने चाहिये। इस प्रकार प्रथम अवस्थितविभक्तिके योग्य स्थितिका आश्रय लेकर असंख्यातभागवृद्धिके योग्य स्थितियोंका कथन किया। इसीप्रकार संख्यात सागरप्रमाण अवस्थितविभक्तियोंके योग्य स्थितियोंका आश्रय लेकर अलग अलग असंख्यातभागवृद्धियोंके योग्य स्थितियोंका कथन करना चाहिये। चूंकि अवस्थितविभक्तिके विषयसे असंख्यातभागवृद्धिका विषय असंख्यातगुणा है, इसलिये अवस्थित-विभक्तिवालोंसे असंख्यातभागवृद्धिविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं।

**※ असंख्यातगुणवृद्धिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं।**

§ ५७४. क्योंकि उनका संचय पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके द्वारा होता है। खुलासा इस प्रकार है—मिथ्यात्वकी ध्रुवस्थितिसत्कर्ममें जघन्य परीतासंख्यातका भाग देने पर जो एक भागप्रमाण स्थितिसत्कर्म लब्ध आवे उससे लेकर एक समय कम आदि क्रमसे

कंडयचरिमफालि त्ति । एदिस्से ट्ठिदीए जो उव्वेल्लणकालो सो पलिदो० असंखे०-भागमेत्तो । पलि० असंखे०भागमेत्तुव्वेल्लणकंडयस्स जदि अंतोमुहुत्तमेत्ता उक्कीरणद्धा लब्भदि तो असंखे०गुणवड्ढिपाओग्गपलिदो० संखे०भागमेत्तट्ठिदीणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए पलिदो० असंखे०भागमेत्तुव्वेल्लणकालुवलंभादो । एदेण कालेण संचिदजीवा वि पलिदो० असंखेभागमेत्ता होंति । चउवीसमहोरत्ताणि अंतरिय जदि असंखे०गुणवड्ढिपाओग्गट्ठिदीणमब्भंतरे पविसमाणे जीवा पलिदो० असंखे०भागमेत्ता लब्भंति तो पुव्वुत्तउव्वेल्लणकालस्संतो केत्तिए लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए पलिदो० असंखे०भागमेत्तजीवाणमुवलंभादो । असंखे०-भागवड्ढिपाओग्गजीवा पुण अंतोमुहुत्तसंचिदा मिच्छत्तधुवट्ठिदिसमाणसम्मत्तधुवट्ठिदीदो उवरिमसम्मत्तट्ठिदीणं मिच्छत्तट्ठिदीदो असंखे०भागहीणाणमंतोमुहुत्तमेत्तकालुवलंभादो । तं पि कुदो णव्वदे ? असंखे०भागहाणिट्ठिदिसंतकम्मे अवट्ठिदट्ठिदिसंतकम्मे च अंतोमुहुत्तमच्छिय पुणो मिच्छाइट्ठिणो जीवा संखे०भागवड्ढिं संखे०गुणवड्ढिं च णियमेण कुणंति त्ति चुण्णिसुत्तोवएसादो । असंखे०भागवड्ढिकालेण वि संचिदजीवा पलिदो० असंखे०भागमेत्ता होंति । चउवीसअहोरत्तमेत्तपवेसंतरे संते अंतोमुहुत्तकालब्भंतरे

सबसे जघन्य आयामवाले अन्तिम उद्वेलनाकाण्डककी अन्तिम फालितक उतार कर जाना चाहिये। इस स्थितिका जो उद्वेलनाकाल है वह पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण उद्वेलनाकाण्डकका यदि अन्तर्मुहूर्तप्रमाण उत्कीरणाकाल प्राप्त होता है तो असंख्यातगुणवृद्धिके योग्य पल्यके संख्यातवें भागप्रमाण स्थितियोंके कितने उत्कीरणाकाल प्राप्त होंगे, इस प्रकार फलराशिको इच्छाराशिसे गुणित करके उसे प्रमाणराशिसे भाजित करनेपर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण उद्वेलनाकाल प्राप्त होता है। तथा इस कालके द्वारा संचित हुए जीव भी पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होते हैं। चौबीस दिन रातका अन्तर देकर यदि असंख्यातगुणवृद्धिके योग्य स्थितियोंके भीतर प्रवेश करनेपर जीव पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होते हैं तो पूर्वोक्त उद्वेलनाकालके भीतर कितने प्राप्त होंगे इस प्रकार फलराशिसे इच्छाराशिको गुणित करके और उसे प्रमाणराशिसे भाजित करनेपर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण जीव प्राप्त होते हैं। परन्तु असंख्यातभागवृद्धिके योग्य जीव अन्तर्मुहूर्त कालके द्वारा संचित होते हैं, क्योंकि मिथ्यात्वकी ध्रुवस्थितिके समान सम्यक्त्वकी ध्रुवस्थितिसे उपरिम सम्यक्त्वकी स्थितियोंका जो कि मिथ्यात्वकी स्थितिसे असंख्यातवें भागहीन हैं, काल अन्तर्मुहूर्तप्रमाण पाया जाता है।

**शंका**—यह किस प्रमाण से जाना जाता है ?

**समाधान**—असंख्यातभागहानिस्थितिसत्कर्म और अवस्थितस्थितिसत्कर्ममें अन्तर्मुहूर्त कालतक रहकर पुनः मिथ्यादृष्टि जीव नियमसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिको करते हैं इस प्रकार चूर्णिसूत्रके उपदेश से जाना जाता है। असंख्यातभागवृद्धिके कालके द्वारा भी संचित हुए जीव पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण होते हैं। प्रवेशके अन्तरकालके चौबीस दिनरात प्रमाण रहते हुए अन्तर्मुहूर्त कालके भीतर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण जीवोंका संचय नहीं

संचओ णत्थि त्ति णासंकणिज्जं, सव्वत्थुक्कस्संतरस्स संभवाभावेण आवलि० असंखे०-भागमेत्तंतरेण वि संचयस्सुवलंभादो। ण च चउवीसअहोरत्तमेत्तो चेव अंतरकालो त्ति णियमो अत्थि, एगसमयमादिं कादूण एगुत्तरवड्ढीए गंतूण उक्कस्सेण सादिरेगचउवीसअहोरत्तमेत्तंतरस्स परूविदत्तादो। जम्हा असंखे०भागवड्ढिविहत्तिया अंतोमुहुत्तकालसंचिदा तम्हा पलिदो० असंखे०भागमेत्तकालसंचिदअसंखे०गुणवड्ढि-विहत्तिया असंखे०गुणा त्ति सिद्धं।

❀ संखेज्जगुणवड्ढिकम्मंसिया असंखेज्जगुणा।

§ ५७५. कुदो? पलिदो० संखे०भागेणूणसंखे०सागरोवममेत्तधुवट्ठिदीए उव्वेल्लणकालसंचिदत्तादो तं जहा—धुवट्ठिदीए हेट्ठिमअसंखे०भागो असंखे०गुण-वड्ढिविसओ उवरिमो भागो सव्वो वि संखेज्जगुणवड्ढिविसओ, संखे०सागरोवममेत्तधुवट्ठिदिं बंधिदूण धुवट्ठिदीए अब्भंतरट्ठिदसम्मत्तसंतकम्मिएण सम्मत्ते गहिदे संखे०गुणवड्ढिदंसणादो। एदेसिं संखेज्जसागरोवमाणमुव्वेल्लणकालो पलिदो० असंखे०भागमेत्तो। पलिदो० असंखे०भागायामेगुव्वेल्लणकंडयस्स जदि अंतोमुहुत्तमेत्ता उक्कीरणद्धा लब्भदि तो संखे०सागरोवमाणं किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए पलिदो० असंखे०भागमेत्तुव्वेल्लणकालुवलंभादो। एसो कालो असंखे०गुणवड्ढिउव्वेल्लणकालादो संखेज्जगुणो। एदम्हि काले संचिदजीवा असंखे०गुणवड्ढिकालसंचिदजीवेहिंतो संखेज्ज-

होता है यदि कोई ऐसी आशंका करे तो उसकी ऐसी आशंका करना ठीक नहीं है, क्योंकि सर्वत्र उत्कृष्ट अन्तर संभव नहीं होने से आवलि के असंख्यातवें भागप्रमाण अन्तरके द्वारा भी पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण जीवोंका संचय पाया जाता है। और चौबीस दिनरात प्रमाण ही अन्तर काल होता है ऐसा नियम नहीं है, क्योंकि एक समयसे लेकर उत्तरोत्तर एक एक समय बढ़ाते हुए उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिनरात कहा है। चूंकि असंख्यातभागवृद्धि विभक्तिवाले जीव अन्तर्मुहूर्त कालके द्वारा संचित होते हैं, इसलिये पल्यके असंख्यातवें भाग-प्रमाण कालके द्वारा संचित हुए असंख्यातगुणवृद्धिविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे होते हैं यह सिद्ध हुआ।

❀ संख्यातगुणवृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं।

§ ५७५. क्योंकि इनका संचय पल्यके संख्यातवें भाग कम संख्यात सागरप्रमाण ध्रुवस्थितिके उद्वेलनाकालके द्वारा होता है। खुलासा इस प्रकार है—ध्रुवस्थितिके नीचेका असंख्यातवां भाग असंख्यातगुणवृद्धिका विषय है। तथा सब उपरिम भाग भी संख्यातगुणवृद्धिका विषय है, क्योंकि संख्यात सागरप्रमाण ध्रुवस्थितिको बांधकर ध्रुवस्थितिके भीतर स्थित हुए सम्यक्त्व सत्कर्मवाले जीवके सम्यक्त्वके ग्रहण करनेपर संख्यातगुणवृद्धि देखी जाती है। इन संख्यात सागरोंका उद्वेलन काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है तथा पल्यके असंख्यातवें भाग आयामवाले एक उद्वेलनाकाण्डकका यदि अन्तर्मुहूर्तप्रमाण उत्कीरणाकाल प्राप्त होता है तो संख्यातसागरका कितना उत्कीरणाकाल प्राप्त होगा इस प्रकार फलराशिसे इच्छाराशिको गुणित करके और उसमें प्रमाण-राशिका भाग देने पर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण उद्वेलनाकाल प्राप्त होता है।

**शंका**—यह काल असंख्यातगुणवृद्धिके उद्वेलनाकालसे संख्यातगुणा है। और इस

गुणा। असंखेज्जगुणवड्ढिपाओग्गट्ठिदिउव्वेल्लणकालसंचिदजीवेहिंतो संखे०गुणवड्ढिपाओग्गट्ठिदिउव्वेल्लणकालसंचिदजीवेसु संखेज्जगुणेसु संतेसु कथमसंखेज्जगुणवड्ढिविहत्तिएहिंतो संखेज्जगुणवड्ढिविहत्तियाणमसंखेज्जगुणत्तं ? ण एस दोसो, असंखेज्जगुणवड्ढिपाओग्गट्ठिदिं धरेदूण ट्ठिदजीवेसु सम्मत्तं पडिवज्जमाणेहिंतो संखेज्जगुणवड्ढिपाओग्गट्ठिदिं धरेदूण सम्मत्तं पडिवज्जमाणाणमसंखेज्जगुणत्तादो। तं पि कुदो ? सम्मत्तं घेत्तूण मिच्छत्तं पडिवज्जिय बहुअं कालं मिच्छत्तेणच्छिदेहिंतो सम्मत्तं गेण्हमाणा सुट्ठु थोवा, पणट्ठसंसकारत्तादो। अवरे बहुआ, अविणट्ठसंसकारत्तादो। एदं कुदो णव्वदे ? एदम्हादो चेव सुत्तादो। जहा कम्मणिज्जरामोक्खेण आसण्णा कम्मपरमाणू अविणट्ठसंसकारत्तादो कम्मपोग्गलपरियट्टब्भंतरे लहुं कम्मभावेण परिणमंति तहा सम्मत्तादो मिच्छत्तं गदजीवा वि थोवमिच्छत्तद्धाए अच्छिदूण सम्मत्तं पडिवज्जमाणा बहुआ त्ति घेत्तव्वं। अथवा सण्णिपंचिंदियमिच्छाइट्ठिणो मिच्छत्तं धुवट्ठिदीदो उवरिं ठविदसम्मत्तट्ठिदिसंतकम्मिया एत्थ पहाणा, तेसिं चेव बहुलं सम्मत्तग्गहणसंभवादो। मिच्छत्तधुवट्ठिदीदो उवरिमट्ठिदीसु अट्ठावीससंतकम्मियमिच्छादिट्ठीणमच्छणकालो

कालमें संचित हुए जीव असंख्यातगुणवृद्धिके काल द्वारा संचित हुए जीवोंसे संख्यातगुणे हैं। इस प्रकार असंख्यातगुणवृद्धिके योग्य स्थितिके उद्वेलनाकालमें संचित हुए जीवोंसे संख्यातगुणवृद्धिके योग्य स्थितिके उद्वेलनाकालमें संचित हुए जीव संख्यातगुणे रहते हुए असंख्यातगुणवृद्धिविभक्तिवालोंसे संख्यातगुणवृद्धिविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे कैसे हो सकते हैं ?

**समाधान**—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि असंख्यातगुणवृद्धिके योग्य स्थितिमें रहनेवाले जीवोंमें से सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंसे संख्यातगुणवृद्धिके योग्य स्थितिको प्राप्त करके सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीव असंख्यातगुणे हैं।

**शंका**—यह भी किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

**समाधान**—सम्यक्त्वको ग्रहण करके जो जीव मिथ्यात्वको प्राप्त हुए हैं वे यदि बहुत काल तक मिथ्यात्वमें रहते है तो उनमेंसे सम्यक्त्वको ग्रहण करनेवाले जीव बहुत थोड़े होते है, क्योंकि उनका संस्कार नष्ट हो गया है। पर दूसरे अर्थात् मिथ्यात्वमें जाकर पुन अतिशीघ्र सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीव बहुत होते है, क्योंकि उनका संस्कार नष्ट नही हुआ है।

**शंका**—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

**समाधान**—इसी सूत्रसे जाना जाता है। जिस प्रकार कर्मनिर्जराके द्वारा मुक्त होकर समीपवर्ती कर्म परमाणु अविनष्ट संस्कारवाले होनेसे कर्मपुद्गलपरिवर्तनके भीतर अतिशीघ्र कर्मरूपसे परिणत होते है उसी प्रकार सम्यक्त्वसे मिथ्यात्वमें गये हुए जीव भी थोड़े काल तक मिथ्यात्वमें रहकर सम्यक्त्वको प्राप्त होते हुए बहुत होते हैं ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये। अथवा मिथ्यात्वकी ध्रुवस्थितिसे जिनकी सम्यक्त्वकी स्थिति अधिक है ऐसे संज्ञी पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि जीव यहाँ प्रधान है, क्योंकि उन्हींका प्राय कर सम्यक्त्वका ग्रहण करना संभव है। मिथ्यात्वकी ध्रुवस्थितिसे उपरिम स्थितियोंमें अट्ठाईस सत्कर्मवाले मिथ्या-

**पलिदो० असंखे०भागमेत्तो। तत्थ एगेगजीवस्स संखेज्जगुणवड्ढीए बंधवारा असंखेज्जा। अंतोमुहुत्तम्मि जदि एगो संखेज्जगुणवड्ढिवारो लब्भदि तो पलिदो० असंखे०भागमेत्तकालम्मि किं लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए असंखेज्जवारुवलंभादो। असंखे०गुणवड्ढीए पुण सव्वे जीवा एगवारं चेव पाओग्गा होंति तेण असंखेज्जगुणवड्ढिविहत्तिएहिंतो संखेज्जगुणवड्ढिविहत्तिया असंखेज्जगुणा।**

**॥ संखेज्जभागवड्ढिकम्मंसिया संखेज्जगुणा।**

**§ ५७६. अट्ठावीससंतकम्मियमिच्छाइट्ठीसु संखेज्जवारं संखेज्जभागवड्ढिं कादूण सइं मिच्छत्तसंखेज्जगुणवड्ढिकरणादो। संखेज्जगुणवड्ढिं बहुवारं किण्ण कुणंति? ण, तिव्वसंकिलेसेण पउरं परिणमणसत्तीए अभावादो। सम्मत्तट्ठिदिसंतादो संखेज्जगुणमिच्छत्तट्ठिदिसंतकम्मिएहिंतो संखेज्जभागब्भहियमिच्छत्तट्ठिदिसंतकम्मिया जेण संखेज्जगुणा तेण संखेज्जगुणवड्ढिसंतकम्मिएहिंतो संखेज्जभागवड्ढिसंतकम्मिया संखेज्जगुणा त्ति सिद्धं। मिच्छत्तधुवट्ठिदिसमाणसम्मत्तट्ठिदिसंतादो हेट्ठिमट्ठिदीहि सह सम्मत्तं गेण्हमाणेसु संखे०भागवड्ढिविहत्तिएहिंतो संखेज्जगुणवड्ढिविहत्तिया बहुआ, असंखेज्जगुणवड्ढिपाओग्गट्ठिदीणं बहुत्तादो संखेज्जभागवड्ढिपाओग्गट्ठिदीसु एगजीवस्सच्छणकालं पेक्खिदूण संखेज्जगुणवड्ढिपाओग्गट्ठिदीसु अच्छणकालस्स बहुत्तादो वा। तेण संखेज्ज-**

दृष्टियोंके रहनेका काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है और वहाँ एक एक जीवके संख्यातगुणवृद्धिके बन्धवार असंख्यात है। इस प्रकार यदि अन्तर्मुहूर्तकालमें एक संख्यातगुणवृद्धि बार प्राप्त होता है तो पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके भीतर कितने बन्धवार प्राप्त होंगे इस प्रकार फलराशिसे इच्छाराशिको गुणित करके और उसमें प्रमाणराशिका भाग देने पर असंख्यातबार प्राप्त होते है। परन्तु सब जीव असंख्यातगुणवृद्धिके योग्य एक बार ही होते हैं, इसलिये असंख्यातगुणवृद्धिविभक्तिवालोंसे संख्यातगुणवृद्धिविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे होते है।

**॥ संख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं।**

§ ५७६. क्योंकि अट्ठाईस सत्कर्मवाले मिथ्यादृष्टि जीव संख्यात बार संख्यातभागवृद्धिको करके एक बार मिथ्यात्वकी संख्यातगुणवृद्धिको करते है।

**शंका**—संख्यातगुणवृद्धिको बहुत बार क्यों नहीं करते हैं?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि तीव्र संक्लेशके कारण प्रचुरमात्रामें परिणमन करनेकी शक्तिका अभाव है।

सम्यक्त्वके स्थितिसत्त्वसे संख्यातगुणे मिथ्यात्वके स्थितिसत्कर्मवाले जीवोंकी अपेक्षा संख्यातभाग अधिक मिथ्यात्वके स्थितिसत्कर्मवाले जीव चूंकि संख्यातगुणे हैं, अतः संख्यातगुणवृद्धिसत्कर्मवाले जीवोंसे संख्यातभागवृद्धिसत्कर्मवाले जीव संख्यातगुणे है यह सिद्ध हुआ।

**शंका**—मिथ्यात्वकी ध्रुवस्थितिके समान सम्यक्त्वके स्थितिसत्त्वसे नीचेकी स्थितियोंके साथ सम्यक्त्वको ग्रहण करनेवाले जीवोंमें संख्यातभागवृद्धिविभक्तिवालोंसे संख्यातगुणवृद्धिवाले जीव बहुत हैं, क्योंकि असंख्यातगुणवृद्धिके योग्य स्थितियाँ बहुत है अथवा संख्याभागवृद्धिके योग्य स्थितियोंमें एक जीवके रहनेके कालको देखते हुए संख्यातगुणवृद्धिके योग्य

भागवड्ढिविहत्तिएहिंतो संखे०गुणवड्ढिविहत्तिएहि संखे०गुणेहि होदव्वमिदि ? ण, सण्णीणं मिच्छत्तधुवट्ठिदीदो हेट्ठिमसम्मत्तट्ठिदिसंतकम्मेण सम्मत्तं पडिवज्जमाणेहिंतो उवरिमट्ठिदिसंतकम्मेण सम्मत्तं पडिवज्जमाणाणमसंखे०गुणत्तादो। के वि आइरिया एवं भणंति जहा मिच्छत्तधुवट्ठिदिसमाणसम्मत्तट्ठिदिसंतादो उवरिमट्ठिदिसंतकम्मेहि सम्मत्तं पडिवज्जमाणेसु संखेज्जगुणवड्ढिविहत्तिएहिंतो संखेज्जभागवड्ढिविहत्तिया संखेज्ज-गुणा होंतु णाम किंतु ते अप्पहाणा, अंतोमुहुत्तसंचिदत्तादो। धुवट्ठिदीदो हेट्ठिमट्ठिदीसु संखेज्जभागवड्ढिविहत्तिया पहाणा, पलिदो० असंखे०भागसंचिदत्तादो मिच्छत्तेण चिरकालमवट्ठिदत्तादो च। एदेहिंतो संखेज्जगुणवड्ढिविहत्तिया संखे०गुणा, पुव्विल्लाण-मुव्वेल्लणकालादो एदेसिमुव्वेल्लणकालस्स संखे०गुणत्तादो मिच्छत्तेण बहुकाल-मवट्ठिदत्तादो च। एसो अत्थो जइवसहाइरिएण ट्ठिदिसंकमे परूविदो दोण्हं वक्खाणाण-मत्थित्तजाणावणट्ठं।

❀ संखेज्जगुणहाणिकम्मंसिया संखेज्जगुणा।

§ ५७७. कुदो ? सम्मत्तस्स संखेज्जगुणहाणिकदासेसजीवाणं गहणादो। तं जहा—जेहि सम्मत्तस्स गुणहाणी कदा तेसिं संखे०भागमेत्ता जीवा वेदगसम्मत्तं घेत्तूण सम्मत्तट्ठिदीए संखेज्जगुणवड्ढिं संखे०भागवड्ढिं च कुणंति, सव्वेसिं सम्मत्तग्गहण-

स्थितियोंमें रहनेका काल बहुत है। अतः संख्यातभागवृद्धिविभक्तिवालोंसे संख्यातगुणवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणे होने चाहिये ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि संज्ञियोंकी मिथ्यात्व सम्बन्धी ध्रुवस्थितिसे अधस्तन सम्यक्त्व-स्थितिसत्कर्मके साथ सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंसे उपरिम स्थितिसत्कर्मके साथ सम्यक्त्व को प्राप्त होनेवाले जीव असंख्यातगुणे हैं।

कितने ही आचार्य इस प्रकार कहते हैं कि मिथ्यात्वकी ध्रुवस्थितिके समान सम्यक्त्वके स्थितिसत्त्वसे उपरिम स्थितिसत्कर्मके साथ सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंमें संख्यातगुणवृद्धिविभक्तिवालोंसे संख्यातभागवृद्धिविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे होवें किन्तु वे अप्रधान है, क्योंकि उनके संचित होनेका काल अन्तर्मुहूर्त है। हाँ ध्रुवस्थितिसे अधस्तन-स्थितियोंमें संख्यातभागवृद्धि विभक्तिवाले जीव प्रधान हैं, क्योंकि उनके संचित होनेका काल पल्यका असंख्यातवाँ भाग है और मिथ्यात्वके साथ ये चिरकाल तक अवस्थित रहते हैं। तथा इनसे संख्यातगुणवृद्धिविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे है, क्योंकि पूर्वके जीवोंके उद्वेलना-कालसे इनका उद्वेलनाकाल संख्यातगुणा है और ये मिथ्यात्वके साथ बहुत काल तक अवस्थित रहते हैं। दोनों व्याख्यानोंके अस्तित्वका ज्ञान करानेके लिये यह अर्थ यतिवृषभ आचार्यने स्थितिसंक्रममें कहा है।

❀ संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं।

§ ५७७. क्योंकि जिन्होंने सम्यक्त्वकी संख्यातगुणहानि की है ऐसे सब जीवोंका यहाँ ग्रहण किया है। खुलासा इस प्रकार है—जिन्होंने सम्यक्त्वकी गुणहानि की है उनके संख्यातवें-भागप्रमाण जीव वेदकसम्यक्त्वको ग्रहण करके सम्यक्त्वकी स्थितिकी संख्यातगुणवृद्धि या

संभवाभावादो। एदं कुदो णव्वदे ? एदम्हादो चेव अप्पाबहुगादो। तेण संखेज्जभाग-वड्ढिविहत्तिएहिंतो संखेज्जगुणहाणिविहत्तिया संखेज्जगुणा त्ति घेत्तव्वं।

❀ **संखेज्जभागहाणिकम्मंसिया संखेज्जगुणा।**

§ ५७८. कुदो, संखेज्जवारं संखे०भागहाणिं कादूण सइं संखेज्जगुणहाणिकरणादो।

❀ **अवत्तव्वकम्मंसिया असंखेज्जगुणा।**

§ ५७९. कुदो ? एगसमएण मिच्छत्तं पडिवज्जमाणरासिस्स असंखेज्जभागत्तादो। जदि सम्मत्तादो मिच्छत्तं गंतूण तत्थ थोवकालमवट्ठिदा पउरं सम्मत्तं गेण्हंति तो अवत्तव्वविहत्तिएहि संखेज्जभागवड्ढिविहत्तिएहिंतो थोवेहि होदव्वं ? ण च एवं, संखेज्जभागवड्ढिविहत्तिएहिंतो अवत्तव्वविहत्तिया असंखेज्जगुणा त्ति सुत्तम्हि उवइट्ठत्तादो त्ति ? ण एस दोसो, जेसिं जीवाणं सम्मत्तस्स ट्ठिदिसंतकम्ममत्थि ते अस्सिदूण तहा परूविदत्तादो। ते अस्सिदूण परूविदमिदि कुदो णव्वदे ? असंखेज्जगुणवड्ढिविहत्तिएहिंतो संखेज्जगुणवड्ढिविहत्तिया असंखेज्जगुणा त्ति सुत्तादो णव्वदे। अण्णहा संखेज्जगुणा होज्ज असंखेज्जगुणवड्ढिपाओग्गट्ठिदीहिंतो संखेज्जगुणवड्ढिपाओग्गट्ठिदीणं संखेज्जगुणत्तादो

संख्यातभागवृद्धिको करते है, क्योंकि सबका सम्यक्त्वका ग्रहण करना संभव नहीं है।

**शंका**—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

**समाधान**—इसी अल्पबहुत्वसे जाना जाता है।

इसलिए संख्यातभागवृद्धिविभक्तिवालोंसे संख्यातगुणहानिविभक्तिवाले जीव संख्यात-गुणे हैं ऐसा ग्रहण करना चाहिये।

❀ **संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं।**

§ ५७८. क्योंकि संख्यात बार संख्यातभागहानिको करके जीव एक बार संख्यातगुण-हानिको करता है।

❀ **अवक्तव्यकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं।**

§ ५७९. क्योंकि एक समयमें मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाली जीवराशिके वह असंख्यातवें भागप्रमाण है।

**शंका**—यदि सम्यक्त्वसे मिथ्यात्वमें जाकर और वहाँ स्तोक काल तक अवस्थित रहकर प्रचुर जीव सम्यक्त्वको ग्रहण करते है तो अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव संख्यातभागवृद्धिविभक्ति-वाले जीवोंसे थोड़े होने चाहिये। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि संख्यातभागवृद्धिविभक्तिवालोंसे अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे है ऐसा सूत्रमें उपदेश दिया है ?

**समाधान**—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि जिन जीवोंके सम्यक्त्वका स्थितिसत्कर्म है उनकी अपेक्षा इस प्रकार कथन किया है।

**शंका**—उनकी अपेक्षा कथन किया है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

**समाधान**—असंख्यातगुणवृद्धिविभक्तिवालोंसे संख्यातगुणवृद्धिविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे है इस सूत्रसे जाना जाता है। अन्यथा संख्यातगुणे होते, क्योंकि असंख्यातगुण-वृद्धिके योग्य स्थितियोंसे संख्यातगुणवृद्धिके योग्य स्थितियाँ संख्यातगुणी है और उनमें संचित

तत्थ संचिदजीवाणं पि तेण सरूवेण अवट्ठाणादो च। एगसमयम्हि जे मिच्छत्तमुवगया सम्मादिट्ठिणो तेसिमसंखेज्जदिभागो चेव वेदगसम्मत्तं पडिवज्जदि। तेसिं पि असंखे०-भागो असंखे०गुणवड्ढीए उवसमसम्मत्तं पडिवज्जदि। सेसा असंखेज्जभागा सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि उव्वेल्लिय णिस्संतकम्मिया होंति त्ति एसो भावत्थो। एदं कथं णव्वदे ? पंचहि पयारेहि सम्मत्तं पडिवज्जमाणजीवेहिंतो अवत्तव्वविहत्तिया असंखेज्ज-गुणा त्ति सुत्तादो णव्वदे। ण च अवत्तव्वविहत्तिएसु अणादियमिच्छादिट्ठीणं पहाणत्तं, तेसिमट्ठुत्तरसयपरिमाणत्तादो। एदं कुदो णव्वदे ? णिच्चणिगोदेहिंतो चउगइणिगोदेसु पविसंताणमणादियमिच्छादिट्ठीणं सम्मत्तं पडिवज्जमाणाणं चउगइणिगोदेहिंतो सिज्झ-माणाणं च पमाणमुक्कस्सेण अट्ठुत्तरसदमिदि परमगुरूवदेसादो णव्वदे। तेण सादिय-मिच्छादिट्ठिणो तत्थ पहाणा त्ति सिद्धं। ते च एगसमएण मिच्छत्तं गच्छमाण-जीवेहिंतो विसेसहीणा, आयाणुसारिवयाभावे सादियमिच्छादिट्ठीणं वोच्छेदप्पसंगादो। अवत्तव्वं कुणमाणजीवाणं कालो जहण्णेण एगसमओ, उक्क० आवलियाए असंखेज्जदि-भागमेत्तो। एदं पमाणं आवलि० असंखे०भागमेत्तसव्वोवक्कमणकंडयाणं जहण्णेण एगसमयमुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तंतराणं परूविदं, एवं संचिदत्तादो। अवत्तव्वविहत्तिया असंखेज्जगुणा त्ति किण्ण वुच्चदे ? ण सम्मत्तं पडिवज्जमाणाणं सव्वेसिं पि एदस्स

हुए जीवोंका भी अवस्थान उसी रूप है।

§ ५८१. एक समयमें जो सम्यग्दृष्टि जीव मिथ्यात्वको प्राप्त हुए हैं उनका असंख्यातवां भाग ही वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त होता है। तथा उनका भी असंख्यातवाँ भाग असंख्यातगुण-वृद्धिके साथ उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होता है। तथा शेष असंख्यात बहुभाग जीव सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करके निःसत्त्वकर्मवाले होते हैं। यह इसका भावार्थ है।

**शंका**—यह कैसे जाना जाता है ?

**समाधान**—पांच प्रकारसे सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंसे अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं इस सूत्रसे जाना जाता है। और अवक्तव्यविभक्तिवाले जीवोंमें अनादि मिथ्यादृष्टियोंकी प्रधानता नहीं है, क्योंकि उनका प्रमाण एक सौ आठ है।

**शंका**—यह किस प्रमाण से जाना जाता है ?

**समाधान**—नित्यनिगोदसे चतुर्गतिनिगोदमें प्रवेश करनेवाले जीवोंका, सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले अनादि मिथ्यादृष्टि जीवोंका और चतुर्गतिनिगोदसे सिद्ध होनेवाले जीवोंका उत्कृष्ट प्रमाण एक सौ आठ है इस प्रकार परम गुरुके उपदेशसे जाना जाता है, इसलिये सादि-मिथ्यादृष्टि जीव वहां प्रधान हैं यह सिद्ध हुआ और वे एक समयमें मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंसे विशेष हीन है, क्योंकि आयके अनुसार व्यय नहीं माननेपर सादि मिथ्यादृष्टियोंके विच्छेद का प्रसंग प्राप्त होता है। अवक्तव्यको करनेवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। यह प्रमाण आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण सर्वोप-क्रमण काण्डकोंके जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अन्तरोंका कहा है, क्योंकि इसी प्रकार उनका संचय होता है।

**शंका**—अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं, ऐसा क्यों नहीं कहा ?

कालस्स साहारणत्तादो। एदं कुदो णव्वदे ? तिण्णिवड्ढि-तिण्णिहाणि-अवट्ठाणाणं कालो जह० एगसमओ, उक्क० आवलियाए असंखे०भागमेत्तो त्ति महाबंधसुत्तेण भणिदत्तादो। ण च आवलि० असंखे०भागमेत्तेण अवत्तव्वस्स संचओ अत्थि, जहण्णुक्कस्सेण एगसमयसंचिदत्तादो।

**❀ असंखेज्जभागहाणिकम्मंसिया असंखेज्जगुणा।**

§ ५८०. कुदो, मगअसंखे०भागेणूणसम्मत्त-सम्मामिच्छत्तसंतकम्मियाणं सव्वेसिं पि गहणादो।

**❀ अणंताणुबंधीणं सव्वत्थोवा अवत्तव्वकम्मंसिया।**

§ ५८१. कुदो ? अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोइय मिच्छत्तं पडिवज्जमाणजीवाणं गहणादो।

**❀ असंखेज्जगुणहाणिकम्मंसिया संखेज्जगुणा।**

§ ५८२. कुदो ? संखेज्जसमयसंचिदत्तादो। अवत्तव्वविहत्तिया एगसमयसंचिदा एगसमयसंचिदअसंखे०गुणहाणिकम्मंसिया सरिसा। दंसणमोहणीयं खवेमाणसंखेज्ज-जीवेहि ऊणत्तस्स अविवक्खाए असंखेज्जगुणहाणिट्ठिदिकंडयाणं पदणवारा जेण संखेज्जसहस्समेत्ता तेण तत्थ संचिदजीवा वि संखे०गुणा त्ति सिद्धं। एगसमएण

**समाधान**—नहीं, क्योंकि सम्यक्त्व को प्राप्त होनेवाले सभीके यह काल साधारण है।

**शंका**—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

**समाधान**—तीन वृद्धि, तीन हानि और अवस्थानका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है इस प्रकार महाबन्धके सूत्रमें कहा है, इससे जाना जाता है। और आवलिके असंख्यातवें भाग कालके द्वारा अवक्तव्यविभक्तिवालोंका संचय नहीं होता, क्योंकि उनके संचित होनेका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है।

**❀ असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं।**

§ ५८०. क्योंकि जितने सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वसत्कर्मवाले जीव हैं उनमेंसे असंख्यातवें भागप्रमाण जीवोंको कम करके शेष सभी सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वसत्कर्मवाले जीवोंका ग्रहण किया है।

**अनन्तानुबन्धीके अवक्तव्यकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं।**

§ ५८१. क्योंकि यहां अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करके मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंका ग्रहण किया है।

**असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं।**

§ ५८२. क्योंकि उनके संचित होनेका काल संख्यात समय है। अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव एक समयके द्वारा संचित होते हैं जो एक समयमें संचित हुए असंख्यातगुणहानिवालोंके समान हैं। दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवाले संख्यात जीवोंसे रहितपनेकी विवक्षा न करनेपर चूंकि असंख्यातगुणहानिस्थितिकाण्डकोंके पतन होने के बार संख्यात हजार है, इसलिये वहां संचित हुए जीव भी संख्यातगुणे है यह सिद्ध हुआ। इसका यह भावार्थ है कि एक समयमें

जत्तिया जीवा अणंताणुबंधिचउक्कविसंजोयणमाढवेंति तत्तिया चेव एगसमयम्मि असंखेज्जगुणहाणिमवत्तव्वं च कुणंति त्ति एसो भावत्थो।

❀ **सेसाणि पदाणि मिच्छत्तभंगो।**

§ ५८३. सेसाणं पदाणमप्पाबहुअं जहा मिच्छत्तस्स परूविदं तहा परूवेदव्वं। तं जहा—असंखेज्जगुणहाणिविहत्तियाणमुवरि संखे०गुणहाणिकम्मंसिया असंखेज्जगुणा, जगपदरस्स असंखे०भागपमाणत्तादो। संखेज्जभागहाणिकम्मंसिया संखे०गुणा। संखेज्जगुणवड्ढिकम्मंसिया असंखे०गुणा। संखे०भागवड्ढिकम्मंसिया संखे०गुणा। असंखे०भागवड्ढिकम्मंसिया अणंतगुणा। अवट्ठिदविहत्तिकम्मंसिया असंखे०गुणा। असंखे०भागहाणिकम्मंसिया संखे०गुणा। एवं चुण्णिसुत्तत्थपरूवणं काऊण संपहि उच्चारणा वुच्चदे।

§ ५८४. अप्पाबहुगाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। तत्थ ओघेण मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणिकम्मंसिया। संखे०-गुणहाणिकम्मंसिया असंखेज्जगुणा। संखे०भागहाणिक० संखे०गुणा। संखे०गुणवड्ढिक० असंखे०गुणा। संखे०भागवड्ढिक० संखे०गुणा। असंखे०भागवड्ढिक० अणंतगुणा। अवट्ठिदक० असंखे०गुणा। असंखे०भागहाणिक० संखे०गुणा। अणंताणु० चउक्कस्स सव्वत्थोवा अवत्तव्वकम्मंसिया। असंखे०गुणहाणिक० संखे०गुणा। सेसं

जितने जीव अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजनाका प्रारंभ करते हैं उतने ही जीव एक समय में असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यको करते हैं।

❀ **शेष पद मिथ्यात्व के समान हैं।**

§ ५८३. शेष पदोंका अल्पबहुत्व जिस प्रकार मिथ्यात्वका कहा है उस प्रकार कहना चाहिये। जो इस प्रकार है—असंख्यातगुणहानिविभक्तिवालोंसे संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं, क्योंकि उनका प्रमाण जगप्रतरके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इनसे संख्यात भागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव अनन्तगुणे हैं। इनसे अवस्थितविभक्तिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यात-भागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इस प्रकार चूर्णिसूत्रोंके अर्थका कथन करके अब उच्चारणा का कथन करते हैं।

§ ५८४. अल्पबहुत्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। उनमेंसे ओघकी अपेक्षा मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंके असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यात-भागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धिकमवाले जीव अनन्तगुणे हैं। इनसे अवस्थितकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभाग-हानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा अवक्तव्यकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। शेष भंग मिथ्यात्वके

**मिच्छत्तभंगो। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणिकम्मंसिया। अवट्ठिदक० असंखे०गुणा। असंखे०भागवड्ढिक० असंखे०गुणा। असंखे०गुणवड्ढिक० असंखे०गुणा। संखे०गुणवड्ढिक० असंखे०गुणा। संखे०भागवड्ढिक० संखे०गुणा। संखे०-गुणहाणिक० संखे०गुणा। संखे०भागहाणिक० संखे०गुणा। अवत्तव्वकम्मंसिया असंखे०गुणा। असंखे०भागहाणिक० असंखे०गुणा। गुणगारो पुण सव्वपदाणं पि आवलि० असंखे०भागो।**

**§ ५८५. आदेसेण णेरइएसु मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० सव्वत्थोवा संखे०-गुणहाणिकम्मंसिया। संखे०गुणवड्ढिक० विसेसाहिया। संखे०भागवड्ढि-संखे०भागहाणि-कम्मंसिया दो वि सरिसा संखे०गुणा। असंखे०भागवड्ढिकम्मंसिया असंखे०गुणा। अवट्ठिदक० असंखे०गुणा। असंखे०भागहाणिक० संखेज्जगुणा। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताण-मोघं। अणंताणु०चउक० सव्वत्थोवा अवत्तव्वकम्मंसिया। असंखे०गुणहाणिक० संखेज्जगुणा। संखे०गुणहाणिक० असंखे०गुणा। संखे०गुणवड्ढिक० विसेसाहिया। सेसं मिच्छत्तभंगो। एवं पढमाए। विदियादि जाव सत्तमि त्ति एवं चेव। णवरि संखे०गुणवड्ढि-संखे०गुणहाणिकम्मंसिया दो वि सरिसा।**

**§ ५८६. तिरिक्खेसु ओघं। णवरि बावीसपयडीणमसंखे०गुणहाणी णत्थि।**

समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े है। अवस्थितकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। असंख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे है। असंख्यातगुणवृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे है। संख्यातगुणवृद्धिकर्म-वाले जीव असंख्यातगुणे है। संख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे है। संख्यात-गुणहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे है। संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे है। अवक्तव्यकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे है। असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे है। परन्तु सभी पदोंका गुणकार आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ५८५. आदेशकी अपेक्षा नारकियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अपेक्षा संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धिकर्मवाले जीव विशेष अधिक है। इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानि कर्मवाले जीव ये दोनों समान होते हुए भी संख्यातगुणे है। इनसे असंख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे है। इनसे अवस्थितकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे है। इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा ओघके समान भंग है। तथा अनन्तानु-बन्धीचतुष्कको अपेक्षा अवक्तव्यकर्मवाले जीव सबसे थोड़े है। इनसे असंख्यातगुणहानि-कर्मवाले जीव संख्यातगुणे है। इनसे संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धिकर्मवाले जीव विशेष अधिक है। शेष भंग मिथ्यात्वके समान है। इसी-प्रकार पहली पृथिवीमें जानना चाहिये। दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवी तक इसी प्रकार जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानि कर्मवाले ये दोनों ही प्रकारके जीव समान हैं।

§ ५८६. तिर्यञ्चोंमें ओघके समान भंग है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें बाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातगुणहानि नहीं है। पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकका भंग नारकियोंके समान है।

पंचिंदियतिरिक्खतियस्स णेरइयभंगो। एइंदिएहिंतो पंचिंदियतिरिक्खतियम्मि उप्पज्जिय संखे०गुणवड्ढिं संखे०भागवड्ढिं च कुणमाणा जीवा किं घेप्पंति आहो ण घेप्पंति? जदि ण घेप्पंति तो विदियादिपुढविणेरइएसु व संखे०गुणवड्ढिकम्मंसिया संखे०गुणहाणिकम्मंसिएहि सरिसा होंति। अह घेप्पंति, संखे०भागहाणिकम्मंसिएहिंतो संखे०गुणवड्ढिकम्मंसिया ओघे इव असंखेज्जगुणा होज्ज। ण च मग्गणविणासभएण ण उप्पाइज्जंति, णेरइएसु वि तहा पसंगादो त्ति। एत्थ परिहारो उच्चदे, ण ताव ण घेप्पंति त्ति अणब्भुवगमादो। ण च संखे०गुणहाणिविहत्तिएहिंतो संखे०भागहाणि-विहत्तिएहिंतो च संखे०गुणवड्ढिविहत्तियाणमसंखेज्जगुणत्तं, सत्थाणे संखे०गुणहाणिं कुणमाणजीवाणमसंखे०भागमेत्ताणं संखे०भागमेत्ताणं वा एइंदिएहिंतो पंचिंदियतिरिक्ख-तियम्मि उप्पत्तीदो। तेण कारणेण पंचिं०तिरि०तियम्मि संखे०गुणहाणिविहत्तिएहिंतो संखे०गुणवड्ढिविहत्तिया विसेसाहिया जादा। जदि एवं तो ओघम्मि कथं संखे०भागहाणि-विहत्तिएहिंतो संखे०गुणवड्ढिविहत्तियाणमसंखे०गुणत्तं? ण, एइंदिएहिंतो विगलिंदिए-सुप्पज्जिय संखेज्जगुणवड्ढिं कुणमाणजीवे पडुच्च तत्थ असंखे०गुणत्तं पडि विरोहाभावादो। संखे०भागहाणिविहत्तिएहिंतो संखे०भागवड्ढिविहत्तियाणं तिरिक्खेसु कधं सरिसत्तं? कधं च

**शंका**—एकेन्द्रियोंमेंसे पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें उत्पन्न होकर संख्यातगुणवृद्धि और संख्यात-भागवृद्धिको करनेवाले जीव यहाँ क्या ग्रहण किये हैं या नहीं ग्रहण किये हैं? यदि ग्रहण नहीं किये हैं तो द्वितीयादि पृथिवियोंके नारकियोंके समान यहाँ भी संख्यातगुणवृद्धिकर्मवाले जीव संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीवोंके समान प्राप्त होते हैं। यदि ग्रहण किये है तो संख्यातभागहानिकर्मवालोंसे संख्यातगुणवृद्धिकर्मवाले जीव ओघके समान असंख्यातगुणे हो जायँगे। और मार्गणाके विनाशके भयसे नहीं उत्पन्न कराते हैं सो भी बात नहीं है, क्योंकि नारकियोंमे भी उस प्रकारका प्रसङ्ग प्राप्त होता है।

**समाधान**—आगे इस शंकाका समाधान करते हुए आचार्य कहते है कि नहीं ग्रहण करते हैं यह पक्ष इष्ट नहीं है, क्योंकि इसे स्वीकार नहीं किया है। और संख्यातगुणहानि विभक्तिवालोंसे तथा संख्यातभागहानिविभक्तिवालोंसे संख्यातगुणवृद्धिविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे है नहीं, क्योंकि स्वस्थानमें संख्यातगुणहानिको करनेवाले जीवोंके असंख्यातवें भागमात्र या संख्यातवें भागमात्र जीव एकेन्द्रियोंमेंसे पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें उत्पन्न होते हैं, इसलिये पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमे संख्यातगुणहानिविभक्तिवालोंसे संख्यातगुणवृद्धिविभक्तिवाले जीव विशेष अधिक हुए।

**शंका**—यदि ऐसा है तो ओघमें संख्यातभागहानिविभक्तिवालोंसे संख्यातगुणवृद्धि-विभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे कैसे होते हैं?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि एकेन्द्रियोंमेंसे विकलेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर संख्यात-गुणवृद्धिको करनेवाले जीवोंकी अपेक्षा वहाँ असंख्यातगुणे होनेमें कोई विरोध नहीं है।

**शंका**—संख्यातभागहानिविभक्तिवालोंसे संख्यातभागवृद्धिविभक्तिवाले जीवोंकी पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चोंमें समानता कैसे है?

**ण सरिसत्तं ? एइंदिय-विगलिंदिएहिंतो पंचिंदियअपज्जत्तजहण्णट्ठिदिबंधादो संखे०-भागेणूणट्ठिदिसंतेण पंचिंदिएसुप्पण्णेसु संकिलेसेण विणा जाइबलेणेव संखे०भागवड्ढि-दंसणादो ण सरिसत्तं। ण, विगलिंदिएहिंतो संखे०भागहाणिट्ठिदिकंडयमाढविय पंचिंदिएसुप्पण्णसंखे०भागहाणिट्ठिदिविहत्तियाणं पुव्विल्लसंखे०भागवड्ढिट्ठिदिविहत्तिए-हिंतो सरिसत्तादो। एदमत्थपदमण्णत्थ वि वत्तव्वं।**

**५८७. पंचिंदियतिरिक्ख-मणुस्सअपज्ज० मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० णेरइयभंगो। अणंताणु०चउक्क० णेरइयमिच्छत्तभंगो। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वत्थोवा असंखे०-गुणहाणिसंतकम्मिया। संखे०गुणहाणिसंतक० असंखे०गुणा। संखे०भागहाणिसंतक० असंखे०गुणा। चुण्णिसुत्ते संखेज्जगुणा त्ति भणिदं, मज्झिमविसोहिवसेण पदमाणत्तादो। उच्चारणाए पुण असंखेज्जगुणत्तं वुत्तं। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि मिच्छत्तादि-कम्मेहि सरिसाणि ण होंति, भिण्णजादित्तादो। तेण एदेसिं दोण्हं कम्माणं संखेज्ज-गुणहाणिविहत्तिएहिंतो संखे०भागहाणिविहत्तिया असंखे०गुणा होंति त्ति उच्चारणाइरिएण लद्धुवएसो। असंखेज्जभागहाणिक० असंखे०गुणा। एवं पंचिंदियअपज्जत्ताणं।**

**§ ५८८. मणुस्सेसु बावीसं पयडीणं सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणिक०।**

**प्रतिशंका**—समानता क्यों नहीं है ?

**शंकाकार**—पंचेन्द्रिय अपर्याप्तकोंके जघन्य स्थितिबन्धसे संख्यातवें भागकम स्थिति-सत्त्वके साथ जो एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीव पंचेन्द्रियोंमें उत्पन्न होते हैं उनके संक्लेश के बिना केवल जातिके बलसे संख्यातभागवृद्धि देखी जाती है, अतः समानता नहीं है ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि विकलेन्द्रियोंमें संख्यातभागहानि स्थितिकाण्डकको आरम्भ करके पंचेन्द्रियोंमें उत्पन्न होनेवाले संख्यातभागहानिस्थितिविभक्तिवाले जीव पूर्वोक्त संख्यातभागवृद्धिस्थितिविभक्तिवाले जीवोंके समान होते हैं। यह अर्थपद अन्यत्र भी कहना चाहिये।

§ ५८७. पंचेन्द्रियतिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्त जीवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंका भंग नारकियोंके समान है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भंग नारकियोंके मिथ्यात्वके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा असंख्यात-गुणहानिसत्कर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यातगुणहानिसत्कर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागहानिसत्कर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। चूर्णिसूत्रमें इन्हें संख्यातगुणा कहा है, क्योंकि मध्यम विशुद्धिके कारण उनका पतन हो जाता है। परन्तु उच्चारणामें असंख्यात-गुणा कहा है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व मिथ्यात्व आदि कर्मोंके समान नहीं होते, क्योंकि इनकी भिन्न जाति है, अतः इन दोनों कर्मोंकी संख्यातगुणहानिविभक्तिवालोंसे संख्यातभाग-हानिविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे होते है, उच्चारणासे इस प्रकार उपदेश प्राप्त हुआ। इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे है। इसी प्रकार पंचेन्द्रियअपर्याप्त जीवोंके जानना चाहिये।

§ ५८८. मनुष्योंमें बाईस प्रकृतियोंकी अपेक्षा असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे

संखे०गुणहाणिक० असंखे०गुणा। संखे०गुणवड्ढिक० विसेसाहिया। संखे०भागवड्ढि-संखे०भागहाणिक० दो वि सरिसा संखे०गुणा। असंखे०भागवड्ढिक० असंखे०गुणा। अवट्ठि० असंखे०गुणा। असंखे०भागहाणिक० संखेज्जगुणा। अणंताणु०-चउक्क० णेरइयभंगो। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वत्थोवा अवट्ठि०। असंखे०भागवड्ढि० संखे०गुणा। असंखे०गुणवड्ढि० संखे०गुणा। संखे०गुणवड्ढि० संखे०गुणा। संखे०भागवड्ढि० संखे०गुणा। अवत्तव्व० संखे०गुणा। असंखे०गुण-हाणि० असंखे०गुणा। संखे०गुणहाणि० असंखे०गुणा। संखे०भागहाणि० असंखे०गुणा, जइवसहुवएसेण संखेज्जगुणा। असंखे०भागहाणि० असंखेज्जगुणा। एवं मणुसपज्जत्त-मणुसिणीणं। णवरि जत्थ असंखे०गुणं तत्थ संखे०गुणं कायव्वं।

५८९. देवाणं णेरइयभंगो। एवं भवणवासिय-वाणवेंतरदेवाणं। जोइसियादि जाव सहस्सारकप्पो त्ति विदियपुढविभंगो। आणदादि जाव णवगेवज्जा त्ति बावीसं पयडीणं सव्वत्थोवा संखे०भागहाणिकम्मंसिया। असंखे०भागहाणिकम्मंसिया असंखे०गुणा। सम्मत्तस्स सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणिक०। संखे०गुणहाणिक० विसेसाहिया। असंखे०भागवड्ढिकम्मंसिया असंखे०गुणा। असंखे०गुणवड्ढिक० असंखे०गुणा।

थोड़े हैं। इनसे सख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे है। इनसे संख्यातगुणवृद्धि कर्मवाले जीव विशेप अधिक है। इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिकर्मवाले ये दोनों परस्पर समान होते हुए भी संख्यातगुणे है। इनसे असंख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे है। इनसे अवस्थितकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे है। इनसे असंख्यात-भागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भंग नारकियोंके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातगुणवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणे है। इनसे संख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणे है। इनसे अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे है। इनसे असंख्यातगुणहानि-वाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणहानिवाले जीव असंख्यातगुणे है। इनसे संख्यातभागहानिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। पर यतिवृषभ आचार्यके उपदेशानुसार संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागहानिविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे है। इसी प्रकार मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यनियोंमें जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि जहाँ पर असंख्यातगुणा है वहाँ पर संख्यातगुणा करना चाहिये।

५८९. देवोंका भंग नारकियोंके समान है। इसी प्रकार भवनवासी और व्यन्तर देवोंमें जानना चाहिये। तथा ज्योतिषियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें दूसरी पृथिवीके समान भंग है। आनत कल्पसे लेकर नौग्रैवेयकतकके देवोंमें बाईस प्रकृतियोंकी अपेक्षा संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे है। सम्यक्त्वकी अपेक्षा असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव विशेष अधिक है। इनसे असंख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे है। इनसे असंख्यातगुणवृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे है। इनसे संख्यात-

**संखे०गुणवड्ढिक० असंखे०गुणा। संखे०भागवड्ढिक० संखे०गुणा। संखे०भागहाणिक० असंखे०गुणा। अवत्तव्व० असंखे०गुणा। असंखे०भागहा०क० असंखे०गुणा। एवं सम्मामिच्छत्तस्स वि वत्तव्वं। णवरि असंखे०गुणहाणि-संखे०गुणहाणिक० बे वि सरिसा कायव्वा। अणंताणु०चउक्क० सव्वत्थोवा अवत्तव्व०। असंखे०गुणहाणि० संखे०गुणा। संखे०गुणहाणि० संखे०गुणा। संखे०भागहाणि० संखे०गुणा। असंखे०भागहाणि० असंखे०गुणा। अणुद्दिसादि जाव अवराइदो त्ति मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० आणदभंगो। सम्मामि० मिच्छत्तभंगो। सम्मत्त० सव्वत्थोवा संखे०गुणहाणि०। संखे०भागहाणि० असंखे०गुणा। असंखे०भागहाणि० असंखे०गुणा। अणंताणु०चउक्क० आणदभंगो। णवरि अवत्तव्वं णत्थि। एवं सव्वट्ठे। णवरि संखे०गुणं कायव्वं।**

§ ५९०. **इंदियाणुवादेण एइंदिएसु मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० सव्वत्थोवा संखे०गुणहाणिकम्मंसिया। संखे०भागहाणिक० संखे०गुणा। असंखे०भागवड्ढिक० अणंतगुणा। अवट्ठिदक० असंखे०गुणा। असंखे०भागहाणिक० संखेज्जगुणा। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणिक०। संखे०गुणहाणिक० असंखे०-**

---

गुणवृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वका भी कथन करना चाहिये। किन्तु इतनी विशेपता है कि असंख्यातगुणहानि और संख्यातगुणहानिकर्मवाले इन दोनोंको भी समान करना चाहिये। अनन्तानुबन्धी चतुष्कको अपेक्षा अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े है। इनसे असंख्यातगुणहानिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणहानिवाले जीव संख्यातगुणे है। इनसे संख्यातभागहानिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागहानिवाले जीव असंख्यातगुणे है। अनुदिशसे लेकर अपराजित तकके देवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंका भंग आनत कल्पके समान है। सम्यग्मिथ्यात्वका भंग मिथ्यात्वके समान है। सम्यक्त्वकी अपेक्षा संख्यातगुणहानिवाले जीव सबसे थोड़े है। इनसे संख्यातभागहानिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागहानिवाले जीव असंख्यातगुणे है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भंग आनत कल्पके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि वहाँ अवक्तव्य पद नहीं है। इसी प्रकार सर्वार्थसिद्धिमें जानना चाहिये। किन्तु इतनी विशेपता है कि सर्वार्थसिद्धिमें सर्वत्र संख्यातगुणा करना चाहिये।

§ ५९०. इन्द्रियमार्गणाके अनुवादसे एकेन्द्रियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी अपेक्षा संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे है। इनसे असंख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव अनन्तगुणे है। इनसे अवस्थितकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे है। इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े है। इनसे संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे है। इनसे संख्यात-

गुणा। संखे०भागहाणिक० असंखे०गुणा। असंखे०भागहा०क० असंखे०गुणा। एवं बादर-सुहुमेइंदियपज्जत्तापज्जत्ताणं। विगलिंदिएसु मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक० सव्वत्थोवा संखे०गुणहाणिकम्मंसिया। संखे०भागवड्ढि-हाणिकम्मंसिया दो वि सरिसा संखे०गुणा। असंखेज्जभागवड्ढिक० असंखे०गुणा। अवट्ठि० असंखे०गुणा। असंखे०भागहाणि० संखे०गुणा। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वत्थोवा असंखे०-गुणहाणिक०। संखे०गुणहाणिक० असंखे०गुणा। संखे०भागहाणिक० असंखे०-गुणा। असंखे०भागहाणिक० असंखे०गुणा।

५९१. पंचिंदिय-पंचिं०पज्जत्तएसु मिच्छत्त-बारसक०-णवणोकसायाणं सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणिक०। संखे०गुणहाणिक० असंखे०गुणा। संखे०गुणवड्ढिक० विसे०। संखे०भागवड्ढि० संखे०भागहाणिक० दो वि तुल्ला संखे०गुणा। असंखे०भागवड्ढिक० असंखे०गुणा। अवट्ठिदट्ठिदिविहत्तियकम्मंसिया असंखे०-गुणा। असंखे०भागहाणिक० संखे०गुणा। अणंताणु०बंधीणं सव्वत्थोवा अवत्तव्वकम्मंसिया। असंखे०गुणहाणिक० संखे०गुणा। सेसपदाणि मिच्छत्तभंगो। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणिक०। अवट्ठिदक० असंखे० गुणा। असंखे०भागवड्ढिक० असंखे०गुणा। असंखे०गुणवड्ढिक० असंखे०गुणा।

भागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे है। इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यात-गुणे हैं। इसीप्रकार बादर और सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त और अपर्याप्त जीवोंमें जानना चाहिये। विकलेन्द्रियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कपाय और नौ नोकषायोंकी अपेक्षा संख्यातगुणहानि-कर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिकर्मवाले ये दोनों समान होते हुए भी संख्यातगुणे है। इनसे असंख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे है। इनसे अवस्थितकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे है। इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े है। इनसे संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे है। इनसे संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे है। इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं।

§ ५९१. पंचेन्द्रिय और पंचेन्द्रिय पर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, बारह कपाय और नौ नोकपायोंकी अपेक्षा असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यात-गुणहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धिकर्मवाले जीव विशेष अधिक है। इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिकर्मवाले ये दोनों तुल्य होते हुए भी संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थित स्थितिविभक्तिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा अवक्तव्यकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। शेष पदोंका भंग मिथ्यात्वके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे अवस्थितकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे है। इनसे असंख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव

संखे०गुणवड्ढिक० असंखे०गुणा। संखे०भागवड्ढिक० संखे०गुणा। संखे०गुणहाणिकम्मंसिया संखे०गुणा। संखे०भागहाणिक० असंखे०गुणा। जइवसहाइरियउवएसेण संखे०गुणा। अवत्तव्वकम्मंसिया असंखे०गुणा। असंखे०भागहाणिक० असंखे०गुणा।

§ ५९२. कायाणुवादेण सव्वचउकाएसु मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोकसाय० सव्वत्थोवा संखे०गुणहाणिक०। संखे०भागहाणिक० संखे०गुणा। असंखे०भागवड्ढिक० असंखे०गुणा। अवट्ठिदक० असंखे०गुणा। असंखे०भागहाणिक० संखे०गुणा। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं एइंदियभंगो। एवं बादरवणप्फदि०पत्तेयसरीराणं। सव्ववणप्फदि-सव्वणिगोदाणमेइंदियभंगो। तसकाइय-तसका०पज्जत्तएसु पंचिंदियभंगो। तसअपज्जत्तएसु पंचिंदियअपज्जत्तभंगो।

५९३. जोगाणुवादेण पंचमण०-पंचवचिजोगीसु मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक०-सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणिकम्मंसिया। उवरि विदियपुढविभंगो। अथवा सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणिक०। संखे०गुणवड्ढिक० असंखे०गुणा। संखे०गुणहाणिक० विसेसाहिया खवगसेढीए संखे०गुणहाणिं कुणमाणजीवेहि। संखे०भागवड्ढिक० संखे०गुणा। संखे०भागहाणिक० विसेसा० खवगसेढीए संखे०भाग-

असंख्यातगुणे है। इनसे असंख्यातगुणवृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। पर यतिवृषभ आचार्यके उपदेशसे संख्यातगुणे हैं। इनसे अवक्तव्यकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं।

§ ५९२. कायमार्गणाके अनुवादसे पृथिवी आदि चार कायवालोंके सब भेदोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी अपेक्षा संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थितकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग एकेन्द्रियोंके समान है। इसी प्रकार बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर जीवोंके जानना चाहिये। सब वनस्पतिकायिक और सब निगोद जीवोंका भंग एकेन्द्रियोंके समान है। त्रसकायिक और त्रसकायिकपर्याप्त जीवोंका भंग पंचेन्द्रियोंके समान है। तथा त्रसअपर्याप्तकोंका भंग पंचेन्द्रिय अपर्याप्तकोंके समान है।

§ ५९३. योगमार्गणाके अनुवादसे पांचों मनोयोगी और पांचों वचनयोगी जीवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अपेक्षा असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इसके आगे दूसरी पृथिवीके समान भंग है। अथवा असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव क्षपकश्रेणीमें मात्र संख्यातगुणहानिको करनेवाले जीवोंकी अपेक्षा विशेष अधिक हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव

हाणिं कुणमाणजीवेहि। असंखे०भागवड्ढिक० असंखे०गुणा। अवट्ठिदक० असंखे० गुणा। असंखे०भागहा० संखे०गुणा। अणंताणुबंधीणं सव्वत्थोवा अवत्तव्वकम्मंसिया। असंखे०गुणहाणिक० संखे०गुणा। संखे०गुणहाणि-संखे०गुणवड्ढिक० दो वि सरिसा असंखे०गुणा। विसंजोयणाए संखे०गुणहाणिकंडयजीवेहि हाणी विसेसाहिया त्ति किण्ण भणिदा? ण, विदियादिपुढविणेरइएसु विसेसाहियत्तप्पसंगादो। ण च एवमुच्चारणाए, तत्थ तासिं सरिसत्तपरूवणादो। तत्थाहिप्पाओ जाणिय वत्तव्वो। संखे०भागहाणि०-संखे०भागवड्ढिकम्मंसिया दो वि सरिसा संखे०गुणा। उवरि मिच्छत्तभंगो। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं मूलोघभंगो।

५९४. कायजोगीसु सव्वकम्मसव्वपदाणं मूलोघभंगो। ओरालिकायजोगीसु मणजोगिभंगो। णवरि छब्बीसं पयडीणमसंखे०भागवड्ढि० अणंतगुणा। ओरालियमिस्सकायजोगीसु सव्वत्थोवा संखे०गुणहाणिक०। संखे०भागहाणिक० संखे०गुणा। संखे०गुणवड्ढिक० असंखे०गुणा। संखे०भागवड्ढिक० संखे०गुणा। असंखे०भागवड्ढिक० अणंतगुणा। अवट्ठि० असंखे०गुणा। असंखे०भागहाणि० संखे०गुणा। एदमप्पाबहुअं

क्षपकश्रेणीमें मात्र संख्यातभागहानिको करनेवाले जीवोंकी अपेक्षा विशेष अधिक हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थितकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अपेक्षा अवक्तव्यकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिकर्मवाले ये दोनों समान होते हुए भी असंख्यातगुणे है।

**शंका**—विसंयोजनामें संख्यातगुणहानिकाण्डकवाले जीवोंकी अपेक्षा हानि विशेष अधिक है यह क्यों नहीं कहा?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि ऐसा कथन करनेसे दूसरी आदि पृथिवियोंके नारकियोंमें विशेषाधिकपनेका प्रसंग प्राप्त होता है। और ऐसा उच्चारणामें है नहीं, क्योंकि वहां उनकी समानताका कथन किया है। अतः अभिप्राय समझकर यहां कथन करना चाहिये।

इनसे संख्यातभागहानि और संख्यातभागवृद्धिकर्मवाले ये दोनों समान होते हुए भी संख्यातगुणे है। ऊपर मिथ्यात्वके समान भंग है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व का भंग मूलोघके समान है।

५९४. काययोगियोंमें सब कर्मोंके सब पदोंका भंग मूलोघके समान है। औदारिककाययोगियोंका भंग मनोयोगी जीवोंके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि इनमें छब्बीस प्रकृतियोंकी अपेक्षा असंख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव अनन्तगुणे हैं। औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे है। इनसे संख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव अनन्तगुणे है। इनसे अवस्थितकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे है। यह अल्पबहुत्व

छब्बीसं पयडीणं दट्ठव्वं। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणिक०। संखे०गुणहाणिक० असंखे०गुणा। संखे०भागहाणिक० उच्चारणाए अहिप्पाएण असंखे०गुणा। जइवसहगुरूवएसेण संखेज्जगुणा। असंखे०भागहाणिक० असंखे०गुणा।

५९५. वेउव्वियकायजोगीसु मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० सव्वत्थोवा संखे०-गुणहाणि-संखे०गुणवड्ढिकम्मंसिया दो वि सरिसा। संखे०भागवड्ढि-संखे०भागहाणि० दो वि सरिसा संखे०गुणा। असंखे०भागवड्ढि० असंखे०गुणा। अवट्ठि० असंखे०-गुणा। असंखे०भागहाणि० संखे०गुणा। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं मूलोघभंगो। अणंताणुबंधीणं सव्वत्थोवा अवत्तव्व०। असंखे०गुणहाणि० संखे०गुणा। संखे०-गुणवड्ढि० संखे०गुणहाणि० दो वि असंखे०गुणा। उवरि मिच्छत्तभंगो।

५९६. वेउव्वियमिस्स० छव्वीसं पयडीणं सव्वत्थोवा संखे०गुणहाणि०। संखे०-गुणवड्ढि० विसेसाहिया। संखे०भागवड्ढि०-संखे०भागहाणि० दो वि सरिसा संखे०-गुणा। असंखे०भागवड्ढि० असंखे०गुणा। अवट्ठि० असंखे०गुणा। असंखे०भागहाणि० संखे०गुणा। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणिक०। संखे०गुण-हाणिक० असंखे०गुणा। संखे०भागहाणिक० असंखे०गुणा संखे०गुणा वा।

छब्बीस प्रकृतियोंका जानना चाहिए। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा असंख्यात-गुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव उच्चारणाके अभिप्रायानुसार असंख्यातगुणे हैं। पर यतिवृषभगुरुके उपदेशानुसार संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं।

§ ५९५. वैक्रियिककाययोगियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अपेक्षा संख्यातगुणहानि और संख्यातगुणवृद्धिकर्मवाले ये दोनों समान होते हुए भी सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिकर्मवाले ये दोनों समान होते हुए भी संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थितकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग मूलोघके समान है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा अवक्तव्यकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे [संख्यात-गुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव ये दोनों समान होते हुए भी असंख्यातगुणे हैं। ऊपर मिथ्यात्वके समान भंग है।

§ ५९६. वैक्रियिकमिश्रकाययोगियोंमे छब्बीस प्रकृतियोंकी अपेक्षा संख्यातगुणहानिकर्म-वाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धिकर्मवाले जीव विशेष अधिक हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिकर्मवाले ये दोनों समान होते हुए भी संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थितकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यात-गुणहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे

असंखे०भागहाणिक० असंखे०गुणा ।

§ ५९७. कम्मइय०जोगीसु छब्बीसं पयडीणं सव्वत्थोवा संखे०गुणहाणिक० । संखे०भागहाणिक० संखे०गुणा । संखे०गुणवड्ढि० असंखे०गुणा । संखे०भागवड्ढि० संखे०गुणा । असंखे०भागवड्ढि० अणंतगुणा । अवट्ठि० असंखे०गुणा । असंखे०-भागहा० संखे०गुणा । सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमोरालियमिस्स०भंगो । एवमणाहारीणं ।

§ ५९८. आहार-आहारमिस्स० अट्ठावीसं पयडीणं णत्थि अप्पाबहुअं, एगपदत्तादो । एवमकसाय-जहाक्खाद०-सासणाणं ।

§ ५९९. वेदाणुवादेण इत्थि-पुरिसवेदएसु मिच्छत्त-सोलसक०-णवणोक०-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं पंचिंदियभंगो । णउंसय० अट्ठावीसं पयडीणं मूलोघभंगो । अवगदवेदएसु मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि०-अट्ठकसाय०-इत्थि-णवुंसयवेदाणं सव्वत्थोवा संखे०भागहाणिकम्मंसिया । असंखे०भागहाणिक० संखे०गुणा । एवं सत्तणोकसाय-तिसंजलणाणं । णवरि संखे०गुणहाणी जाणिय वत्तव्वा । लोभसंजलणस्स सव्वत्थोवा संखे०गुणहाणि० । संखे०भागहाणि० संखे०गुणा । असंखे०भागहाणि० संखे०गुणा । कसायाणुवादेण चदुण्हं कसायाणं मूलोघभंगो ।

§ ६००. णाणाणुवादेण मदिअण्णाणि-सुदअण्णाणीसु मिच्छत्त-सोलसक०-

हैं या संख्यातगुणे हैं । इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीवअसंख्यातगुणे हैं ।

§ ५९७. कार्मणकाययोगियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी अपेक्षा संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं । इनसे संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे है । इनसे संख्यातगुणवृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे है । इनसे संख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं । इनसे असंख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव अनन्तगुणे है । इनसे अवस्थितकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं । इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग औदारिकमिश्रकाययोगियोंके समान है । इसी प्रकार अनाहारक जीवोंमें जानना चाहिए ।

§ ५९८. आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी अपेक्षा अल्पबहुत्व नहीं है, क्योंकि यहां असंख्यातभागहानिरूप केवल एक पद है । इसी प्रकार अकषायी, यथाख्यातसंयत और सासादनसम्यग्दृष्टियोंमें जानना चाहिये ।

§ ५९९. वेदमार्गणाके अनुवादसे स्त्रीवेदी और पुरुषवेदी जीवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, नौ नोकषाय, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग पंचेन्द्रियोंके समान है । नपुंसकवेदियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोका भंग मूलोघके समान है । अपगतवेदवाले जीवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, आठ कषाय, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी अपेक्षा संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं । इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे है । इसी प्रकार सात नोकषाय और तीन संज्वलनोंकी अपेक्षा जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि संख्यातगुणहानिका कथन जानकर करना चाहिये । लोभसंज्वलनकी अपेक्षा संख्यातगुणहानिवाले जीव सबसे थोड़े हैं । इनसे संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं । इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे है । कषायमार्गणाके अनुवादसे चारों कषायोंका भंग मूलोघके समान है ।

६००. ज्ञानमार्गणाके अनुवादसे मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंमें मिथ्यात्व, सोलह

णवणोक० सव्वत्थोवा संखे०गुणहाणिक० । संखे०भागहाणिकम्मंसिया संखे०गुणा । संखे०गुणवड्ढिक० असंखे०गुणा । संखे०भागवड्ढिक० संखे०गुणा । असंखे०-भागवड्ढिक० अणंतगुणा । अवट्ठि० असंखे०गुणा । असंखे०भागहाणि० संखे०गुणा । सम्मत्त-सम्मामि० सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणि० । संखे०गुणहाणिक० असंखे०-गुणा । संखे०भागहाणिक० असंखे०गुणा संखे०गुणा वा । असंखे०भागहाणि० असंखे०गुणा । एवं मिच्छादि०-असण्णीणं । विहंगणाणीसु छब्बीसं पयडीणं सव्वत्थोवा संखे०गुणवड्ढि-हाणिकम्मंसिया सरिसा । संखे०भागवड्ढि-हाणिक० सरिसा संखे०-गुणा । असंखे०भागवड्ढि० असंखे०गुणा । अवट्ठि० असंखे०गुणा । असंखे०भागहाणि० संखे०गुणा । सम्मत्त-सम्मामि० मदिअण्णाणिभंगो ।

§ ६०१. आभिणि०-सुद-ओहिणाणीसु मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणि०क० । संखे०गुणहाणिक० असंखे०गुणा । संखे०भागहाणिकम्मंसिया संखे०गुणा । असंखे०भागहाणिक० असंखे०गुणा । अणंताणुबंधीणं सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणिक० । संखे०गुणहाणिक० विसंजोयण-रासीए पहाणत्ते संखेज्जगुणा । महल्लट्ठिदीए सह सम्मत्तं घेत्तूण संखे०गुणहाणिं करेमाण-

कषाय और नौ नोकपायोंकी अपेक्षा संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातगुणवृद्धि-कर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव अनन्तगुणे हैं। इनसे अवस्थितकर्मवाले जीव असंख्यात-गुणे हैं। इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व-की अपेक्षा असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे या संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार मिथ्यादृष्टि और असंज्ञियोंमें जानना चाहिये। विभंगज्ञानियोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी अपेक्षा संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव समान होते हुए भी सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव समान होते हुए भी संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभाग-वृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे अवस्थितकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग मत्यज्ञानियोंके समान है।

§ ६०१. आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अपेक्षा असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यात-गुणहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यात-गुणे हैं। इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। अनन्तानुबन्धियोंकी अपेक्षा असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव विसंयोजना जीवराशिका प्रधानता रहते हुए संख्यातगुणे हैं। पर बड़ी स्थितिके साथ सम्यक्त्वको ग्रहण करके संख्यातगुणहानिको करनेवाली जीवराशिकी प्रधानता रहते हुए

रासीए पहाणत्ते संते संखे०गुणा असंखे०गुणा वा, दोण्हमेगदरणिण्णयाभावादो। संखे०भागहाणिक० संखे०गुणा। असंखे०भागहाणिक० असंखे०गुणा। सम्मत्त-सम्मामि० सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणिक०। संखेज्जगुणहाणिक० असंखे०गुणा। संखे०-भागहाणिक० संखे०गुणा। असंखे०भागहाणिक० असंखेज्जगुणा। एवमोहिदंस०-सम्मादिट्ठीणं। मणपज्जवणाणीसु अट्ठावीसं पयडीणं सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणि०। संखे०गुणहाणि० संखे०गुणा। संखे०भागहा० संखे०गुणा। असंखे०भागहा० संखे०-गुणा। एवं संजद-सामाइय-छेदो०संजदाणं।

§ ६०२. संजमाणुवादेण परिहार० दंसणतिय०-अणंताणु०चउक्क० सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणिक०। संखे०गुणहाणिक० संखेज्जगुणा। संखे०भागहा० संखे०गुणा। असंखे०भागहाणिक० संखे०गुणा। एक्कवीसपयडीणं सव्वत्थोवा संखे०भागहाणि०। असंखे०भागहा० संखे०गुणा। सुहुमसांपराइय० लोभसंजल० सव्वत्थोवा संखे०गुण-हाणि०। संखे०भागहाणिक० संखे०गुणा। असंखे०भागहा० संखे०गुणा। सेसपयडीणं णत्थि अप्पाबहुअं। णवरि दंसणतियस्स सव्वत्थोवा संखे०भागहाणि०। असंखे०भागहा० संखे०गुणा। संजदासंजद० दंसणतियस्स सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणिकम्मंसिया।

संख्यातगुणे हैं या असंख्यातगुणे हैं, क्योंकि दोनोंमेसे किसी एकका निर्णय नहीं किया जा सकता। इनसे संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभाग-हानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इससे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार अवधिदर्शनवाले और सम्यग्दृष्टि जीवोंके जानना चाहिये। मनःपर्ययज्ञानियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी अपेक्षा असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार संयत सामायिकसंयत और छेदोपस्थापनासंयत जीवोंके जानना चाहिये।

§ ६०२. संयम मार्गणाके अनुवादसे परिहारविशुद्धिसंयतोंमें तीन दर्शनमोहनीय और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इक्कीस प्रकृतियोंकी अपेक्षा संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे असंख्यातभाग-हानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। सूक्ष्मसांपरायिकसंयतोंमें लोभसंज्वलनकी अपेक्षा संख्यात-गुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े है। इनसे संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे है। इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। यहाँ शेष प्रकृतियोंका अल्पबहुत्व नहीं है। किन्तु इतनी विशेषता है कि तीन दर्शनमोहनीयकी अपेक्षा संख्यातभागहानि-कर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। संयतासंयतोंमें तीन दर्शनमोहनीयकी अपेक्षा असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव

संखे०गुणहाणिक० संखे०गुणा । संखे०भागहा० असंखे०गुणा । असंखे०भागहा० असंखे०गुणा । अणंताणु०चउक्क० सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणि० । संखे०गुणहा० संखे०गुणा । संखे०भागहाणि० संखे०गुणा । असंखे०भागहाणि० असंखे०गुणा । एक्कवीसपयडीणं सव्वत्थोवा संखे०भागहाणि० । असंखे०भागहाणि० असंखेज्जगुणा । असंजदेसु दंसणतिय-अणंताणुबंधिचउक्काणं मूलोघभंगो । एक्कवीसपयडीणं पि मूलोघभंगो चेव । णवरि असंखेज्जगुणहाणी णत्थि ।

§ ६०३. दंसणाणुवादेण चक्खुदंसणीसु अट्ठावीसं पयडीणं तसपज्जत्तभंगो । अचक्खुदंसणीणं मूलोघभंगो ।

§ ६०४. लेस्साणुवादेण किण्ह-णील-काउलेस्सिय० अट्ठावीसं पयडीणं मूलोघभंगो । णवरि बावीसं पयडीणमसंखेज्जगुणहाणी णत्थि । तेउ-पम्मलेस्सिय० मिच्छत्त० सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणि० । संखे०गुणवड्ढि०-संखे०गुणहाणि० दो वि सरिसा असंखे०गुणा । संखे०भागवड्ढि-हाणि० दो वि सरिसा संखे०गुणा । असंखे०भागवड्ढि० असंखे०गुणा । अवट्ठि० असंखे०गुणा । असंखे०भागहाणि० संखे०गुणा । एवमेक्कवीसपयडीणं । णवरि असंखे०गुणहाणी णत्थि । अणंताणुबंधीणं सव्वत्थोवा

सबसे थोड़े हैं । इनसे संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं । इनसे संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं । इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं । अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं । इनसे संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं । इनसे संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं । इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं । इक्कीस प्रकृतियोंकी अपेक्षा संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं । इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं । असंयतोंमें तीन दर्शनमोहनीय और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भंग ओघके समान है । इक्कीस प्रकृतियोंका भी भंग मूलोघके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ असंख्यातगुणहानि नहीं है ।

§ ६०३. दर्शनमार्गणाके अनुवादसे चक्षुदर्शनवालोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंका भंग त्रसपर्याप्तकोंके समान है । तथा अचक्षुदर्शनवालोंका भंग मूलोघके समान है ।

§ ६०४. लेश्यामार्गणाके अनुवादसे कृष्ण, नील और कापोतलेश्यावाले जीवोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंका भंग मूलोघके समान है । किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ बाईस प्रकृतियोंकी असंख्यातगुणहानि नहीं है । पीत और पद्मलेश्यावालोंमें मिथ्यात्वकी अपेक्षा असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं । इनसे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिकर्मवाले ये दोनों समान होते हुये भी असंख्यातगुणे हैं । इनसे संख्यातभागवृद्धि और संख्यातभागहानिकर्मवाले ये दोनों समान होते हुए भी संख्यातगुणे हैं । इनसे असंख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं । इनसे अवस्थितकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं । इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं । इसी प्रकार इक्कीस प्रकृतियोंकी अपेक्षा जानना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ असंख्यातगुणहानि नहीं है । अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा अवक्तव्यकर्मवाले जीव सबसे थोड़े

अवत्तव्व० । असंखे०गुणहा० संखे०गुणा । संखे०गुणवड्ढि-हाणि० असंखे०गुणा । उवरि मिच्छत्तभंगो । सम्मत्त-सम्मामि० मूलोघभंगो । सुक्कलेस्साए मिच्छत्त-बारसक०-णवणोक० सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणि० । संखे०गुणहाणि० असंखे०गुणा । संखे०-भागहाणि० संखे०गुणा । असंखे०भागहा० असंखे०गुणा । अणंताणुबंधीणं सव्वत्थोवा अवत्तव्व० । असंखे०गुणहाणि० संखे०गुणा । संखे०गुणहाणि० संखे०गुणा । संखे०-भागहाणि० संखेज्जगुणा । असंखे०भागहा० असंखे०गुणा । सम्मत्त० सव्वत्थोवा अवट्ठिद० । असंखे०गुणहाणिक० असंखे०गुणा । संखे०गुणहाणिक० विसेसाहिया । असंखे०भागवड्ढि० असंखे०गुणा । असंखे०गुणवड्ढि० असंखे०गुणा । संखे०गुणवड्ढि० असंखे०गुणा । संखे०भागवड्ढि० संखेज्जगुणा । संखेज्जभागहाणि० असंखे०गुणा । अवत्तव्व० असंखे०गुणा । असंखे०भागहा० असंखे०गुणा । एवं सम्मामिच्छत्तस्स वि ।

§ ६०५. भवियाणुवादेण भवसिद्धिय० मूलोघभंगो । अभवसि० छव्वीसं पयडीणं सव्वत्थोवा संखे०गुणहाणिक० । संखे०भागहाणिक० संखे०गुणा । संखे०-गुणवड्ढिक० असंखे०गुणा । संखे०भागवड्ढिक० संखे०गुणा । असंखे०भागवड्ढिक०

हैं । इनसे असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं । इनसे संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिकर्मवाले ये दोनों समान होते हुए भी असंख्यातगुणे हैं । ऊपर मिथ्यात्वके समान भंग है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भंग मूलोघके समान है । शुक्ललेश्यावालोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अपेक्षा असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं । इनसे संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं । इनसे संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं । इनसे असंख्यात-भागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं । अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा अवक्तव्यकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं । इनसे असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं । इनसे संख्यात-गुणहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं । इनसे संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं । इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं । सम्यक्त्वकी अपेक्षा अवस्थितकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं । इनसे असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं । इनसे संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव विशेष अधिक हैं । इनसे असंख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं । इनसे असंख्यातगुणवृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं । इनसे संख्यातगुणवृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं । इनसे संख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव संख्यात-गुणे हैं । इनसे संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं । इनसे अवक्तव्यकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं । इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं । इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वका भी कथन करना चाहिये ।

§ ६०५. भव्यमार्गणाके अनुवादसे भव्योंका भंग मूलोघके समान है । अभव्योंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी अपेक्षा संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं । इनसे संख्यात-भागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं । इनसे संख्यातगुणवृद्धिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं । इनसे संख्यातभागवृद्धिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं । इनसे असंख्यातभागवृद्धिकर्मवाले

अणंतगुणा । अवट्ठिद० असंखे०गुणा । असंखे०भागहा० संखे०गुणा ।

§ ६०६. सम्मत्ताणुवादेण वेदगसम्माइट्ठीसु मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणिक० । संखे०गुणहाणिक० असंखे०गुणा । वेदगसम्मत्तं घेत्तूण अंतोमुहुत्तब्भंतरे संखेज्जगुणहाणिं कुणमाणअसंखे०जीवग्गहणादो । संखे०भागहाणि० संखेज्जगुणा । अणंताणु०बंधिचउक्कं विसंजोएमाणेसु संखे०भागहाणिं कुणमाणजीवा असंखे०गुणा किण्ण होंति ? ण, तेसिं पमाणविसयउवएसाभावेण तदग्गहणादो । असंखे०भागहाणि० असंखे०गुणा । एक्कवीसं पयडीणं सव्वत्थोवा संखेज्जगुणहाणिकम्मंसिया । संखे०भागहाणिक० संखे०गुणा । असंखे०भागहाणि० असंखे०गुणा । अणंताणुबंधीणं सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणि० । संखे०गुणहाणि० संखे०गुणा असंखे०-गुणा वा । संखे०भागहाणि० संखेज्जगुणा । असंखे०भागहाणि० असंखे०गुणा । खइयसम्मादिट्ठीसु एक्कवीसपयडीणं सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणि० । संखे०गुणहाणि० संखे०गुणा । संखे०भागहाणि० संखे०गुणा । असंखे०भागहा० असंखे०गुणा । उवसमसम्मादिट्ठीसु अट्ठावीसं पयडीणं सव्वत्थोवा संखे०भागहाणिकम्मंसिया ।

---

जीव अनन्तगुणे हैं । इनसे अवस्थितकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे है । इनसे असंख्यातभाग-हानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं ।

§ ६०६. सम्यक्त्वमार्गणाके अनुवादसे वेदकसम्यग्दृष्टियोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं । इनसे संख्यात-गुणहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे है, क्योंकि यहाँ वेदकसम्यक्त्वको ग्रहण करके अन्तर्मुहूर्तके भीतर संख्यातगुणहानिको करनेवाले असंख्यात जीवोंका ग्रहण किया है । इनसे संख्यातभाग-हानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे है ।

**शंका**—अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करनेवाले जीवोंमें संख्यातभागहानिको करनेवाले जीव असंख्यातगुणे होते है ऐसा क्यों नहीं ग्रहण किया ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि उनका कितना प्रमाण है इस प्रकारका कोई उपदेश नहीं पाया जाता, अतः उनका ग्रहण नहीं किया ।

इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं । इक्कीस प्रकृतियोंकी अपेक्षा संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े है । इनसे संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे है । इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं । अनन्तानुबन्धी-चतुष्ककी अपेक्षा असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं । इनसे संख्यातगुणहानि-कर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं या असंख्यातगुणे हैं । इनसे संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे है । इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे है । क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें इक्कीस प्रकृतियोंकी अपेक्षा असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े है । इनसे संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे है । इनसे संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं । इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं । उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंकी अपेक्षा संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े है । इनसे

असंखे०भागहा० असंखे०गुणा। अथवा अणंताणुबंधीणं सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणि०। संखे०गुणहाणिक० संखे०गुणा। संखे०भागहाणि० संखे०गुणा। असंखे०भागहाणि० असंखे०गुणा। सम्मामि० सव्वत्थोवा संखे०गुणहाणिकम्मंसि०। संखे०भागहाणि० संखे०गुणा। असंखे०भागहाणि० असंखे०गुणा। एसा परूवणा अट्ठावीसं पयडीणं। सण्णियाणुवादेण सण्णीणं पुरिसवेदभंगो। आहारीणं मूलोघं।

एवमप्पाबहुअं समत्तं।

❀ **ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणं परूवणा अप्पाबहुअं च।**

§ ६०७. ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणं परूवणं तेसिं चेव अप्पाबहुअं च भणामि त्ति पइज्ञासुत्तमेदं। समुक्कित्तणा किण्ण उत्ता? ण, तिस्से एदेसु चेव अंतब्भावादो सामर्थ्यलभ्यत्वाद्वा।

❀ **परूवणा।**

§ ६०८. दोसु अहियारेसु अप्पाबहुअं मोत्तूण परूवणं भणिस्सामो त्ति वुत्तं होदि।

❀ **मिच्छत्तस्स ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि उक्कस्सियं ट्ठिदिमादिं कादूण जाव एइंदियपाओग्गकम्मं जहण्णयं ताव णिरंतराणि अत्थि।**

असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। अथवा, अनन्तानुबन्धीकी अपेक्षा असंख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंमें संख्यातगुणहानिकर्मवाले जीव सबसे थोड़े हैं। इनसे संख्यातभागहानिकर्मवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इनसे असंख्यातभागहानिकर्मवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। यह प्ररूपणा अट्ठाईस प्रकृतियोंकी जाननी चाहिये। संज्ञीमार्गणाके अनुवादसे संज्ञियोंका भंग पुरुषवेदके समान है। आहारकोंका भंग मूलोघके समान है।

इस प्रकार अल्पबहुत्वानुगम समाप्त हुआ।

❀ **अब स्थितिसत्कर्मस्थानोंकी प्ररूपणा और अल्पबहुत्व इनका अधिकार है।**

§ ६०७. अब स्थितिसत्कर्मस्थानोंकी प्ररूपणाका और उन्हींके अल्पबहुत्वका कथन करते हैं, इस प्रकार यह प्रतिज्ञासूत्र है।

**शंका**—समुत्कीर्तनाका कथन क्यों नहीं किया?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि उसका इन्हीं दो अधिकारोंमें अन्तर्भाव हो जाता है या वह सामर्थ्यगम्य है, इसलिये उसका अलगसे कथन नहीं किया।

❀ **पहले प्ररूपणाका अधिकार है।**

§ ६०८. दो अधिकारोंमें अल्पबहुत्वको छोड़कर पहले प्ररूपणाका कथन करते हैं यह इस सूत्रका तात्पर्य है।

❀ **मिथ्यात्वके स्थितिसत्कर्म उत्कृष्ट स्थितिसे लेकर एकेन्द्रियके योग्य जघन्य स्थितिसत्कर्म तक निरन्तर है।**

§ ६०९. **एदस्स सुत्तस्स परूवणं कस्सामो। तं जहा—मिच्छत्तस्से त्ति वयणेण सेसपयडिपडिसेहो कदो। ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि त्ति वयणेण पयडि-पदेसाणुभागसंत-कम्मट्ठाणाणं पडिसेहो कदो। उक्कस्सियं ट्ठिदिमादिं कादूणे त्ति भणिदे सत्तरिसागरो-वमकोडाकोडिमेत्तट्ठिदिसंतकम्ममादिं कादूणे त्ति भणिदं होदि। सत्तरिसागरोवमकोडा-कोडिमेत्तट्ठिदीओ मिच्छत्तस्सुक्कस्सट्ठिदिबंधो। कधं तस्स बंधपढमसमए वट्टमाणस्स ट्ठिदिसंतववएसो? ण एस दोसो, अत्थित्तविसिट्ठट्ठिदीए ट्ठिदिसंते त्ति गहणादो। तेण मिच्छत्तस्स सत्तवाससहस्समाबाहं काऊण सत्तरिसागरोवमकोडाकोडी बंधमाणस्स तमेगं ट्ठाणं। समयूणं बंधमाणस्स विदियट्ठाणं। एवं विसमयूणमादिं कादूण उक्कस्स-माबाहं धुवं कादूण ओदारेदव्वं जाव समयूणाबाहाकंडयमेत्तट्ठिदीओ ओदिण्णाओ त्ति। पुणो संपुण्णाबाहाकंडयमेत्तट्ठिदीओ ओसरिदूण बंधमाणो उक्कस्साबाहं समयूणं कादूण कम्मक्खंधे णिसिंचदि तमण्णं ट्ठाणं। एदेण कमेण जाणिदूण ओदारेदव्वं जाव धुवट्ठिदिसण्णिदअंतोकोडाकोडि त्ति। एदाणि बंधमासिदूण णिरंतरं ट्ठिदिसंत-कम्मट्ठाणाणि लद्धाणि। णवरि एगेगाबाधासमए झीयमाणे उवरि पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागपमाणमेगेगाबाधाकंडयमेत्तट्ठिदीओ झीयंति। तस्स को पडिभागो? उक्कस्साबाहासत्तवाससहस्साणं समए सगलिंदियसत्तरिसागरोवमकोडाकोडीओ**

§ ६०९. अब इस सूत्रका कथन करते हैं। जो इस प्रकार है—सूत्रमें 'मिच्छत्तस्स' इस वचनके द्वारा दूसरी प्रकृतियोंका निषेध किया है। 'ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि' इस वचनके द्वारा प्रकृति, प्रदेश और अनुभागसत्कर्मस्थानोंका निषेध किया है। 'उक्कस्सियं ट्ठिदिमादिं कादूण' ऐसा कहने पर उसका तात्पर्य 'सत्तर कोड़ाकोड़ीसागरस्थितिसत्कर्मसे लेकर' यह है।

**शंका**—चूंकि मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सत्तर कोड़ाकोड़ीसागर स्थितिप्रमाण होता है, अतः बन्धके प्रथम समयमें उसे स्थितिसत्त्व यह संज्ञा कैसे प्राप्त होती है?

**समाधान**—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि अस्तित्वयुक्त स्थितिका स्थितिसत्त्वरूपसे ग्रहण किया है।

अतः मिथ्यात्वकी सात हजार वर्षप्रमाण आबाधा करके सत्तर कोड़ाकोड़ीसागरप्रमाण बाँधनेवाले जीवके वह पहला स्थान होता है। तथा एक समय कम बांधनेवाले जीवके दूसरा स्थान होता है। इस प्रकार दो समय कमसे लेकर तथा उत्कृष्ट आबाधाको ध्रुव करके एक समय कम आबाधाकाण्डकप्रमाण स्थितियोंके कम होने तक घटाते जाना चाहिये। पुनः संपूर्ण आबाधाकाण्डकप्रमाण स्थितियोंको घटाकर बाँधनेवाला जीव उत्कृष्ट आबाधामें एक समय कम करके कर्मस्कन्धोंका बटवारा करता है। यह अन्य स्थान होता है। इसी क्रमसे जानकर ध्रुवस्थिति संज्ञावाली अन्तःकोड़ाकोड़ीसागरप्रमाण स्थितिके प्राप्त होने तक घटाते जाना चाहिये। बन्धकी अपेक्षा ये निरन्तर स्थितिसत्कर्मस्थान प्राप्त हुए। किन्तु इतनी विशेषता है कि आबाधाके एक एक समयके क्षीण होनेपर ऊपरकी पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण एक एक आबाधकाण्डकप्रमाण स्थितियोंका क्षय होता है। इसका अर्थात् पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण आबाधाकाण्डकका प्रतिभाग क्या है? उत्कृष्ट आबाधाके सात हजार वर्षोंके समयोंमें सकलेन्द्रियोंकी सत्तर कोड़ाकोड़ीसागरप्रमाण

समखंडं कादूण दिण्णे तत्थ एगखंडमाबाहाकंडयमिदि भणिदं होदि। एत्थ एगमाबाहाकंडयसमयूणं जाव झीयदि ताव एगा चेव आबाहा होदि। संपुण्णे झीणे आबाहा समयूणा होदि। णिसेगट्ठिदी पुण उभयत्थ समाणा।

६१०. आबाहाए समयूणाए जादाए तम्मि चेव समए णिसेगट्ठिदी वि पुव्वणिसेगट्ठिदिं पेक्खिदूण समयूणा होदि त्ति के वि भणंति, तण्ण घडदे, एगसमयम्मि दोण्हं ट्ठिदीणं अधट्ठिदीए गलणप्पसंगादो। तेणेदं मोत्तूण एवं घेत्तव्वं उक्कस्साबाधं धुवं कादूण बंधमाणो एगसमएण एगाबाहाकंडयमेत्तट्ठिदीओ ओसक्किदूण जदि बंधदि तो उक्कस्साबाहाचरिमसमयम्मि पढमणिसेगं णिसिंचिदूण उवरि णिरंतरं कम्मणिसेगं करेदि। दोण्णि ओदरिय बंधमाणो उक्कस्साबाधादुचरिमसमयप्पहुडि कम्मक्खंधे णिसिंचदि। एवं गंतूण एगवारेण उक्कस्सट्ठिदीदो ओसरिदूण अंतोकोडाकोडिट्ठिदिं बंधमाणो अंतोमुहुत्तमाबाधं मोत्तूण कम्मणिसेगं करेदि त्ति। संपहि धुवट्ठिदीदो हेट्ठिमअंतोकोडाकोडिमेत्तट्ठाणवियप्पेसु णिरंतरमुप्पाइज्जमाणेसु जहा सण्णियासम्मि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं हदसमुप्पत्तियकंडयमस्सिदूण णिरंतरं ट्ठाणपरूवणा कदा तथा एत्थ वि मिच्छत्तस्स णिरंतरट्ठाणपरूवणं कादूण ओदारेदव्वं जाव सागरोवममेत्तट्ठिदी चेट्ठिदा त्ति। पुणो एदिस्से हेट्ठा एइंदियट्ठिदिं बंधमस्सिदूण समयूण-दुसमयूणादिकमेण बंधाविय ओदारेदव्वं जाव

स्थितियोंके समान खण्ड करके देयरूपसे देने पर वहाँ एक खण्डप्रमाण आबाधाकाण्डक प्राप्त होता है यह इसका तात्पर्य है। यहाँ एक समय कम आबाधाकाण्डकप्रमाण स्थितियोंके क्षीण होने तक एक ही आबाधा होती है। तथा एक आबाधाकाण्डकके पूरे क्षीण होने पर आबाधा एक समय कम होती है। परन्तु निषेकस्थिति दोनों जगह समान रहती है।

§ ६१०. यहां कितने ही आचार्य ऐसा कथन करते हैं कि आबाधाके एक समय कम हो जाने पर उसी समयमें निषेकस्थिति भी पहलेकी निषेक स्थितिका अपेक्षा एक समय कम होती है। पर उनका ऐसा कहना घटित नहीं होता, क्योंकि ऐसा माननेमें दो स्थितियोंकी अधःस्थितिगलनाका प्रसङ्ग प्राप्त होता है। अतः इस अर्थको छोड़कर इस प्रकार ग्रहण करना चाहिये कि उत्कृष्ट आबाधाको ध्रुव करके बाँधनेवाला जीव यदि एक समयके द्वारा एक आबाधाकाण्डकप्रमाण स्थितियोंको घटाकर बाँधता है तो उत्कृष्ट आबाधाके अन्तिम समयमें प्रथम निषेकको देकर ऊपर कर्मनिषेकोंका निरन्तर बटवारा करता है। तथा दो आबाधाकाण्डक प्रमाण स्थितियोंको घटाकर बाँधनेवाला जीव उत्कृष्ट आबाधाके द्विचरम समयसे लेकर कर्मस्कन्धोंका बटवारा करता है। इस प्रकार जाकर एक साथ उत्कृष्ट स्थितिसे उतरकर अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण स्थितिका बन्ध करनेवाला जीव अन्तर्मुहूर्त आबाधा छोड़कर शेष स्थितिप्रमाण कर्मनिषेक करता है। अब ध्रुवस्थितिसे नीचे अन्तःकोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण स्थानविकल्पोंके निरन्तर उत्पन्न करने पर जिस प्रकार सन्निकर्षानुगममें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी हतसमुत्पत्तिककाण्डकका आश्रय लेकर निरन्तर स्थानप्ररूपणा की है उसी प्रकार यहाँ भी मिथ्यात्वके निरन्तर स्थानोंकी प्ररूपणा करके एक सागरप्रमाण स्थितिके शेष रहने तक स्थिति घटाते जाना चाहिए। पुनः इस स्थितिके नीचे एकेन्द्रियके स्थितिबन्धका आश्रय लेकर एक समय कम, दो समय कम आदि क्रमसे बँधाकर पल्यके असंख्यातवें भाग कम एक

पलिदो० असंखे०भागेणूणएगसागरोवमं त्ति । एवमेइंदियपाओग्गकम्मं जहण्णयं जाव पावदि ताव णिरंतराणि ट्ठाणाणि उप्पाइदाणि जेण तेणेदेसिमत्थित्तं सिद्धं । संपहि दंसणमोहक्खवणाए लब्भमाणट्ठाणपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि ।

**❀ अण्णाणि पुण दंसणमोहक्खवयस्स अणियट्टिपविट्ठस्स जम्हि ट्ठिदिसंतकम्ममेइंदियकम्मस्स हेट्ठदो जादं तत्तो पाए अंतमुहुत्तमेत्ताणि ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि लब्भंति ।**

§ ६११. एदाणि पलिदो० असंखे०भागेणूणेगसागरोवमपरिहीणसत्तरिसागरोवमकोडाकोडिमेत्तट्ठाणाणि मोत्तूण अण्णाणि वि ट्ठाणाणि लब्भंति । 'अवि'सद्दो कत्थुवलद्धो ? ण, 'पुण'सद्दस्स 'अवि'सद्दट्ठे वट्टमाणस्स सुत्तत्थस्सुवलंभादो । ताणि कस्स लब्भंति त्ति पुच्छिदे दंसणमोहक्खवयस्से त्ति भणिदं । अणियट्टिपविट्ठस्से त्ति णिद्देसो अपुव्वादिपडिसेहफलो । जम्हि ट्ठिदिसंतकम्ममेइंदियट्ठिदिसंतकम्मस्स हेट्ठदो जादं ति णिद्देसो पुणरुत्तट्ठाणपडिसेहफलो । अणियट्टिकरणब्भंतरे सागरोवममेत्तट्ठिदिसंतकम्मे दंसणमोहणीयस्स सेसे तक्खवओ पलिदो० संखे०भागमेत्तट्ठिदिकंडयमागाएदि । तं पुण एइंदियवीचारट्ठाणेहिंतो असंखेज्जगुणं, तेसिं पलिदो० असंखे०भागत्तादो । तस्स ट्ठिदिकंडयस्स जाव दुचरिमफाली पददि ताव पुणरुत्तट्ठाणाणि

सागरप्रमाण स्थितिके प्राप्त होने तक स्थिति घटाते जाना चाहिये । चूंकि इस प्रकार एकेन्द्रियके योग्य जघन्य कर्मके प्राप्त होने तक निरन्तर स्थान उत्पन्न किये अतः इनका अस्तित्व सिद्ध होता है । अब दर्शनमोहनीयकी क्षपणामें प्राप्त होनेवाले स्थानोंकी प्ररूपणा करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

**❀दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवाले अनिवृत्तिकरणको प्राप्त हुए जीवके, जहाँ स्थितिसत्कर्म एकेन्द्रियके योग्य कर्मसे नीचे हो जाता है वहाँसे लेकर अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अन्य स्थितिसत्कर्म प्राप्त होते हैं ।**

§ ६११. पल्यका असंख्यातवां भागकम एक सागर हीन सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण स्थानोंको छोड़कर ये अन्य भी स्थान प्राप्त होते हैं ।

**शंका**—यहाँ 'अपि' शब्द कहाँसे प्राप्त हुआ ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि सूत्रमें 'अपि' शब्दके अर्थमें 'पुण' शब्द विद्यमान है, अतः उसके साथ सूत्रका अर्थ घटित हो जाता है ।

ये स्थान किसके प्राप्त होते हैं ऐसा पूछनेपर 'दर्शनमोहकी क्षपणा करनेवाले जीवके प्राप्त होते हैं' ऐसा कहा । सूत्रमें 'अणियट्टिपविट्ठस्स' इस प्रकारके निर्देशका फल अपूर्वकरण आदि शेषका निषेध करना है । 'जम्हि ट्ठिदिसंतकम्ममेइंदियट्ठिदिसंतकम्मस्स हेट्ठदो जादं' इस प्रकारके निर्देशका फल पुनरुक्त स्थानोंके निषेधके लिये किया है । अनिवृत्तिकरणके भीतर दर्शनमोहनीयके एक सागरप्रमाण स्थितिसत्कर्मके शेष रहने पर उसकी क्षपणा करनेवाला जीव पल्यके संख्यातवें भागप्रमाण स्थितिकाण्डक करता है । परन्तु वह स्थितिकाण्डक एकेन्द्रियोंके वीचारस्थानोंसे असंख्यातगुणा होता है, क्योंकि एकेन्द्रियोंके वीचारस्थान पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण होते हैं । उस स्थितिकाण्डककी द्विचरम फालिके पतन होने तक पुनरुक्त-

त्ति तेसिं पडिसेहो एदेण परूविदो त्ति भावत्थो। ताए पदिदाए एइंदिएसु लद्धट्ठाणेहिंतो असंखे०गुणमंतरिय अपुणरुत्तट्ठाणमुप्पज्जदि तत्तो पाए अंतोमुहुत्तमेत्ताणि ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि लब्भंति, अधट्ठिदिगलणं मोत्तूण अण्णत्थ तदुवलंभाभावादो। जत्तो पाए एइंदियट्ठिदिसंतकम्मस्स हेट्ठदो जादं तत्तो पाए जाव एगा ट्ठिदी दुसमयकाला जादा त्ति ताव फालिट्ठाणेहि विणा अधट्ठिदिगलणाए सांतरणिरंतरट्ठाणाणि अंतोमुहुत्तमेत्ताणि लब्भंति त्ति भणिदं होदि।

**❀ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि सत्तरिसागरोवमकोडाकोडीओ अंतोमुहुत्तूणाओ।**

§ ६१२. सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं त्ति णिद्देसो सेसकम्मपडिसेहफलो। एदासिं दोण्हं पयडीणं ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि केत्तियाणि त्ति भणिदे अंतोमुहुत्तूणाओ सत्तरिसागरोवमकोडाकोडीओ त्ति भणिदं। संपुण्णाओ किण्ण होंति? ण, अंतोमुहुत्तूणुक्कस्सट्ठिदीए विणा उवरिमट्ठिदिवियप्पेहि सम्मत्तग्गहणाभावादो। मिच्छत्तणिरुंभणं कादूण सण्णियासम्मि जधा सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं अंतोमुहुत्तूणसत्तरिसागरोवमकोडाकोडिमेत्तट्ठिदिट्ठाणाणं परूवणा कदा तधा एत्थ वि कायव्वा, विसेसाभावादो। केवलेण अंतोमुहुत्तेणेव ऊणाओ ण होंति त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

स्थान होते हैं, अतः 'जम्हि ट्ठिदिसंत' इत्यादि पदके द्वारा उनका निषेध किया यह इसका भावार्थ है। उस द्विचरमफालिके पतन हो जाने पर एकेन्द्रियोंमें प्राप्त होनेवाले स्थानोंसे असंख्यातगुणा अन्तर देकर अपुनरुक्त स्थान प्राप्त होता है। वहाँसे लेकर अन्तर्मुहूर्तप्रमाण स्थितिसत्कर्म प्राप्त होते हैं, क्योंकि अधःस्थितिगलनाको छोड़कर अन्यत्र उनकी प्राप्ति नहीं होती है। इसका तात्पर्य यह है कि जहाँसे एकेन्द्रियस्थितिसत्कर्मके नीचे स्थान हो गये वहाँसे लेकर दो समय कालप्रमाण एक स्थितिके प्राप्त होने तक फालिस्थानोंके बिना अधःस्थितिगलनारूपसे सान्तर-निरन्तर अन्तर्मुहूर्तप्रमाण स्थान प्राप्त होते हैं।

**❀ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके स्थितिसत्कर्मस्थान अन्तर्मुहूर्तकम सत्तर कोड़ाकोड़ीसागरप्रमाण होते हैं।**

§ ६१२. सूत्रमें 'सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं' इस प्रकारके निर्देशका फल शेष कर्मोंका निषेध करना है। इन दोनों प्रकृतियोंके स्थितिसत्कर्म कितने हैं ऐसा कहने पर अन्तर्मुहूर्तकम सत्तर कोड़ाकोड़ीसागर प्रमाण है ऐसा कहा है।

**शंका**—पूरे सत्तर कोड़ाकोड़ीसागरप्रमाण क्यों नहीं होते?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि अन्तर्मुहूर्तकम उत्कृष्ट स्थितिको छोड़कर ऊपरके स्थितिविकल्पोंके साथ सम्यक्त्वका ग्रहण नहीं होता। मिथ्यात्वको रोककर सन्निकर्षानुगममें जिस प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अन्तर्मुहूर्तकम सत्तर कोड़ाकोड़ीसागरप्रमाण स्थितिस्थानोंका कथन किया उसी प्रकार यहाँ भी करना चाहिये, क्योंकि दोनों कथनोंमें परस्पर कोई विशेषता नहीं है।

केवल अन्तर्मुहूर्त ही कम नहीं होते हैं इस बातका ज्ञान करानेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

**❀ अपच्छिमेण उव्वेल्लणकंडएण च ऊणाओ एत्तियाणि ट्ठाणाणि ।**

§ ६१३. अपच्छिमेणुव्वेल्लणट्ठिदिकंडएणूणत्तं किमट्ठं वुच्चदे ? ण, चरिमुव्वेल्लणकंडयचरिमफालीमेत्तट्ठिदीणमक्कमेण पदंताणं ट्ठाणवियप्पाणुवलंभादो । जदि एवं, तो सव्वुव्वेल्लणखंडयाणं चरिमफालीओ अक्कमेण पदिदाओ त्ति सव्वत्थ सांतरट्ठाणुप्पत्ती पावदे ? ण च एवं, पलिदोवमस्स असंखे०भागमेत्तट्ठाणप्पसंगादो ? ण एस दोसो, ट्ठिदिखंडयायामाणं णियमाभावेण उव्वेल्लणपारंभट्ठाणस्स णियमाभावेण विसोहिवसेण पदमाणाणं ट्ठिदिखंडयायामाणं णियमाभावेण च णाणाजीवे अस्सिदूण सेसकंडएसु णिरंतरट्ठाणुवलंभादो । ण च चरिमफालीए णिरंतरक्कमेण लब्भंति, सव्वजीवाणं सव्वजहण्णचरिमफालीए एगपमाणत्तादो । एत्तियाणि ट्ठाणाणि सम्मत्तसम्मामिच्छत्ताणं होंति त्ति घेत्तव्वं ।

**❀ जहा मिच्छत्तस्स तहा सेसाणं कम्माणं ।**

§ ६१४. सोलसकसाय-णवणोकसायाणं मिच्छत्तस्सेव ट्ठाणपरूवणा कायव्वा, विसेसाभावादो । संपहि एवं विहाणेणुप्पण्णट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणं थोवबहुत्तसाहणपदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

**❀ अभवसिद्धियपाओग्गे जेसिं कम्मंसाणमग्गट्ठिदिसंतकम्मं तुल्लं**

**❀ वे स्थान अन्तिम उद्वेलनाकाण्डकसे कम हैं । इतने स्थान होते हैं ।**

§ ६१३. **शंका**—यहाँ अन्तिम उद्वेलना स्थितिकाण्डकसे कम किसलिये कहा ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि अन्तिम उद्वेलनाकाण्डककी अन्तिम फालिप्रमाण स्थितियोंका युगपत् पतन होता है, इसलिये वहाँ स्थानविकल्प नहीं प्राप्त होते ।

**शंका**—यदि ऐसा है तो सब उद्वेलनाकाण्डकोंकी अन्तिम फालियोंका अक्रमसे पतन होता है, अतः सर्वत्र सान्तर स्थानोंकी उत्पत्ति प्राप्त होती है । परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि ऐसा मानने पर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थानोंका प्रसंग प्राप्त होता है ।

**समाधान**—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि स्थितिकाण्डकोंके आयामोंका नियम न होनेसे, उद्वेलनाके प्रारम्भके स्थानका नियम न होनेसे और विशुद्धिके वशसे पतनको प्राप्त होनेवाले स्थितिकाण्डकायामोंका नियम न होनेसे नाना जीवोंकी अपेक्षा शेष काण्डकोंमें निरन्तर स्थान पाये जाते हैं । परन्तु अन्तिम फालिके स्थान निरन्तर क्रमसे नहीं प्राप्त होते, क्योंकि सब जीवोंके सबसे जघन्य अन्तिम फालिका प्रमाण समान है ।

अतः इतने स्थान सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके होते हैं ऐसा ग्रहण करना चाहिये ।

**❀ जिस प्रकार मिथ्यात्वके स्थितिसत्कर्मस्थान कहे उसी प्रकार शेष कर्मोंके कहने चाहिये ।**

§ ६१४. सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी मिथ्यात्वके समान स्थानप्ररूपणा करनी चाहिए, क्योंकि उसमें इससे कोई विशेषता नहीं है । अब इस प्रकारसे उत्पन्न हुए स्थिति, सत्कर्मस्थानोंके अल्पबहुत्वकी सिद्धिका प्रतिपादन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

**❀ अभव्योंके योग्य जिन कर्मोंका उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म समान होता हुआ**

**जहण्णगं द्विदिसंतकम्मं थोवं तेसिं कम्मंसाणं ट्ठाणाणि बहुआणि ।**

§ ६१५. अभवसिद्धियपाओग्गे त्ति भणिदे मिच्छादिट्ठिपाओग्गे त्ति घेत्तव्वं । कधं मिच्छादिट्ठिस्स अभव्ववबएसो ? ण, उक्कस्सट्ठिदिअणुभागबंधे पडुच्च समाणत्तणेण अभव्ववबएसं पडि विरोहाभावादो । जेसिं कम्माणमुक्कस्सट्ठिदिसंतकम्मं सरिसं होदूण जहण्णट्ठिदिसंतकम्मं सरिसं ण होदि किंतु थोवं तेसिं कम्मंसाणं ट्ठाणाणि बहुआणि, हेट्ठा बहुआणं ट्ठाणाणमुवलंभादो । जेसिं पुण कम्मंसाणं ट्ठिदीओ उवरि बहुआओ हेट्ठा जहण्णट्ठिदी जदि वि थोवा समा वा होदि तो वि तेसिं ट्ठाणाणि बहुआणि होंति, हेट्ठोवरि लद्धट्ठाणेहि अब्भहियत्तादो । एदस्सुदाहरणं वुच्चदे । तं जहा—एगो एइंदिओ कसायट्ठिदिं सागरोवमचत्तारिसत्तभागमेत्तं पलिदो० असंखे०भागेणूणं बंधमाणो अच्छिदो तं बंधावलियादीदं तेण णवणोकसायाणमुवरि संकामिदे कसाय-णोकसायाणं ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि सरिसाणि होंति । पुणो बंधगद्धाभेदेण सत्तणोकसायट्ठिदिबंध-ट्ठाणाणं बहुत्तं वत्तइस्सामो । तं जहा—एइंदिएसु कसायाणं जहण्णट्ठिदिसंतकम्मे संते पुरिसवेदे हस्स-रदीणं तस्समए जुगवं बंधपारंभो कायव्वो । पारद्धपढमसमयप्पहुडि हस्स-रदिबंधगद्धाए संखे०भागे अदिक्कंते पुरिसवेदबंधगद्धा थक्कदि । तत्थक्काणंतरसमए इत्थिवेदबंधगद्धापारंभो कायव्वो । एवं पारभिय पुणो इत्थिवेद-हस्स-रदीओ बंधमाणो

**जघन्य स्थितिसत्कर्म अल्प होता है उन कर्मोंके स्थान बहुत होते हैं ।**

§ ६१५. सूत्रमें 'अभवसिद्धिपाओग्गे' ऐसा कहनेपर उसका अर्थ मिथ्यादृष्टिके योग्य ऐसा लेना चाहिए ।

**शंका**—मिथ्यादृष्टिको अभव्य कहना कैसे बनता है ?

**समाधान**—नहीं क्योंकि उत्कृष्ट स्थिति और उत्कृष्ट अनुभागकी अपेक्षा समानता होनेसे मिथ्यादृष्टिको अभव्य कहनेमें कोई विरोध नहीं आता है ।

जिन कर्मोंका उत्कृष्ट स्थितिसत्कर्म समान होता हुआ जघन्य स्थितिसत्कर्म समान नहीं होता है किन्तु थोड़ा होता है उन कर्मोंके स्थान बहुत होते हैं, क्योंकि नीचे बहुत स्थान पाये जाते हैं । पर जिन कर्मोंकी स्थितियाँ ऊपर बहुत होती हैं और नीचे जघन्य स्थिति यद्यपि स्तोक या समान होती है तो भी उनके स्थान बहुत होते हैं । क्योंकि नीचे और ऊपर प्राप्त हुए स्थानोंकी अपेक्षा वे अधिक हो जाते हैं । अब इसका उदाहरण कहते हैं । जो इसप्रकार है—कोई एकेन्द्रिय जीव कषायकी स्थितिको एक सागरके सात भागोंमेंसे पल्यका असंख्यातवाँ भागकम चार भागप्रमाण बाँधकर स्थित है । उसके बन्धावलिसे रहित उस स्थितिके नौ नोकषायोंके ऊपर संक्रान्त करनेपर कषाय और नोकषायोंके स्थितिसत्कर्म समान होते हैं । अब बन्धकालके भेदसे सात नोकषायोंके स्थितिबन्धस्थानोंके बहुत्वको बतलाते हैं । जो इसप्रकार है—एकेन्द्रियोंमें कषायोंकी जघन्य स्थितिसत्कर्मके रहते हुए पुरुषवेद और हास्य रतिके बन्धका प्रारम्भ उसी समय एक साथ करना चाहिए । पुनः प्रारम्भ किये गये पहले समयसे लेकर हास्य और रतिके बन्धकालके संख्यातवें भागके व्यतीत हो जानेपर पुरुषवेदका बन्धकाल समाप्त होता है । पुनः पुरुषवेदके बन्धकालके समाप्त होनेके अनन्तर समयमें स्त्रीवेदके बन्धकालका प्रारम्भ करना चाहिये । इसप्रकार प्रारम्भ करके पुनः स्त्रीवेद और हास्य-रतिका बन्ध करता हुआ वह जीव पूर्वकालसे

पुव्विल्लद्धाणादो संखे०गुणमद्धाणं गच्छदि। एवं गंतूण पुणो इत्थिवेदबंधो थक्कदि। तत्थक्काणंतरसमए णवुंसयवेदबंधस्स पारंभो। तदो णवुंसयवेदेण सह हस्स-रदीओ पुव्वागदंतोमुहुत्तादो संखेज्जगुणमंतोमुहुत्तं बंधदि। तदो हस्स-रदीणं पि बंधगद्धा थक्कदि। पुणो अरदि-सोगाणं बंधपारंभो होदि। एवं होदूण णवुंसयवेदेण सह अरदि-सोगे बंधमाणो हेट्ठिमअद्धाणादो संखे०गुणमद्धाणमुवरि गंतूण दोण्हं पि बंधगद्धाओ जुगवं समप्पंति। तेण सव्वत्थोवा पुरिस०बंधगद्धा २। इत्थि०बंधगद्धा संखे०गुणा ८। हस्स-रदिबंधगद्धा संखे०गुणा ३२। अरदि-सोगबंधगद्धा संखे०गुणा १२८। णवुंस०-बंधगद्धा विसेसाहिया १५०। केत्तियमेत्तेण ? हस्स-रदिबंधगद्धाए संखेज्जाभागमेत्तेण। एवं जेण कारणेण सत्तणोकसायट्ठिदिबंधगद्धाओ विसरिसत्तेण ट्ठिदाओ तेणेदासिं ट्ठिदिबंधट्ठाणाणि सरिसाणि ण होंति त्ति घेत्तव्वं।

**※ इमाणि अण्णाणि अप्पाबहुअस्स साहणाणि कायव्वाणि।**

§ ६१६. पुव्वमेक्केण पयारेण अप्पाबहुअसाहणं काऊण संपहि अण्णेण पयारेण तस्स साहणाणि भणामि त्ति सिस्ससंबोहणा एदेण कदा।

**※ तं जहा—सव्वत्थोवा चरित्तमोहणीयक्खवयस्स अणियट्टिअद्धा।**

§ ६१७. उवरि भण्णमाणअद्धाहिंतो एसा चरित्तमोहणीयक्खवयस्स

संख्यातगुणे कालतक बन्ध करता जाता है। इसप्रकार जाकर पुनः स्त्रीवेदका बन्ध समाप्त होता है। पुनः स्त्रीवेदके बन्धके समाप्त होनेके अनन्तर समयमें नपुंसकवेदके बन्धका प्रारम्भ करता है। तदनन्तर नपुंसकवेदके साथ हास्य और रतिको पहलेसे आये हुए अन्तर्मुहूर्तसे संख्यातगुणे अन्तर्मुहूर्तकालतक बांधता है। तदनन्तर हास्य और रतिका भी बन्धकाल समाप्त होता है। पुनः अरति और शोकका बन्ध प्रारम्भ होकर नपुंसकवेदके साथ अरति और शोकका बन्ध करता हुआ नीचेके कालसे संख्यातगुणा काल ऊपर जाकर दोनोंके ही बन्धकालोंको एक साथ समाप्त करता है। अतः पुरुषवेदका बन्धकाल सबसे थोड़ा २ है। स्त्रीवेदका बन्धकाल संख्यातगुणा २×४=८ है। हास्य और रतिका बन्धकाल संख्यातगुणा ८×४=३२ है। अरति और शोकका बन्धकाल संख्यातगुणा ३२×४=१२८ है। नपुंसकवेदका बन्धकाल विशेष अधिक १२८+२२=१५० है। विशेषका प्रमाण क्या है ? हास्य और रतिके बन्धकालका संख्यात बहुभाग विशेषका प्रमाण है {३२-(२+८)}=(३२-१०)=२२। इस प्रकार चूँकि सात नोकषायोंके स्थितिबन्धकाल विसदृशरूपसे स्थित हैं इसलिए इनके स्थितिबन्धस्थान समान नहीं होते हैं ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये।

**※ अब अल्पबहुत्वके साधनके ये अन्य प्रकार करने चाहिए।**

§ ६१६. पहले एक प्रकारसे अल्पबहुत्वकी सिद्धि की है अब अन्य प्रकारसे उसकी सिद्धिका कथन करते है। इस प्रकार इस सूत्रके द्वारा शिष्यको संबोधन किया है।

**※ अब उन्हीं अन्य प्रकारोंको बतलाते हैं—चारित्रमोहकी क्षपणा करनेवाले जीवके अनिवृत्तिकाल सबसे थोड़ा है।**

§ ६१७. आगे कहनेवाले कालोंसे यह चारित्रमोहनीयकी क्षपणा करनेवाले जीवके अनि-

अणियट्टिकरणद्धा थोवा त्ति दट्ठव्वा।

❀ **अपुव्वकरणद्धा संखेज्जगुणा।**

§ ६१८. चारित्तमोहणीयक्खवयस्से त्ति पुव्वसुत्तादो अणुवट्टदे, तेण चारित्त-मोहणीयक्खवयस्स अपुव्वकरणद्धा तस्सेव अणियट्टिकरणद्धादो संखेज्जगुणा त्ति सुत्तत्थो वत्तव्वो। पुव्विल्लअणियट्टिसद्दो किण्ण करणपरो कदो? ण, एत्थतणकरणसद्दस्स सीहावलोयणेण तत्थावट्ठाणादो।

❀ **चारित्तमोहणीयउवसामयस्स अणियट्टिअद्धा संखेज्जगुणा।**

§ ६१९. चारित्तमोहक्खवयस्स वुदासट्ठं चारित्तमोहउवसामयस्से त्ति णिद्देसो कओ। गुणगारपमाणं सव्वत्थ तप्पाओग्गाणि संखेज्जरूवाणि। सेसं सुगमं।

❀ **अपुव्वकरणद्धा संखेज्जगुणा।**

§ ६२०. चारित्तमोहउवसामयस्से त्ति पुव्वसुत्तादो अणुवट्टदे। तेण चारित्त-मोहउवसामयस्स अपुव्वकरणद्धा तस्सेव अणियट्टिकरणद्धादो संखे०गुणा त्ति सुत्तत्थो वत्तव्वो। एवं बारसक०-णवणोकसायाणं खवगसेढिमस्सिदूण लब्भमाणट्ठाणाणं साहणं परूविय संपहि दंसणमोहणीयतियस्स तक्खवणाए लब्भमाणट्ठिदिसंतट्ठाणाणं साहणट्ठ-

वृत्तिकरणका काल थोड़ा है ऐसा यहाँ जानना चाहिये।

❀ इससे अपूर्वकरणका काल संख्यातगुणा है।

§ ६१८. 'चारित्रमोहनीयकी क्षपणा करनेवाले जीवके' इस पदकी पूर्व सूत्रसे अनुवृत्ति होती है। अतः चारित्रमोहनीयकी क्षपणा करनेवाले जीवके अपूर्वकरणका काल उसीके अनिवृत्तिकरणके कालसे संख्यातगुणा है, इस प्रकार सूत्रका अर्थ कहना चाहिये।

**शंका**—पूर्व सूत्रमें अनिवृत्ति शब्दके आगे करण शब्द क्यों नहीं जोड़ा।

**समाधान**—नहीं, क्योंकि इस सूत्रमें विद्यमान करण शब्द सिंहावलोकन न्यायसे पूर्व-सूत्रमें रहता है।

❀ **इससे चारित्रमोहनीयकी उपशमना करनेवाले जीवके अनिवृत्तिकरणका काल संख्यातगुणा है।**

§ ६१९. पूर्वसूत्रसे अनुवृत्तिको प्राप्त होनेवाले 'चारित्रमोहक्खवयस्स' इसके निराकरण करनेके लिये 'चारित्तमोहउवसामयस्स' इस पदका निर्देश किया। गुणकारका प्रमाण सर्वत्र उनके योग्य संख्यात अङ्क जानना चाहिये। शेष कथन सुगम है।

❀ **इससे अपूर्वकरणका काल संख्यातगुणा है।**

§ ६२०. इस सूत्रमें 'चारित्तमोहउवसामयस्स' इस पदकी पूर्व सूत्र से अनुवृत्ति होती है। अतः चारित्रमोहकी उपशमना करनेवाले जीवके अपूर्वकरणका काल उसीके अनिवृत्तिकरणके कालसे संख्यातगुणा है ऐसा सूत्रका अर्थ करना चाहिये। इस प्रकार क्षपकश्रेणिकी अपेक्षा बारह कषाय और नौ नोकषायोंके प्राप्त होनेवाले स्थानोंकी सिद्धिका कथन करके तीन दर्शन-मोहनीयकी अपेक्षा उनकी क्षपणामें प्राप्त होनेवाले स्थितिसत्त्वस्थानोंकी सिद्धिके लिये

मुत्तरसुत्तं भणदि—

❀ **दंसणमोहणीयक्खवयस्स अणियट्टिअद्धा संखेज्जगुणा ।**

§ ६२१. चारित्तमोहउवसामयस्स अपुव्वकरणद्धादो दंसणमोहक्खवयस्स अणियट्टिअद्धा संखे०गुणा। को गुणगारो ? तप्पाओग्गसंखेज्जरूवाणि । कुदो, साभावियादो ।

❀ **अपुव्वकरणद्धा संखेज्जगुणा ।**

§ ६२२. दंसणमोहक्खवयस्से त्ति पुव्वसुत्तादो अणुवट्टदे। तेण दंसणमोहक्खवयस्स अणियट्टिअद्धादो तस्सेव अपुव्वकरणद्धा संखेज्जगुणा त्ति वत्तव्वं। संपहि अणंताणुबंधिचउक्कस्स ट्ठिदिबंधट्ठाणाणं साहणपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

❀ **अणंताणुबंधीणं विसंजोएंतस्स अणियट्टिअद्धा संखेज्जगुणा।**

§ ६२३. एत्थ करणसद्दो पुव्वुत्तरसुत्तेहिंतो अणुवट्टावेदव्वो, अण्णहा अभिहेयविसयबोहाणुप्पत्तीए। सेसं सुगमं ।

❀ **अपुव्वकरणद्धा संखेज्जगुणा।**

§ ६२४. अणंताणुबंधीणं विसंजोएंतस्से त्ति अणुवट्टदे। तेण तस्स अणियट्टिअद्धादो तस्सेव अपुव्वकरणद्धा संखेज्जगुणा त्ति वत्तव्वं। जदि वि अपुव्वट्टिदिसंतट्ठाणाणं

आगेका सूत्र कहते हैं—

❀ **दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवाले जीवके अनिवृत्तिकरणका काल संख्यातगुणा है ।**

§ ६२१. चारित्रमोहकी उपशमना करनेवाले जीवके अपूर्वकरणके कालसे दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवाले जीवके अनिवृत्तिकरणका काल संख्यातगुणा है। गुणकारका प्रमाण क्या है ? उसके योग्य संख्यात अङ्क गुणकारका प्रमाण है, क्योंकि ऐसा स्वभाव है ।

❀ **इससे अपूर्वकरणका काल संख्यातगुणा है ।**

§ ६२२. इस सूत्रमें 'दंसणमोहक्खवयस्स' इस पदकी पूर्व सूत्रसे अनुवृत्ति होती है। अतः दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवाले जीवके अनिवृत्तिकरणके कालसे उसीके अपूर्वकरणका काल संख्यातगुणा है ऐसा कहना चाहिये। अब अनन्तानुबन्धीचतुष्कके स्थितिबन्धस्थानोंकी सिद्धिका कथन करनेके आगेका सूत्र कहते हैं।

❀ **इससे अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करनेवाले जीवके अनिवृत्तिकरणका काल संख्यातगुणा है ।**

§ ६२३. यहाँ पर करण शब्दकी अनुवृत्ति पहलेके और आगेके सूत्रसे कर लेनी चाहिये, अन्यथा अभिप्रेत अर्थका ज्ञान न हो सकेगा। शेष कथन सुगम है।

❀ **इससे अपूर्वकरणका काल संख्यातगुणा है ।**

§ ६२४. इस सूत्रमें 'अणंताणुबंधीणं विसंजोएंतस्स' इस पदकी अनुवृत्ति होती है, अतः अनन्तानुबन्धिचतुष्ककी विसंयोजना करनेवाले जीवके अनिवृत्तिकरणके कालसे उसीके अपूर्वकरणका काल संख्यातगुणा है ऐसा अर्थ यहाँ कहना चाहिये। यद्यपि आगेके दो सूत्र अपूर्व

उवरिमवेपदाणि करणं ण होंति तो वि अद्धामाहप्पजाणावणं परूवेदि उवरिमसुत्तं—

**❀ दंसणमोहणीयउवसामयस्स अणियट्टिअद्धा संखेज्जगुणा।**

§ ६२५. अणादिओ सादिओ वा मिच्छादिट्ठी पढमसम्मत्तं पडिवज्जमाणो दंसणमोहणीयउवसामओ त्ति भण्णदि, उवसमसेढिसमारुहणट्ठं दंसणतियमुवसामेंत-वेदगसम्माइट्ठी संजदो वा। तस्स मोहणीयउवसामयस्स जा अणियट्टिकरणद्धा संखे०गुणा। को गुणगारो ? संखेज्जरूवाणि।

**❀ अपुव्वकरणद्धा संखेज्जगुणा।**

§ ६२६. दंसणमोहणीयउवसामयस्से त्ति अणुवट्टदे तेण तस्स अणियट्टिअद्धादो तस्सेव अपुव्वकरणद्धा संखेज्जगुणा त्ति सिद्धं। एवमप्पाबहुअसाहणेण सह परूवणा समत्ता।

**❀ एत्तो ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणमप्पाबहुअं।**

§ ६२७. एत्तो परूवणादो उवरिं पुव्वं परूविदट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणं थोवबहुत्तं भणिस्सामो त्ति आइरियपइज्जावयणमेयं। ण चेदं णिप्फलं, मंदबुद्धिविणेयजणाणुग्गहट्टत्तादो।

**❀ सव्वत्थोवा अट्ठण्हं कसायाणं ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि।**

स्थितिसत्त्वस्थानोंके कारण नहीं होते तो भी अद्धाके माहात्म्यका ज्ञान करानेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं।

**❀ इससे दर्शनमोहनीयकी उपशमना करनेवाले जीवके अनिवृत्तिकरणका काल संख्यातगुणा है।**

§ ६२५. अनादि मिथ्यादृष्टि या सादि मिथ्यादृष्टि जीव प्रथम सम्यक्त्वको प्राप्त होता हुआ दर्शनमोहनीयका उपशामक कहा जाता है। या उपशमश्रेणी पर आरोहण करनेके लिये तीन दर्शनमोहनीयकी उपशमना करनेवाला वेदकसम्यग्दृष्टि संयत जीव दर्शनमोहनीयका उपशामक कहा जाता है।

मोहनीयकी उपशमना करनेवाले उस जीवके जो अनिवृत्तिकरणका काल है वह संख्यातगुणा है। गुणाकारका प्रमाण क्या है ? संख्यात अङ्क गुणकारका प्रमाण है।

**❀ इससे अपूर्वकरणका काल संख्यातगुणा है।**

§ ६२६. यहाँ 'दंसणमोहणीयउवसामयस्स' इस पदकी अनुवृत्ति होती है। अतः इस दर्शनमोहनीयकी उपशामना करनेवाले जीवके अनिवृत्तिकरणके कालसे इसीके अपूर्वकरणका काल संख्यातगुणा है यह सिद्ध हुआ। इस प्रकार अल्पबहुत्वकी सिद्धिके साथ प्ररूपणानुगम समाप्त हुआ।

**❀ अब प्ररूपणाके आगे स्थितिसत्कर्मस्थानोंके अल्पबहुत्वका अधिकार है।**

§ ६२७. यहाँसे अर्थात् प्ररूपणानुगमके बाद पहले कहे गये स्थितिसत्कर्मस्थानोंके अल्पबहुत्वको कहेंगे इसप्रकार यह यतिवृषभ आचार्यका प्रतिज्ञावचन है। और यह निष्फल नहीं है, क्योंकि इसका फल मन्दबुद्धि शिष्योंका अनुग्रह करना है।

**❀ आठ कषायोंके स्थितिसत्कर्मस्थान सबसे थोड़े हैं।**

§ ६२८. चत्तालीससागरोवमकोडाकोडीसु एइंदियवीचारट्ठाणपरिहीणसागरोवमचत्तारिसत्तभागे अवणिय रूवे पक्खित्ते अभव्वसिद्धियपाओग्गाणि अट्ठकसायट्ठाणाणि होंति। पुणो खवगसेढिं चडिय अणियट्टिअद्धाए चारित्तमोहणीयस्स एगसागरोवमचदुसत्तभागमेत्ते ट्ठिदिसंतकम्मे सेसे पलिदो० संखे०भागमेत्तं ट्ठिदिकंडयमागाएदि। तम्हि पादिदे सेसट्ठिदिसंबकम्ममपुणरुत्तट्ठाणं होदि, पलिदो० संखे० भागेणूणेगसागरोवमचदुसत्तभागपमाणत्तादो। एत्तो प्पहुडि अट्ठकसायाणमपुणरुत्ताणि चेव ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि उप्पज्जंति जाव एगा ट्ठिदी दुसमयकालपमाणा चेट्ठिदा त्ति। एदाणि खवगसेढीए लद्धअंतोमुहुत्तमेत्तट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि पुव्विल्लट्ठाणेसु छुहेदव्वाणि। एवं संछुद्धे जेणट्ठकसायाणं सव्वट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि होंति तेणेदाणि उवरि भण्णमाणट्ठाणेहिंतो थोवाणि त्ति।

**❀ इत्थि-णवुंसयवेदाणं ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि तुल्लाणि विसेसाहियाणि।**

§ ६२९. कुदो? अट्ठकसाएहि लद्धेहि सेसट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि लद्धूण पुणो अट्ठकसायक्खीणपदेसादो उवरि जावित्थिवेदक्खीणपदेसो त्ति तावेदम्मि अद्धाणे अंतोमुहुत्तप्पमाणे जत्तियमेत्ता समया अत्थि तत्तियमेत्तट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणेहि अहियत्तादो। इत्थिवेदादो हेट्ठा णट्ठणवुंसयवेदस्स ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणं कथमित्थिवेदट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणेहि समाणत्तं? ण, णवुंसयवेदोदएण खवगसेढिं चडिदजीवाणं

§ ६२८. चालीस कोड़ाकोड़ी सागरमेंसे एकेन्द्रियके वीचारस्थानोंसे रहित एक सागरके सात भागोंमेंसे चार भाग घटाकर जो शेष रहे उनमें एक मिला देने पर अभव्योंके योग्य आठ कषायस्थान होते हैं। पुनः क्षपकश्रेणिपर चढ़ा हुआ जीव अनिवृत्तिकरणके कालमें चारित्रमोहनीयके एक सागरके सात भागोंमेंसे चार भागप्रमाण स्थितिसत्कर्म शेष रहने पर पल्यके संख्यातवें भागप्रमाण स्थितिकाण्डकको प्राप्त करता है। उसके पतन करने पर शेष स्थितिसत्कर्मसम्बन्धी अपुनरुक्त स्थान होता है क्योंकि उसका प्रमाण एक सागरके पल्यका संख्यातवाँ भाग कम चार भाग है। यहाँसे लेकर दो समय कालप्रमाण एक स्थितिके प्राप्त होने तक आठ कषायोंके अपुनरुक्त ही स्थितिसत्त्वस्थान उत्पन्न होते हैं। क्षपकश्रेणिमें प्राप्त हुए ये अन्तर्मुहूर्तप्रमाण स्थितिसत्कर्मस्थान पूर्व स्थानोंमें मिला देना चाहिए। इस प्रकार इनके मिला देने पर चूँकि आठ कषायोंके सब स्थितिसत्कर्मस्थान होते हैं अतः ये आगे कहे जानेवाले स्थानोंसे थोड़े हैं।

**❀ इनसे स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके स्थितिसत्कर्मस्थान बराबर होते हुए भी विशेष अधिक हैं।**

§ ६२९. क्योंकि आठ कषायोंकी अपेक्षा जो सब स्थितिसत्कर्मस्थान प्राप्त हुए वे आठ कषायोंके क्षीण होनेके स्थानसे लेकर स्त्रीवेदके क्षीण होनेके स्थान तक अन्तर्मुहूर्तप्रमाण इस अध्वानमें जितने समय प्राप्त होते हैं उतने स्थितिसत्कर्मस्थानोंसे अधिक होते हैं।

शंका—नपुंसकवेदका नाश स्त्रीवेदके पहले हो जाता है, अतः नपुंसकवेदके सत्कर्मस्थान स्त्रीवेदके सत्कर्मस्थानोंके समान कैसे होते हैं?

णवुंसयवेदस्स इत्थिवेदविणट्ठट्ठाणे विणासुवलंभादो। एइंदिएसु णवुंसयवेदपडिवक्ख-बंधगद्धादो इत्थिवेदपडिवक्खबंधगद्धा संखेज्जगुणा त्ति। णवुंसयवेदसंतकम्मट्ठाणेहिंतो इत्थिवेदसंतकम्मट्ठाणाणं विसेसाहियत्तं किण्ण जायदे ? ण, पडिवक्खबंधगद्धाओ अस्सिदूण लद्धट्ठाणाणमेत्थ विवक्खाभावादो। तं कुदो णव्वदे ? दोण्हं पि वेदाणं ट्ठाणाणि तुल्लाणि त्ति सुत्तणिद्देसादो। तेसिं विवक्खा एत्थ किण्ण कदा ? अपुव्वकरणा-णियट्टिअद्धाणं माहप्पजाणावणट्ठं।

❀ छण्णोकसायाणं ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि विसेसाहियाणि।

§ ६३०. कुदो, इत्थि-णवुंसयवेदक्खविदट्ठाणादो उवरि अंतोमुहुत्तं गंतूण छण्णोकसायाणं खवणुवलंभादो। भय-दुगुंछट्ठाणेहि चदुणोकसायट्ठाणाणं कधं सरिसत्तं ? ण, पडिवक्खबंधगद्धाहिंतो लद्धट्ठाणाणं विवक्खाए अभावादो।

❀ पुरिसवेदस्स ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि विसेसाहियाणि।

§ ६३१. कुदो छण्णोकसायाणं खीणुद्देसादो समयूणदोआवलियमेत्तद्धाणं

---

**समाधान**—नहीं, क्योंकि जो जीव नपुंसकवेदके उदयसे क्षपकश्रेणि पर चढ़ते हैं उनके नपुंसकवेदका नाश स्त्रीवेदके नाश होनेके स्थानमें प्राप्त होता है।

**शंका**—एकेन्द्रियोंमें नपुंसकवेदके प्रतिपक्ष बन्धकालसे स्त्रीवेदका प्रतिपक्ष बन्धकाल संख्यातगुणा है, अतः नपुंसकवेदके सत्कर्मस्थानोंसे स्त्रीवेदके सत्कर्मस्थान विशेष अधिक क्यों नहीं होते हैं।

**समाधान**—नहीं, क्योंकि प्रतिपक्ष बन्धकालके आश्रयसे प्राप्त हुए स्थानोंकी यहाँ विवक्षा नहीं है।

**शंका**—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

**समाधान**—सूत्रमें दोनों ही वेदोंके स्थान तुल्य हैं ऐसा निर्देश किया है, इससे जाना जाता है कि यहाँ प्रतिपक्ष बन्धकालकी अपेक्षा प्राप्त होनेवाले स्थानोंकी विवक्षा नहीं है।

**शंका**—उनकी यहाँ पर विवक्षा क्यों नहीं की ?

**समाधान**—अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणके माहात्म्यका ज्ञान करानेके लिए यहाँ उनकी विवक्षा नहीं की।

**❀ इनसे छह नोकषायोंके स्थितिसत्कर्मस्थान विशेष अधिक हैं।**

§ ६३०. क्योंकि स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके क्षय होनेके स्थानसे आगे अन्तर्मुहूर्त जाकर छह नोकषायोंका क्षय पाया जाता है।

**शंका**—चार नोकषायोंके स्थान भय और जुगुप्साके स्थानोंके समान कैसे हैं ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि प्रतिपक्ष बन्धकालोंकी अपेक्षा प्राप्त होनेवाले स्थानोंकी यहाँ विवक्षा नहीं है।

**❀ इनसे पुरुषवेदके स्थितिसत्कर्मस्थान विशेष अधिक हैं।**

§ ६३१. क्योंकि जहाँ छह नोकषायोंका क्षय होता है वहाँसे लेकर एक समयकम दो

गंतूण णिल्लेविदत्तादो। विदियट्ठिदीए ट्ठिदपुरिसवेदट्ठिदीए णिसेगाणं ण गलणमत्थि तेण छण्णोकसायट्ठाणेहिंतो पुरिसवेदट्ठाणाणं सरिसत्तं किण्ण वुच्चदे ? ण, णिसेगाणमेत्थ पहाणत्ताभावादो। पहाणत्ते वा विदियट्ठिदीए ट्ठिदउदयवज्जिदसव्वपयडीणं ट्ठाणाणि सरिसाणि होज्ज। ण च एवं, तहोवएसाभावादो।

**❀ कोधसंजलणट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि विसेसाहियाणि।**

§ ६३२. केत्तियमेत्तेण ? दुसमयूणदोआवलियाहि परिहीणअस्सकण्णकरण-किट्टीकरण-कोधतिण्णिकिट्टीवेदयकालमेत्तट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणेहि। णवरि णवकबंधमस्सियूण उवरि वि दुसमयूणदोआवलियमेत्तसंतट्ठाणाणि कोहसंजलणस्स लब्भंति त्ति संपुण्णतिण्णिअद्धामेत्तसंतकम्मट्ठाणेहिं विसेसाहियत्तमेत्थ दट्ठव्वं।

**❀ माणसंजलणस्स ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि विसेसाहियाणि।**

§ ६३३. केत्तियमेत्तेण ? माणसंजलणतिण्णिकिट्टीवेदयकालमेत्तेण।

**❀ मायासंजलणस्स ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि विसेसाहियाणि।**

§ ६३४. केत्तियमेत्तेण ? मायासंजलणस्स तिण्हं किट्टीणं वेदयकालमेत्तेण।

**❀ लोभसंजलणस्स ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि विसेसाहियाणि।**

आवलिप्रमाण स्थान जाकर पुरुषवेदका क्षय होता है।

**शंका**—द्वितीय स्थितिमें स्थित पुरुषवेदकी स्थितिके निषेकोंका गलन नहीं होता है, अतः पुरुषवेदके स्थान छह नोकषायोंके समान क्यों नहीं कहे जाते हैं ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि यहाँ निषेकोंकी प्रधानता नहीं है। यदि प्रधानता मान ली जाय तो द्वितीय स्थितिमें स्थित उदय रहित सब प्रकृतियोंके स्थान समान हो जायँगे, परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि इसप्रकारका उपदेश नहीं पाया जाता है।

**❀ इनसे क्रोधसंज्वलनके स्थितिसत्कर्मस्थान विशेष अधिक हैं।**

§ ६३२. **शंका**—कितने अधिक हैं ?

**समाधान**—अश्वकर्णकरणकाल, कृष्टिकरणकाल और क्रोधकी तीन कृष्टियोंका वेदककाल इनमेंसे कमसे कम दो समय कम दो आवलिप्रमाण कालके घटा देनेपर जितना शेष रहे उतने स्थितिसत्कर्मस्थान अधिक हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि क्रोधसंज्वलनके नवकबन्धकी अपेक्षा आगे भी दो समय कम दो आवलिप्रमाण सत्त्वस्थान प्राप्त होते हैं अतः यहाँ पूरे तीन स्थान प्रमाण सत्त्वस्थान विशेष अधिक जानने चाहिये।

**❀ इनसे मान संज्वलनके स्थितिसत्कर्मस्थान विशेष अधिक हैं।**

§ ६३३. **शंका**—कितने अधिक हैं ?

**समाधान**—मानसंज्वलनकी तीन कृष्टियोंके वेदनका जितना काल है उतने अधिक हैं।

**❀ इनसे मायासंज्वलनके स्थितिसत्कर्मस्थान विशेष अधिक हैं।**

§ ६३४. **शंका**—कितने अधिक हैं ?

**समाधान**—मायासंज्वलनकी तीन कृष्टियोंका जितना वेदनकाल है उतने अधिक हैं।

**❀ इनसे लोभसंज्वलनके स्थितिसत्कर्मस्थान विशेष अधिक हैं।**

§ ६३५. के० मेत्तेण ? कोधोदएण खवगसेढिं चडिदस्स दुसमयूणदोआवलिय-परिहीणलोभवेदगद्धामेत्तेण ।

❀ अणंताणुबंधीणं चदुण्हं द्विदिसंतकम्मट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

§ ६३६. कुदो, अट्ठकसायप्पहुडि जाव लोभसंजलणं ति ताव एदेसिं कम्माणं खवणकालादो अणंताणुबंधिविसंजोयणकालस्स संखेज्जगुणत्तादो । संखेज्जगुणत्तं कुदो णव्वदे ? द्विदिसंतकम्मट्ठाणाणं थोवबहुत्तजाणावणट्ठं परूविदअद्धप्पाबहुअसुत्तादो ।

❀ मिच्छत्तस्स द्विदिसंतकम्मट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

§ ६३७. कुदो ? किंचूणसागरोवमचत्तारिसत्तभागेहि ऊणचत्तालीससागरोवम-कोडाकोडिमेत्तअणंताणुबंधिचउक्कट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणमुवरि सागरोवमतिण्णिसत्तभागेहि ऊणतीससागरोवमकोडाकोडीमेत्तट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणेहि अहियत्तुवलंभादो ।

❀ सम्मत्तस्स द्विदिसंतकम्मट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

§ ६३८. के० मेत्तेण ? एइंदियाणं मिच्छत्तजहण्णट्ठिदीए दंसणमोहक्खवणाए लद्धमिच्छत्तजहण्णट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणेहि ऊणाए अंतोमुहुत्तब्भहियसम्मत्तचरिमुव्वेल्लण-जहण्णफालिं मिच्छत्ते खविदे सम्मत्तेण लद्धट्ठाणेहि परिहीणमवणिदे जत्तिया समया

§ ६३५. शंका—कितने अधिक हैं ?

समाधान—क्रोधके उदयसे क्षपक श्रेणीपर चढ़े हुए जीवके दो समय कम आवलि हीन लोभवेदकालप्रमाण अधिक है ।

❀ इनसे अनन्तानुबन्धीचतुष्कके स्थितिसत्कर्मस्थान विशेष अधिक हैं ।

§ ६३६. क्योंकि आठ कषायोंसे लेकर लोभसंज्वलनतक इन कर्मोंके क्षपणाकालसे अनन्तानुबन्धीका विसंयोजनाकाल संख्यातगुणा है ।

शंका—वह संख्यातगुणा है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—स्थितिसत्कर्मस्थानोंके अल्पबहुत्वके ज्ञान कराने के लिये कहे गये काल सम्बन्धी अल्पबहुत्व विषयक सूत्रसे जाना जाता है ।

❀ इनसे मिथ्यात्वके स्थितिसत्कर्मस्थान विशेष अधिक हैं ।

§ ६३७. क्योंकि एक सागरके सात भागोंमेंसे कुछ कम चार भाग कम चालीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण अनन्तानुबन्धी चतुष्कके स्थितिसत्कर्मस्थानोंके ऊपर एक सागरके सात भागोंमेंसे तीन भाग कम तीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण स्थितिसत्कर्म अधिक पाये जाते हैं ।

❀ इनसे सम्यक्त्वके स्थितिसत्कर्मस्थान विशेष अधिक हैं ।

§ ६३८. शंका—कितने अधिक हैं ?

समाधान—दर्शनमोहकी क्षपणाके समय जो मिथ्यात्वके स्थितिसत्कर्मस्थान प्राप्त होते हैं उन्हें एकेन्द्रियों सम्बन्धी मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिमेंसे कम करके जो शेष बचे उनमेंसे मिथ्यात्वके क्षय होनेपर सम्यक्त्वके साथ प्राप्त होनेवाले स्थानोंसे हीन अन्तर्मुहूर्त अधिक सम्यक्त्वकी अन्तिम उद्वेलना फालिको कम करके जितने समय शेष रहें उतने स्थितिसत्कर्म-स्थान होते हैं ।

तत्तियमेत्तट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणेहि । मिच्छत्तचरिमफालीदो सम्मत्तस्सुव्वेल्लणाए जा चरिमफाली सा किं सरिसा विसेसाहिया संखेज्जगुणा असंखे०गुणा वा ? असंखेज्जगुणा त्ति एत्थ एलाइरियवच्छयस्स णिच्छओ । कुदो ? मिच्छत्तचरिमफालीदो असंखे०गुण-अणंताणुबंधिविसंजोयणाचरिमफालीदो वि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुव्वेल्लणाचरिमफालीए असंखे०गुणत्तस्स ट्ठिदिसंकमप्पाबहुअसुत्तसिद्धत्तादो ।

**❀ सम्मामिच्छत्तस्स ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।**

§ ६३९. केत्तियमेत्तेण ? सादिरेयसम्मामिच्छत्तचरिमुव्वेल्लणफालीए ऊणसम्मत्त-चरिमुव्वेल्लणफालिमेत्तेण । संपहि ट्ठिदिसंतकम्मे भण्णमाणे विदियाए पुढवीए सम्मत्त-चरिमुव्वेल्लणकंडयादो सम्मामिच्छत्तचरिमुव्वेल्लणकंडयं विसेसाहियमिदि भणिदं । तदो पुव्वावरविरोहेण दूसियाणं ण दोण्हं पि सुत्तट्ठमिदि ? ण एस दोसो, इट्ठत्तादो । किंतु जइवसहाइरिएण उवलद्धा बे उवएसा । सम्मत्तचरिमफालीदो सम्मामिच्छत्तचरिमफाली असंखे०गुणहीणा त्ति एगो उवएसो । अवरेगो सम्मामिच्छत्तचरिमफाली तत्तो विसेसाहिया त्ति । एत्थ एदेसिं दोण्हं पि उवएसाणं णिच्छयं काउमसमत्थेण जइवसहाइरिएण एगो एत्थ विलिहिदो अवरेगो ट्ठिदिसंकमे । तेणेदे बे वि उवदेसा थप्पं कादूण वत्तव्वा त्ति ।

**शंका**—सम्यक्त्वकी उद्वेलनाकी जो अन्तिम फालि है वह मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिके क्या समान है या विशेष अधिक है या संख्यातगुणी है या असंख्यातगुणी है ?

**समाधान**—असंख्यातगुणी है, इस प्रकार इस विषयमें एलाचार्यके शिष्य हमारा निश्चय है; क्योंकि मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिसे अनन्तानुबन्धी विसंयोजनाकी अन्तिम फालि असंख्यातगुणी है । तथा उससे भी सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलनाकी अन्तिम फालि असंख्यातगुणी है यह बात स्थितिसत्कर्मके अल्पबहुत्व विषयक सूत्रसे सिद्ध है ।

**❀ इनसे सम्यग्मिथ्यात्वके स्थितिसत्कर्मस्थान विशेष अधिक हैं ।**

§ ६३९. **शंका**—कितने अधिक हैं ।

**समाधान**—साधिक सम्यग्मिथ्यात्वकी अन्तिम उद्वेलनाफालिमेंसे सम्यक्त्वकी अन्तिम उद्वेलनाफालिको घटा देनेपर जितना शेष रहे तत्प्रमाण स्थितिसत्कर्मस्थान अधिक हैं ।

**शंका**—स्थितिसत्कर्मका कथन करते समय दूसरी पृथिवीमें सम्यक्त्वके अन्तिम उद्वेलनाकाण्डकसे सम्यग्मिथ्यात्वका अन्तिम उद्वेलनाकाण्डक विशेष अधिक है ऐसा कहा है, अतः पूर्वापरविरोधसे दूषित होनेके कारण दोनोंका ही सूत्रत्व नहीं बनता ?

**समाधान**—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि यह बात हमें इष्ट है । किन्तु यतिवृषभ आचार्यको दो उपदेश प्राप्त हुए । सम्यक्त्वकी अन्तिम फालिसे सम्यग्मिथ्यात्वकी अन्तिम फालि असंख्यातगुणी हीन है यह पहला उपदेश है । तथा सम्यग्मिथ्यात्वकी अन्तिम फालि उससे विशेष अधिक है यह दूसरा उपदेश है । यहाँ इन दोनों ही उपदेशोंका निश्चय करनेमें असमर्थ यतिवृषभ आचार्यने एक उपदेश यहाँ लिखा और एक उपदेश स्थितिसंक्रममें लिखा, अतः इन दोनों ही उपदेशोंको स्थगित करके कथन करना चाहिए ।

§ ६४०. संपहि पडिवक्खबंधगद्धाओ अस्सिदूण अब्भवसिद्धियपाओग्गट्ठाणाणमप्पाबहुअं वत्तइस्सामो । तं जहा—सव्वत्थोवाणि सोलसकसाय-भय-दुगुंछाणं हिदिसंतकम्मट्ठाणाणि । केत्तियमेत्ताणि ? रूवूणेइंदियजहण्णट्ठिदीए परिहीणचत्तालीससागरोवमकोडाकोडीमेत्ताणि । तेसिं पमाणं संदिट्ठीए बारहोत्तरपंचसदमिदि घेत्तव्वं ५१२। णवुंसयवेदट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । केत्तियमेत्तेण ? इत्थि-पुरिसवेदबंधगद्धामेत्तेण ५२२ । अरदि-सोगट्ठिदिसंतकम्मट्ठा० विसे० । के०मेत्तो विसेसो ? इत्थि-पुरिसवेदबंधगद्धाहि ऊणहस्स-रदिबंधगद्धामेत्तो ५४४ । हस्स-रदीणं हिदिसंतकम्मट्ठा० विसेसा० ६४० । के०मेत्तेण ? हस्स-रदिबंधगद्धाए ऊणअरदि-सोगबंधगद्धामेत्तेण । इत्थिवेदसंतकम्मट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ६६४ । केत्तियमेत्तेण ? अरदि-सोगबंधगद्धाए ऊणपुरिस-णवुंसयवेदबंधगद्धामेत्तेण । पुरिसवेदसंतकम्मट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ६७० । केत्तियमेत्तेण ? पुरिसवेदबंधगद्धाए ऊणइत्थिवेदबंधगद्धामेत्तेण । बंधगद्धाओ खवणद्धाओ च अस्सिदूण ट्ठाणाणमप्पाबहुअपरूवणा किमट्ठं ण कीरदे ? ण, णोकसायबंधगद्धाणं खवणद्धाणं च अंतरविसयअवगमाभावादो ।

§ ६४०. अब प्रतिपक्षभूत बन्धकालोंकी अपेक्षा अभव्योंके योग्य स्थानोंके अल्पबहुत्वका कथन करते हैं । जो इस प्रकार है—सोलह कषाय, भय और जुगुप्साके स्थितिसत्कर्मस्थान सबसे थोड़े हैं । वे कितने हैं ? एकेन्द्रियकी एक कम जघन्य स्थितिसे हीन चालीस कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण हैं । उनका प्रमाण अंकसंदृष्टिकी अपेक्षा पाँच सौ बारह ५१२ लेना चाहिए । इनसे नपुंसकवेदके स्थितिसत्कर्मस्थान विशेष अधिक हैं । कितने अधिक हैं ? स्त्रीवेद और पुरुषवेदके बन्धकालप्रमाण अधिक हैं । अंकसंदृष्टिसे उनका प्रमाण ५२२ होता है । इनसे अरति और शोकके स्थितिसत्कर्मस्थान विशेष अधिक हैं । कितने विशेष अधिक है ? हास्य और रतिके बन्धकालमेंसे स्त्रीवेद और पुरुषवेदके बन्धकालको घटा देनेपर जितना शेष रहे तत्प्रमाण विशेष अधिक हैं । अंकसंदृष्टिकी अपेक्षा इनका प्रमाण ५४४ होता है । इनसे हास्य और रतिके स्थितिसत्कर्मस्थान विशेष अधिक हैं । अंकसंदृष्टिकी अपेक्षा इनका प्रमाण ६४० होता है । वे कितने अधिक हैं ? अरति और शोकके बन्धकालमेंसे हास्य और रतिके बन्धकालको घटा देनेपर जितना शेष रहे तत्प्रमाण विशेष अधिक हैं । इनसे स्त्रीवेदके स्थितिसत्कर्मस्थान विशेष अधिक हैं । अंकसंदृष्टिकी अपेक्षा इनका प्रमाण ६६४ होता है । वे कितने अधिक हैं ? पुरुषवेद और नपुंसकवेदके बन्धकालमेसे अरति और शोकके बन्धकालके घटा देनेपर जितना शेष रहे उतने अधिक हैं । इनसे पुरुषवेदके स्थितिसत्कर्मस्थान विशेष अधिक हैं । अंकसंदृष्टिकी अपेक्षा इनका प्रमाण ६७० होता है । कितने अधिक हैं ? स्त्रीवेदके बन्धकालमेंसे पुरुषवेदका बन्धकाल घटा देनेपर जितना शेष रहे तत्प्रमाण विशेष अधिक हैं ।

**शंका**—बन्धकाल और क्षपणाकालकी अपेक्षा सत्कर्मस्थानोंके अल्पबहुत्वका कथन किसलिये नहीं किया ?

**समाधान**—नहीं, क्योंकि नोकषायविषयक बन्धकाल और क्षपणाकालके अन्तरका ज्ञान नहीं होनेसे नहीं किया ।

एदमप्पाबहुअं सव्वमग्गणासु जाणिदूण जोजेयव्वं। एवं 'तह हिदीए' त्ति जं पदं तस्स अत्थपरूवणा कदा। एवं कदाए हिदिविहत्ती समत्ता।

हिदिविहत्ती समत्ता।

इस अल्पबहुत्वको सब मार्गणाओंमें जानकर योजना करनी चाहिए। इस प्रकार गाथा २२ में जो 'तह ट्ठिदीए' पद आया है उसकी अर्थप्ररूपणा की। इस प्रकार करने पर स्थितिविभक्ति समाप्त होती है।

स्थितिविभक्ति समाप्त।

# १ ट्ठिदिविहत्तिचुण्णिसुत्ताणि

पुस्तक ३

[1]ट्ठिदिविहत्ती दुविहा—मूलपयडिट्ठिदिविहत्ती चेव उत्तरपयडिट्ठिदिविहत्ती चेव। [2]तत्थ अट्ठपदं। एगा ट्ठिदी ट्ठिदिविहत्ती। अणेगाओ ट्ठिदीओ ट्ठिदिविहत्ती। [3]तत्थ अणियोगद्दाराणि। सव्वविहत्ती णोसव्वविहत्ती उक्कस्सविहत्ती अणुक्कस्सविहत्ती जहण्णविहत्ती अजहण्णविहत्ती सादियविहत्ती अणादियविहत्ती धुवविहत्ती अद्धुवविहत्ती एयजीवेण सामित्तं कालो अंतरं णाणाजीवेहि [4]भंगविचओ परिमाणं खेत्तं पोसणं कालो अंतरं सण्णियासो अप्पाबहुअं च भुजगारो पदणिक्खेवो वड्ढी च। एदाणि चेव उत्तरपयडिट्ठिदिविहत्तीए कादव्वाणि।

[5]उत्तरपयडिट्ठिदिविहत्तिमणुमग्गइस्सामो। तं जहा। तत्थ अट्ठपदं। एया ट्ठिदी ट्ठिदिविहत्ती अणेयाओ ट्ठिदीओ ट्ठिदिविहत्ती। [6]एदेण अट्ठपदेण। [7]पमाणाणुगमो। मिच्छत्तस्स उक्कस्सट्ठिदिविहत्ती सत्तरिसागरोवमकोडाकोडीओ पडिवुण्णाओ। [8]एवं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं। णवरि अंतोमुहुत्तूणाओ। [9]सोलसण्हं कसायाणमुक्कस्सट्ठिदिविहत्ती चत्तालीससागरोवमकोडाकोडीओ पडिवुण्णाओ। एवं णवणोकसायणं। णवरि आवलिऊणाओ। [10]एवं सव्वासु गदीसु णेयव्वो।

[11]एत्तो जहण्णयं। [12]मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्त-बारसकसायाणं जहण्णट्ठिदिविहत्ती एगा ट्ठिदी दुसमयकालट्ठिदिया। [13]सम्मत्त-लोहसंजलण-इत्थि-णवुंसयवेदाणं जहण्णट्ठिदिविहत्ती एगा ट्ठिदी एगसमयकालट्ठिदिया। [14]कोहसंजलणस्स जहण्णट्ठिदिविहत्ती बेमासा अंतोमुहुत्तूणा। [15]माणसंजलणस्स जहण्णट्ठिदिविहत्ती मासो अंतोमुहुत्तूणो। [16]मायासंजलणस्स जहण्णट्ठिदिविहत्ती अद्धमासो अंतोमुहुत्तूणो। पुरिसवेदस्स जहण्णट्ठिदिविहत्ती अट्ठवस्साणि अंतोमुहुत्तूणाणि। [17]छण्णोकसायाणं जहण्णट्ठिदिविहत्ती संखेज्जाणि वस्साणि। [18]गदीसु अणुमग्गिदव्वं।

(१) पृ० २। (२) पृ० ५। (३) पृ० ७। (४) पृ० ८। (५) पृ० १६१। (६) पृ० १६३। (७) पृ० १६४। (८) पृ० १६५। (९) पृ० १६७। (१०) पृ० १६६। (११) पृ० २०२। (१२) पृ० २०३। (१३) पृ० २०५। (१४) पृ० २०७। (१५) पृ० २०८। (१६) पृ० २०९। (१७) पृ० २१०। (१८) पृ० २११।

[1]एयजीवेण सामित्तं। मिच्छत्तस्स उक्कस्सट्ठिदिविहत्ती कस्स ? उक्कस्सट्ठिदिं बंधमाणस्स। [2]एवं सोलसकसायाणं। [3]सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्सट्ठिदिविहत्ती कस्स ? मिच्छत्तस्स उक्कस्सट्ठिदिं बंधिदूण अंतोमुहुत्तद्धं पडिभग्गो जो ट्ठिदिघादमकादूण सव्वलहु सम्मत्तं पडिवण्णो तस्स पढमसमयवेदयसम्मादिट्ठिस्स। [4]णवणोकसायाणमुक्कस्सट्ठिदिविहत्ती कस्स ? कसायाणमुक्कस्सट्ठिदिं बंधिदूण आवलियादीदस्स।

[5]एत्तो जहण्णयं। मिच्छत्तस्स जहण्णट्ठिदिविहत्ती कस्स ? मणुसस्स वा मणुसिणीए वा खविज्जमाणयमावलियं पविट्ठं जाधे दुसमयकालट्ठिदिगं सेसं ताधे। [6]सम्मत्तस्स जहण्णट्ठिदिविहत्ती कस्स ? चरिमसमयअक्खीणदंसणमोहणीयस्स। [7]सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णट्ठिदिविहत्ती कस्स। सम्मामिच्छत्तं खविज्जमाणं वा उव्वेल्लिज्जमाणं वा जस्स दुसमयकालट्ठिदियं सेसं तस्स। [8]अणंताणुबंधीणं जहण्णट्ठिदिविहत्ती कस्स ? अणंताणुबंधो जेण विसंजोइदं आवलियं पविट्ठं दुसमयकालट्ठिदिगं सेसं तस्स। [9]अट्ठण्णं कसायाणं जहण्णट्ठिदिविहत्ती कस्स ? अकसायक्खवयस्स दुसमयकालट्ठिदियस्स तस्स। [10]कोधसंजलणस्स जहण्णट्ठिदिविहत्ती कस्स ? खवयस्स चरिमसमयअणिल्लेविदे कोहसंजलणे। [11]एवं माण-मायासंजलणाणं। [12]लोहसंजलणस्स जहण्णट्ठिदिविहत्ती कस्स ? खवयस्स चरिमसमयसकसायस्स। इत्थिवेदस्स जहण्णट्ठिदिविहत्ती कस्स ? चरिमसमयइत्थिवेदोदयखवयस्स। [13]पुरिसवेदस्स जहण्णट्ठिदिविहत्ती कस्स ? पुरिसवेदखवयस्स चरिमसमयअणिल्लेविदपुरिसवेदस्स। [14]णवुंसयवेदस्स जहण्णट्ठिदिविहत्ती कस्स ? चरिमसमयणवुंसयवेदोदयक्खवयस्स। छण्णोकसायाणं जहण्णट्ठिदिविहत्ती कस्स ? खवयस्स चरिमे ट्ठिदिखंडए वट्टमाणस्स।

[15]णिरयगईए णेरइएसु सम्मत्तस्स जहण्णट्ठिदिविहत्ती कस्स ? चरिमसमयअक्खीणदंसणमोहणीयस्स। [16]सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णट्ठिदिविहत्ती कस्स ? चरिमसमयउव्वेल्लमाणस्स। [17]अणंताणुबंधीणं जहण्णट्ठिदिविहत्ती कस्स ? जस्स विसंजोइदे दुसमयकालट्ठिदियं सेसं तस्स। सेसं 'जहा उदीरणाए तहा कायव्वं। [18]एवं सेसासु गदीसु अणुमग्गिदव्वं।

[ [19]कालो। ] [20]मिच्छत्तस्स उक्कस्सट्ठिदिसंतकम्मिओ केविचरं कालादो होदि ? जहण्णेण एगसमओ। [21]उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं। एवं सोलसकसायाणं। [22]णवुंसयवेद-अरदि-सोग-भय-दुगुंछाणमेवं चेव। [23]सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्सट्ठिदिविहत्तिओ

(१) पृ० २२६। (२) पृ० २३०। (३) पृ० २३१। (४) पृ० २३३। (५) पृ० २४१। (६) पृ० २४३। (७) पृ० २४४। (८) पृ० २४५। (९) पृ० २४८। (१०) पृ० २४९। (११) पृ० २५०। (१२) पृ० २५१। (१३) पृ० २५२। (१४) पृ० २५३। (१५) पृ० २५४। (१६) पृ० २५५। (१७) पृ० २५६। (१८) पृ० २५८। (१९) पृ० २६६। (२०) पृ० २६७। (२१) पृ० २६८। (२२) पृ० २६९। (२३) पृ० २७०।

केवचिरं कालादो होदि। जहण्णुक्कस्सेण एगसमओ। इत्थिवेद-पुरिसवेद-हस्स-रदीण-मुक्कस्सट्ठिदिविहत्तिओ केवचिरं कालादो होदि! [1]जहण्णेण एगसमओ। उक्कस्सेण आवलिया। [2] एवं सव्वासु गदीसु।

[3]जहण्णट्ठिदिसंतकम्मियकालो। मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-सोलसकसाय-तिवेदाणं जहण्णुक्कस्सेण एगसमओ। [4]छण्णोकसायाणं जहण्णट्ठिदिसंतकम्मियकालो जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं।

[5]अंतरं। मिच्छत्त-सोलसकसायाणमुक्कस्सट्ठिदिसंतकम्मियं अंतरं जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। [6]उक्कस्समसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा। एवं णवणोकसायाणं। णवरि जहण्णेण एगसमओ। [7] सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्साणमुक्कस्सट्ठिदिसंतकम्मियंतरं जहण्णेण अंतोमुहुत्तं उक्कस्समुवड्ढपोग्गलपरियट्टं।

[8]एत्तो जहण्णयंतरं। [9] मिच्छत्त-सम्मत्त-बारसकसाय-णवणोकसायाणं जहण्ण-ट्ठिदिविहत्तियस्स णत्थि अंतरं। सम्मामिच्छत्त-अणंताणुबंधीणं जहण्णट्ठिदिविहत्तियस्स अंतरं जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। [10]उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं।

[11]णाणाजीवेहि भंगविचओ। तत्थ अट्ठपदं। तं जहा—जो उक्कस्सियाए ट्ठिदीए विहत्तिओ सो अणुक्कस्सियाए ट्ठिदीए ण होदि विहत्तिओ। [12]जो अणुक्कस्सियाए ट्ठिदीए विहत्तिओ सो उक्कस्सियाए ट्ठिदीए ण होदि विहत्तिओ। जस्स मोहणीयपयडी अत्थि तम्मि पयदं। अकम्मे ववहारो णत्थि। एदेण अट्ठपदेण मिच्छत्तस्स सव्वे जीवा उक्कस्सियाए ट्ठिदीए सिया अविहत्तिया। [13]सिया अविहत्तिया च विहत्तिओ च। सिया अविहत्तिया च विहत्तिया च। ३। अणुक्कस्सियाए ट्ठिदीए सिया सव्वे जीवा विहत्तिया। सिया विहत्तिया च अविहत्तिओ च। [14]सिया विहत्तिया च अविहत्तिया च। एवं सेसाणं पि पयडीण कायव्वो।

[15]जहण्णए भंगविचए पयदं। [16]तं चेव अट्ठपदं। एदेण अट्ठपदेण मिच्छत्तस्स सव्वे जीवा जहण्णियाए ट्ठिदीए सिया अविहत्तिया। सिया अविहत्तिया च विहत्तिओ च। सिया अविहत्तिया च विहत्तिया च। [17]अजहण्णियाए ट्ठिदीए सिया सव्वे जीवा विहत्तिया। सिया विहत्तिया च अविहत्तिओ च। सिया विहत्तिया च अविहत्तिया च। एव तिण्णि भंगा। एवं सेसाणं पयडीणं कायव्वो।

[18]जधा उक्कस्सट्ठिदिबंधे णाणाजीवेहि कालो तधा उक्कस्सट्ठिदिसंतकम्मेण

---

(१) पृ० २७१। (२) पृ० २७२। (३) पृ० २९०। (४) पृ० २९१। (५) पृ० ३१६। (६) पृ० ३१७। (७) पृ० ३१८। (८) पृ० ३३०। (९) पृ० ३३१। (१०) पृ० ३३२। (११) पृ० ३४५। (१२) पृ० ३४६। (१३) पृ० ३४७। (१४) पृ० ३४८। (१५) पृ० ३४९। (१६) पृ० ३५०। (१७) पृ० ३५१। (१८) पृ० ३८७।

कायव्वो । [1]णवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्सट्ठिदी जहण्णेण एगसमओ । उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो ।

[2]जहण्णए पयदं । मिच्छत्त-सम्मत्त-बारसकसाय-तिवेदाणं जहण्णट्ठिदिविहत्तिएहि णाणाजीवेहि कालो केवडिओ । जहण्णेण एगसमओ । [3]उक्कस्सेण संखेज्जा समया । सम्मामिच्छत्त-अणंताणुबंधीणं चउक्कस्स जहण्णट्ठिदिविहत्तिएहि णाणाजीवेहि कालो केवडिओ । जहण्णेण एगसमओ । उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो । [4]छण्णोकसायाणं जहण्णट्ठिदिविहत्तिएहि णाणाजीवेहि कालो केवडिओ । जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

[5]णाणाजीवेहि अंतरं । सव्वपयडीणमुक्कस्सट्ठिदिविहत्तियाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एगसमओ । [6]उक्कस्सेण अंगुलस्स असंखेज्जदिभागो ।

[7]एत्तो जहण्णयंतरं । मिच्छत्त-सम्मत्त-अट्ठकसाय-छण्णोकसायाणं जहण्णट्ठिदिविहत्तिअंतरं जहण्णेण एगसमओ । [8]उक्कस्सेण छम्मासा । सम्मामिच्छत्त-अणंताणुबंधीणं जहण्णट्ठिदिविहत्तिअंतरं जहण्णेण एगसमओ । उक्कस्सेण चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे । [9]तिण्हं संजलण-पुरिसवेदाणं जहण्णट्ठिदिविहत्तिअंतरं जहण्णेण एगसमओ । उक्कस्सेण वस्सं सादिरेयं । [10]लोभसंजलणस्स जहण्णट्ठिदिविहत्तिअंतरं जहण्णेण एगसमओ । उक्कस्सेण छम्मासा । इत्थि-णवुंसयवेदाणं जहण्णट्ठिदिविहत्तिअंतरं जहण्णेण एगसमओ उक्कस्सेण संखेज्जाणि वस्साणि । [11]णिरयगईए सम्मामिच्छत्त-अणंताणुबंधीणं जहण्णट्ठिदिविहत्तिअंतरं जहण्णेण एगसमओ । उक्कस्सं चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे । सेसाणि जहा उदीरणा तहा णेदव्वाणि ।

[12]सण्णियासो मिच्छत्तस्स उक्कस्सियाए ट्ठिदीए जो विहत्तिओ सो सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सिया कम्मंसिओ सिया अकम्मंसिओ । [13]जदि कम्मंसिओ णियमा अणुक्कस्सा । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा अंतोमुहुत्तूणमादिं कादूण जाव एगा ट्ठिदि त्ति । [14]णवरि चरिमुव्वेल्लणकंडयचरिमफालीए ऊणा । [15]सोलसकसायाणं किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ? उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा । [16]उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादिं कादूण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेणूणा त्ति । [17]इत्थि-पुरिसवेद-हस्स-रदीणं णियमा अणुक्कस्सा । [18]उक्कस्सादो अणुक्कस्सा अंतोमुहुत्तूणमादिं कादूण जाव अंतोकोडाकोडि त्ति ।

---

(१) पृ० ३८८ । (२) पृ० ३९४ । (३) पृ० ३५६ । (४) पृ० ३९९ । (५) पृ० ४०६ । (६) पृ० ४०७ । (७) पृ० ४१० । (८) पृ० ४११ । (९) पृ० ४१२ । (१०) पृ० ४१३ । (११) पृ० ४१५ । (१२) पृ० ४२५ । (१३) पृ० ४२६ । (१४) पृ० ४३१ । (१५) पृ० ४४७ । (१६) पृ० ४४८ । (१७) पृ० ४४६ । (१८) पृ० ४५० ।

[1]णवुंसयवेद-अरदि-सोग-भय-दुगुंछाणं ट्ठिदिविहत्ती किमुक्कस्सा किमणुक्कस्सा? उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा। [2]उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समऊणमादिं कादूण जाव वीससागरोवम-कोडाकोडीओ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण ऊणाओ त्ति। [3]सम्मत्तस्स उक्कस्सट्ठिदिविहत्तियस्स मिच्छत्तस्स ट्ठिदिविहत्ती किमुक्कस्सा किमणुक्कस्सा। णियमा-अणुक्कस्सा। उक्कस्सादो अणुक्कस्सा अंतोमुहुत्तूणा। णत्थि अण्णो वियप्पो। [4]सम्मा-मिच्छत्तट्ठिदिविहत्ती किमुक्कस्सा किमणुक्कस्सा। णियमा उक्कस्सा। [5]सोलसकसाय-णवणोकसायाणं ट्ठिदिविहत्ती किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा? णियमा अणुक्कस्सा। उक्कस्सादो अणुक्कस्सा अंतोमुहुत्तूणमादिं कादूण जाव पलिदोवमस्स असंखेज्जदि-भागेणूणा त्ति। [6]एवं सम्मामिच्छत्तस्स वि। जहा[7] मिच्छत्तस्स तहा सोलसकसायाणं। इत्थिवेदस्स ऊक्कस्सट्ठिदिविहत्तियस्स मिच्छत्तस्स ट्ठिदिविहत्ती किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा? णियमा अणुक्कस्सा। उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समुयूणमादिं कादूण जाव पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेणूणा त्ति।[8] सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं ट्ठिदिविहत्ती किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा। णियमा अणुक्कस्सा। उक्कस्सादो अणुक्कस्सा अंतोमुहुत्तूणमादिं कादूण जाव एगा ट्ठिदि त्ति। [9]णवरि चरि-मुव्वेल्लणकंडयचरिमफालीए ऊणा त्ति। [10] सोलसकसायाणं ट्ठिदिविहत्ती किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा? णियमा अणुक्कस्सा। उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समऊणमादिं कादूण जाव अवलिगूणा त्ति। [11]पुरिसवेदस्स ट्ठिदिविहत्ती किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा? णियमा अणुक्कस्सा। उक्कस्सादो अणुक्कस्सा अंतोमुहुत्तूणमादिं कादूण जाव अंतोकोडाकोडि त्ति। [12]हस्स-रदीणं ट्ठिदिविहत्ती किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा? उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा।[13]उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादिं कादूण जाव अंतोकोडाकोडि त्ति।[14]अरदि-सोगाणं ट्ठिदिविहत्ती किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा? उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा। उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादिं कादूण जाव वीससागरोवमकोडाकोडीओ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेणूणाओ त्ति।[15]एवं णवुंसयवेदस्स। णवरि णियमा अणुक्कस्सा।[16]भय-दुगुच्छाणं ट्ठिदिविहत्ती किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा? णियमा उक्कस्सा। जहा इत्थिवेदेण तहा सेसेहि कम्मेहि।[17]णवरि विसेसो जाणियव्वो। [18]णवुंसयवेदस्स उक्कस्सट्ठिदि-विहत्तियस्स मिच्छत्तस्स ट्ठिदिविहत्ती किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा? उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा। उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादिं कादूण जाव पलिदोवमस्स असंखेज्जदि-

(१) पृ० ४५२ (२) पृ० ४५३। (३) पृ० ४५५। (४) पृ० ४५६। (५) पृ० ४५७। (६) पृ० ४५८। (७) पृ० ४५९। (८) पृ० ४६१। (९) पृ० ४६२। (१०) पृ० ४६५। (११) पृ० ४६६। (१२) पृ० ४६७। (१३) पृ० ४६८। (१४) पृ० ४७०। (१५) पृ० ४७१। (१६) पृ० ४७२। (१७) पृ० ४७३। (१८) पृ० ४७६।

भागेण ऊणा त्ति । [1]सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं ट्ठिदिविहत्ती किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ? णियमा अणुक्कस्सा ?। उक्कस्सादो अणुक्कस्सा अंतोमुहुत्तूणमादिं कादूण जाव एगा ट्ठिदि त्ति। णवरि चरिमुव्वेल्लणकंडयचरिमफालीए ऊणा। सोलस-कसायाणं ट्ठिदिविहत्ती किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ? उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा।[2]उक्क-स्सादो अणुक्कस्सा समयूणमादिं कादूण जाव आवलिऊणा त्ति । इत्थि-पुरिसवेदाणं ट्ठिदिविहत्ती किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ? णियमा अणुक्कस्सा । [3] उक्कस्सादो अणुक्कस्सा अंतोमुहुत्तूणमादिं कादूण जाव अंतोकोडाकोडि त्ति । [4]हस्स-रदीणं ट्ठिदिविहत्ती किमु-क्कस्सा अणुक्कस्सा ? उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समऊणमादिं कादूण जाव अंतोकोडाकोडि त्ति ।[5]अरदि-सोगाणं ट्ठिदिविहत्ती किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ? उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा । उक्कस्सादो अणुक्कस्सा समऊणमादिं कादूण जाव वीसं सागरोवमकोडाकोडीओ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण ऊणाओ । [6]भय-दुगुंछाणं ट्ठिदिविहत्ती किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ? णियमा उक्कस्सा । एवमरदि-सोग-भय-दुगुंछाणं पि । [7]णवरि विसेसो जाणियव्वो ।

[8]जहण्णट्ठिदिसण्णियासो । मिच्छत्तजहण्णट्ठिदिसंतकम्मियस्स अणंताणुबंधीणं णत्थि । सेसाणं कम्माणं ट्ठिदिविहत्ती किं जहण्णा अजहण्णा ? णियमा अजहण्णा। जहण्णादो अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया । [9]मिच्छत्तेण णीदो सेसेहि वि अणुमग्गि-यव्वो ।

[10][अप्पाबहुअं ।] सव्वत्थोवा णवणोकसायाणमुक्कस्सट्ठिदिविहत्ती । [11] सोलस-कसायाणमुक्कस्सट्ठिदिविहत्ती विसेसहिया । सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सट्ठिदिविहत्ती विसेसाहिया । सम्मत्तस्स उक्कस्सट्ठिदिविहत्ती विसेसाहिया । [12]मिच्छत्तस्स उक्कस्सट्ठिदि-विहत्ती विसेसाहिया । णिरयगदीए सव्वत्थोवा इत्थिवेद-पुरिसवेदाणमुक्कस्सट्ठिदि-विहत्ती। सेसाणं णोकसायाणमुक्कस्सट्ठिदिविहत्ती विसेसाहिया । [13]सोलसण्हं कसायाण-मुक्कस्सट्ठिदिविहत्ती विसेसाहिया। सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सट्ठिदिविहत्ती विसेसाहिया । सम्मत्तस्स उक्कस्सट्ठिदिविहत्ती विसेसाहिया । मिच्छत्तस्स उक्कस्सट्ठिदिविहत्ती विसेसा-हिया । सेसासु गदीसु णेदव्वो ।

---

(१) पृ० ४७७ । (२) पृ० ४७८ । (३) पृ० ४७९ । (४) पृ० ४८० । (५) पृ० ४८१ (६) पृ० ४८२ । (७) पृ० ४८३ । (८) पृ० ४९४ । (९) पृ० ४९५ । (१०) पृ० ५२४ । (११) पृ० ५२५ । (१२) पृ० ५२६ । (१३) पृ० ५२७ ।

पुस्तक ४

[1]जे भुजगार-अप्पदर-अवट्ठिद-अवत्तव्वया तेसिमट्ठपदं। [2]जत्तियाओ अस्सिं समए ट्ठिदिविहत्तीओ उस्सक्काविदे अणंतरविदिक्कंते समए अप्पदराओ बहुदरविहत्तिओ एसो भुजगारविहत्तिओ। ओसक्काविदे बहुदराओ विहत्तीओ एसो अप्पदरविहत्तिओ। ओसक्काविदे [ उस्सक्काविदे वा ] तत्तियाओ चेव विहत्तिओ एसो अवट्ठिद-विहत्तिओ। [3]अविहत्तियादो विहत्तियाओ एसो अवत्तव्वविहत्तिओ। एदेण अट्ठपदेण।

[4]सामित्तं। मिच्छत्तस्स भुजगार-अप्पदर-अवट्ठिदविहत्तिओ को होदि? अण्णदरो णेरइयो तिरिक्खो मणुस्सो देवो वा। अवत्तव्वओ णत्थि। [5]सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं भुजगार-अप्पदरविहत्तिओ को होदि? अण्णदरो णेरइयो तिरिक्खो मणुस्सो देवो वा। अवट्ठिदविहत्तिओ को होदि? पुव्वुप्पण्णादो समत्तादो समयुत्तर-मिच्छत्तेण से काले सम्मत्तं पडिवण्णो सो अवट्ठिदविहत्तिओ। [6]अवत्तव्वविहत्तिओ अण्णदरो। [7]एवं सेसाणं कम्माणं णेदव्वं।

[8]एगजीवेण कालो। मिच्छत्तस्स भुजगारकम्मंसिओ केवचिरं कालादो होदि। जहण्णेण एगसमओ। उक्कस्सेण चत्तारि समया ४। [10]अप्पदरकम्मंसिओ केवचिरं कालादो होदि। [11]जहण्णेण एगसमओ। उक्कस्सेण तेवट्ठिसागरोवमसदं सादिरेयं। अवट्ठिदकम्मंसिओ केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेण एगसमओ। [12]उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं। एवं सोलसकसाय-णवणोकसायाणं। णवरि भुजगारकम्मंसिओ उक्कस्सेण एगूणवीससमया। [13]अणंताणुबंधिचउक्कस्स अवत्तव्वं जहण्णुक्कस्सेण एगसमओ। [14]सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं भुजगार-अवट्ठिद-अवत्तव्वकम्मंसिओ केवचिरं कालादो होदि? जहण्णुक्कस्सेण एगसमओ। [15]अप्पदरकम्मंसिओ केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। [16]उक्कस्सेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि।

[17]अंतरं। मिच्छत्तस्स भुजगार-अवट्ठिदकम्मंसियस्स अंतरं जहण्णेण एग-समओ। उक्कस्सेण तेवट्ठिसागरोवमसदं सादिरेयं। [18]अप्पदरकम्मंसियस्स अंतरं केव-चिरं कालादो होदि? जहण्णेण एगसमओ। उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं। सेसाणं पि णेदव्वं।

[19]णाणाजीवेहि भंगविचओ। संतकम्मिएसु पयदं। सव्वे जीवा मिच्छत्त-सोलसकसाय-णवणोकसायाणं भुजगारट्ठिदिविहत्तिया च अप्पदरट्ठिदिविहत्तिया च अव-ट्ठिदट्ठिदिविहत्तिया च। अणंताणुबंधीणमवत्तव्वं भजिदव्वं। [20]सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं

---

( १ ) पृ० १। ( २ ) पृ० २। ( ३ ) पृ० ३। ( ४ ) पृ० ६। ( ५ ) पृ० ७। ( ६ ) पृ० ६। ( ७ ) पृ० १०। ( ८ ) पृ० १४। ( ६ ) पृ० १५। ( १० ) पृ० १८। ( ११ ) पृ० १९। ( १२ ) पृ० २०। ( १३ ) पृ० २३। ( १४ ) पृ० २४। ( १५ ) पृ० २५। ( १६ ) पृ० २६। ( १७ ) पृ० ४२। ( १८ ) पृ० ४३। ( १९ ) पृ० ५०। ( २० ) पृ० ५१।

भुजगार-अवट्ठिद-अवत्तव्वट्ठिदिविहत्तिया भजिदव्वा। अप्पदरट्ठिदिविहत्तिया णियमा अत्थि।

[1]णाणाजीवेहि कालो। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं भुजगार-अवट्ठिद-अवत्तव्वट्ठिदिविहत्तिया केवचिरं कालादो होंति? जहण्णेण एगसमओ। उक्कस्सेस आवलियाए असंखेज्जदिभागो। अप्पदरट्ठिदिविहत्तिया केवचिरं कालादो होंति? सव्वद्धा। [2]सेसाणं कम्माणं विहत्तिया सव्वे सव्वद्धा। णवरि अणंताणबंधीणमवत्तव्वट्ठिदिविहत्तियाणं जहण्णेण एगसमओ। [3]उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो।

[4]अंतरं। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं भुजगार-अवट्ठिदट्ठिदिविहत्तियंतरं केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेण एगसमओ। उक्कस्सेण चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे। अवट्ठिदट्ठिदिविहत्तियंतरं केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेण एगसमओ। उक्कस्सेण अंगुलस्स असंखेज्जदिभागो। [6]अप्पदरट्ठिदिविहत्तियंतरं केवचिरं कालादो होदि? णत्थि अंतरं। सेसाणं कम्माणं सव्वेसिं पदाणं णत्थि अंतरं। णवरि अणंताणुबंधीणं अवत्तव्वट्ठिदिविहत्तियंतरं जहण्णेण एगसमओ। उक्कस्सेण चउवीसमहोत्तरे सादिरेगे।

सण्णियासो। मिच्छत्तस्स जो भुजगारकम्मंसिओ सो सम्मत्तस्स सिया अप्पदरकम्मंसिओ सिया अकम्मंसिओ। एवं सम्मामिच्छत्तस्स वि। [8]सेसाणं णेदव्वो।

[9]अप्पाबहुअं। मिच्छत्तस्स सव्वत्थोवा भुजगारट्ठिदिविहत्तिया। अवट्ठिदट्ठिदिविहत्तिया असंखेज्जगुणा। [10]अप्पदरट्ठिदिविहत्तिया संखेज्जगुणा। [11]एवं बारसकसाय-णवणोकसायाणं। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वत्थोवा अवट्ठिदट्ठिदिविहत्तिया। [12]भुजगारट्ठिदिविहत्तिया असंखेज्जगुणा। अवत्तव्वट्ठिदिविहत्तिया असंखेज्जगुणा। [13]अप्पदरट्ठिदिविहत्तिया असंखेज्जगुणा। [14]अणंताणुबंधीणं सव्वत्थोवा अवत्तव्वट्ठिदिविहत्तिया। भुजगारट्ठिदिविहत्तिया अणंतगुणा। अवट्ठिदट्ठिदिविहत्तिया असंखेज्जगुणा। अप्पदरट्ठिदिविहत्तिया संखेज्जगुणा।

[15]एत्तो पदणिक्खेवो। पदणिक्खेवे परूवणा सामित्तमप्पाबहुअं अ। [16]अप्पाबहुए पयदं। मिच्छत्तस्स सव्वत्थोवा उक्कस्सिया हाणी। [17]उक्कस्सिया वड्ढी अवट्ठाणं च सरिसा विसेसाहिया। एवं सव्वकम्माणं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तवज्जाणं। णवरि णवुंसय--वेद--अरदि--सोग--भय--दुगुंछाणमुक्कस्सिया वड्ढी अवट्ठाणं थोवा। [18]उक्कस्सिया हाणी विसेसाहिया। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वत्थोवमुक्कस्समवट्ठाणं। [19]उक्कस्सिया

(१) पृ० ६७। (२) पृ० ६८। (३) पृ० ६६। (४) पृ० ७४। (५) पृ० ७५। (६) पृ० ७७। (७) पृ० ८३। (८) पृ० ८४। (६) पृ० ६५। (१०) पृ० ६६। (११) पृ० ६७। (१२) पृ० ६८। (१३) पृ० १०१। (१४) १०२। (१५) १०५। (१६) पृ० ११०। (१७) पृ० १११। (१८) पृ० ११२। (१६) पृ० ११३।

हाणी असंखेज्जगुणा। उक्कस्सिया वड्ढी विसेसाहिया। [1]जहण्णिया वड्ढी जहण्णिया हाणी जहण्णयमवट्ठाणं च सरिसाणि।

[2]एत्तो वड्ढी। [3]मिच्छत्तस्स अत्थि असंखेज्जभागवड्ढी हाणी संखेज्जभागवड्ढी हाणी संखेज्जगुणवड्ढी हाणी असंखेज्जगुणहाणी अवट्ठाणं। [4]एवं सव्वकम्माणं। [5]णवरि अणंताणुबंधीणमवत्तव्वं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमसंखेज्जगुणवड्ढी अवत्तव्वं च अत्थि।

[6]एगजीवेण कालो। मिच्छत्तस्स तिविहाए वड्ढीए जहण्णेण एगसमओ। उक्कस्सेण वे समया। [7]असंखेज्जभागहाणीए जहण्णेण एगसमओ। उक्कस्सेण तेवट्ठि-सागरोवमसदं सादिरेयं। [8]संखेज्जभागहाणीए जहण्णेण एगसमओ। [9]उक्कस्सेण जहण्णमसंखेज्जयं तिरूवूणयमेत्तिए समए। संखेज्जगुणहाणि-असंखेज्जगुणहाणीणं जहण्णुक्कस्सेण एगसमओ। [10]अवट्ठिदट्ठिदिविहत्तिया केवचिरं कालादो होंति। जहण्णेण एगसमओ। उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं। सेसाणं पि कम्माणमेदेण बीजपदेण णेदव्वं।

[11]एगजीवेण अंतरं। मिच्छत्तस्स असंखेज्जभागवड्ढि-अवट्ठाणट्ठिदिविहत्तियंतरं केवचिरं कालादो होदि। जहण्णेण एगसमयं। उक्कस्सेण तेवट्ठिसागरोवमसदं तीहि-पलिदोवमेहि सादिरेयं। संखेज्जभागवड्ढि-हाणि-संखेज्जगुणवड्ढि-हाणिट्ठिदिविहत्तियंतरं जहण्णेण एगसमओ हाणी० अंतोमुहुत्तं। [12]उक्कस्सेण असंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा। [13]असंखेज्जगुणहाणिट्ठिदिविहत्तियंतरं जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं। असंखेज्जभागहाणि-ट्ठिदिविहत्तियंतरं जहण्णेण एगसमओ। [14]उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं। सेसाणं कम्माणमेदेण बीजपदेण अणुमग्गिदव्वं।

[15]अप्पाबहुअं। मिच्छत्तस्स सव्वत्थोवा असंखेज्जगुणहाणिकम्मंसिया। [16]संखेज्ज-गुणहाणिकम्मंसिया असंखेज्जगुणा। संखेज्जभागहाणिकम्मंसिया संखेज्जगुणा। [17]संखेज्ज-गुणवड्ढिकम्मंसिया असंखेज्जगुणा। [18]संखेज्जभागवड्ढिकम्मंसिया संखेज्जगुणा। [19]असंखेज्जभागवड्ढिकम्मंसिया अणंतगुणा। अवट्ठिदकम्मंसिया असंखेज्जगुणा। [20]असंखेज्जभागहाणिकम्मंसिया संखेज्जगुणा। एवं बारसकसाय-णवणोकसायाणं। [21]सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वत्थोवा असंखेज्जगुणहाणिकम्मंसिया। [22]अवट्ठिद-कम्मंसिया असंखेज्जगुणा। [23]असंखेज्जभागवड्ढिकम्मंसिया असंखेज्जगुणा। [24]असंखेज्ज-गुणवड्ढिकम्मंसिया असंखेज्जगुणा। [25]संखेज्जगुणवड्ढिकम्मंसिया असंखेज्जगुणा। [26]संखेज्जभागवड्ढिकम्मंसिया संखेज्जगुणा। [27]संखेज्जगुणहाणिकम्मंसिया संखेज्जगुणा।

---

(१) पृ० ११६। (२) पृ० ११७। (३) पृ० १४०। (४) पृ० १४१। (५) पृ० १५०। (६) पृ० १६४। (७) पृ० १६६। (८) पृ० १६७। (९) पृ० १६८। (१०) पृ० १६९। (११) पृ० १९१। (१२) पृ० १९२। (१३) पृ० १९३। (१४) पृ० १९४। (१५) पृ० २७४। (१६) पृ० २७५। (१७) पृ० २७८। (१८) पृ० २८१। (१९) पृ० २८७। (२०) पृ० २८८। (२१) पृ० २८९। (२२) पृ० २९०। (२३) पृ० २९३। (२४) पृ० २९४। (२५) पृ० २९६। (२६) पृ० २९८। (२७) पृ० २९९।

[1]संखेज्जभागहाणिकम्मंसिया संखेज्जगुणा। अवत्तव्वकम्मंसिया असंखेज्जगुणा। [2]असंखेज्ज-भागहाणिकम्मंसिया असंखेज्जगुणा। अणंताणुबंधीणं सव्वत्थोवा अवत्तव्वकम्मंसिया। असंखेज्जगुणहाणिकम्मंसिया संखेज्जगुणा। [3]सेसाणि पदाणि मिच्छत्तभंगो।

[4]ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणं परूवणा अप्पाबहुअं च। परूवणा। मिच्छत्तस्स ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि उक्कस्सियं ट्ठिदिमादिं कादूण जाव एइंदियपाओग्गकम्मं जहण्णयं ताव णिरंतराणि अत्थि। [5]अण्णाणि पुण दंसणमोहक्खवयस्स अणियट्टिपविट्ठस्स जम्हि ट्ठिदिसंतकम्मेइंदियकम्मस्स हेट्ठदो जादं तत्तो पाए अंतोमुहुत्तमेत्ताणि ट्ठिदिसंत-कम्मट्ठाणाणि लब्भंति। [6]सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि सत्तरिसाग-रोवमकोडाकोडीओ अंतोमुहुत्तूणाओ। [7]अपच्छिमेण उव्वेल्लणकंडएण च ऊणाओ एत्तियाणि ट्ठाणाणि। जहा मिच्छत्तस्स तहा सेसाणं कम्माणं।

अभवसिद्धियपाओग्गे जेसिं कम्मंसाणमग्गट्ठिदिसंतकम्मं तुल्लं [8]जहण्णगं ट्ठिदिसंतकम्मं थोवं तेसिं कम्मंसाणं ट्ठाणाणि बहुआणि।

[9]इमाणि अण्णाणि अप्पाबहुअस्स साहणाणि कायव्वाणि। तं जहा—सव्वत्थोवा चारित्तमोहणीयक्खवयस्स अणियट्टिअद्धा। [10]अपुव्वकरणद्धा संखेज्जगुणा। चारित्त-मोहणीयउवसामयस्स अणियट्टिअद्धा संखेज्जगुणा। अपुव्वकरणद्धा संखेज्जगुणा। [11]दंसणमोहणीयक्खवयस्स अणियट्टिअद्धा संखेज्जगुणा। अपुव्वकरणद्धा संखेज्जगुणा। अणंताणुबंधीणं विसंजोएंतस्स अणियट्टिअद्धा संखेज्जगुणा। अपुव्वकरणद्धा संखेज्जगुणा। [12]दंसणमोहणीयउवसामयस्स अणियट्टिअद्धा संखेज्जगुणा। अपुव्वकरणद्धा संखेज्जगुणा।

एत्तो ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणमप्पाबहुअं। सव्वत्थोवा अट्ठण्हं कसायाणं ट्ठिदिसंत-कम्मट्ठाणाणि। [13]इत्थि-णवुंसयवेदाणं ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि तुल्लाणि विसेसाहियाणि। [14]छण्णोकसायाणं ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। पुरिसवेदस्स ट्ठिदिसंत-कम्मट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। [15]कोधसंजलणस्स ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि विसेसाहि-याणि। माणसंजलणस्स ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। मायासंजलणस्स ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। लोभसंजलणस्स ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। [16]अणंताणुबंधीणं चदुण्हं ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। मिच्छत्तस्स ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। सम्मत्तस्स ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। [17]सम्मामिच्छत्तस्स ट्ठिदिसंतकम्मट्ठाणाणि विसेसाहियाणि।

एवं तह ट्ठिदीए त्ति जं पदं तस्स अत्थपरूवणा कदा।

---

(१) पृ० ३००। (२) पृ० ३०२। (३) पृ० ३०३। (४) पृ० ३१९। (५) पृ० ३२२। (६) पृ० ३२३। (७) पृ० ३२४। (८) पृ० ३२५। (९) पृ० ३२६। (१०) पृ० ३२७। (११) पृ० ३२८। (१२) पृ० ३२९। (१३) पृ० ३३०। (१४) पृ० ३३१। (१५) पृ० ३३२। (१६) पृ० ३३३। (१७) पृ० ३३४

## २ ऐतिहासिक-नामसूची

### पुस्तक ३



### पुस्तक ४



## ३ ग्रन्थनामोल्लेख

### पुस्तक ३



### पुस्तक ४

# ४ चूर्णिसूत्रगतशब्दसूची

## पुस्तक ३

पुस्तक ४

## जयधवलागतविशेषशब्दसूची

### पुस्तक ३



### पुस्तक ४



---